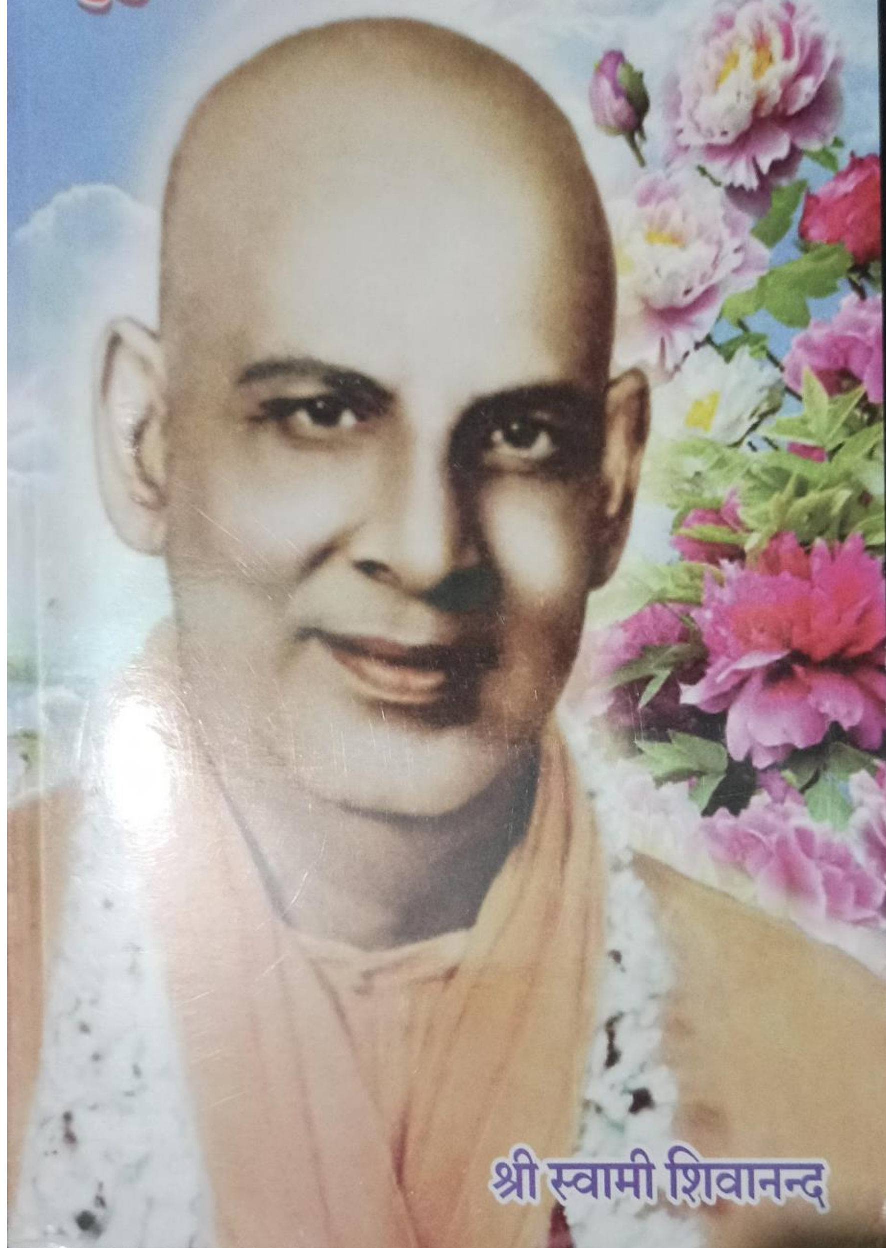
सद्गुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें



श्री स्वामी शिवानन्द

सद्‌गुणों का अर्जुन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें

HOW TO CULTIVATE VIRTUES AND ERADICATE VICES

का हिंदी अनुवाद

लेखक
श्री स्वामी शिवानंद

अनुवादिका
स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसाइटी
पत्रालय: शिवानंदनगर-249192
जिला: टेहरी गढ़वाल, उत्तराखंड (हिमालय), भारत
www.sivandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण २०१९
(१,००० प्रतियाँ)

ISBN 81-7052-258.7 8
HS 8

PRICE:195/-

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड,
पिन २४९१९२' में मुद्रित ।
For online orders and Catalogue visit: disbooks.org

ॐ

समस्त अभिभावकों एवं शिक्षकों
नेताओं एवं उपदेशकों
को समर्पित
जो करते हैं चरित्र-निर्माण
नर एवं नारियों का

प्रकाशकीय

सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की समस्त कृतियों में यह कृति सर्वोपरि कही जायेगी। इस पुस्तक में श्री गुरुदेव ने वर्तमान विश्व के नर-नारियों के समक्ष एक ऐसा विषय प्रस्तुत किया है जो उनके स्वयं के हृदय को सर्वाधिक प्रिय है तथा जो मनुष्यों को देवताओं में एवं राष्ट्रों को स्वर्ग में रूपान्तरित करने में सक्षम है।

मनसा-वाचा-कर्मणा धर्मपरायणता, उज्ज्वल-दिव्य चरित्र का विकास तथा हृदय के धर्म का पालन श्री गुरुदेव की शिक्षाओं के सारतत्त्व हैं। इस सन्दर्भ में, वे भगवान् बुद्ध की भाँति हैं। परन्तु भगवान् श्री कृष्ण के समान, श्री गुरुदेव स्पष्ट उद्घोषणा करते हैं कि सदाचार-धर्मपरायणता आत्मज्ञान प्राप्ति का एक साधन है।

श्री गुरुदेव ने अपनी प्रत्येक पुस्तक में साधना के इस पक्ष अर्थात् सद्गुणों के अर्जन एवं दुर्गुणों के नाश पर बल दिया है। चाहे वे विशाल सभाओं को सम्बोधित कर रहे हों अथवा भक्तों से वार्तालाप कर रहे हों, उन्होंने सदैव प्रबलतापूर्वक यही कहा है, "केवल सदाचार-धर्मपरायणता के द्वारा ही आप परम तत्त्व को प्राप्त कर सकते हैं।"

इस पुस्तक में श्री गुरुदेव ने हमें सुन्दर सद्गुणों की एक माला प्रदान की है जिसे प्रत्येक सच्चे साधक को धारण करना चाहिए। इसके साथ-ही-साथ उन्होंने उन मानवीय दोषों एवं दुर्बलताओं की भी चर्चा की है जिनका समूल नाश किया जाना चाहिए ताकि मनुष्य की आत्मा अपने दिव्य प्रकाश की उज्ज्वल आभा को पुनः प्राप्त कर सके।

सर्वशक्तिमान् प्रभु के चरणों में इस प्रार्थना के साथ हम सुधी पाठकों को यह पुस्तक समर्पित करते हैं कि यह उन्हें उदात्त एवं दिव्य बनाये, श्रेष्ठ एवं सफल बनाये जिससे कि वे इस विश्व को भ्रातृत्व-भाव एवं शान्ति से परिपूर्ण एक सुन्दर धाम बना सकें।

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

भूमिका

नीतिशास्त्र एवं नैतिकता

नैतिक विकास से नैतिक पूर्णता प्राप्त होगी। एक नैतिक व्यक्ति एक बुद्धिजीवी व्यक्ति से अधिक शक्तिशाली होता है। नैतिक विकास से विभिन्न प्रकार की अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

नैतिकता आध्यात्मिकता की सहचरी है। नैतिकता आध्यात्मिकता के साथ-साथ रहती है। नैतिक विकास आपको **'सर्वं खल्विदं ब्रह्म'** - सब ब्रह्म ही है-इस वेदान्तिक साक्षात्कार के लिए तैयार करता है। यहाँ विविधता-भिन्नता जैसी कोई वस्तु नहीं है। सब ब्रह्म ही है।

सभी साधक घर छोड़ने के तुरन्त बाद नैतिक पवित्रता की परवाह किये बिना ध्यान और समाधि प्राप्ति की शीघ्रता करने की गलती करते हैं।

नैतिक जीवन के लिए आवश्यक है-स्पष्टवादिता, ईमानदारी, दया, विनम्रता, जीवन के प्रति सम्मान, प्रत्येक प्राणी के प्रति आदर, पूर्ण निःस्वार्थता, सत्यनिष्ठा, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, निर्लोभिता तथा दर्प एवं आडम्बर का अभाव और वैश्विक प्रेम।

एक सदाचारी व्यक्ति के आदर्श सिद्धान्त एवं लक्ष्य होते हैं। वह उनका पूर्ण पालन करता है, अपने दोषों एवं दुर्बलताओं को दूर करता है, अच्छे आचरण का विकास करता है और एक सात्त्विक व्यक्ति बन जाता है।

धर्मपरायणता शाश्वत है। आपका जीवन भी यदि संकट में है तो भी आपको धर्म का मार्ग नहीं छोड़ना चाहिए। एक धार्मिक एवं सदाचारी जीवन और निर्मल अन्तरात्मा व्यक्ति को जीवन तथा मृत्यु दोनों में ही अत्यधिक सुख देते हैं। आपको केवल सच्चरित्र रूपी हीरा पहनने की ही इच्छा करनी चाहिए। सद्गुण आत्मज्ञान प्राप्ति में सहायक हैं।

निरन्तर दयापूर्ण कर्म करते रहने एवं नैतिक सिद्धान्तों का पालन करने से ही अमरत्व की प्राप्ति की जा सकती है।

दयापूर्ण कार्य, करुणा एवं सेवा हृदय को पवित्र एवं कोमल बनाते हैं, हृदयकमल को ऊर्ध्वमुखी करते हैं एवं साधक को दिव्य प्रकाश ग्रहण करने हेतु तैयार करते हैं।

सत्य, तपस्या, ब्रह्मचर्य तथा आत्मनियन्त्रण का अभ्यास शाश्वत तत्त्व के ज्ञान की प्राप्ति में सहायक हैं।

विनम्रता सर्वोच्च सद्गुण है। भगवान् आपकी केवल तभी सहायता करते हैं, जब आप पूर्णतया विनम्र बनते हैं। इसलिए इस सद्गुण का अधिकतम सीमा तक विकास करिए।

सदगुण का सकारात्मक एवं क्रियात्मक रूप से अभ्यास करने पर ही वह विकसित होगा एवं बना रहेगा।

अहिंसा का सिद्धान्त उतना ही सही एवं उचित है जितना गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त। यदि आप मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसा के अभ्यास में पूर्णतया प्रतिष्ठित हैं, तो आप भगवान् हैं।

अहिंसा का मार्ग कठिन है लेकिन यदि आप गम्भीरतापूर्वक अहिंसा का अभ्यास करते हैं, तो आप सरलता से इस मार्ग पर चल सकते हैं क्योंकि इसमें प्रत्येक पग पर आपको भगवद्कृपा प्राप्त होती है।

एक महान् सन्त शक्तिशाली राजाओं से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। भगवान् एक पवित्र व्यक्ति से अत्यधिक प्रसन्न होते हैं।

एक मनुष्य जो अपने दिये गये वचनों का पालन करता है, वह दूसरों पर अच्छा प्रभाव डालता है और अन्ततः दिव्यता में लीन होता है।

सहानुभूति, प्रेम, दया, निष्कपटता तथा गीता में वर्णित अन्य दिव्य गुणों का अर्जन करिए। संयमित जीवन जियें। नैतिक शक्ति आध्यात्मिक उन्नति का आधार है। नैतिक विकास आध्यात्मिक साधना का अभिन्न अंग है।

धर्म-नैतिकता का आधार

नैतिक बनने का गुण नैतिकता है। नैतिकता ही एक कार्य को उचित सिद्ध करती है। यह धार्मिक कर्तव्यों के अतिरिक्त, नैतिक कर्तव्यों का पालन है।

मानवीय व्यवहार में उचित एवं अनुचित का सिद्धान्त नैतिकता है। यह पवित्र नीवन है। कभी-कभी संकीर्ण अर्थों में इसका अभिप्राय शुद्धता होता है।

नैतिकता सद्‌गुण है। नैतिकता नीतिशास्त्र है। यह वह सिद्धान्त है जो कार्यों के चित अथवा अनुचित होने से सम्बन्धित है।

नैतिकता सर्वत्र समान है क्योंकि यह ईश्वर से निःसृत है।

नैतिकता धर्म का क्रियात्मक रूप है; धर्म नैतिकता का ही सैद्धान्तिक रूप है। जो आपको करना आवश्यक है, वह अवश्यमेव करना चाहिए, यद्यपि उससे कष्ट एवं हानि प्राप्त होते हैं, क्योंकि वह उचित है।

सभी सफल कार्य नैतिकता की नींव पर ही आधारित होते हैं। धर्थ के चिना नैतिकता मूलविहीन है। यह सामाजिक रीति-रिवाज के समान परिवर्तनशील, अस्थायी एवं ऐच्छिक बन जाती है।

सुदृढ़ नैतिकता के बिना उच्च सुसंस्कृतता, शिष्टता, विनम्रता एवं शालीनता सम्भव नहीं है।

जो नैतिकता धर्म पर आधारित नहीं है, वह यथार्थ एवं स्थायी नैतिकता नहीं है।

धर्म का नैतिकता से पार्थक्य नहीं हो सकता है। नैतिकता धर्म का आधार है। नैतिकता एवं धर्म उसी प्रकार अपृथक्करणीय हैं जिस प्रकार अग्नि एवं उष्णता, बर्फ एवं शीतलता, पुष्प एवं सुगन्ध।

धर्म के बिना नैतिकता एक मूलविहीन वृक्ष है, रेत पर बना एक घर है, बिना स्रोत की एक नदी है।

नैतिकता सम्बन्धी उपदेश मनुष्य के चरित्र को सुधारने तथा उसे दुर्गुणों एवं अज्ञान से मुक्त कराने के लिए सर्वश्रेष्ठ माध्यम है।

धर्मविहीन नैतिकता का अस्तित्व नहीं होना चाहिए। यदि ऐसा है, तो यह परिवर्तित हो जायेगी, ज्यूँ ही आपको असुविधाएँ प्राप्त होंगी। धर्म को इसे शासित-नियन्त्रित करना चाहिए।

किसी कार्य की नैतिकता उसमें निहित उद्देश्य पर निर्भर करती है। सर्वप्रथम उचित आदर्श अपनाइए और फिर आप निश्चय ही सत्कार्य करेंगे।

धार्मिक सिद्धान्त की अनुपस्थिति में राष्ट्रीय नैतिकता नहीं रह सकती है।

बिना धर्म के नैतिकता का नाश होगा। धर्म ही नैतिकता का मूल है। नैतिकता को उसके उचित आधार अर्थात् ईश्वर के प्रति प्रेम एवं भय पर स्थापित करिए।

धर्मविहीन नैतिक मूल्य पथरीली भूमि पर बोये गये बीज के समान सूख जायेंगे और नष्ट हो जायेंगे।

नैतिकता सामाजिक प्राणी के रूप में मनुष्य के नैतिक कर्तव्यों का सिद्धान्त है। ईश्वरविहीन नैतिकता अधर्म ही है।

नैतिकता एवं नीतिशास्त्र

नैतिक सिद्धान्त इस अभिप्राय में परिपूर्ण नहीं है कि नैतिक नियमों एवं प्रतिबन्धों से परे भी एक अवस्था है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि नैतिक नियमों की अवहेलना की जा सकती है। नैतिकता अन्तरात्मा द्वारा अभिव्यक्त उचित होने के अन्तर्निहित भाव का पालन है जो कि स्वार्थ एवं इसकी अन्य अभिव्यक्तियों अथवा प्रभावों से मुक्त है। नैतिकता वह आत्म-बोध है, वह सत्य-बोध है जो उन आवेगों-वासनाओं के शासन से प्रतिबन्धित होना अस्वीकार करता है, जो सार्वभौमिक कल्याण के विरुद्ध हैं। नैतिक बोध का उद्देश्य पूर्णता का पथ निर्देशित करना है, और इसीलिए नैतिकता का मूल्यांकन चेतना को अबाधित आनन्द की ओर निर्देशित करने की इसकी क्षमता द्वारा किया जाता है जो कि एक या कुछ व्यक्तियों अथवा ब्रह्माण्ड के एक भाग अथवा अस्तित्व के एक प्रकार तक ही सीमित नहीं है।

निःस्वार्थ भाव तथा इसके परिणामस्वरूप आनन्द का क्षेत्र जितना व्यापक होगा, उतनी ही अधिक नैतिक वह पद्धति अथवा कार्य होगा जिसके माध्यम से यह निःस्वार्थता क्रियान्वित होती है अथवा अभिव्यक्त होती है। सभी स्वार्थपूर्ण कार्य अनैतिक हैं। स्वार्थपूर्ण कार्य क्या है? यह वह कार्य है जिसका उद्देश्य अपने अहंकार एवं इन्द्रियों की इच्छाओं को दमित करना नहीं अपितु उन्हें सन्तुष्ट करना है।

इन स्वार्थपूर्ण कार्यों के अतिरिक्त, मनसा-वाचा-कर्मणा दूसरों को कष्ट पहुँचाना, असत्य भाषण, चोरी करना आदि अनैतिक कार्य हैं। काम, क्रोध, लोभ, अहंकार तथा ईर्ष्या अनैतिक गुण हैं। दानशीलता द्वारा भी नैतिक नियमों की अवहेलना का औचित्य सिद्ध नहीं किया जा सकता है।

नैतिकता एक महान् नियम है जो सार्वभौमिक है तथा देश, काल अथवा परिस्थितियों-अवस्थाओं से प्रतिबन्धित नहीं है। (योग-सूत्र)

विषय-सूची

भाग-१सद्‌गुणों का अर्जन किस प्रकार करें

भाग-२ दुर्गुणों का नाश कैसे करें

भाग-१

सद्‌गुणों का अर्जन किस प्रकार करें

परिवर्जन (Abstinence)

परिवर्जन किसी वस्तु के सेवन अथवा भोग से स्वयं को दूर रखना है। परिवर्जन संयम है।

यह अत्यधिक भोग अथवा पाशविक प्रवृत्तियों के तुष्टीकरण से स्वयं को दूर रखने की अवस्था, अभ्यास अथवा कार्य है। यह आत्म-नियन्त्रण अथवा आत्मानुशासन है। उदाहरणतः हम मांसाहार परिवर्जन, मद्य परिवर्जन, भोजन परिवर्जन अथवा कामोपभोग परिवर्जन की बात कहते हैं।

पूर्ण परिवर्जन (Total Abstinence) मादक द्रव्यों के प्रयोग से दूर रहने के कार्य तथा अभ्यास का विशेष नाम है।

परिवर्जन सतत संयम है जो दीर्घायु एवं सुस्वास्थ्य देता है और शरीर को रोगों से मुक्त रखता है।

यह एक अनुशासन है जो वैराग्य प्रदान करता है तथा एक साधक की योग-मार्ग पर अग्रसर होने में सहायता करता है। यह आत्म-नियन्त्रण का अभ्यास है एवं सद्गुणों की नींव है। परिवर्जन रोगों के विरुद्ध एक अत्यन्त शक्तिशाली कवच है। यह रोगों के विरुद्ध रक्षात्मक सद्गुण है। यह उत्तम स्वास्थ्य, ऊर्जा, शक्ति एवं स्फूर्ति प्रदाता है।

आप एक सप्ताह के लिए चाय, कॉफी अथवा धूम्रपान का त्याग करें। यह आपको अगले परिवर्जन के लिए बल तथा संकल्प शक्ति देगा। तीसरी वस्तु पर संयम अपेक्षाकृत अधिक सरल होगा।

परिवर्जन का उद्देश्य मन को निम्नतर रुचियों से ऊपर उठाना है। यह आत्म-सुधार के लिए सहायक है।

मिताहारिता, इन्द्रियनिग्रह, उपवास, मिताचार, आत्मसंयम, आत्मत्याग, आत्मनिग्रह एवं संयम सभी परिवर्जन के समानार्थी शब्द हैं।

मद्यपान, अतिभोजिता, लोभ, असंयम, आमोद-प्रमोद, विषयासक्ति एवं व्यभिचारिता परिवर्जन के विपरीतार्थी हैं।

भोजन परिवर्जन (Abstinence from food) का तात्पर्य सामान्यतया बिना भोजन के रहना है। मिताहारिता (Abstemiousness) संयमपूर्वक भोजन लेना है। परिवर्जन एक अवसर के लिए हो सकता है। मिताहारिता नियमित संयम है।

आत्मत्याग (Self-denial) उस वस्तु का त्याग है जिसकी आप इच्छा करते हैं। परिवर्जन (Abstinence) उस वस्तु का भी हो सकता है जिसे आप नहीं चाहते हैं। उपवास (Fasting) कुछ समय के लिए और सामान्यतया धार्मिक कारणों से भोजन का त्याग है। संयम (Temperance) का अभिप्राय किसी वस्तु के संयमित भोग तथा अन्य के पूर्ण त्याग द्वारा शान्ति एवं मन का समत्व बनाये रखना है। हम भोजन के लिए संयम की बात करते हैं लेकिन दुर्गुणों के परिवर्जन की।

अनुकूलनशीलता (Adaptability)

अनुकूलनशीलता एक सद्गुण अथवा उदात्त गुण है जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं को दूसरों के अनुकूल बनाता है, उनके साथ स्वयं को समायोजित करता है, चाहे उनका स्वभाव कैसा भी हो। जीवन में सफलता के लिए यह अत्यधिक वांछनीय आदत अथवा गुण है। इसका धीरे-धीरे विकास किया जाना चाहिए। अधिकांश मनुष्य यह नहीं जानते हैं कि दूसरों के साथ स्वयं को किस प्रकार समायोजित करें। अनुकूलनशीलता दूसरों के हृदय और अन्ततः जीवन का युद्ध थोड़े से झुकने द्वारा जीतने का एक विशेष कौशल अथवा साहस है।

पत्नी नहीं जानती है कि स्वयं को अपने पति के अनुकूल कैसे बनाये। वह सदैव अपने पति को अप्रसन्न करती है और गृह में कलह करवाती है तथा पति से पार्थक्य प्राप्त करती है। एक लिपिक अपने वरिष्ठ अधिकारी अथवा मालिक के साथ स्वयं को समायोजित करना नहीं जानता है। वह उससे झगड़ता है और तुरन्त कार्यमुक्त किया जाता है। एक शिष्य नहीं जानता है कि स्वयं को अपने गुरु के अनुकूल कैसे बनाये। एक व्यवसायी नहीं जानता है कि वह अपने ग्राहकों के साथ किस प्रकार सामंजस्य बैठाये और इसीलिए वह अपने ग्राहक तथा व्यवसाय खो देता है। दीवान महाराजा के अनुकूल बनना नहीं जानता है। उसे राजकीय सेवा छोड़नी पड़ती है।

विश्व अनुकूलनशीलता द्वारा ही संचालित होता है। जो व्यक्ति अनुकूलनशीलता की कला अथवा विज्ञान जानता है, वह इस विश्व में भली प्रकार निर्वाह कर पाता है और जीवन की सभी परिस्थितियों में सदैव प्रसन्न रहता है।

यदि मनुष्य स्वयं को अन्यों के साथ समायोजित करना चाहता है, तो उसे नमनशील होना चाहिए। अनुकूलनशीलता विकसित करने के लिए अधिक बुद्धिमानी और प्रतिभा की आवश्यकता नहीं है। यदि लिपिक अपने वरिष्ठ अधिकारी के तरीके, आदतें एवं स्वभाव भली प्रकार समझता है और उनके अनुकूल स्वयं को अच्छी तरह से समायोजित करता है, तो अधिकारी उस लिपिक का दास बन जाता है। आपको कुछ दयापूर्ण और स्निग्ध शब्दों का प्रयोग करना होगा। उसके हृदय को द्रवित करने के लिए थोड़े से प्रयास की आवश्यकता है। बस इतना ही पर्याप्त है। नम्रतापूर्वक एवं मधुर बोलिए। उसके आदेशों का अक्षरश: पालन करिए। उसका विरोध मत करिए। इस उक्ति को याद रखिए-"सेवा से आज्ञापालन श्रेष्ठ है ।" वरिष्ठ अधिकारी थोड़ा सम्मान चाहता है। "हाँ जी-हाँ जी, जी हुजूर, बहुत अच्छा श्रीमान्" इस प्रकार कहिए। आपको इसका कोई मूल्य नहीं चुकाना पड़ता है। तब आपका अधिकारी आपका दास बन जाता है। उसके हृदय में आपके लिए एक विशेष स्थान बन जाता है। आप उसके प्रिय बन जाते हैं। वह वही करेगा जो आप चाहते हैं। वह आपकी त्रुटियों को क्षमा कर देगा। अनुकूलनशीलता विकसित करने के लिए विनम्रता एवं आज्ञापालन आवश्यक है। दम्भी एवं अहंकारी मनुष्य के लिए समायोजित होना कठिन है। वह सदैव कष्ट में ही रहता है। वह अपने प्रयासों में सदैव असफल रहता है। अहंकार एवं अभिमान अनुकूलनशीलता विकसित करने के मार्ग में आने वाली दो महत्त्वपूर्ण बाधाएँ हैं।

जब एक विद्यार्थी एक ही कक्ष में रहने वाले अपने सहपाठियों के साथ समायोजित होना नहीं जानता है, तो संघर्ष प्रारम्भ होता है और उनकी मित्रता संकट में पड़ जाती है। अनुकूलनशोलता मित्रता को दीर्घजीवी बनाती है। विद्यार्थी छोटी-छोटी वस्तुओं के लिए झगड़ा करते हैं। एक विद्यार्थी कहता है- 'मैंने श्रीमान् एक्स को कई दिनों तक चाय पिलायी। मैं उसे कई दिनों तक सिनेमा ले गया। मैंने उससे बॉसबेल की 'लाइफ ऑफ जॉनसन' पढ़ने के लिए माँगी। उसने देने से मना कर दिया। वह किस प्रकार का मित्र है। मैं उसे बिल्कुल पसन्द नहीं करता हूँ।" इस प्रकार मित्रता टूट जाती है। एक साधारण सी बात मन को विक्षुब्ध कर देती है। अनुकूलनशीलता एक शक्तिशाली बन्धन है जो मनुष्यों को अक्षुण्ण प्रेम एवं मित्रता के बन्धन में बाँध देता है। एक अनुकूलनशील मनुष्य विश्व के किसी भी भाग के किसी भी मनुष्य के साथ सामंजस्य बैठा सकता है। सभी लोग एक अनुकूलनशील मनुष्य से स्वतः ही प्रेम करते हैं। अनुकूलनशीलता अत्यधिक शक्ति एवं आनन्द देती है। अनुकूलनशीलता संकल्प को विकसित करती है।

एक अनुकूलनशील मनुष्य को कुछ त्याग करने होते हैं। अनुकूलनशीलता त्याग की भावना का विकास करती है। वह स्वार्थ का नाश करती है। एक अनुकूलनशील मनुष्या को दूसरों के साथ अपनी वस्तुएँ बाँटनी होती हैं। उसे अपमान एवं कठोर शब्द सहन करने पड़ते हैं। एक अनुकूलनशील मनुष्य में एकता की अथवा जीवन के एकत्व की भावना विकसित होती है। बेदान्तिक साधना के लिए यह अत्यधिक सहायक है। जो अनुकूलनशीलता का अभ्यास करता है, उसे घृणा की भावना और उच्चता के अभिमान का नाश करना पड़ता है। उसे सबके साथ मिल कर रहना होता है। उसे सभी को स्नेहपूर्वक स्वीकार करना होता है। अनुकूलनशीलता सार्वभौमिक प्रेम को विकसित करती है और घृणा की भावना का नाश करती है।

एक अनुकूलनशील मनुष्य को अपने सहयोगियों-साथियों के कठोर शब्दों को सहन करना होता है। उसे धैर्य एवं सहनशीलता का विकास करना होता है। ये गुण स्वयं ही विकसित होते हैं जब वह दूसरों के साथ समायोजित होने का प्रयास करता है। एक अनुकूलनशील मनुष्य किसी भी वातावरण में रह सकता है। वह बनारस अथवा अफ्रीका की गर्मी सहन कर सकता है। वह एक झोपड़ी में रह सकता है। वह एक शीत स्थान में रह सकता है। वह समचित्तता विकसित करता है। वह अत्यधिक गर्मी और सर्दी सहन कर सकता है।

अनुकूलनशीलता अन्ततः आत्मज्ञान प्रदान करती है। जो इस सद्गुण को धारण करता है, वह तीनों लोकों में महान् है। वह सदैव प्रसन्न एवं सफल होता है।

विपत्ति (Adversity)

१

विपत्ति विषम परिस्थिति है। यह कष्ट अथवा दुर्भाग्य अथवा आपदा है। विपत्ति अप्रिय, कष्टपूर्ण परिस्थितियों, अत्यधिक संकट अथवा पीड़ा से युक्त एक दशा अथवा स्थिति है। यह समृद्धि के विपरीत है। विपत्ति एक घटना अथवा घटनाओं का क्रम है जो सफलता अथवा आकांक्षाओं के विपरीत है। यह दुःख की दशा है।

विपत्ति एक प्रच्छन्न आशीर्वाद है। विपत्ति के अनेक उपयोग हैं। यह संकल्पशक्ति तथा सहनशक्ति को सुदृढ़ करती है तथा मन को प्रभु की ओर अधिकाधिक मोड़ती है। यह हृदय में वैराग्य उत्पन्न करती है। यह सत्य की ओर प्रथम पग है।

विपत्ति एक गुण है। यह आलसी को परिश्रमशील बनाती है। यह बुद्धिमान् की क्षमताओं को प्रकट करती है। यह मनुष्य के लिए उसकी क्षमताओं का प्रयोग करना आवश्यक बनाती है। यह उन प्रतिभाओं एवं क्षमताओं को प्रकट करती है जो समृद्ध परिस्थितियों में सुप्त रह गयी होती हैं।

समृद्धि के प्रकाश में आनन्द उठाना सरल है। कठिनाई एवं विपत्ति में आपके व्यवहार की विकट परीक्षा होती है।

जब आप विषम परिस्थितियों में हैं, मुख पर म्लानता अथवा दुःख नहीं लाइए। मुस्कराइए। हँसिए। आनन्द मनाइए। भीतर से शक्ति एवं बल प्राप्त करिए। राम, राम, राम गाइए। ॐ ॐ ॐ उच्चारण करिए। आपकी आत्मा में शक्ति, ज्ञान एवं आनन्द का स्रोत है। इसका अनुभव करिए। इसका साक्षात्कार करिए।

एक शान्त सागर ने कभी कोई कुशल जहाज संचालक अथवा एडमिरल नहीं बनाया। विपत्ति के तूफान ही एक व्यक्ति की क्षमताओं तथा प्रतिभा को जाग्रत करते हैं तथा विवेक, कौशल, साहस, धैर्य एवं अध्यवसायिता उत्पन्न करते हैं। विपत्ति व्यक्ति को विचार करने, आविष्कार करने एवं नवीन खोज करने पर विवश करती है।

समृद्धि की अवस्था में आपके असंख्य मित्र होंगे लेकिन जब आप विपत्ति में हैं, तब वे आपको छोड़ देंगे। मित्रों की परीक्षा हेतु विपत्ति ही एकमात्र कसौटी है; समृद्धि उचित मापक नहीं है। विपत्ति में आप अनेक पाठ सीखेंगे। विपत्ति आपको उचित रीति से ढालेगी। यह आपकी महान् शिक्षक है। यह सर्वश्रेष्ठ एवं कठोर प्रशिक्षक है।

विपत्ति की अग्नि में ही महान् पुरुष एवं सन्त तपाये गये हैं, परिष्कृत हुए हैं तथा महिमान्वित हुए हैं।

विपत्ति अत्यधिक लाभदायक है। जब आप विषम स्थिति में हैं, तो रोइए मत। विपत्ति आपको सशक्त करती है तथा आपके कौशल में वृद्धि करती है।

वियोग, विपदा, आपदा, दुःख, कठिनाई एवं दुर्भाग्य आदि विपत्ति के समानार्थी शब्द हैं।

किसी आशा का टूटना, कार्य में असफलता, दुर्भाग्य यथा सम्पत्ति, पद की हानि 'विपत्ति' (Adversity) कहे जाते हैं।

मृत्यु के कारण मित्रों अथवा सम्बन्धियों के खोने के लिए हम 'वियोग' (Bereavement) शब्द का प्रयोग करते हैं।

सहसा और अत्यधिक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के लिए 'विपदा' (Calamity) एवं 'आपदा' (Disaster) शब्दों का प्रयोग होता है, थोड़ी परेशानी अथवा असफलता के लिए 'दुर्भाग्य' (Bed-luck) शब्द का प्रयोग होता है।

हम निर्धन के 'दुःख' (Misery) तथा सैनिक की 'कठिनाई' (Hardship) की बात कहते हैं।

आशीर्वाद, वरदान, प्रसन्नता, समृद्धि एवं सफलता विपत्ति के विपरीतार्थी शब्द हैं।

२

आप शेक्सपिअर की रचनाओं में पायेंगे, "विपत्ति के अमूल्य उपयोग हैं, जो एक कुरूप और विषैले मेढक की भाँति एक बहुमूल्य रत्न धारण किये है।" इस संसार में सर्वश्रेष्ठ वस्तु दुःख अथवा विपत्ति है। दुःख के समय ही मनुष्य ईश्वर का स्मरण करता है। दुःख हमें जाग्रत करता है। ईश्वर की खोज दुःख से प्रारम्भ होती है। दर्शनशास्त्र का प्रारम्भिक बिन्दु दुःख ही है। यदि संसार में दुःख नहीं होता, तो मनुष्य ने मोक्ष प्राप्ति के लिए कभी प्रयास नहीं किया होता। वह सांसारिक जीवन में ही सन्तुष्ट रहता। दुःख से मुक्ति पाने के प्रयास में ही वह सत्य अथवा शान्ति के धाम, परम धाम को पाता है। वह प्रार्थना, जप, दान, निःस्वार्थ सेवा, धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय प्रारम्भ करता है। भक्त भगवान् से हमेशा प्रार्थना करते हैं, "हे प्रभु! हमें हमेशा विपत्ति दें ताकि हम सदैव आपका स्मरण कर सकें।" कुन्ती देवी ने भगवान् कृष्ण से प्रार्थना की, "हे प्रभु! मुझे हमेशा विपत्ति दें ताकि मेरा मन सदैव आपके चरण कमलों में लगा रहे।" विपत्ति सहनशक्ति एवं संकल्पशक्ति का विकास करती है। विपत्ति साहस एवं सहनशीलता का विकास करती है। विपत्ति पाषाण हृदय को द्रवित करती है और उसमें भगवद्भक्ति का संचार करती है। विपत्ति प्रच्छन्न दिव्य आशीर्वाद है। इसलिए जब भी आप विषम परिस्थितियों में हैं, भयभीत मत होइए। विपत्ति के स्वयं के गुण हैं। अनेक मनुष्यों ने विषम परिस्थितियों से ऊपर उठ कर शक्ति एवं उच्च पद प्राप्त किये हैं। विपत्ति मनुष्य से कठोर संघर्ष करवाती है। मद्रास उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश स्वर्गीय श्री मुथुस्वामी अय्यर भी विकट परिस्थिति में थे। वह रात को नगर परिषद् की सड़क पर लालटेन के प्रकाश में अध्ययन किया करते थे। ब्रिटेन के अनेक प्रधानमन्त्री जीवन की विषम स्थितियों से ऊपर उठे हैं, उन्नत हुए हैं। सभी धर्मगुरुओं, सन्तों, फकीरों, भक्तों एवं योगियों को विकट परिस्थितियों में कठोर संघर्ष करना पड़ा है। शंकर, ज्ञानदेव, रामतीर्थ एवं तुकाराम सभी विपत्ति से अत्यधिक लाभान्वित हुए। यदि उन्हें समृद्ध अवस्था में रखा जाता, तो वे कभी भी महानता और भव्य आध्यात्मिक ऊँचाइयों को नहीं प्राप्त कर पाते।

अहिंसा (Ahimsa)

(१) किसी प्राणी को हानि मत पहुँचाइए, वरन् दूसरे प्राणी के जीवन संरक्षण में उतना ही प्रयासशील होइए जितना आप स्वयं के जीवन के प्रति होते हैं क्योंकि अहिंसा ही परम धर्म है।

-तीर्थंकर महावीर

(२) आइए, हम क्षुद्र और महान् सभी प्राणियों के प्रति एक असीम प्रेम से परिपूर्ण हृदय एवं मन का विकास करें। हाँ, हम सम्पूर्ण विश्व के प्रति प्रेम का अभ्यास करें।

- गौतम बुद्ध

(३) तुम किसी की हत्या नहीं करोगे।

-ईसा मसीह

(४) जो एक जीवन की रक्षा करता है, मानो उसने समस्त मानवता की रक्षा की है।

-मोहम्मद (कुरान ५-३२)

इस संसार के समस्त प्राणी, पशु-पक्षी आपके समान ही हैं।

-मोहम्मद (कुरान ६-३८)

(५) एक मनुष्य को बुराई की अपेक्षा भलाई, दुष्कृत्यों की अपेक्षा सत्कर्मों, दोष की अपेक्षा गुण तथा अन्धकार की अपेक्षा प्रकाश का चयन करना चाहिए।

- जरथुस्त्र

(६) सबमें एक ही आत्मा का वास है। सभी एक ईश्वर की अभिव्यक्तियाँ हैं। किसी दूसरे को आहत करके आप स्वयं को ही आहत करते हैं। दूसरे की सेवा करके आप स्वयं की ही सेवा करते हैं। सबसे प्रेम करिए। सबकी सेवा करिए। किसी से घृणा मत करिए। किसी का अपमान मत करिए। विचार, शब्द अथवा कार्य से किसी को कष्ट मत पहुँचाइए।

-स्वामी शिवानन्द

सतर्कता-सावधानी (Alertness)

सतर्कता सावधानी है। यह स्फूर्ति है। यह फुरतीलापन है। सतर्कता सजगता का व्यवहार है। इसका मुख्यतया प्रयोग 'एक चौकीदार सतर्कतापूर्वक रहा' (The watchman stood on the alert) किया जाता है।

एक जहाज का कमान सदैव सतर्क होता है। एक मछुआरा सदैव सतर्क होता है। एक शल्यचिकित्सक शल्यक्रिया कक्ष में सदैव सतर्क रहता है। इसी प्रकार, एक ज्ञान-पिपासु साधक को सदैव सतर्क रहना चाहिए। तब ही वह इस उच्छृंखल, उपद्रवी और चंचल मन को नियन्त्रित एवं पराजित कर सकता है। योग के एक विद्यार्थी के लिए नतर्कता एक महत्त्वपूर्ण योग्यता है।

सतर्क रहिए। सतर्क दृष्टि रखिए। सदैव उद्यत रहिए। सावधान रहिए। सजग बनिए। आप सभी कार्यों एवं आध्यात्मिक साधना में सदैव सफलता प्राप्त करेंगे।

एक सतर्क मनुष्य अत्यधिक सावधान-जागरूक रहता है। वह समय पर कार्य करने को तैयार रहता है। वह गिलहरी की तरह स्फूर्तिवान् होता है। फुरतीलापन उसकी विशेषता है। एक सतर्क मनुष्य जीवन से भरा होता है। वह सदैव तत्पर और उद्यत रहता है। वह पूर्ण जाग्रत रहता है। 'सतर्क' (Alert), 'उद्यत' (Ready), 'पूर्ण जाग्रत' (Wide awake) शब्दों का प्रयोग किसी कार्य के सम्बन्ध में तत्परता के लिए किया जाता है।

'उद्यत' का तात्पर्य विचारपूर्ण तैयारी है। एक भ्रमणशील भारतीय सतर्क (Alert) होता है; एक प्रशिक्षित सैनिक उद्यत (Ready) होता है।

उद्यत (Ready) शब्द 'तैयार' (Prepared) से अधिक जीवन्तता और शक्ति को अभिव्यक्त करता है। बन्दूक तैयार की जाती है। मनुष्य उद्यत होता है।

आवश्यक क्षण पर प्रस्तुत होना तत्परता (Promptness) का लक्षण है। एक कुशल सेनाध्यक्ष आपदापूर्ण स्थितियों के लिए उद्यत (Ready), संकट पहचानने में सतर्क (Alert) तथा अवसर-लाभ उठाने में तत्पर (Prompt) होता है।

फुरतीलापन (Nimble) अब सतर्कता (Alertness) का गौण एवं कम प्रचलित अर्थ है।

मन्द, सुस्त, निष्क्रिय, अकर्मण्य एवं मूर्ख सतर्क-सावधान के विपरीतार्थक शब्द हैं।

एक उपदेशक को वक्तृत्व कला के ज्ञान के सभी स्रोतों के प्रति सचेत (Alert) रहना चाहिए। न्यायाधीशों को सावधानीपूर्वक (Alertly) अपनी भूमिका निभानी चाहिए।

सुशीलता-स्नेहपात्रता (Amiability)

सुशीलता-स्नेहपात्रता प्रिय बनने और प्रेम उत्पन्न करने का गुण है।

एक सुशील मनुष्य का मधुर स्वभाव होता है। वह इतनी अधिक मानसिक दीप्ति, प्रेम एवं आनन्द प्रसारित करता है कि वह सभी गुणग्राही हृदयों में स्थान पाता है।

सुशीलता दूसरों को प्रसन्न करने एवं प्रेम करने की सतत इच्छा है। सुशीलता दयालुता अथवा स्वभाव की मधुरता है। यह स्नेहपात्रता है।

एक सुशील मनुष्य ऐसी सुखद मनोदशा अथवा सामाजिक गुण रखता है जो प्रसन्न करते हैं एवं मित्र बनाते हैं। वह स्वभावतः स्नेही एवं प्रियकर होता है। वह दयालु, उदार एवं प्रसन्नचित्त होता है। उसका स्वभाव भला होता है। वह क्षुब्धता-चिड़चिड़ाहट से मुक्त होता है। वह मधुर, श्रेष्ठ एवं प्रिय स्वभाव तथा दयालुता से सम्पन्न होता है।

दयापूर्ण मुस्कान एवं शिष्टता अत्यधिक लाभ प्रदान करते हैं। सुशील स्वभाव का मनुष्य दूसरों के लिए करुणा एवं प्रेम रखता है, इन गुणों के द्वारा वह दूसरों का प्रेम जीतता है। सुशील शब्द 'अनुकूल' अथवा 'अच्छे स्वभाव का' शब्दों से ऊँचा है।

इससे तात्पर्य ऐसे स्वभाव से है जो दूसरों को प्रसन्न, आनन्दित एवं हर्षित करने का इच्छुक है। एक सच्चा सुशील मनुष्य कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करता है तथा न ही अशिष्ट व्यवहार करता है। अपने सरल स्वभाव से वह सभी परिस्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति के साथ समायोजित हो सकता है।

घृणास्पद, क्रूर, अरुचिकर, चिड़चिड़ा, अप्रिय एवं असौम्य 'सुशील' के विपरीतार्थक शब्द हैं।

सुशीलता विकसित करिए। इसे अपने स्वभाव का अभिन्न अंग बनाइए।

उद्यमशीलता एवं मनोयोग (Application)

एप्लीकेशन शब्द का मूल 'एप्लीकेटो' अथवा 'एप्लीकेटस' है जिसका अर्थ है जोड़ना अथवा बाँधना। यह मन को केन्द्रित करने की कला है। इसमें गहन विचार समाहित होता है।

उद्यमशीलता परिश्रम है। यह गहन विचार एवं ध्यान है। अध्यवसायिता उद्यमशीलता है।

इसका अभिप्राय किसी विधि, नियम, सत्य तथा उपदेश का जीवन में क्रियान्वन है। यह क्रियान्वन की क्षमता भी है यथा यौगिक यम-नियम अथवा प्रभु ईसा के पर्वतोपदेश (Sermon on the Mount) का जीवन में क्रियान्वन।

आप जो कार्य कर रहे हैं, उसमें पूर्ण ध्यान केन्द्रित करना मनोयोग (Application) से कार्य करना है। एप्लीकेशन शब्द का अर्थ ध्यान केन्द्रित करने की आदत एवं क्षमता भी है।

कार्य में मनोयोगपूर्वक सतत लगे रहना प्रत्येक मनुष्य के लिए लाभप्रद प्रशिक्षण है। सामान्य बोलचाल में हम कहते हैं, "श्रीमान् क ने अध्ययन के प्रति गहन उद्यमशीलता से अपने स्वास्थ्य को हानि पहुँचायी। यदि उनकी उद्यमशीलता उनकी प्रतिभा के अनुरूप होती तो उनकी प्रगति अधिक होती।"

एक मनुष्य जो उद्यमशीलता के गुण से सम्पन्न है, वह अपने सभी कार्यों में सफलता प्राप्त करता है। समृद्धि उसकी सेविका होती है।

एक उद्यमशील मनुष्य जल्दी उठता है एव उचित समय पर शय्या पर जाता है। वह एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गँवाता है। वह सदैव जागरूक, सजग एवं अध्यवसायी होता है। वह सदैव क्रियाशील रहता है। वह कभी अवसर नहीं खोता है। वह शल्यक्रिया कक्ष में शल्यचिकित्सक के समान है। वह एक जहाज के कप्तान के समान है।

वह स्वस्थ होता है। उसका मन हल्का एवं प्रसन्न रहता है। उसके विचार स्पष्ट होते हैं। उसका कक्ष व्यवस्थित होता है। वह अपने कार्य में व्यवस्थित होता है। वह दृढ़ संकल्पवान एवं दृढ़ निश्चयी होता है। वह कभी पश्चात्ताप नहीं करता है और न ही खेद करता है।

वह धनवान होता है। वह अभावमुक्त होता है। वह शक्ति एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। वह यश प्राप्त करता है। वह आदर पाता है और सम्मानित किया जाता है।

आप जो भी करने का निश्चय करते हैं, उसे अभी करिए, उसे तुरन्त करिए। एक क्षण की भी प्रतीक्षा मत करिए। जो आप प्रातःकाल कर सकते हैं, उसे सायंकाल तक स्थगित मत करिए।

यह क्षण आपका है। अगला क्षण भविष्य के गर्भ में है। आप नहीं जानते हैं कि वह क्या लाने वाला है।

भविष्य पर अधिक निर्भर मत रहिए। भूतकाल के लिए पश्चात्ताप मत करिए। वर्तमान में जियें। अभी कार्य में लग जायें।

अभी प्रयास करिए। प्रयत्न करिए। पुरुषार्थ करिए। अपने समस्त बल, शक्ति एवं ऊर्जा का प्रयोग करिए। आप निश्चित रूप से सफल होंगे। आप सभी प्रकार के प्रलोभनों एवं बाधाओं पर सरलता से विजय प्राप्त करेंगे। अत्यधिक उद्यमशील मनुष्य असफलता से अपरिचित रहता है।

बिना अत्यधिक उद्यम के, आप गहन ध्यान एवं समाधि में प्रवेश नहीं पा सकते हैं। आलस्य, तन्द्रा, अकर्मण्यता, लापरवाही एवं दीर्घसूत्रता उद्यमशीलता के विपरीतार्थक शब्द हैं।

हे राम! उद्यमशीलता का विकास करिए तथा अभी एवं यहीं सफलता, प्रचुरता, शान्ति, समृद्धि एवं कैवल्य मोक्ष प्राप्त करिए।

आकांक्षा (Aspiration)

भगवद् साक्षात्कार प्राप्त करने की तीव्र-प्रबल इच्छा ही आकांक्षा है।

आकांक्षा का अभिप्राय उत्सुकतापूर्वक इच्छा करना अथवा उच्च वस्तुओं की प्राप्ति का उद्देश्य रखना है। सभी उचित मानवीय आकांक्षाओं का एक वास्तविक उद्देश्य परमात्मा ही है।

आकांक्षा उस तत्त्व की उत्कट अभीप्सा अथवा प्रबल अभिलाषा है जो मनुष्य की वर्तमान पहुँच एवं प्राप्ति से परे है, विशेषतया जो तत्त्व उदात्त, पवित्र एवं आध्यात्मिक है।

आकांक्षा से अभिप्राय ऊर्ध्वगामी दिशा में अग्रसर होना है। आकांक्षा से तात्पर्य अभी तक अप्राप्त किसी उच्च तथा अच्छी वस्तु के लिए तीव्र इच्छा अथवा उत्कण्ठा है जो प्रायः उसे प्राप्त करने के प्रयास के साथ संलग्न रहती है।

अवधान (Attention)

अवधान मन को निरन्तर एक दिशा में लगाये रखना है। किसी विशेष उद्देश्य के प्रति उत्साह तथा समग्रता के साथ मानसिक शक्तियों को निर्देशित करना ही अवधान है।

अवधान संकल्प को सशक्त करता है। यह संकल्प का आधार है। अवधान एकाग्रता का विकास करता है।

अवधान सफलता की ओर ले जाता है। अवधान के अभाव के कारण मनुष्य असफलताएँ पाता है।

अवधान प्रतिभावान बनाता है। किसी उद्देश्य के प्रति संकेन्द्रित एवं निरन्तर अवधान करने की शक्ति एक श्रेष्ठ प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति का लक्षण है।

समस्त शिक्षा, विज्ञान एवं कौशल अवधान पर निर्भर हैं। अवधान नवीन आयाम खोलता है तथा व्याधियों का शमन करता है।

अवधान ही काव्यात्मक-प्रतिभा तथा अन्वेषण-प्रतिभा एवं सफलता का स्रोत है। यह अवधान ही था जिसके द्वारा न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण, हार्वे ने शरीर में रक्त संचार एवं डेवी ने आधुनिक रसायनशास्त्र की आधारशिला रखने वाली अवधारणाओं की खोज की।

अवधान मानसिक ऊर्जा का एक प्रकार है जो चेतना के प्रत्येक क्षेत्र के स्वरूप निर्धारण में आवश्यक है।

यह चेतना की जटिल विषयवस्तु की एक अथवा एक से अधिक विशेषताओं को स्पष्टता अथवा विशेषता प्रदान करने का कार्य अथवा प्रक्रिया है।

यह मानसिक क्रिया अथवा क्षमता का एक प्रकार है जो चेतना की विषयवस्तु में कुछ का चयन, उन्हें अधिक स्पष्टता देने के उद्देश्य से सम्भव बनाता है।

अनुभव का वह सामान्य तथ्य, जिससे आधुनिक मनोविज्ञान में अवधान की धारणा तथा सिद्धान्त उत्पन्न हुए, यह है कि कुछ वस्तुएँ अथवा वस्तुओं के अंश अन्य की अपेक्षा चेतना के क्षेत्र में अधिक स्पष्टता से अंकित होते हैं, ग्रहण किये जाते हैं, पहचाने जाते हैं जबकि अन्य केवल अस्पष्ट रूप से अथवा कठिनता से ग्रहण किये जाते हैं। स्पष्टता में अन्तर व्यक्ति के चयनात्मक कार्य अथवा प्रक्रिया पर निर्भर प्रतीत होता है। अस्वैच्छिक अवधान (Non-voluntary Attention) में वस्तु उद्दीपक की तीव्रता के द्वारा अथवा विशेष रुचि के लाभ द्वारा मन पर स्वयं को बलपूर्वक थोपती हुई प्रतीत होती है। स्वैच्छिक अवधान (Voluntary Attention) में व्यक्ति अपनी जिज्ञासा की सन्तुष्टि हेतु अथवा कुछ अन्य उद्देश्य की पूर्ति हेतु वस्तु का चयन करता प्रतीत होता है जिससे वह उसे अधिक स्पष्टता से समझ सके।

एक मनुष्य अवधानपूर्वक सुनता है, तो हम कहते हैं- "उसके कर्ण सजग-सावधान हैं।" वह अवधानपूर्वक देखता है तो हम कहते हैं-" उसके नेत्र सजग-सावधान हैं।" मनन करने में मन का प्रयोग किया जाता है। जब एक मनुष्य एक वक्ता के शब्दों के साथ साथ उसके वक्तव्य की विषयवस्तु एवं शैली के प्रति भी सावधान-सतर्क है, तो वह मन एवं इन्द्रियों का भी प्रयोग कर रहा है।

व्यवहार (Behaviour)

व्यवहार, आचरण, स्वभाव विशेषतया शिष्ट आदतें हैं।

अच्छा व्यवहार दूसरों के प्रति अच्छा आचरण है। आप एक मनुष्य की प्रकृति तथा उसके मन की प्रवृत्ति को उसके व्यवहार द्वारा जान सकते हैं।

व्यवहार वह दर्पण है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना प्रतिबिम्ब दिखाता है। अच्छा व्यवहार मित्रता प्राप्ति एवं समाज में उचित सम्मान प्राप्ति हेतु पासपोर्ट है। ज्ञान बाह्य व्यवहार को विश्वास प्रदान करता है। व्यवहार की तुच्छता अथवा व्यवहार की क्षुद्रता जीवन का अभिशाप है।

व्यवहार में विभिन्न प्रकार की सनक, अजीब प्रवृत्तियाँ मानव के दोष ही हैं। उसे स्वयं का सुधार करना चाहिए एवं इन दोषों को दूर करना चाहिए। जो स्वयं को सुधारना चाहता है, उसे अपने इन दोषों पर लज्जित होना

चाहिए। व्यक्तिगत आचरण में मर्यादा पालन ही अच्छा व्यवहार है। उचित अथवा मर्यादित रूप में व्यवहार ही अच्छा व्यवहार है।

व्यवहार ज्ञान, रुचि तथा भावनाओं की सामूहिक अभिव्यक्ति है।

चाल-ढाल (Carriage) से अभिप्राय शरीर के बैठने-उठने एवं चलने के तरीके से है। उदाहरणतः आकर्षक चाल-ढाल (Fain Carriage)

प्रकृति (Bearing) स्वभाव अथवा भावना की शारीरिक अभिव्यक्ति है। उदाहरणतः दम्भी प्रकृति (Haughty Bearing)

आचरण (Demeanour) न केवल भावनाओं की अपितु व्यक्ति की नैतिक स्थिति की शारीरिक अभिव्यक्ति है। उदाहरणतः भक्तिमय आचरण (Devout Demeanour) सभ्य आचार (Breeding) वह आचरण-व्यवहार है जो अच्छे कुल में जन्म एवं अच्छे प्रशिक्षण से प्राप्त होता है।

बरताव (Deportment) वह व्यवहार है जो किन्हीं विशेष नियमों के पालन से सम्बन्धित है। उदाहरणतः विद्यार्थियों का बरताव सर्वथा दोषमुक्त था। (Students' deportment was faultless.)

शिष्टाचार (Manners) से अभिप्राय अन्य व्यक्तियों के प्रति अथवा उनके समक्ष प्रदर्शित व्यवहार अथवा आचार-शैली है जो विशेषतया शिष्टता एवं सभ्यता से सम्बन्धित है।

व्यवहार (Behaviour) अन्य व्यक्तियों के प्रति हमारे व्यवहार का तरीका है। आचार (Conduct) से अभिप्राय अन्य व्यक्तियों के समक्ष हमारे आचरण से है। व्यवहार परिस्थितियों द्वारा निर्मित होता है, आचरण व्यक्ति द्वारा विकसित किया जाता है।

व्यवहारवाद (Behaviourism) व्यक्ति के व्यवहार के वस्तुगत विश्लेषण पर आधारित अध्ययन है। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति के व्यवहार की परीक्षा वस्तुगत रूप में होनी चाहिए तथा आत्मनिरीक्षण अप्रामाणिक एवं अमान्य है।

परोपकारिता (Benevolence)

अंग्रेजी शब्द बेनेवोलेन्स लेटिन शब्दों 'बेने' अर्थात् शुभ एवं 'वोलेन्स' अर्थात् भावना से बना है।

यह भला करने का स्वभाव है। यह विशेषतया निर्धनों की सहायता के लिए दिया गया धन का उपहार है। यह दयालुता का एक कार्य है। यह उदारता है।

यह दूसरों के कल्याण अथवा सुविधा की अभिलाषा करने का स्वभाव है। यह उनके दुःख का शमन अथवा उन्हें सुख देने की इच्छा है। यह मानवता के प्रति प्रेम अथवा हृदय की दयालुता अथवा दानशीलता है।

परोपकारिता में समस्त गुण समाहित हैं। परोपकारिता में पूर्णता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अन्य महत्त्वपूर्ण आधारभूत गुणों की आवश्यकता है। वे सभी मुख्य गुण परोपकारिता को उसी प्रकार विभूषित करते हैं जिस प्रकार परोपकारिता उन्हें प्रयुक्त करती है एवं विभूषित करती है।

परोपकारिता वह स्वाभाविक प्रवृत्ति है जो दयालुता तथा उदारता के लिए उत्प्रेरित करती है।

यह परमात्मा का दूत है। यह दुर्लभ गुण है।
मनुष्य स्वभाव की पूर्णता स्वयं के लिए कम तथा दूसरों के लिए अधिक सोचने एवं स्वयं की स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों को नियन्त्रित करके परोपकारिता के क्रियान्वन में निहित है। इस संसार में कोई भी पूर्णतया आत्मनिर्भर नहीं है। उसे दूसरों के सहयोग की आवश्यकता है। मनुष्य को समाज में पारस्परिक सहयोग एवं पारस्परिक दायित्व निर्वाह हेतु रखा जाता है।

आपका भोजन, आपके वस्त्र, आपका स्वास्थ्य, आघातों से आपकी सुरक्षा, जीवन के सुख तथा सुविधाओं का उपभोग-इन सबके लिए आप दूसरों के सहयोग के ऋणी हैं। इसलिए दूसरों के प्रति दयाशील बनिए। वैश्विक कल्याणकर्ता बनिए। मानवता के मित्र बनिए।

एक विजेता भय के कारण सम्मानित किया जाता है, एक बुद्धिमान् मनुष्य हमारे सम्मान के योग्य होता है, परन्तु केवल एक परोपकारी मनुष्य ही हमारे स्नेह को अर्जित करता है, हमारे स्नेह का पात्र बनता है।

परोपकारी मनुष्य शान्ति एवं प्रसन्नता प्राप्त करता है। वह अपने पड़ोसी तथा अन्य सभी लोगों की सुख-समृद्धि में आनन्दित होता है।

जो अपने धन, विचार, वाणी का दूसरों की भलाई हेतु उपयोग करता है, वह महान् मनुष्य है। वह पृथ्वी पर साक्षात् परमात्मा ही है।

वह सदैव विभिन्न प्रकारों से दूसरों की भलाई करने के अवसर खोजता है। सामाजिक परोपकारिता के नियमों की यह माँग है कि प्रत्येक मनुष्य अन्य मनुष्यों की सहायता के लिए प्रयत्न करें।

असभ्यता, पाशविकता, निर्दयता, लोभ, कठोरता, दुर्भावना, अमानवीयता, विद्वेष, शत्रुता, कृपणता, स्वार्थपरायणता, निष्ठुरता आदि परोपकारिता के विपरीतार्थक शब्द हैं।

भिक्षा-दान, उपकारिता, सदयता, प्रचुरता, हितैषिता, उदारता, सद्भावना, मानवता, सहृदयता, दयालुता, कृपालुता, दानशीलता, वदान्यता, मानव-प्रेम, सहानुभूति एवं कोमलता परोपकारिता के समानार्थी शब्द हैं।

दयालुता (Kindness) एवं कोमलता (Tenderness) वैयक्तिक होती हैं। परोपकारिता (Benevolence) और दान (Charity) सार्वभौमिक होते हैं। दयालुता समृद्धि अथवा विपत्ति में, सभी सजीव प्राणियों, मनुष्य अथवा पशुओं के प्रति अभिव्यक्त होती है। कोमलता विशेषत: छोटों, दुर्बल तथा जरूरतमन्द के प्रति अभिव्यक्त होती है। मनुष्य अथवा पशु के प्रति दयालुता तथा कोमलता का भाव मानवता (Humanity) है। स्वयं को विस्मृत करने वाली दयालुता का स्वभाव अथवा कार्य उदारता (Generosity) है। इसमें देने के अतिरिक्त कुछ अधिक सम्मिलित है।

मुक्तहस्तता (Bounty) अत्यधिक देने के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है, इसका विशाल रूप बदान्यता (Munificence) कहलाता है।

उदारचित्तता (Liberality) विशाल, उदार एवं सहृदय दृष्टिकोण है जो उपहारों तथा अन्य रूपों में व्यक्त होता है।

हम एक उदार मेजबान की मुक्तहस्तता (Bounty) की बात कहते हैं। एक कॉलेज संस्थापक की उदारचित्तता (Liberality) तथा एक धर्मशास्त्री की उसके विपरीत विचार रखने वालों के प्रति उदारचित्तता (Liberality) के विषय में कहते हैं। मानव-प्रेम (Philanthropy) शब्द का प्रयोग मानव-कल्याण के लिए विस्तृत योजनाओं के लिए होता है।

अच्छे कार्य करने के लिए असाधारण परिस्थितियों की प्रतीक्षा मत करिए। साधारण स्थितियों के सदुपयोग का प्रयास करिए।

चरित्र (Character)

चरित्र उन विशेष गुणों का समूह है जो वैयक्तिकता का निर्माण करता है।

चरित्र किसी मानव को अथवा मानव वर्ग को अन्यों से पृथकता प्रदान करने वाले गुणों का समूह है। यह एक मनुष्य का कोई विशिष्ट चिह्न अथवा गुण है।

चरित्र शक्ति है। चरित्र सब कुछ है। चरित्र ही वास्तविक सम्पत्ति है। यह सभी सम्पदाओं से उत्तम है।

चरित्र पूर्णतया प्रशिक्षित संकल्प है। यह बुद्धिमत्ता से श्रेष्ठ है।

प्रत्येक मनुष्य अपने चरित्र का स्वयं निर्माता है। आप एक कार्य का रोपण करते हैं और एक आदत को प्राप्त करते हैं। आप एक आदत का रोपण करते हैं और चरित्र को प्राप्त करते हैं।

कार्य, दृष्टि, वचन एवं व्यवहार वे अक्षर हैं जिनके द्वारा चरित्र शब्द की वर्तनी बनती है।

एक मनुष्य जिनसे वह प्रेम करता है, उनके द्वारा जाना जाता है जैसे मित्र, स्थान, पुस्तकें, पोशाक, भोजन, विचार, कार्य, वचन। इन सभी के द्वारा उसका चरित्र व्यक्त होता है।

चरित्र निर्माण हेतु सर्वप्रथम दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। इसके पश्चात् सतत प्रयत्न किया जाना चाहिए।

आपका चरित्र ही एकमात्र स्थायी है। जब आप इस संसार को छोड़ कर जाते हैं, चरित्र के सिवाय अन्य कुछ साथ नहीं ले जा सकते हैं। चरित्र जन्मजात नहीं होता है, इसका निर्माण किया जाता है।

भावी सन्तति के लाभार्थ सर्वोत्तम योगदान जो एक मनुष्य कर सकता है वह है सच्चरित्र निर्माण। चरित्र एक हीरा है जो अन्य पत्थरों को तराशता है अर्थात् अन्य व्यक्तियों को प्रभावित-प्रेरित करता है।

चरित्र स्थायी रूप से रहता है। अच्छा स्वभाव, परोपकारिता, सत्यपरायणता, सहिष्णुता, संयम, न्याय आदि चरित्र के नींव स्वरूप हैं।

आपके समस्त बौद्धिक अनुशासन का उद्देश्य चरित्र है।

चरित्र आत्मानुशासन का परिणाम है। मनुष्य की उत्पत्ति का महान् उद्देश्य एक महान् चरित्र का विकास करना है।

इस संसार में चरित्र से अधिक प्राप्तव्य अन्य कुछ नहीं है।

सर्वश्रेष्ठ धरोहर, जो एक मनुष्य संसार के लिए छोड़ सकता है वह है उज्ज्वल एवं पवित्र आदर्श।

नैतिकता, सत्यपरायणता, न्याय, संयम, बुद्धिमत्ता, विशालहृदयता, अहिंसा, पवित्रता तथा परोपकारिता चरित्र निर्माण के आवश्यक तत्त्व हैं।

बिना चरित्र के धन, यश, विजय आदि सब-कुछ निरर्थक हैं। इन सबके पीछे चरित्र का बल एवं आधार होना चाहिए।

न तो धन अथवा शक्ति और न ही बुद्धि, इस संसार पर शासन करते हैं। नैतिक श्रेष्ठता युक्त नैतिक चरित्र ही वास्तव में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को शासित करता है।

चरित्र का विकास एक दिन में नहीं होता है। इसका निर्माण दिन प्रतिदिन धीरे-धीरे होता है।

धन आता है और चला जाता है। प्रसिद्धि अस्थायी होती है। शक्ति क्षीण हो जाती है। मात्र एक वस्तु स्थायी है। वह चरित्र है।

सुदृढ़ चरित्र का निर्माण सुदृढ़ एवं उदात्त विचारों से होता है। अपने चरित्र का ध्यान रखिए। आपकी प्रतिष्ठा स्वयं स्थापित हो जायेगी। एक अच्छा चरित्र व्यक्तिगत प्रयास का फल है। यह स्वयं के प्रयत्नों का परिणाम है।

सत्यपरायणता चरित्र का आधार है।

शिक्षा नहीं वरन् चरित्र मनुष्य की महानतम आवश्यकता है तथा महानतम सुरक्षा है।

चरित्र निर्माण के लिए, कोई एक राजसी पथ नहीं है। इसके लिए विभिन्न प्रकार के पथों के प्रयोग की आवश्यकता होगी।

अपने चरित्र का निर्माण करिए; आप अपने जीवन का निर्माण कर सकते हैं।

चरित्र शक्ति है। चरित्र प्रभाव है। यह मित्र बनाता है। यह सर्वत्र संरक्षण एवं आश्रय प्राप्त कराता है। यह धन, सम्मान, सफलता तथा प्रसन्नता प्राप्ति का एक निश्चित एवं सरल मार्ग खोलता है। चरित्र जय एवं पराजय, सफलता एवं असफलता तथा जीवन के सभी विषयों में निर्धारक तत्त्व है। एक सच्चरित्र मनुष्य इहलोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है।

मनुष्य परिस्थितियों का दास नहीं है। वह वास्तव में परिस्थितियों का निर्माता है। एक चरित्रवान् मनुष्य परिस्थितियों से एक नये जीवन का निर्माण करता है। वह निरन्तर प्रयास करता रहता है। वह पीछे मुड़ कर नहीं देखता है। वह साहसपूर्वक आगे बढ़ता है। वह कठिनाइयों से भयभीत नहीं होता है। वह कभी उद्विग्न तथा क्रोधित नहीं होता है। वह कभी हतोत्साहित तथा निराश नहीं होता है। वह बल, ऊर्जा, ओज तथा जीवन शक्ति से पूर्ण होता है। वह सदैव उमंग तथा उत्साहपूर्ण होता है।

मंच पर दिये गये महान् व्याख्यानों, भाषणों, वक्तव्यों, प्रतिभा प्रदर्शन की अपेक्षा आपके सामाजिक व्यवहार में आदतन किये गये छोटे दयापूर्ण कार्य, शिष्ट आचरण तथा परोपकारिता आपके चरित्र को अधिक मनोहारिता प्रदान करते हैं।

चरित्र आन्तरिक तथा आध्यात्मिक लावण्य है जिसका बाह्य तथा प्रत्यक्ष चिह्न प्रतिष्ठा (Reputation) है।

चरित्र वह है जो आप हैं, प्रतिष्ठा वह है जैसे आप जाने जाते हैं। मनुष्य का अभिलेख (Record) उसके सभी कार्यों का योग है। उसका अभिलेख उसके चरित्र को प्रामाणिक रूप से अभिव्यक्त करेगा। उसकी प्रतिष्ठा उसके चरित्र अथवा अभिलेख के प्रमाण से उच्च अथवा निम्न हो सकती है। किसी मनुष्य के स्वभाव (Nature) में उसकी सभी मौलिक प्रतिभाएँ अथवा प्रवृत्तियाँ सम्मिलित होती हैं; चरित्र (Character) में उसकी स्वाभाविक तथा अर्जित दोनों विशेषताएँ सम्मिलित होती हैं।

चरित्र प्रकृति अथवा आदत द्वारा मनुष्य पर अंकित वह विशेष गुण है जो उसे अन्य व्यक्तियों से पृथक् करता है।

प्रधान अथवा प्रबल गुण (Dominant Characters) आनुवांशिकता से प्राप्त वे मुख्य गुण-लक्षण हैं जो माता अथवा पिता से सन्तान को अल्प भिन्नता अथवा बिना किसी भिन्नता के प्रेषित होते हैं तथा जो चरित्र का निर्माण करते हैं।

गौण अथवा अप्रबल गुण (Recessive Characters) सन्तानों में पाये जाने वाले वे गुण-लक्षण हैं जो माता अथवा पिता किसी एक से सम्बन्धित हो सकते हैं लेकिन जो मुख्य नहीं होते हैं। आगामी पीढ़ियों में ये लक्षण कभी प्रधान नहीं होते हैं।

दानशीलता (Charity)

१

दानशीलता दान देना है। यह दूसरों के विषय में सोचने तथा उनका भला करने का स्वभाव है। दानशीलता वैश्विक प्रेम है। यह निर्धनों के प्रति पूर्ण उदारता है। यह दयाशीलता है। जो जरूरतमन्द की सहायता के लिए दिया जाता है, वह दान है।

सामान्य अर्थ में, दानशीलता का तात्पर्य प्रेम, परोपकारिता एवं सद्भाव है। धार्मिक अर्थ में, यह समस्त मनुष्यों के प्रति सद्भावना तथा परमात्मा के प्रति परम प्रेम है। अधिक विशेष अर्थ में इसका अभिप्राय प्राकृतिक सम्बन्धों से उत्पन्न दया, स्नेह एवं कोमलता है यथा पिता, पुत्र तथा भ्राता की दानशीलता।

सच्ची दानशीलता पुरस्कार एवं प्रतिदान का विचार किये बिना दूसरों के लिए उपयोगी बनने की आकांक्षा है।

जो अन्यायी नहीं है, वही अपने निर्णय में सर्वाधिक उदार होता है।

जो दानशीलता के कार्य आपने किये हैं, वे सर्वदा आपके साथ रहेंगे।

प्रसन्नतापूर्वक, शीघ्रता से तथा बिना किसी हिचकिचाहट के दीजिए।

अपनी आय का दसवाँ भाग अर्थात् प्रत्येक रुपये में से एक आना दान करिए।

दानशीलता असंख्य पापों से मुक्त करती है। दानशीलता हृदय को पवित्र करती है। सार्थना आपको ईश्वर के पास पहुँचने के आधे मार्ग तक एवं उपवास उनके परम धाम के द्वार तक ले जाता है तथा दानशीलता आपका उसमें प्रवेश करवाती है।

दानशीलता प्रेम का क्रियान्वित रूप है।

दानशीलता गृह में प्रारम्भ होती है, परन्तु इसे बाहर भी जाना चाहिए। समस्त विख आपका घर है। आप विश्व के नागरिक हैं। समस्त विश्व के कल्याण की उदार भावना का विकास करिए।

जो दानशीलता विज्ञापित की जाती है, वह दानशीलता नहीं रह जाती है। वह मात्र अभिमान तथा आडम्बर है।

प्रत्येक अच्छा कार्य दान है। तृषार्त को जल देना दान है। एक दुःखी मनुष्य को उत्साहपूर्ण-सान्त्वनापूर्ण शब्द कहना दान है। एक निर्धन रोगी को औषधि देना दान है। मार्ग से काँटा अथवा काँच का टुकड़ा हटाना दान है।

एक छोटा सा अच्छा विचार तथा थोड़ी सी दयालुता अत्यधिक धन देने की अपेक्षा प्रायः अधिक श्रेष्ठ है।

मृत्युपर्यन्त दान देने से नहीं चूकिए। प्रतिदिन दान करिए।

यदि आप एक भूखे मनुष्य को भोजन देते हैं, वह पुनः भोजन चाहेगा जब वह भूखा होगा। दान का सर्वोत्तम प्रकार विद्या का दान, ज्ञान का दान है। ज्ञान शरीर धारण करने के कारण 'अज्ञान' को दूर करता है तथा सभी प्रकार के दुःखों एवं कष्टों का सदा के लिए पूर्णतया नाश करता है।

दान का दूसरा उत्तम प्रकार रोगी को औषधि देना है। दान का तीसरा उत्तम प्रकार अन्न-दान अथवा भूखे को भोजन देना है।

मौन रह कर दान करिए। इसे विज्ञापित मत करिए। आपका दायाँ हाथ क्या करता है, बायें हाथ को यह ज्ञात नहीं होना चाहिए। ईश्वर प्रेम की प्रथम पुत्री अर्थात् अभिव्यक्ति निर्धनों को दान देना है। प्रारम्भ में विवेकपूर्वक दान करिए। बाद में बिना किसी भेद के दान का अभ्यास करिए। जब आप अनुभव करते हैं कि प्रत्येक प्राणी ईश्वर का ही रूप है, तो भेद करना कठिन हो जाता है कि कौन भला है अथवा कौन बुरा है? अनिच्छुक हृदय से दिया गया दान, दान नहीं है।

दान डॉलर, रुपये, शिलिंग देने तक सीमित नहीं है। दुःखी मनुष्यों के लिए अच्छा सोचिए। उनके कल्याण के लिए प्रार्थना करिए। यह धन दान की अपेक्षा अधिक कल्याणकारी होगा।

२

किसी प्रोफेसर (एम. ए., पी-एच. डी.) ने एक निर्धन मनुष्य को कम्बल दान किया। बाद में उसने सोचा, "मुझे उसे कम्बल नहीं देना चाहिए था।" उसका हृदय विक्षुब्धता एवं पीड़ा की अवस्था में था। वह निर्धन व्यक्ति से कम्बल पुनः लेना चाहता था। यदि आप इस प्रकार का दान करते हैं, तो आपको कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा। आपको हृदय की शुद्धता प्राप्त नहीं होगी। अनेक सांसारिक व्यक्ति इस प्रकार के दान-कार्य करते हैं। यह विश्व इस प्रकार के दानशील व्यक्तियों से भरा हुआ है।

दान सहज एवं अनियन्त्रित अर्थात् मुक्तहस्त होना चाहिए। दान देना आपकी आदत बन जाना चाहिए। देने में आपको अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव होना चाहिए। आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए- मैंने अत्यधिक भला कार्य किया है। मैं स्वर्ग-सुख भोग करूँगा। मैं अगले जन्म में एक धनी व्यक्ति के रूप में जन्म लूँगा। दान के कार्य से मेरे पाप घुल जायेंगे। मेरे कस्बे अथवा जिले में मेरे समान दानशील व्यक्ति कोई नहीं है। लोग जानते हैं मैं एक अत्यधिक दानी व्यक्ति हूँ।

कुछ व्यक्ति दान करते हैं तथा समाचार पत्रों में फोटो सहित अपना नाम प्रकाशित देखने के लिए आतुर होते हैं। यह तामसिक प्रकार का दान है। यह दान बिल्कुल नहीं है।

प्रभु ईसा कहते हैं, "आपके बायें हाथ को यह ज्ञात नहीं होना चाहिए कि दायाँ हाथ क्या कर रहा है।" आपको स्वयं के दान तथा दानशील स्वभाव का विज्ञापन नहीं करना चाहिए। जब लोग आपके दानशील स्वभाव की प्रशंसा करें, आपको गर्वित नहीं होना चाहिए।

आपमें प्रतिदिन दान कार्य करने की उत्कण्ठा होनी चाहिए। आपको दान कार्य करने के अवसर उत्पन्न करने चाहिए। सहज रूप में किये गये सात्त्विक दान से श्रेष्ठतर कोई अन्य योग अथवा यज्ञ नहीं है। कर्ण तथा राजा भोज ने असंख्य दानपूर्ण कार्य किये। अतः वे आज भी हमारे हृदयों में निवास करते हैं।

निर्धन, रुग्ण, असहाय तथा निराश्रित को दान दीजिए। अनाथों, अपंगों, अन्धों तथा निःसहाय विधवाओं को दान दीजिए। साधुओं, संन्यासियों, धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाओं को दीजिए। उस मनुष्य को धन्यवाद दीजिए जो दान द्वारा आपको अपनी सेवा का अवसर देता है। उचित मानसिक भाव से दीजिए तथा दानपूर्ण कार्यों से परमात्मा का साक्षात्कार करिए। जो उचित भाव से दान करते हैं, वे महिमान्वित हों।

प्रफुल्लता (Cheerfulness)

१

प्रफुल्लता प्रसन्न रहने, हर्षित एवं उल्लसित रहने की अवस्था अथवा गुण है। प्रफुल्लता रुग्णता, निर्धनता, जीवन के कष्ट एवं पीड़ा को कम करती है तथा आश्चर्यजनक शक्ति एवं अत्यधिक सहनशक्ति प्रदान करती है।

एक प्रफुल्ल मनुष्य, एक खिन्नमन मनुष्य की अपेक्षा समान समय में अधिक कार्य करेगा, वह कार्य को श्रेष्ठ रूप में करेगा तथा उसमें दीर्घावधि तक लगा रहेगा।

सदैव प्रफुल्लित रहिए। प्रफुल्लता उत्तम रसायन है। यह उज्ज्वल स्वास्थ्य एवं शान्ति प्रदान करती है।

एक दयालु एवं सहानुभूतिशील मनुष्य अधिक प्रफुल्ल होगा। प्रफुल्लता स्वास्थ्य है। यह मन को शान्त बनाती है। यह दीर्घ जीवन प्रदान करती है। यह हृदय को सशक्त करती है।

एक प्रफुल्ल मुख का प्रकाश स्वतः प्रसारित होता है। आप किसी प्रफुल्ल मनुष्य की उपस्थिति में स्वयं को प्रसन्न एवं स्फूर्तिवान् अनुभव करते हैं।

एक प्रफुल्ल मनुष्य उज्ज्वल दिवस की भाँति है। वह सर्वत्र प्रसन्नता का प्रकाश विकीर्ण करता है।

प्रफुल्ल, मधुर, प्रसन्न तथा स्मितवान् बनिए। आप अत्यधिक स्वस्थ होंगे तथा प्रत्येक दिशा में स्वास्थ्य के स्पन्दन प्रसारित करेंगे।

प्रफुल्लता प्रसन्न चित्त तथा शुद्ध एवं भले हृदय का लक्षण है। यह समाज में सम्मान प्राप्ति हेतु एक पारपत्र तथा अनुशंसापत्र है।

एक प्रफुल्ल मनुष्य लोककल्याणकारी होता है। वह सबके हृदयों को हर्षित करता है।

प्रफुल्लता के समान कोई मित्र नहीं है।

प्रफुल्लता के सम्पर्क का आश्चर्यजनक प्रभाव होता है। यह अन्धकार को प्रकाश मैं, निराशा को आशा \mathfrak{pi} तथा रुग्णता को स्वास्थ्य में परिवर्तित करती है। एक प्रफुल्ल-उत्साहवर्द्धक शब्द सहज ही दूसरों को भी प्रफुल्लता एवं उत्साह देता है।

प्रफुल्लता (Cheerfulness) मन की आदत है। आमोद-प्रमोद (Gaiety) विषयसुख की उत्तेजना है। उल्लास (Mirth) कोलाहलपूर्ण प्रसन्नता है।

एक प्रफुल्ल मनुष्य (Cheerful Man) मुस्कराता है, एक उल्लसित मनुष्य (Merry Man) हँसता है, एक जिन्दादिल मनुष्य (Sprightly Man) नृत्य करता है तथा एक विनोदी मनुष्य (Gay Man) सुख का भोग करता है।

२

प्रफुल्लता मन की आह्लादित वृत्ति है।

एक प्रफुल्ल मनुष्य उमंग के भाव से परिपूर्ण होता है। वह जीवन से भरा होता है। वह सर्वत्र आनन्द प्रसारित करता है। प्रफुल्लता मस्तिष्क के लिए एक शक्तिशाली औषधि है।

एक प्रफुल्ल मन मस्तिष्क को सशक्त करता है तथा व्यक्ति को सदाचार में स्थित करता है।

सदैव प्रफुल्लित रहिए। प्रफुल्लता का अर्जन करिए। प्रफुल्ल मुख के साथ एक प्रफुल्ल मुस्कान धारण करिए।

प्रफुल्ल मनुष्य दीर्घजीवी होते हैं। वे स्वस्थ एवं उत्साही होते हैं।

प्रफुल्लता जीवन का सारतत्त्व अर्थात् आत्मा है। यह अच्छाई का परिणाम है। यह सौन्दर्यकारक है।

एक प्रफुल्ल मनुष्य शीघ्रता से मित्र बनाता है। वह सबके लिए आकर्षक होता है। जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश पुष्पों के लिए जीवनप्रदायक है, उसी प्रकार प्रफुल्लतापूर्ण मुस्कराहटें मानवता के लिए जीवनप्रदायक हैं।

प्रफुल्लता एकान्त तथा दुःख में सान्त्वना है।

प्रफुल्लता की शक्ति आश्चर्यजनक है। प्रफुल्लता बल है। एक प्रफुल्ल मनुष्य में अत्यधिक सहनशक्ति होती है।

प्रफुल्लता स्वास्थ्य है, खिन्नता रुग्णता है।

सदगुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें एक मनुष्य जिसका हृदय दया, उदारता एवं सहानुभूति से पूर्ण है, वह सदैव प्रफुल्ल होगा।

खुश होना (Mirth) एक कार्य है। प्रफुल्लता (Cheerfulness) मन की एक आदत है। खुशी क्षणिक तथा अस्थायी है। खुशी बिजली की चमक की भाँति है। प्रफुल्लता स्थायी है। प्रफुल्लता लावण्य की मित्र है। यह हृदय को प्रभु की स्तुति के लिए तैयार करती है। एक प्रफुल्ल मनुष्य दीर्घावधि तक ध्यान कर सकता है।

कुछ मनुष्य जन्मतः प्रफुल्ल होते हैं। यह उनके पूर्वजन्म के अच्छे, आध्यात्मिक संस्कारों के कारण होता है।

एक उत्साहवर्द्धक शब्द दूसरों को प्रफुल्लित तथा उत्साहित करने के उद्देश्य से बोला जाता है।

प्रमोद, हर्ष, खुशी, उल्लास, प्रसन्नता, आह्लाद, जिन्दादिली समानार्थी शब्द हैं।

मुदिता (Complacency)

मुदिता स्वयं के अथवा दूसरों के साथ प्रसन्न रहने की अवस्था है। यह आत्मतुष्टि है। यह स्वयं के कार्यों अथवा बाह्य वातावरण के प्रति सन्तोष है। यह अच्छा एवं भला स्वभाव है। यह शान्तिपूर्ण सन्तुष्टि की अभिव्यक्ति है।

मुदिता दूसरों को प्रसन्न करने की प्रवृत्ति अथवा स्वभाव है। यह शालीनता अथवा सौम्यता है। मुदितापूर्ण मनुष्य अन्य व्यक्तियों के साथ समायोजन करता है तथा सामंजस्य बिठाता है।

हम कहते हैं, "पुरुषोत्तम का व्यवहार इतना शालीन, सौम्य एवं विनम्र है कि वह सबका सम्मान प्राप्त करता है तथा मुदिता प्रकीर्ण करता है।"

चटर्जी कहता है, "बनर्जी का जीवन प्रत्येक क्षण मेरी रुचियों के प्रति उनकी मुदिता के नवीन उदाहरण प्रस्तुत करता है।"

पिता अपने पुत्र को मुदितापूर्ण प्रेम करता है।

दूसरों को प्रसन्न करने अथवा अनुग्रहीत करने की इच्छा अथवा स्वभाव मुदिता है।

जिस व्यक्ति में मुदिता है, वह अपने से श्रेष्ठ स्थिति वालों के प्रति ईर्ष्यालु नहीं होगा। उसे चित्त-प्रसाद अथवा मन की शान्ति प्राप्त होगी। मुदिता ईर्ष्या का समूल नाश करती है तथा हृदय को प्रेम से पूर्ण करती है।

जब मनुष्यों के पास स्वयं के अतिरिक्त अन्य कोई आदर्श अनुकरण योग्य नहीं होता है, तो वे सुधार नहीं कर पाते हैं। अधिकांश व्यक्ति जीवन में असफल होते हैं क्योंकि वे अपने दोषों को दूर नहीं करते हैं।

मुदिता स्वयं से श्रेष्ठ को प्रिय, समान को अनुकूल तथा निम्न को स्वीकारणीय बनाती है। यह सभी को प्रसन्न करती है, किसी के प्रति पूर्वाग्रह नहीं रखती है, मित्रता को सशक्त करती है तथा प्रेम को द्विगुणित करती है।

मुदिता एक सामाजिक गुण है। यह मनुष्य की प्रत्येक प्रतिभा को आभा एवं दीप्ति प्रदान करती है।

जब मुदिता न्याय एवं उदारता के साथ संयुक्त होती है, तो यह मनुष्य को आकर्षण, प्रशंसा, प्रेम, आदर एवं सम्मान का केन्द्र बनाती है।

मुदिता वार्तालाप को मधुर बनाती है, भेद को समाप्त करती है तथा प्रत्येक मनुष्य को सुख प्रदान करती है। यह समाज में समानता स्थापित करती है।

मुदिता भले स्वभाव तथा पारस्परिक उदारता को उत्पन्न करती है तथा अशान्त व्यक्ति को शान्त करती है एवं हिंसात्मक व्यक्ति का मानवीकरण करती है।

दया (Compassion)

दया अन्य के दुःखों के प्रति कष्ट का अनुभव अथवा सहानुभूति है। दया मुक्ति का द्वार खोलती है तथा हृदय को विशाल बनाती है। यह सांसारिक मनुष्यों के पाप से कठोर हुए हृदयों को द्रवित करती है और नवनीत की तरह कोमल बनाती है।

एक सन्त, साधु अथवा योगी का हृदय दया से आपूरित होता है। दया से शान्ति अथवा चित्त की प्रसन्नता की प्राप्ति होती है।

दया दूसरों के कष्ट-पीड़ा से उत्पन्न दुःख का भाव है जो उनकी सहायता अथवा उन्हें बचाने की इच्छा रखता है।

दया की अभिव्यक्ति अश्रु रूप में होती है।

दया के द्वारा आप दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझते हैं तथा उन्हें दुःखमुक्त करके आप स्वयं को भी दुःख से मुक्त करते हैं।

करुणा, एकत्व भाव, सहानुभूति, दयालुता एवं कोमलता दया के समानार्थी शब्द हैं।

अधिकांश मनुष्य सहानुभूतिहीन होते हैं। उनमें दया नहीं होती है। वे पूर्णतया स्वार्थी होते हैं। वे अपनी पुत्री को १५०००/- रुपये की कार उपहार में दे सकते हैं। वे पेट्रोल के लिए ३०००/- व्यय कर सकते हैं। परन्तु

निर्धनों के कष्ट निवारण के लिए वे एक रुपया भी व्यय नहीं करेंगे। वे अपनी आँखें बन्द रखते हैं। वे दुःखी मनुष्य का आर्त स्वर नहीं सुनते हैं। वे अपने पड़ोसियों के नेत्रों से बहती अश्रुधारा कभी नहीं देखते हैं। वे अपने दरवाजे बन्द कर रसगुल्ला, कलाकन्द तथा परौंठे खाते हैं।

समस्त विश्व एक परिवार है। सभी ईश्वर की सन्तान हैं। समस्त विश्व आपका निवास-स्थान है। इसका अनुभव करिए। अपने हृदय को दयाशील बनाइए। जो आपके पास है, उसे दूसरों के साथ बाँटिए। पीड़ितों के अश्रु पोंछिए। ईश्वर आपको आशीर्वादित करेंगे।

दया का विकास करिए। मृदु एवं कोमल हृदयी बनिए। दूसरों के कष्टों को समझिए, और सदैव उनकी सहायता के लिए तत्पर रहिए।

दया बल है। यह शक्ति एवं प्रसन्नता प्रदान करती है। यह आपके मन को दिव्य प्रकाश के अवतरण के लिए तैयार करती है।

आपके हृदय में दया उत्पन्न हो।

विचारशीलता (Consideration)

विचारशीलता वास्तव में एक सुन्दर सद्‌गुण है। एक विचारशील मनुष्य सभी प्रयत्नों में सफलता प्राप्त करता है।

विचारशीलता वह भूमि है जिसमें बुद्धिमत्ता विकसित होती है। अतः इस सद्‌गुण का अधिक सीमा तक अर्जन करिए।

टालना, उपेक्षा करना, अवहेलना करना, तुच्छ समझना आदि विचारशीलता के विपरीतार्थी शब्द हैं।

एक विचारहीन एवं वाचाल मनुष्य बिना सोचे-समझे बोलता है, अतः वह स्वयं को अपने शब्दों की मूर्खता के जाल में आबद्ध कर लेता है।

विचारशीलता से अभिप्राय है कि निर्णय लेने से पूर्व आप उसके विषय में गहन

चिन्तन-मनन करते हैं, तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तथा सूक्ष्मता एवं सावधानी से निरीक्षण करते हैं।

एक वस्तु पर ध्यान देना तथा उसका परीक्षण करने की कला विचारशीलता है। ज्ञान के विकास के अनुपात में ही नैतिक कारणों पर विचार किया जाता है। धार्मिक व्यक्ति अन्तरात्मा को ज्ञान से अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

शीघ्रतापूर्वक लिये निर्णयों के परिणामों के विषय में सोचिए।

विचारपूर्वक कार्य करिए।

दूसरों की भावनाओं का आदर तथा सम्मान करिए। उनके सद्‌गुणों पर ध्यान दीजिए।

बोलने से पहले अपने शब्दों को तोलिए।

प्रत्येक कदम उठाने से पहले अच्छी तरह से सोच-विचार करिए।

अचानक ही कार्य को प्रारम्भ मत करिए। परिणामों पर भलीभाँति विचार करने के पश्चात् ही कार्य करिए। तब आप पश्चात्ताप नहीं करेंगे, दुःख का अनुभव नहीं करेंगे।

एक विचारहीन मनुष्य जिसका अपनी वागेन्द्रिय पर नियन्त्रण नहीं है, अविचारपूर्वक बोलता है तथा अन्त में अपनी मूर्खता पर रोता है। उसे अपमानित एवं लज्जित होना पड़ता है। इसलिए सब समय, सभी अवसरों पर विचारशील बनिए।

हे मानव! विचार की आवाज सुनिए तथा बुद्धिमान् बनिए। वह आपको निर्देशित करेगी तथा सुरक्षा, ज्ञान, सत्य, शान्ति, अमरत्व एवं आनन्द का पथ प्रदर्शित करेगी।

सन्तोष (Contentment)

१

अब मैं आपसे एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विषय 'सन्तोष' के बारे में बात करूँगा। आप सभी इस उक्ति से अवगत हैं, "एक सन्तुष्ट मन निरन्तर आनन्दित रहता है। (A contented mind is a continual feast.)" लोभ के कारण मन सदैव विक्षुब्ध रहता है। लोभ एक प्रकार की आन्तरिक अग्नि है जो मनुष्य का धीरे-धीरे भक्षण करती है। सन्तोष लोभ के विष के लिए एक शक्तिशाली औषधि है। जिस प्रकार एक मनुष्य धूप में लम्बी सैर के बाद गंगा जी में एक डुबकी लगाने से प्रसन्नता का अनुभव करता है, उसी प्रकार लोभी मनुष्य जो लोभ की अग्नि से दाध है, सन्तोष के अमृत-सरोवर में एक दुबकी लोभी सूरपुरात ही आनन्द एवं शान्ति अनुभव करता है। मोक्ष-द्वार की सुरक्षा के चार जगाने से दुरन्ता, सन्तोष, सत्संग एवं विचार। यदि आप इनमें से एक प्रहरी तक पहेल पाते हैं, तो आप अन्य तीन को भी प्राप्त कर लेंगे। यदि आप सन्तोष अपनाते हैं, तो आप अन्य तीन प्रहरियों को अपना अनुसरण करता देखेंगे।

सन्तोष से अधिक महान् लाभ कुछ नहीं है। इस महत्त्वपूर्ण सद्गुण से सम्पन्न मनुष्य तीनों लोकों में सर्वाधिक समृद्ध है। वह जिस शान्ति का अनुभव करता है, उसका शब्दों में भलीभाँति वर्णन नहीं किया जा सकता है। वह इस धरा पर एक शक्तिशाली सम्राट् है। दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध सन्त तायुमान स्वामी अपने एक गीत में कहते हैं- इस संसार का कुबेर के समान सर्वाधिक धनी व्यक्ति जो चिन्तामणि, कामधेनु एवं कल्पतर का स्वामी है, अन्य राष्ट्रों पर शासन करने की आकांक्षा करता है। वह अधिक धन की प्राप्ति हेतु रसायन विद्या का प्रयोग करता है। एक सौ पचास वर्ष तक जीवित रहने वाला मनुष्य रसायन एवं सिद्ध कल्प लेकर अपने जीवन की अवधि को लम्बा करने का प्रयास करता है। जो एक सौ करोड़ रुपयों का स्वामी है, वह उन्हें दो सौ करोड़ बनाने का यथासम्भव प्रयास करता है। मन एक वस्तु को पकड़ता है तथा अगले ही क्षण उसे छोड़ कर किसी अन्य वस्तु को पकड़ने का प्रयास करता है। मनुष्य इस संसार में अशान्त हो कर विचरण करता है और कहता है-यह मेरा है। वह मेरा है। मैं उसे भी प्राप्त करने की कोशिश करूँगा। हे अशान्त मन! मुझे इन अपवित्र इच्छाओं और विषय-वस्तुओं के मध्य मत घसीटो। मैं तुम्हारा स्वरूप जान चुका हूँ। अब तुम चुप रहो।

हे परम पुरुष! मुझे एक वासनारहित शुद्ध मन प्रदान करें। मेरा मन सदैव सत्य में स्थित रहे। मैं अमन हो जाऊँ। मैं सच्चिदानन्द स्वरूप में विश्राम करूँ। हे परिपूर्ण आनन्द। हे उज्ज्वल आनन्द! जो इन सभी नाम-रूपों में परिव्याप्त है। आपको मेरा बारम्बार नमन है।"

राजयोग-दर्शन में नियमों के अन्तर्गत सन्तोष महत्त्वपूर्ण अंगों में से एक है। श्रीमद्भगवद्गीता भी कहती है- "भाग्यवशात् आपको जो भी प्राप्त हो, उसमें सन्तुष्ट रहें तथा वैराग्यवान् चित्त द्वारा ध्यान करें।" सुकरात भी इस सद्गुण की अत्यधिक प्रशंसा करते हैं।

यद्यपि मनुष्य जानते हैं कि सन्तोष एक सद्गुण है जो मन की शान्ति प्रदान करता है, तथापि वे इस सद्गुण का विकास करने का प्रयास नहीं करते हैं। क्यों ? क्योंकि वासना एवं लोभ के कारण वे विवेक शक्ति तथा आत्मिक विचार की शक्ति खो चुके हैं। वासना का उच्चाधिकारी लोभ है। जहाँ पर लोभ है, वहाँ वासना है, तथा जहाँ पर वासना है, वहाँ निश्चित रूप से लोभ है। काम एवं लोभ से अवबोध क्षमता भ्रमित हो जाती है, बुद्धि एवं स्मृति कुण्ठित हो जाती है। इसीलिए मनुष्य इस सद्गुण 'सन्तोष' का विकास करने में कठिनाई अनुभव करते हैं।

एक आक्षेपकर्ता कहता है-"स्वामी जी, आप जो कहते हैं, पूर्णतया उचित है। मैं भी अनुभव करता हूँ कि सन्तोष शान्ति देता है, परन्तु मुझे एक सन्देह है। यदि मैं सन्तुष्ट हो जाऊँ, तो मेरी सभी महत्त्वाकांक्षाएँ समाप्त हो जायेंगी। मैं अकर्मण्य एवं आलसी बन जाऊँगा। अपनी विभिन्न प्रकार की महत्त्वाकांक्षाओं के कारण ही मैं इधर-उधर विचरता हूँ। मैं प्रयास करता हूँ तथा ऊर्जावान् हूँ। कृपया मेरे इस सन्देह का निवारण करें। मैं पूर्णतः भ्रमित हूँ।" मेरा यही उत्तर है-"सन्तोष कभी आपको अकर्मण्य नहीं बना सकता है। यह एक सात्त्विक सद्गुण है जो मनुष्य को ईश्वर की ओर अभिमुख करता है। यह मानसिक शक्ति एवं शान्ति प्रदान करता है। यह अनावश्यक एवं स्वार्थपूर्ण प्रयासों पर नियन्त्रण रखता है। यह मनुष्य की अन्तर्दृष्टि को खोलता है तथा उसके मन को ईश्वर-चिन्तन की ओर ले जाता है। यह उसकी ऊर्जा को आन्तरिक सात्त्विक केन्द्रों की ओर मोड़ देता है। यह स्थूल ऊर्जा अर्थात् 'लोभ', जो मनुष्य को स्वार्थपूर्ण प्रयासों के लिए बाध्य करती है, को आध्यात्मिक ऊर्जा 'ओज' में परिवर्तित करता है। सन्तुष्ट मनुष्य सत्त्व से पूर्ण होता है। वह अधिक ऊर्जावान् होता है। वह अन्तर्मुखी होता है। वह सदैव शान्त रहता है। वह शान्त एवं एकाग्र मन से अधिक कार्य सम्पन्न करता है। अब मन की सभी बिखरी किरणें एकत्रित कर ली गयी हैं। क्या अब आप इस तथ्य को समझ गये हैं?" आक्षेपकर्ता उत्तर देता है, "जी, स्वामी जी, अब विषय पूर्णतया स्पष्ट है। मैं पूर्णतया सन्तुष्ट हूँ।"

सन्तोष के बल पर प्राचीन समय से सन्त एवं ऋषि, फकीर एवं भिक्षु भिक्षा पर निर्वाह करते हुए इस संसार में चिन्तामुक्त होकर विचरण करते रहे हैं। यह सन्तोष ही है जो एक साधक को आत्म-साक्षात्कार के मार्ग पर चलने की शक्ति देता है तथा आध्यात्मिकता के दुर्गम एवं कण्टकाकीर्ण पथ पर निर्भयतापूर्वक चलने में सक्षम बनाता है। यह सन्तोष ही है जो एक साधक को इस संसार के मूल्यहीन एवं नाशवान् पदार्थों को गोमय, विष, तृण अथवा मिट्टी के समान देखने की दृष्टि प्रदान करता है। सन्तोष वैराग्य, विवेक तथा विचार का विकास करता है।

भक्तिमती मीरा में पूर्ण सन्तोष था। उन्होंने संसार के तुच्छ पदार्थों की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। यद्यपि वह चित्तौड़ की रानी थीं, उन्होंने भिक्षा पर जीवन-निर्वाह किया। वे भिक्षा में प्राप्त रोटी को यमुना के किनारे ले जाती थी तथा इस अल्प भोजन एवं सादे जल से वह पूर्णतया सन्तुष्ट थीं। उन्हें यह शक्ति कहाँ से प्राप्त हुई? यह सन्तोष ही था जिसने उन्हें बल प्रदान किया। सन्तोष मोक्ष, शाश्वत आनन्द एवं प्रकाश के साम्राज्य के द्वार को खोलता है। सन्तोष एक दिव्य सद्गुण है। पूर्ण सन्तुष्ट मनुष्य समचित्तता एवं पूर्ण शान्ति प्राप्त करता है।

दक्षिण भारत के एक अत्यधिक महान् सन्त, पट्टीनाटु स्वामी अपने पूर्वजीवन में अत्यन्त लोभी मनुष्य थे। वह अत्यधिक धनी थे, तथापि धन संग्रह करना चाहते थे। भगवान् शिव ने एक छोटे बालक का रूप धारण किया

तथा उन्हें बिना छिद्र वाली सुईयों का एक बण्डल एवं एक सन्देश पत्र दिया। उस पत्र पर यह लिखा था- "इस संसार के धन का क्या उपयोग है? जब तुम्हारी मृत्यु होगी, तब यह टूटी हुई सुई भी तुम्हारे साथ नहीं जायेगी।" इससे उन लोभी व्यापारी की आँखें खुल गयी तथा उनमें वैराग्य एवं सन्तोष का उदय हुआ। उन्होंने अपना गृह, धन, पत्नी तथा सब-कुछ त्याग कर दिया और भिक्षा पर निर्वाह किया, पूर्ण सन्तोष का विकास कर अपने स्वरूप का साक्षात्कार किया।

सन्तोष आनन्द है। सन्तोष अमृत है। सन्तोष अमृतत्व एवं अनन्त शान्ति प्रदाता है। अतः इस सद्गुण का विकास करिए। एक सुखी जीवन जियें। शाश्वत शान्ति में विश्राम करिए। इस सद्गुण का अपने मन में एक चित्र रखिए। 'ॐ सन्तोष' का मानसिक रूप से जप करिए। आपमें सन्तोष की आदत का विकास होगा।

२

मनुष्य के लिए एक सन्तुष्ट मन महानतम आशीर्वाद है। इसका मनुष्य की आत्मा पर कल्याणकारी प्रभाव पड़ता है। यह सभी अविवेकपूर्ण आकांक्षाओं, सभी शिकायतों एवं अभावों का नाश कर व्यक्ति को शान्त, प्रसन्न एवं धनी बनाता है। यह एक अमूल्य मोती है।

सन्तोष सर्वश्रेष्ठ शक्तिवर्द्धक रसायन है। यह सर्वश्रेष्ठ औषधि है। यह उत्तम स्वास्थ्यएवं मानसिक शान्ति देता है।

प्रसन्नता अधिक वस्तुओं के संग्रह में नहीं अपितु जो आपके पास है, उसमें सन्तुष्ट रहने में निहित है। जो अल्प की इच्छा करता है, उसके पास सदैव पर्याप्त होता है।

धन अथवा शक्ति अपनी विशिष्ट असुविधाएँ एवं कष्टों को साथ लाते हैं। एक धनी मनुष्य सदैव दुःखी एवं असन्तुष्ट होता है। अर्थ अनर्थकारी है।

एक निर्धन मनुष्य धनी की चिन्ताओं एवं समस्याओं का तथा सत्तावान् मनुष्य की कठिनाइयों एवं परेशानियों का अनुभव नहीं कर सकता है। एक धनी मनुष्य तथा सत्तावान् मनुष्य के अपने गुप्त कष्ट होते हैं।

जब आपका मन जूतों के अभाव से व्यथित हो, तब उस मनुष्य के विषय में सोचिए जिसके पैर नहीं हैं तथा सन्तुष्ट हो जाइए।

जब आप अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों को देख असन्तुष्ट हों, तब अपने से निम्न को देखकर सन्तुष्ट हो जाइए।

इच्छा का अभाव ही महानतम सम्पदा है। इच्छारहित मनुष्य इस संसार का सर्वाधिक धनी एवं सन्तुष्ट मनुष्य है। असन्तुष्ट मनुष्य कभी समृद्ध नहीं होता है।

जो भी होता है, उससे सदैव सन्तुष्ट रहिए। यह जानिए कि आपके चुनाव से ईश्वर का चुनाव श्रेष्ठतर है।

यदि आप उससे सन्तुष्ट नहीं हैं जो आपको प्राप्त है, तो आप उससे भी सन्तुष्ट नहीं होंगे जिसे आप प्राप्त करना चाहते हैं।

सन्तोष स्वाभाविक सम्पदा है। विलासिता कृत्रिम निर्धनता है।

सभी इच्छाओं का त्याग करिए। केवल ईश्वरीय विधान की कामना करिए। केवल परमात्मा की आकांक्षा करिए। आपको पूर्ण सन्तोष, शान्ति एवं आनन्द प्राप्त होगा।

यदि आप अपने धन की वृद्धि करते हैं तो आप अपनी चिन्ताओं, उलझनों और परेशानियों की ही वृद्धि करते हैं। सन्तुष्ट मन एक सर्वश्रेष्ठ एवं गुप्त निधि है। सन्तुष्टमना व्यक्ति चिन्ताएँ एवं परेशानियाँ नहीं जानता है।

एक सन्तुष्ट मनुष्य का मन सहज होता है। वह पछतावा नहीं करता है। स्थितियाँ तथा वस्तुएँ जैसी हैं, वह उनसे सन्तुष्ट रहता है। वह कभी शिकायत नहीं करता है। वह तृप्त तथा सन्तुष्ट रहता है।

सन्तोष स्वर्गिक सुधा है। यह लोभाग्नि को शान्त करती है।

हे मनुष्य! पूर्ण सन्तोष का जीवन जियें तथा सदैव के लिए आनन्दित हो जाइए। ईश्वर में निवास करिए जो नित्य तृप्ति अथवा परम सन्तोष हैं।

३

सन्तोष उत्तम सद्‌गुण है, सन्तोष को सच्चा सुख कहते हैं तथा एक सन्तुष्ट मनुष्य ही उत्तम विश्राम प्राप्त करता है। एक सन्तुष्ट मनुष्य के लिए विश्व का प्रभुत्व तृणवत् तुच्छ है। विषयों का भोग उसे विषतुल्य प्रतीत होता है। उसका मन उच्चतर आध्यात्मिक वस्तु ।। तथा आत्म-विचार की ओर लगा है। वह भीतर से आनन्द प्राप्त करता है। वह विपरीत परिस्थितियों में कभी उद्वेलित नहीं होता है। सन्तोष सभी बुराइयों का शामक है। यह लोभ अथवा लालच के भयंकर रोग के उपचार हेतु रामबाण औषधि है।

सन्तोष से शमित हुआ मन सदैव शान्त रहता है। केवल सन्तोष से युक्त साधक पर ही दिव्य प्रकाश का अवतरण होता है। । सन्तुष्ट मनुष्य निर्धन होते हुए भी सम्पूर्ण विश्व का सम्राट् है। एक सन्तुष्ट मनुष्य वह है जो उसकी आकांक्षा नहीं करता है जो उसके पास नहीं है; अपितु जो उसके पास है उसका वह समुचित रूप से आनन्द उठाता है। वह जो भी प्राप्त करता है, उससे पूर्णतया तृप्त होता है। वह अति उदार होता है। सिद्धियाँ एवं ऋद्धियाँ सेविकाओं की भाँति उसकी सेवा करती हैं। वह चिन्ताओं एवं व्यथाओं से मुक्त होता है। एक सन्तुष्ट मनुष्य के शान्त मुख का दर्शन उसके सम्पर्क में आने वालों व्यक्तियों को प्रसन्नता देता है। ऐसा मनुष्य महान् तपस्वियों तथा सभी महापुरुषों से सम्मान पाता है।

प्रतिपक्ष भावना (Counter Thoughts)

चिन्ता तथा भय के विचार हमारे भीतर की दो भयानक शक्तियाँ हैं। वे जीवन के मूल स्रोत को ही विषाक्त कर देती हैं तथा सामंजस्य, कार्यक्षमता, शक्ति एवं बल को नष्ट करती हैं। इनके विपरीत प्रसन्नता, आनन्द एवं साहस के विचार मन को शान्त करते हैं, कार्यक्षमता में अत्यधिक वृद्धि करते हैं तथा मानसिक शक्तियों को भी बढ़ाते हैं। अतः सदैव प्रसन्न रहिए। मुस्कराइए। हँसिए।

प्रत्येक विचार अथवा भावना अथवा शब्द, शरीर की प्रत्येक कोशिका में एक प्रबल स्पन्दन उत्पन्न करता है तथा वहाँ गहरा प्रभाव छोड़ता है। यदि आप विपरीत विचार अथवा प्रतिपक्ष भावना जाग्रत करने की विधि जानते हैं, तो आप शान्ति एवं शक्ति से भरा एक सुखी एवं सामंजस्यपूर्ण जीवन जी सकते हैं। प्रेम का विचार घृणा भाव को तुरन्त ही निष्प्रभावी कर देगा। साहस का विचार तुरन्त ही भय के विचार के विरुद्ध एक शक्तिशाली औषधि के रूप में कार्य करेगा।

जब दुर्विचारों यथा चिन्ता, भय, घृणा, ईर्ष्या तथा कामुकता के विचारों के प्रभाव के कारण शरीर की कोशिकाएँ रोगग्रस्त हो जाती हैं, तो आप उच्च, उदात्त, जीवनदायी, आत्म-उत्थापक सात्त्विक दिव्य विचारों द्वारा, प्रणवोच्चार के स्पन्दनों द्वारा, ईश्वर के विभिन्न नामों के जप द्वारा, प्राणायाम, कीर्तन, गीता तथा अन्य पवित्र ग्रन्थों के स्वाध्याय द्वारा तथा ध्यान द्वारा इन रोगग्रस्त कोशिकाओं में एकत्रित विष को निष्प्रभावी करके स्वास्थ्य, नवीन बल, ओज एवं शान्ति प्राप्ति कर सकते हैं।

साहस (Courage)

साहस शौर्य, वीरता एवं निर्भयता की भावना है। यह गुण मनुष्यों को निर्भयतापूर्वक संकटों का सामना करने योग्य बनाता है।

साहस आपके संसाधनों का विस्तार करता है परन्तु कायरता उनका नाश करती है। 'अभयम्' साहस अथवा निर्भीकता है। श्रीमद्भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय में यह सद्गुण प्रथम स्थान पर है। बिना साहस के आध्यात्मिक उन्नति सम्भव नहीं है। साहस उच्च चरित्र के लिए आवश्यक तत्त्व है।

बिना साहस के सत्य नहीं हो सकता है। साहस के बिना आप इस जगत् में कुछ नहीं कर सकते हैं। यह मन का महानतम सद्गुण है।

साहस विजित होता है। साहस सफल होता है। साहस की जय होती है।

साहस मन का वह गुण है जो मनुष्य को संकट, विरोध तथा कठिनाइयों का दृढ़तापूर्वक, शान्तिपूर्वक एवं निर्भयतापूर्वक तथा बिना निराश हुए सामना करने में सक्षम बनाता है।

एक साहसी मनुष्य सौम्य एवं शान्त रहता है। संकट के समय भी वह अत्यन्त शान्त होता है। वह दृढ़मना होता है।

एक मनुष्य को महान् बनाने के लिए शारीरिक साहस तथा नैतिक साहस की आवश्यकता होती है। नैतिक साहस शारीरिक साहस से उच्चतर श्रेणी का सद्गुण है। यह अत्यन्त उदात्त गुण है।

शारीरिक साहस शरीर के बल तथा शक्ति पर निर्भर करता है। नैतिक साहस वह गुण है जो व्यक्ति को उचित मार्ग का अनुसरण करने में सक्षम बनाता है यद्यपि उससे तिरस्कार, अस्वीकृति अथवा अपमान प्राप्त हो।

सच्चा साहस असभ्य वीरों का पाशविक बल नहीं है अपितु सद्गुणी तथा विवेकी व्यक्तियों का दृढ़ निश्चय है। युद्ध में एक सैनिक का साहस राजसी तामसिक होता है किन्तु एक साधक एवं सन्त का साहस सात्त्विक होता है।

डच साहस मत अपनाइए अपितु वास्तविक साहसी बनिए। डच साहस मद्यपान से उत्पन्न काल्पनिक साहस है। मदिरा का प्रभाव कम होते ही यह साहस तुरन्त ही अदृश्य से जाता है। साहस आपके स्वरूप का अभिन्न अंग बनना चाहिए।

अपने संकल्पों में साहस रखिए। अपने विचारों अथवा धारणाओं के अनुसार निरन्तर कार्य करने का साहस रखिए।

सदैव कुछ नवीन साहसिक कार्य करिए।

वीर साहस रूपी सामग्री से बने होते हैं।
यदि आपमें साहस तथा आत्मविश्वास है, तो आप संसार में कुछ भी कर सकते हैं। साहस समस्त सफलताओं का स्रोत है। साहस तथा विश्वास से असम्भव भी सम्भव हो जाता है।

आपमें साहस के अनुपात में ही शक्ति होती है। आपकी कार्य निष्पादन - क्षमता आपके साहस एवं विश्वास के अनुरूप होती है।

जब सब परिस्थितियाँ अनुकूल हैं, तो आप साहस रख सकते हैं किन्तु संकट एवं आपदा के समय साहस रखना कठिन है। वास्तविक साहसी मनुष्य वही है जो संकट के समय भयभीत नहीं होता है तथा शान्त चित्त से दूसरों की सहायता करता है।

बहादुरी, निर्भीकता, शौर्य, धृति, निर्भयता, वीरता, निडरता, हिम्मत एवं जीवट साहस के समानार्थी शब्द हैं।

कायरता, भय, आतंक, भीरुता, कातरता आदि साहस के विपरीतार्थक शब्द हैं। हृदयस्थ पूर्ण निर्भय आत्मा अथवा अमर आत्मा पर निरन्तर ध्यान कीजिए। आप साहस की जीवन्त मूर्ति बन जायेंगे।

शिष्टाचार (Courtsey)

शिष्टाचार आचार की चारुता अथवा सुन्दरता है। यह सभ्यता तथा सम्मान का कार्य है।

शिष्टाचार व्यवहार की उदात्तता अथवा विनीतता है। यह दयालुतायुक्त शिष्टता है। यह भद्रता है। यह विनयपूर्वक किया गया दयालुता का कार्य है। यह शालीनता एवं सभ्यता है। यह सभ्यता, श्रद्धा अथवा सम्मान का भाव है।

शिष्टाचार का बीज बोने वाला मित्रता का फल प्राप्त करता है। शिष्टाचार का भाव मधुर एवं उत्तम होता है।

सामान्य वार्तालाप में भी शिष्ट रहिए। आपको सभी का प्रेम प्राप्त होगा। शिष्टता दानशीलता की बहिन है जो प्रेम को जीवन्त रखती है तथा घृणा की अग्नि का शमन करती है।

अपने हृदय में सबके प्रति शिष्टता का भाव रखिए। यह सतत, सहज एवं एकरूप हो। बाह्य व्यवहार में शिष्टता दिखाइए।

अभिवादन का प्रत्युत्तर प्रसन्नतापूर्वक दीजिए। जो व्यक्ति आपका अभिवादन करता है, उससे अधिक श्रेष्ठ अभिवादन से उसे नमन करिए।

शिष्टाचार जीवन को मधुर एवं उदात्त बनाता है। यह सौम्यता तथा सुन्दरता की भाँति जीवन का पथ सुगम करता है। यह द्वार खोल कर अजनबी को गृह के भीतर प्रवेश की अनुमति देता है। यह अतिथियों एवं आगन्तुकों के हृदयों को प्रफुल्लित करता है।

आपके द्वारा किये गये छोटे-छोटे दयालुतापूर्ण कार्य, थोड़ा शिष्टतापूर्ण व्यवहार तथा अन्यों के विषय में सहृदयतापूर्ण विचार आपके चरित्र को एक महान् आकर्षण प्रदान करते हैं।

शिष्टाचार प्रथम भेंट में ही आकर्षित करता है तथा अत्यधिक घनिष्ठता एवं मित्रता की ओर ले जाता है।

एक शिष्ट मनुष्य सभ्य-सुसंस्कृत आचारयुक्त होता है। सभी जन उससे प्रेम करते हैं।

किसी समय किसी एक के प्रति थोड़ी शिष्टता मत दिखाइए। अपनी शिष्टता में उदार बनिए।

सुशिष्टता, सभ्यता, सौजन्यता, भद्रता, सुजनता, चारुता एवं कुलीनता शिष्टाचार के समानार्थी शब्द हैं।

भाग्य (Destiny)

साहस आपका जन्मसिद्ध अधिकार है, भय नहीं। शान्ति आपकी दिव्य विरासत है, अशान्ति नहीं। नश्वरता नहीं, अमृतत्व; निर्बलता नहीं, शक्ति; रोग नहीं, स्वास्थ्य; दुःख नहीं, आनन्द; अज्ञान नहीं, ज्ञान आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।

दुःख, कट एवं अज्ञान मिथ्या तथा भ्रामक हैं। हमारा अस्तित्व नहीं है। आनन् प्रसन्नता एवं ज्ञान सत्य हैं; ये कभी नाश को प्राप्त नहीं होते हैं।

आप स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हैं। आप अपने भाग्य के स्वामी हैं। आप वस्तु-परिस्थिति को बना एवं बिगाड़ सकते हैं। आप एक कार्य रूपी बीज बोते हैं और प्रवृत्ति रूपी फल प्राप्त करते हैं। प्रवृत्ति से आदत तथा आदत से चरित्र प्राप्त करते हैं। आप चरित्र रूपी बीज से भाग्य रूपी फल प्राप्त करते हैं। इसलिए भाग्य आपकी अपनी कृति हैं। यदि आप चाहें तो इसे परिवर्तित कर सकते हैं। भाग्य आदतों का समूह है।

पुरुषार्थ उचित प्रयास है। पुरुषार्थ आपको कुछ भी दे सकता है। अपनी आदतों में परिवर्तन लाइए। विचार करने के ढंग में परिवर्तन लाइए। आप भाग्य पर विजय पा सकते हैं। आप अभी सोचते हैं- "मैं शरीर हूँ।" इसके विपरीत आध्यात्मिक विचार प्रारम्भ करिए, "मैं रोगरहित लिंगरहित अमर आत्मा हूँ।" विचारिए -"मैं अकर्ता तथा अभोक्ता हूँ।" आप मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकते हैं तथा परम भव्य अमर पद प्राप्त कर सकते हैं।

आप सद्कार्यों तथा सम्यक् विचारों द्वारा भाग्य को पराजित कर सकते हैं। आपको कार्य करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है। पुरुषार्थ द्वारा ही डाकू रत्नाकर महर्षि वाल्मीकि बने। पुरुषार्थ द्वारा ही ऋषि मार्कण्डेय ने मृत्यु

पर विजय प्राप्त की। पुरुषार्थ द्वारा ही महापतिव्रता सावित्री ने अपने पति सत्यवान को पुनर्जीवन दिया। पुरुषार्थ द्वारा ही ऋषि उद्दालक ने निर्विकल्प समाधि प्राप्त की।

अतएव स्वयं को आत्मिक विचार एवं ध्यान में दृढ़तापूर्वक संलग्न करिए। सजग रहिए एवं अध्यवसायी बनिए। अनुचित विचारों एवं इच्छाओं का नाश करिए। आज के सम्यक् पुरुषार्थ द्वारा आने वाले दिन के कष्ट पर विजय पाइए। शुभ वासनाओं के द्वारा अशुभ वासनाओं का नाश करिए। शुभ विचारों द्वारा अशुभ विचारों का नाश करिए तथा अपने भाग्य पर विजय प्राप्त करिए।

भाग्यवादी मत बनिए। शक्तिहीन मत बनिए। एक सिंह की भाँति उठ जाइए। पुरुषार्थ करिए तथा मुक्ति अथवा आत्म-स्वराज्य प्राप्त करिए। आपके भीतर ज्ञान का एक विशाल सागर है। सभी शक्तियाँ आपके भीतर प्रच्छन्न हैं। उनको प्रकट करिए तथा जीवन्मुक्त बनिए।

सकारात्मक की नकारात्मक पर विजय होती है। यह प्रकृति का अपरिवर्तनीय नियम है। पुरुषार्थ एक प्रबलतम शक्ति है। पुरुषार्थ एक सिंह अथवा हाथी है, प्रारब्ध- भाग्य एक चीटीं अथवा गीदड़ है अर्थात् प्रारब्ध से पुरुषार्थ प्रबल होता है। ईश्वर उनकी ही सहायता करते हैं जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। महर्षि वशिष्ठ जी ने श्री राम को पुरुषार्थ करने का ही उपदेश दिया था। भाग्यवाद से अकर्मण्यता एवं आलस्य उत्पन्न होगा। अतः अपनी कमर कसिए एवं अत्यधिक पुरुषार्थ करिए। आप सभी इसी जन्म में ही आत्म-साक्षात्कार अथवा ब्रह्मज्ञान प्राप्त करें। आप सभी प्रबोधित होकर आनन्द सागर में निमज्जित रहें। आप सभी जीवन्मुक्त सन्तों की भाँति दीप्तिमान हों!

दृढ़ निश्चय (Determination)

दृढ़ निश्चय संकल्पशीलता है, यह उद्देश्य की स्थिरता है, चरित्र का निर्णय है। यह निर्णय लेने का कार्य है, दृढ़ता है।

दृढ़ निश्चय पुरुषोचित गुण है।

दृढ़ निश्चय एक सुनिश्चित उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कार्ययोजना निश्चित करने की आदत है। यह लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के प्रति दृढ़ निष्ठा है।

यदि आपमें केवल दृढ़ निश्चय का गुण है, तो आप समस्त कार्यों में, यहाँ तक कि आत्म-साक्षात्कार में भी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

निर्णय करना वाद-विवाद अथवा प्रश्नों का अन्त करना है।

दृढ़ निश्चय उन सीमाओं का निर्धारण है जिनमें रह कर मनुष्य को कार्य करना चाहिए।

संकल्प सन्देहकारक कार्यों से अत्यावश्यक कार्य को पृथक् करना है। यह सदैव एक कार्य के लिए प्रयुक्त होता है।

संकल्पशीलता का भी समान अर्थ है अथवा यह संकल्प लेने एवं उसे तुरन्त क्रियान्वित करने का स्वभाव कहा जा सकता है।

निर्णय (Decision) अथवा दृढ़ निश्चय (Determination) कार्य के आरम्भ के सूचक हैं।

संकल्पशीलता (Resolution) कार्य के पूर्ण होने तक उसमें संलग्न रहना है।

सन्देह, विचलन, चंचलता, हिचक, अनिर्णय, अस्थिरता, अनिश्चय, दुविधा आदि दृढ़ निश्चय के विपरीतार्थी शब्द हैं। दृढ़, शुद्ध एवं अदम्य संकल्पशक्ति से सम्पन्न मनुष्य ही दृढ़ निश्चयी होता है। अपने संकल्प को सशक्त करिए एवं दृढ़ निश्चय के गुण का विकास करिए।

गरिमा (Dignity)

गरिमा मन अथवा चरित्र की उदात्तता है। यह व्यक्तित्व की भव्यता है। यह श्रेष्ठता का एक स्तर है।

गरिमा गम्भीर एवं शिष्ट आचरण है। यह चरित्र अथवा व्यवहार की प्रभावात्मकता है। यह प्रशान्त स्वभाव का होना है।

यह विस्मयजनित आदर एवं श्रद्धा उत्पन्न करने वाली एक अवस्था अथवा गुण है। यह गौरवपूर्णता है।

मिथ्यापवाद के विरुद्ध गरिमा एकमात्र अस्त्र है।

पद की गरिमा, चरित्र तथा व्यवहार की गरिमा में वृद्धि करती है।

एक शासक की गरिमा अन्तर्जात होती है।

गरिमा श्रेष्ठ, योग्य अथवा सम्माननीय होने की स्थिति अथवा गुण है-उदाहरणतः श्रम की गरिमा।

यदि आप सिरदर्द को 'सेफेलजिआ' (Cephalagia) कह दें, तो यह तुरन्त गरिमा प्राप्त कर लेता है तथा रोगी भी इस पर गर्वित अनुभव करता है।

अपमानित होने पर भी अपनी महत्ता के विषय में उच्च धारणा रखना अपनी गरिमा बनाये रखना है।

स्वनिर्णय-स्वविवेक (Discretion)

स्वनिर्णय बुद्धिमानी है। यह अपनी प्रसन्नतानुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता है।

स्वनिर्णय बुद्धिमत्ता से चुनने एवं कार्य करने की प्रवृत्ति एवं योग्यता है। यह सावधानीपूर्वक किया गया सहज अवलोकन है जिसके माध्यम से यह जाना जा सके कि क्या उचित अथवा बुद्धिमत्तापूर्ण है? यह दूरदर्शिता है। यह अपने व्यवहार के सम्बन्ध में बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय लेने की आदत है। यह किसी विशेष प्रसंग में निर्णय लेने तथा कार्य करने की स्वतन्त्रता है। उदाहरणतः कहा जाता है-यह विषय आपके निर्णयाधीन है। (The matter is subject to your discretion.)

इस गुण से सम्पन्न मनुष्य उद्देश्य सिद्धि हेतु श्रेष्ठ साधन चुनने तथा त्रुटियों का परिहार करने में अत्यन्त बुद्धिमान होता है। वह कुशाग्र बुद्धिसम्पन्न होता है, समझदार होता है।

स्वनिर्णय-स्वविवेक वह समझ है जो मनुष्य को सही तथा उचित का सावधानीपूर्वक आकलन करने योग्य बनाती है। यह मुख्यतया अपने आचरण के सम्बन्ध में सतर्क बोध तथा निर्णय है।

स्वनिर्णय युद्ध का विजेता है, साहस उसका शिष्य है अर्थात् विजय प्राप्ति में साहस की अपेक्षा स्वनिर्णय की भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। सद्गुण अनेक होते हैं परन्तु स्वनिर्णय से अधिक कोई अन्य उपयोगी नहीं है। वाणी में स्वनिर्णय-स्वविवेक का प्रयोग वाक्कौशल से श्रेष्ठ है। यह जीवन का सारतत्त्व है। यह इसे सुरक्षित रखता है। स्वनिर्णय बुद्धि की पूर्णता की अवस्था है। यह जीवन के सभी कर्तव्यों में आपका पथप्रदर्शक होता है। यह केवल बुद्धिमान मनुष्यों में ही पाया जाता है।

विवेक (Discrimination)

विवेक सात्त्विक मन की वह शक्ति है जो सत्य एवं असत्य, स्थायी एवं अस्थायी, आत्मा एवं अनात्मा में भेद करती है।

भगवद्-कृपा से उस मनुष्य का विवेक जाग्रत होता है जिसने पूर्वजन्मों में अहंकार एवं फलाकांक्षा का त्याग कर भगवद्-समर्पण बुद्धि से कर्म किये हैं।

विवेक शास्त्राध्ययन तथा सत्संग से सुदृढ़ होता है।

यदि आप विवेकसम्पन्न हैं, तो निश्चित रूप से आपमें स्थायी वैराग्य होगा।

ज्ञान का भवन विवेक की दृढ़ नींव पर बनाया जाता है।

केवल ब्रह्म ही सत्य है, शाश्वत है। ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य सभी वस्तु-पदार्थ क्षणिक तथा नाशवान हैं।

वैराग्य (Dispassion)

वैराग्य इहलोक तथा परलोक के ऐन्द्रिक सुखों के प्रति उदासीनता है। वाल इन्द्रिय-विषयों के प्रति अनासक्ति है।

भगवद्-साक्षात्कार हेतु यह एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है।

मनुष्य राग अथवा आसक्ति द्वारा इस संसार से बँधा हुआ है। वह वैराग्य द्वारा मुक्त होता है।

सत्य तथा असत्य के विवेक से उत्पन्न वैराग्य ही स्थायी होगा। मात्र ऐसा वैराग्य आध्यात्मिक उन्नति तथा प्रबोधन प्राप्ति हेतु सहायक होगा। सम्पत्ति की हानि अथवा पु की मृत्यु से उत्पन्न 'कारण-वैराग्य' अस्थायी होता है। यह आपके लिए उपयोगी स होगा। यह अमोनिया की भाँति क्षणभंगुर होता है। विषयासक्त जीवन तथा ऐन्द्रिक सुखों दोषों को देखिए। आपमें वैराग्य विकसित होगा।

ऐन्द्रिक सुख क्षणिक, भ्रामक एवं काल्पनिक हैं। भोग द्वारा इच्छा तृप्ति नहीं होती वरन् भोग के पश्चात् उत्पन्न तीव्र इच्छा मन को अत्यधिक अशान्त करती है।

ऐन्द्रिक सुख जन्म-मृत्यु का कारण है। यह भक्ति, ज्ञान एवं शान्ति का शत्रु है।

कर्तव्य (Duty)

किसी कार्य को करने की प्रतिबद्धता कर्तव्य है। अपना कर्तव्य करिए और शेष भगवान् पर छोड़ दीजिए।

जो अपना कर्तव्य जानता है, परन्तु उसका पालन नहीं करता है, वह संसार का अत्यन्त अधम मनुष्य है।

आप इस संसार में, जो आप चाहें वह करने के लिए नहीं आये हैं। आपको अपने कर्तव्य-निर्वाह हेतु इच्छुक होना चाहिए।

सभी कर्तव्यों को पवित्र मानिए। निःस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्य का पालन करिए। तब कर्तव्य कष्टप्रद नहीं रह जाता है, वह आनन्दप्रद हो जाता है।

अपनी दुकान, रसोईघर, ऑफिस, विद्यालय आदि में अपने कर्तव्य का निष्ठापूर्वक पालन करिए। अपने आवश्यक सामान को व्यवस्थित करना, अपने कक्ष को स्वच्छ रखना तथा वस्त्रों को व्यवस्थित करना आदि छोटे-छोटे कार्य भी पूर्ण हृदय से करिए।

आपके दैनिक कर्तव्य आपके धार्मिक जीवन का एक अंग है।

वर्तमान में आपके समक्ष आये कार्य को तुरन्त तथा निष्ठापूर्वक करना कर्तव्य है। कर्तव्य का विचार श्रेष्ठतम विचार है क्योंकि इसमें भगवान्, आत्मा, मुक्ति, उत्तरदायित्व तथा अमरत्व का विचार निहित है।

जीवन की प्रत्येक अवस्था के कर्तव्यों के समुचित पालन से मनुष्य को सम्मान प्राप्त होता है। अपने कम महत्त्वपूर्ण अथवा साधारण कर्तव्यों के निर्वाह में भी अत्यन्त सावधान रहिए। आपको प्रसन्नता एवं आनन्द प्राप्त होगा।

कोई भी कार्य हीन नहीं है। कर्म पूजा है। समस्त कर्म पवित्र हैं। कर्तव्य पालन ही धर्म का पालन है।

सम्पन्न हुआ कार्य अथवा कर्तव्य नैतिक शक्तिवर्द्धक रसायन है। यह मन एवं हृदय को सशक्त बनाता है।

मानव की प्रसन्नता एवं नैतिक कर्तव्यों का पालन घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं। जैसा व्यवहार आप स्वयं के लिए चाहते हैं, वैसा ही दूसरों के प्रति भी करिए। यह महान् नैतिक नियम है।

आपका जन्म इस ब्रह्माण्ड की समस्याओं के निवारण हेतु नहीं हुआ है। आपका जन्म यह जानने के लिए हुआ है कि आपका क्या कर्तव्य है?

आपको यह जीवन स्वार्थपरायणता, व्यर्थ गपशप, खाने-पीने तथा सोने में व्यर्थ गँवाने के लिए नहीं दिया गया है, वरन् उच्च कर्तव्यों के पालन, स्वयं के सुधार, सद्गुणों के विकास, मानवता की निःस्वार्थ सेवा तथा भगवद्प्राप्ति हेतु दिया गया है।

गम्भीरता (Earnestness)

किसी कार्य के प्रति गम्भीर अथवा उत्साहपूर्ण रहने की अवस्था गम्भीरता है। यह बुद्धि-नियन्त्रित उत्साह है।

एक गम्भीर मनुष्य दृढ़ निश्चयी होता है। वह लक्ष्य प्राप्ति हेतु उत्सुक, उद्यत एवं तत्पर होता है। वह कार्य करने की तीव्र आकांक्षा करता है। वह प्रत्येक कार्य को सम्पूर्ण हृदय से करता है।

क्या आप किसी विद्या अथवा उपलब्धि पर अपना अधिकार चाहते हैं? स्वयंसे उसके प्रति पूर्णतः समर्पित करिए। सच्चे तथा गम्भीर बनिए। आपको पूर्ण सफलता प्रा होगी।

कार्य के प्रति उत्साह एवं गम्भीरता उसकी सफलता में प्रतिभा से अधिक सहायक है। आप यह सर्वत्र पायेंगे कि उन मनुष्यों ने ही व्यापार में सफलता अथवा अन्य विशो उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं जिन्होंने व्यापार अथवा उस उपलब्धि के प्रति स्वयं को एवं समर्पित किया है।

एक गम्भीर मनुष्य कार्य-सिद्धि हेतु साधन खोज लेता है, वह उनका सृजन भी का लेता है।

कार्य के प्रति गम्भीरता दुर्बलता दूर कर शक्ति देती है, संकटों का सामना करती है. दुःखों पर विजय प्राप्त करती है, आशा का संचार करती है, कठिनाइयों का बोझ हल्का करती है और इस प्रयास में उत्पन्न श्रान्ति को कम करती है एवं सहनशक्ति प्रदान करती है।

एक मनुष्य अत्यन्त बुद्धिमान हो, मेधावी हो परन्तु बिना गम्भीरता के कोई महान् व्यक्ति नहीं बनता है और न ही महान् कार्य कर सकता है।

आप उस कार्य के प्रति गम्भीर नहीं हो सकते हैं जो सहजता एवं दृढ़ता से आपके विचारों को आकर्षित न करे।

गम्भीरता उद्देश्य प्राप्ति हेतु सभी क्षमताओं का समर्पण है। यह धैर्य प्रदान करती है। यह धैर्य का कारण है। यह उमंग एवं उत्साह प्रदान करती है।

यह मानसिक शक्ति का उत्तम स्रोत है, बुद्धिप्रदाता है।

पूर्ण, तीव्र एवं सच्ची गम्भीरता का कोई विकल्प नहीं है।

एक गम्भीर मनुष्य उद्देश्य के प्रति सच्चा होता है, वह नैतिक एवं धार्मिक महत्त्व के विषयों तथा वाणी एवं भाव में अत्यधिक उत्साही एवं दृढ़ निश्चयी होता है।

एक महान् कार्य के पीछे एक महान् तथा गम्भीर मनुष्य अवश्य होता है।

जब एक मनुष्य वाणी एवं कर्म में गम्भीर होता है तो हम कहते हैं, "राम के वचन गम्भीर वचन हैं; कृष्ण का प्रयास गम्भीर प्रयास है। शिव एक धीर-गम्भीर चिकित्सक हैं।"

चारुता-सुरुचिपूर्णता (Elegance)

चारुता सुरुचिपूर्ण होने की अवस्था अथवा गुण है। यह पूर्ण उपयुक्तता का सौन्दर्य है। यह सुसंस्करण एवं मनोहारिता है। जो सुरुचिसम्पन्न व्यक्तियों के लिए प्रियकर है, वही चारुता है।

जब मन चारुता की संवेदना खो देता है, वह भ्रष्ट हो जाता है।

चारुता भद्देपन से मुक्ति से अधिक कुछ और है। इसका अभिप्राय वस्तु में परिशुद्धता, परिष्कृति, चमक तथा आभा होना है।

यद्यपि सुरुचिपूर्णता को गौण नैतिक नियमों के अन्तर्गत माना जाता है, परन्तु फिर भी जीवन को नियमित-नियन्त्रित करने में इसका कम महत्त्वपूर्ण योगदान नहीं है। यह कुवृत्तियों को कम करती है।

चारुता-सुरुचिपूर्णता उत्तम गुणों के संयोजन से उत्पन्न सौन्दर्यपूर्ण संरचना, आकृति अथवा कार्य का चयन है; यथा गति की चारुता, शैली की चारुता।

एक स्पष्ट एवं सुनिश्चित वक्तव्य वाणी की चारुता का एक प्रकार है।

हम कहते हैं, "भारतीयों में अनेक गहन एवं सुरुचिसम्पन्न विद्वान् हैं।"

एक सुरुचिपूर्ण-चारु वस्तु उसकी मनोहारिता, परिशुद्धता तथा सममितता द्वारा परिलक्षित होती है। यह उसकी दोषमुक्तता एवं उत्कृष्ट पूर्णता को प्रदर्शित करती है। इसमें सौन्दर्य, शुद्धता अथवा उपयुक्तता समाहित होती है। हम कहते हैं, "यह एक चारु कक्ष है।" "राम का तर्क सुचारु था।" पूर्णता एवं सरलता सुरुचिपूर्णता की विशिष्टता है। यह उचित होती है।

'चारुता' उन विशेषताओं का समन्वय है जो सुसंस्कृत व्यक्तियों को प्रिय होती है। इससे अभिप्राय आकृति अथवा गति में सौन्दर्य के सूक्ष्म तत्त्वों से है।

एक पोशाक 'चारु-सुरुचिपूर्ण' (Elegant dress) हो सकती है परन्तु एक 'चारु क्षेत्र' (Elegant field), 'एक चारु यात्रा' (Elegant ride), 'चारु समय' (Elegant time) आदि भाषा सम्बन्धी सुस्पष्ट त्रुटियाँ हैं।

अत्युत्तमता (Exquisite) से अभिप्राय सुरुचिपूर्णता की सूक्ष्मतम अवस्था में परिपूर्णता है। हम एक 'चारु वस्त्र' तथा 'अत्युत्कृष्ट लेस' कहते हैं। इसका प्रयोग किसी भावना की अत्यधिक गहनता हेतु भी किया जाता है-यथा अत्यधिक प्रसन्नता (Exquisite delight), अत्यधिक कष्ट (Exquisite pain)|

चारुता-सुरुचिपूर्णता पूर्ण उपयुक्तता से उत्पन्न सौन्दर्य अथवा किसी अप्रिय संवे के कारण के अभाव से प्राप्त सौन्दर्य है उदाहरणतः आचरण, भाषा, शैली, आकृ संरचना एवं पोशाक आदि की चारुता।

जो अपनी सूक्ष्मता, सन्तुलन, शुद्धता एवं सौन्दर्य से प्रिय लगे, वह चार है।

सुसंस्कृत, विनयपूर्ण, सभ्य, मनोहारी एवं प्रिय व्यवहार चारु आचार को जाता है।

परिष्कृत, शुद्ध, सुसमृद्ध अभिव्यक्तिपूर्ण, उचित वाक्य-विन्यास सम्पन्न कृति एक चारु कृति अथवा शैली है।

सममित, सन्तुलित, उचित अनुपातों एवं भागों में निर्मित संरचना चारु-सुरुचिपूर्ण संरचना है।

बहुमूल्य तथा सुसज्जित-अलंकृत सामग्री चारु सज्जा-सामग्री है।

सौन्दर्य को कुरूपता से पृथक् करने की क्षमता तथा सौन्दर्य के प्रति संवेदनशीलता, चारु-रुचि अथवा सुरुचि को प्रकट करते हैं।

अनुकरण (Emulation)

अनुकरण समान होने अथवा श्रेष्ठ बनने का प्रयास है। यह एक स्वस्थ प्रतियोगिता है। यह दूसरे के समान श्रेष्ठ होने की इच्छा है।

यह एक उदात्त भावना है। यह दूसरे की अवनति द्वारा नहीं वरन् स्वयं के उत्थान द्वारा श्रेष्ठता प्राप्त करने का प्रयास है। यह सम्मान की सीमाओं के भीतर रहता है तथा यश प्राप्ति की प्रतियोगिता को न्यायपूर्ण एवं उदार बनाता है।

बिना अनुकरण के कुछ श्रेष्ठ अथवा महान् कार्य नहीं किया जा सकता है। अनुकरण प्रशंसनीय आकांक्षा है। यह आपको आत्म-सुधार तथा उन्नति की ओर प्रेरित करता है। यह महान् कार्यों की प्रशंसा करता है तथा उनकी अनुकृति करने का प्रयास करता है, परन्तु ईर्ष्या केवल दुर्भावना की ओर ले जाती है।

अनुकरण आकांक्षा की छाया है। यह अन्य व्यक्तियों में गुणों की खोज करता है ताकि स्वयं का उत्थान कर सकें। अनुकरण के द्वारा मनुष्य स्वयं का प्रशंसनीय स्तर तक उत्थान कर लेता है। वह प्रयत्न करता है, संघर्ष करता है। वह अन्य व्यक्तियों के साथ कड़ी प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं होता है।

वह अन्य व्यक्तियों के गुणों से ईर्ष्या नहीं करता है अपितु स्वयं की प्रतिभा, क्षमता एवं योग्यता का विकास करता है। वह आत्म-प्रशंसा नहीं करता है और दूसरों का उपहास नहीं करता है।

एक अनुकरणशील मनुष्य अपने सह-प्रतियोगियों को किन्हीं अनुचित साधनों के प्रयोग द्वारा हतोत्साहित नहीं करता है। वह उनसे श्रेष्ठ हो कर स्वयं के उत्थान का प्रयास करता है। सद्गुणों के अनुकरण द्वारा मनुष्य की आत्मा का उत्थान होता है। ऐसा व्यक्ति सदैव अध्यवसायी, सजग एवं परिश्रमी होता है। वह सदा उच्च से उच्चतर लक्ष्य की ओर प्रगति करता है। वह अपने समक्ष महान् व्यक्तियों के उदाहरण रखता है तथा उनका अनुकरण करने के प्रयास द्वारा शीघ्र ही उनके स्तर तक पहुँच जाता है। वह महान् योजनाएँ बनाता है तथा उन्हें क्रियान्वित करता है।

परन्तु एक ईर्ष्यालु मनुष्य का हृदय कटुतापूर्ण होता है। उसका हृदय अन्य व्यक्तियों की सफलता एवं समृद्धि देख कर सन्तप्त होता है, अशान्त होता है। उसका हृदय घृणा एवं दुर्भावना से भरा होता है। वह दूसरों को हानि पहुँचाता है एवं उनके विनाश को तत्पर होता है। वह अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों की भर्त्सना करता है।

एक क्रियाशील तथा चिन्तनशील जीवन के सभी क्षेत्रों में, अनुकरण मानवता के प्रयासों एवं सुधार का सर्वाधिक शक्तिशाली उत्प्रेरक है।

अनुकरण अमूर्त से सम्बन्धित होता है, प्रतियोगिता मूर्त से। हम व्यापार में 'प्रतियोगिता' (Competition) शब्द का प्रयोग करते हैं, विद्वत्ता में 'अनुकरण' (Emulation) तथा प्रेम एवं राजनीति में 'प्रतिद्वन्द्विता' (Rivalry) कहते हैं। हम श्रेष्ठता, सफलता एवं उपलब्धि के लिए 'अनुकरण' शब्द का, पुरस्कार हेतु 'प्रतियोगिता' तथा मनुष्यों एवं राष्ट्रों के मध्य 'प्रतिद्वन्द्विता' शब्द का प्रयोग करते हैं।

प्रतियोगिता सौहार्दपूर्ण हो सकती है, प्रतिद्वन्द्विता सामान्यतया शत्रुतापूर्ण होती है व्यापारिक बोलचाल में प्रतियोगिता शब्द का स्थान 'विरोध' (Opposition) ले रहा है इसका अर्थ है कि व्यापार में प्रतियोगी एक विरोधी एवं बाधक तत्त्व है। लापरवाही, उदासीनता एवं मिथ्या सन्तुष्टि अनुकरण के विपरीतार्थी शब्द हैं।

तितिक्षा (Endurance)

तितिक्षा सहन करने की अवस्था है। यह विपरीत परिस्थितियों में बिना हा तथा बिना विरोध किये कष्ट-पीड़ा को धैर्यपूर्वक सहन करना है।

तितिक्षा बिना प्रतिकार किये सहन करने की क्षमता अथवा शक्ति है। यह बिना समर्पण किये अर्थात् हार माने, बिना शिकायत अथवा विलाप किये कष्ट-पीड़ा, विपत्ति अथवा किसी दीर्घकालिक तनाव को सहन करने की योग्यता है। यह धैर्ययुक्त वीरता है । यह विनाशकारी शक्तियों के प्रभाव को सहन करते हुए आगे बढ़ते रहने की योग्यता है।

तितिक्षा तनाव एवं विरोध को बोधपूर्वक सहन करना है। यह उत्तेजित अथवा अपमानित किये जाने पर शान्तिपूर्वक सहन करना है।

तितिक्षु व्यक्ति विजय पाता है। तितिक्षा के द्वारा संकल्प शक्ति एवं धैर्य का विकास होता है। तितिक्षा द्वारा ही बुराइयों तथा कठिनाइयों पर विजय प्राप्त की जाती है।

आप पर आयी विपत्तियों-कठिनाइयों के अनुपात में आपकी शक्ति में वृद्धि होती है। उनको वीरतापूर्वक सहन करिए।

संकटों एवं कठिनाइयों, विपत्तियों एवं विपदाओं ने ही प्रायः मनुष्य के चरित्र का निर्माण किया है।

जिस प्रकार खजूर का वृक्ष अत्यधिक भार के नीचे रह कर ही उत्तम रूप से विकसित होता है, उसी प्रकार मनुष्य का चरित्र भी विपत्ति में ही विकसित होता है।

कठिनाई जितनी अधिक होगी, उस पर विजय प्राप्त करने से उतना ही अधिक यर प्राप्त होता है। कुशल जहाज-चालक तूफान-झंझावात का सामना करके ही सुविख्यात हुए हैं।

तितिक्षा के द्वारा आप अपनी दिव्य महिमा प्रकट करते हैं तथा भगवान् के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

समचित्तता (Eqanimity)

समचित्तता मन अथवा स्वभाव की समता एवं सन्तुलन है। यह हर्ष और शोक सफलता और असफलता, मान और अपमान, निन्दा और स्तुति में मन का सन्तुलित रहना है।

समचित्तता प्रतिकूल परिस्थितियों में भावस्थैर्य विशेषतया मन की स्थिरता तथा शान्ति है।

समचित्तता की श्रेष्ठता अवर्णनीय है। इस गुण से सम्पन्न मनुष्य विपत्ति में निराश नहीं होता है तथा समृद्धि में गर्वित-हर्षित नहीं होता है। वह अन्य व्यक्तियों के प्रति स्नेहशील तथा स्वयं में सन्तुष्ट रहता है। वह जीवन की समस्त परिस्थितियों में सदैव शान्त रहता है। वह हानि को शान्तिपूर्वक सहन करता है।

एक जीवन्मुक्त पुरुष सदैव समचित्तता अथवा प्रशान्ति से युक्त होता है। उसका मन आत्मा अथवा अन्तःप्रज्ञा में संस्थित हो सदैव अविचलित एवं सन्तुलित रहता है।

इस द्वन्द्वयुक्त संसार में मनुष्य विभिन्न भावनाओं की तरंगों द्वारा इधर-उधर चलायमान होता है। एक क्षण वह लाभ, सफलता, सम्मान एवं प्रशंसा प्राप्त करता है, अगले ही क्षण उसे हानि, असफलता, अपमान, निन्दा तथा निराशा प्राप्त होती है। मन के समत्व एवं शान्ति से सम्पन्न मनुष्य ही इस संसार में आनन्दपूर्वक रह सकता है।

मन एवं इन्द्रियों को नियन्त्रित करके स्वयं को अपने अपरिवर्तनीय आनन्दस्वरूप आत्मा में स्थिर करिए। केवल तब ही आप विश्रान्ति प्राप्त करेंगे। कोई सांसारिक परिस्थिति आपको उद्वेलित नहीं कर सकेगी। आप अपनी आत्मा में शान्तिपूर्वक विश्राम कर सकेंगे जो प्रशान्ति का महासागर है।

'समत्व' योग है। इस अवस्था की प्राप्ति हेतु सतत जागरूकता, लगन, धैर्य तथा शरीर, मन एवं बुद्धि के पूर्ण अनुशासन की आवश्यकता है। यह एक दिन, सप्ताह अथवा माह में प्राप्त नहीं होता है।

सदैव 'समं ब्रह्म' के विषय में विचार करिए जो सभी प्राणियों में समान रूप से स्थित है। धीरे-धीरे आप समत्व का विकास कर पायेंगे।

इच्छाओं, कामनाओं, आसक्तियों तथा राग-द्वेष का निर्मूलन करिए। विवेक, शान्ति, वैराग्य, आत्म-संयम, आत्म-नियन्त्रण, आत्म-त्याग आदि सद्‌गुणों का विकास करिए। धीरे-धीरे आप समचित्तता में स्थित हो जायेंगे।

श्रद्धा (Faith)

श्रद्धा धर्म की सत्यता में विश्वास है। यह भगवान् में विश्वास है। यह स्वयं की आत्मा में विश्वास है। यह अपने गुरु के वचनों एवं उपदेशों में विश्वास है। याह । ग्रन्थों में विश्वास है।

श्रद्धा अन्य द्वारा घोषित सत्य में बिना किसी प्रमाण की अपेक्षा किये दृढ़ विकास करना है।

श्रद्धा वह व्यक्तिगत दृष्टिकोण है जिसके द्वारा दिव्य सत्य का आत्मपरक ग्रहण हाेता है। यह किन्हीं तार्किक प्रक्रियाओं से नहीं अपितु प्रत्यक्ष आन्तरिक अनुभव से उत्पन्न होती है।

साधनविहीन परन्तु स्वयं में अत्यधिक विश्वास रखने वाले मनुष्यों ने अ उपलब्धियाँ अर्जित की हैं।

भगवान् में पूर्ण श्रद्धा रखिए। स्वयं को पूर्णतः उन्हें समर्पित करिए। वे आपकी देखभाल करेंगे। आपके सभी भय एवं कष्ट पूर्णतः समाप्त हो जायेंगे। आप सदैव सुखी रहेंगे।

श्रद्धा किसी पर आरोपित नहीं की जानी चाहिए। धार्मिक श्रद्धा के लिए बाध्य किये जाने का प्रयास अश्रद्धा उत्पन्न करता है।

भगवान् में श्रद्धा आत्मा का उत्थान करती है, हृदय एवं भावनाओं को शुद्ध करते है तथा भगवद्-साक्षात्कार की ओर अग्रसर करती है।

श्रद्धा धर्म की आत्मा है। यह नयी आशाओं का सृजन करती है तथा अमरत्व प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करती है।

श्रद्धा भगवान् को देखने का नेत्र तथा उनका आश्रय ग्रहण करने वाला हाथ है।

श्रद्धा शक्ति है। श्रद्धा बल है। श्रद्धा अपार ऊर्जा है। श्रद्धावान् मनुष्य शक्ति सम्पन्न होता है तथा सन्देहशील मनुष्य निर्बल होता है। सन्देह ऊर्जा प्रवाह को बाधित करता है। दृढ़ श्रद्धा महान् कार्यों की अग्रगामी है।

श्रद्धा के अभाव के कारण आपने दिव्य ज्ञान खो दिया है।
श्रद्धा आध्यात्मिक पथ को प्रकाशित करती है, मृत्यु-सरिता के ऊपर सेतु बना कर साधक को दूसरे किनारे अर्थात् निर्भयता एवं अमरत्व की ओर ले जाती है।

हम एक अभिलेख को 'मान्यता' (Credence) देते हैं, एक सुझाव को 'स्वीकृति (Assent) देते हैं। विश्वास (Belief) मान्यता से दृढ़ होता है। दृढ़ धारणा (Conviction) तर्क अथवा प्रमाण पर आधारित विश्वास है।
आश्वासन-भरोसा (Assurance) तर्कातीत विश्वास है।

श्रद्धा आस्था एवं विश्वास का मिलन है। श्रद्धा मुख्यतया व्यक्तिगत होती है तथा विश्वास अवैयक्तिक होता है। हम सुझाव में 'विश्वास' तथा वचन में 'श्रद्धा' शब्द का प्रयोग करते हैं क्योंकि वह वचन एक व्यक्ति द्वारा दिया गया है।

एक वक्तव्य को सत्य मान कर अथवा एक व्यक्ति को योग्य मान कर उस पर दृढ़तापूर्वक निर्भर रहना आश्वस्त होना है। हम प्रकृति की एकरूपता के प्रति आश्वस्त होते हैं। भगवान् के प्रति हम श्रद्धा रखते हैं।

निष्ठा-विश्वस्तता (Fidelity)

निष्ठा-विश्वस्तता कर्तव्य अथवा उत्तरदायित्वों का उचित एवं सावधानीपूर्वक निर्वाह है। यह पति अथवा पत्नी के प्रति वफादारी है। यह ईमानदारी है।

जिनसे व्यक्ति प्रेम अथवा सम्मान के सम्बन्ध से बँधा है, उनके प्रति हार्दिक समर्पण ही निष्ठा है। यह वफादारी अथवा निष्ठा है, जैसा कि एक अधिकारी की निष्ठा, वैवाहिक निष्ठा, पिता अथवा मित्र के प्रति निष्ठा, प्रजा की अपने राजा के प्रति निष्ठा तथा सेवक की अपने स्वामी के प्रति निष्ठा।

निष्ठा उच्च उद्देश्य में अपना पुरस्कार एवं शक्ति प्राप्त करती है। यह व्यापार में सफलता का अति महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

निष्ठा न्याय की मित्र है।

इससे बढ़ कर कोई अन्य गुण इतना उदात्त एवं सम्मान्य नहीं है। यह मन का मौलिक गुण है।

यह सत्य अथवा तथ्य की अक्षरक्षः प्रस्तुति भी है; जैसा एक अभिलेख अथवा साक्षी की विश्वस्तता, एक चित्र की विश्वस्तता ।

स्थिरता, भक्ति, विश्वास, वफादारी, ईमानदारी, सत्य एवं सत्यनिष्ठता इसके समानार्थी शब्द हैं।

निष्ठाहीनता, विश्वासघात, छल, षडयन्त्र आदि इसके विपरीतार्थी शब्द हैं। ध्रुव तारे की तरह स्थिर रहिए। ईमानदार तथा निष्ठावान बनिए।

दृढ़ता (Firmness)

दृढ़ता अडिगता, संकल्पशीलता, दृढनिश्चय एवं स्थिरता है। हम नींव की दृढ़ता कदम का दृढ़ता, विश्वास की दृढ़ता, उद्देश्य अथवा संकल्प की दृढता तथा मन अथवा आत्मा की दृढ़ता कहते हैं।

इस गुण से सम्पन्न मनुष्य सरलता से विचलित अथवा उद्वेलित नहीं होता है । वह किसी भी वस्तु-परिस्थिति से क्षुब्ध नहीं होता है। वह वीर होता है।

दृढ़ता के कवच से अरक्षित चतुराई, प्रतिभा, क्षमताएँ, योग्यताएँ, वाक्पटुता, शिष्ट आचरण, मनोहारी वचन आदि व्यर्थ हैं।

दृढ़ता मनुष्य को बाधाओं तथा कठिनाइयों पर सरलता से विजय पाने योग्य बनाती है। ऐसा दृढ़ मनुष्य सभी प्रयासों में सदैव सफलता प्राप्त करता है।

कष्ट के समय तथा कोई कार्य करते हुए आपको दृढ़ता अपनानी चाहिए। केवल तब ही आप महानता तथा विजय प्राप्त करेंगे।

दृढ़ता वास्तव में एक उदात्त गुण है, परन्तु यह ज्ञान द्वारा निर्देशित होना चाहिए, अन्यथा यह दुःसाहस अथवा हठधर्मिता बन जाता है।

उद्देश्य की दृढ़ता सफलता प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है। यह चरित्र के अत्यावश्यक तत्त्वों में से एक है।

पूर्ण विवेक का सहभागी होने पर ही दृढ़ता एक गुण है।

दृढ़ता एक ऐसी क्षमता है जो स्थायित्व, स्थिरता तथा हठधर्मिता देती है।

दृढ़ता (Firmness) बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य से सम्बन्धित है; स्थिरता (Constamecy) स्नेह तथा सिद्धान्तों से सम्बन्धित है- पूर्वोक्त हमें पराजित हो समर्पण करने से तथा उत्तरोक्त विचलित होने से रोकती है।

सहनशीलता (Forbearance)

सहनशीलता धैर्य का प्रयोग है। सहनशीलता आत्मनियन्त्रण अथवा मृदुलता है । यह एक महान् दिव्य गुण है।

सहनशीलता दुर्व्यवहार-अपमान को धैर्यपूर्वक सहन करना है। यह सदयता है । यह भावनाओं पर नियन्त्रण है। यह क्रोध की भावना अथवा प्रतिशोधात्मक कार्य पर संयम रखना है।

सहनशीलता दया, सहानुभूति, करुणा, धैर्य, तितिक्षा, क्षमा तथा दृढ़ इच्छाशक्ति का अद्भुत सम्मिश्रण है।

सहनशीलता का अभ्यास करने वाला व्यक्ति स्वयं को नियन्त्रित रखता है। वह आत्मसंयम अथवा आत्मनियन्त्रण तथा क्षमा का अभ्यास करता है। वह आघात, अपमान, उद्वेग तथा कष्टप्रद उपहास को धैर्यपूर्वक, प्रार्थनापूर्वक तथा आत्मनियन्त्रण द्वारा सहन करता है और इस प्रकार दृढ़ इच्छाशक्ति का विकास करता है।

दूसरों की कमियों, गलतियों एवं दोषों को छिपाइए। उनकी दुर्बलताओं को क्षमा करिए। उनकी कमियों को मौन के आवरण में छिपा दीजिए। उच्च स्वर से उनके गुणों की घोषणा करिए।

सहन करने के अवसर खोजिए। दुर्बल मनुष्यों पर दया कीजिए तथा उन्हें क्षमा कीजिए। सहनशीलता का तब तक विकास कीजिए जब तक कि आपका हृदय इससे परिपूरित न हो जाये।

भगवान् यीशु तथा भगवान् बुद्ध सहनशीलता के मूर्तिमान स्वरूप थे। इन दिव्य पुरुषों की जय। इनके उदाहरण का अनुकरण करिए तथा दिव्य बनिए।

हे मानव ! सहन करिए। अत्यधिक उद्वेगकारी परिस्थिति में भी धैर्य रखिए। आपको प्रचुर शान्ति एवं आनन्द प्राप्त होंगे।

क्षमा (Forgiveness)

क्षमा माफ करना है। क्षमा अपराध अथवा ऋण की उपेक्षा करना है। यह माफ करने का स्वभाव अथवा प्रवृत्ति है।

एक क्षमाशील मनुष्य दयालु तथा करुणाशील होता है।

त्रुटि करना मानवीय स्वभाव है; क्षमा करना दिव्य स्वभाव है। क्षमा का दिखावा करना सामान्य बात है। वास्तविक क्षमा दुर्लभ है।

यदि आप क्षमा का अभ्यास करेंगे, तो आप शक्तिसम्पन्न एवं उदार बनेंगे। आप सरलता से क्रोध पर नियन्त्रण कर सकते हैं।

क्षमा व्यक्ति को क्रोध एवं घृणा के दुष्परिणामों तथा शक्ति के अपव्यय से बचाती है।

जो क्षमा का अभ्यास करता है, वह उस व्यक्ति के प्रति क्रोध अथवा नाराजगी नहीं रखता है जिसने उसे आहत किया है।

क्षमा क्रोध का प्रतिकारक है।

क्षमा' आन्तरिक भावना को इंगित करती है। जब हम क्षमा की प्रार्थना करते हैं । हम मुख्यतया क्रोध का शमन चाहते हैं।

'माफी' (pardon) बाह्य वस्तुओं अथवा परिणामों से सम्बन्धित है तथा प्रायः तुच्छ विषयों के लिए प्रयुक्त होती है, यथा किसी प्रकार की बाधा का कारण बनने पर हम माफी माँगते हैं। एक न्यायाधीश माफी देता है, क्षमा नहीं करता है।

धृति (Fortitude)

१

धृति सहन करने की मानसिक शक्ति है। यह संकट का सामना करने में दृढ़ता है यह प्रतिरोध करने की शक्ति है।

धृति (Fortitude) लेटिन शब्द 'फोरट्यूडो' से बना है जिसका मूल शब्द है । 'फोरटिस' अर्थात् शक्तिशाली।

धृति कष्ट तथा विपत्ति को बिना शिकायत किये तथा निराश हुए, धैर्यपूर्वक सहन करने की अथवा हतोत्साहित हुए बिना शान्तिपूर्वक तथा वीरता से संकट का सामना करने की मानसिक शक्ति है। यह सतत एवं धैर्यपूर्वक साहस रखना है।

धृति शान्त तथा स्थायी वीरता है। यह वह गुण है जो मात्र कष्ट, संकट को सहन करने में सक्षम नहीं है अपितु उन संकटों, जिनके विरुद्ध पर्याप्त सुरक्षा नहीं है तथा जिनका सक्रिय विरोध किया जा सकता है, उनका निरन्तर सामना करने में भी सक्षम है।

तोप में बारूद भरने के लिए साहस की आवश्यकता है, परन्तु शत्रु के अस्त्र के समक्ष स्थिर खड़े रहने के लिए धृति की आवश्यकता है। दृढ़संकल्प मन से होता है। तितिक्षा आंशिक रूप से शारीरिक होती है। प्रलोभन का प्रतिरोध करने में दृढ़ संकल्प की तथा क्षुधा और शीत को सहन करने में तितिक्षा की आवश्यकता है।

बुराईयों पर विजय पाने के लिए 'सक्रिय धृति' की आवश्यकता है। इसमें दृढ़ संकल्प, स्थिरता तथा वीरता सम्मिलित है। बुराईयों को सहन करने के लिए 'निष्क्रिय धृति' की आवश्यकता है। इसमें धैर्य, विनम्रता एवं विनय आदि सम्मिलित हैं।

धृति स्वयं एक आवश्यक गुण है। यह प्रत्येक अन्य गुण का रक्षक भी है। यह संसार कष्ट, दुःख, पीड़ा, संकट, दुर्भाग्य, अभाव तथा व्याधियों से युक्त है। प्रत्येक मनुष्य को कष्ट एवं कठिनाई का सामना करना होता है। कायर मनुष्य उनके बोझ तले झुक जाते हैं तथा धृतिसम्पन्न मनुष्य बिना शिकायत किये सहन करते हैं।

जो अपनी निम्न प्रकृति से संघर्ष कर विजयी बनता है, वह इस उत्तम गुण 'धृति' से सुशोभित होता है।

धैर्य, साहस, तितिक्षा, वीरता, दृढ़ संकल्प तथा प्रत्युत्पन्नमति धृति के घटक हैं। धृति समस्त संकटों, विपदाओं, विपत्तियों में आपकी रक्षा करेगी। जिस प्रकार लहरों के प्रहार एक चट्टान को उद्वेलित नहीं कर पाते हैं, इसी प्रकार जीवन के समस्त संकट आपको व्यथित नहीं कर पायेंगे।

अपने मन को धृति, साहस तथा धैर्य से संरक्षित करिए। आप इस सांसारिक जीवन की समस्त कठिनाइयों पर वीरतापूर्वक विजय पा सकते हैं और सदैव शान्त-प्रशान्त रह सकते हैं। संकट काल में आप व्याकुल तथा भ्रमित नहीं होंगे। दुर्भाग्य काल में आप निराश अथवा हताश नहीं होंगे।

धृति आपकी रक्षा करेगी तथा मन की स्थिरता आपकी सहायता करेगी। आप विजय एवं आनन्दपूर्वक बाहर आयेंगे।

प्रह्लाद, सीता, दमयन्ती, नलयिनि और सावित्री धृति के मूर्तिमन्त विग्रह थे।

२

एक मनुष्य का जन्म उसके अच्छे तथा बुरे कर्मों के मिश्रण के कारण होता है। प्रत्येक मनुष्य को उसके जीवन में किसी समय संकटों, विपदाओं, विपत्तियों, आपदाओं, अभाव, कष्ट तथा पीड़ा का सामना करना ही पड़ेगा। धृतिसम्पन्न मनुष्य उन्हें शान्तिपूर्वक एवं सावधानीपूर्वक सहन करेगा तथा स्मितमुख हो उन पर विजय पा लेगा।

धृति साहस, शान्ति, धैर्य, प्रत्युत्पन्नमति तथा तितिक्षा का मधुर, अद्‌भुत आध्यात्मिक मिश्रण है। यह सत्त्व से उत्पन्न गुण है। यह सत्य के पथ पर चलने वाले साधकों को तथा प्रवृत्ति मार्ग पर चलने वाले सांसारिक मनुष्यों को भी मानसिक शक्ति प्रदान करता है।

जो साधक धृतियुक्त नहीं है, वह संकट, पीड़ा तथा रोग के समय साधना छोड़ देता है। वह अचेत होता, चिल्लाता तथा निराश हो जाता है। धृति मनुष्य को सभी संकटों, आपत्तियों, पीड़ा तथा रोग में सँभालती है, सम्पोषित करती है। यह धृति ही थी कि जिसने भगवान राम और सीता, नल और दमयन्ती युधिष्ठिर और उनके भाइयों को सम्बल प्रदान किया जव वे वन में अत्यधिक कष्ट में थे। श्री हरिश्चन्द्र, जीसस क्राइस्ट, राणा प्रताप, अब्दुल बाबा आदि ऐसे वीर हैं जो अमित धृति सम्पन्न थे।

धृति आवश्यकता के समय सहायता करने वाला मित्र है। यह पालन करने वाली माता है। वह मानसिक शक्तिवर्द्धक रसायन तथा रामबाण औषधि है। यह भूख, प्यास गर्मी तथा सर्दी से रक्षा करने वाला कवच है। यह भयंकर विपत्ति तथा हृदयाघात के समय तुरन्त आन्तरिक शक्ति प्रदान करने वाला एक अचूक इंजेक्शन है। यह जीवन की संकटपूर्ण स्थितियों तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के विरुद्ध संघर्ष करने का शक्तिशाल अस्त्र है।

धृतिसम्पन्न मनुष्य विपदाओं के समय हिमालय की भाँति दृढ़ रहता है। वह जीवन की सभी स्थितियों में मन की समता बनाये रखता है। वह बड़े-बड़े कष्टों से विचलित नहीं होता है। जिस प्रकार समुद्र के किनारे की चट्टान लहरों के प्रहार से विचलित नहीं होती है. उसी प्रकार वह इस भयकारक संसार के विविध परिवर्तनों के मध्य अविचलित रहता है।

जिस प्रकार एक मनुष्य युद्धक्षेत्र में विशेष कवच एवं उपकरणों द्वारा अपने नाक आँखों तथा अन्य अंगों की विस्फोटक बमों के विनाशकारी प्रभावों से रक्षा करता है, उसी प्रकार साधक तथा बुद्धिमान मनुष्य धृति द्वारा सांसारिक विपदाओं रूपी विषैली गैसों से अपनी रक्षा करते हैं तथा विजय प्राप्त करते हैं।

परन्तु कायर, कमजोर, धृतिहीन मनुष्य संकट के समय काँपता है, संकुचित होता है, अचेत होता है तथा लज्जा से भर जाता है। वह निराशा में डूब जाता है। वह व्याकुल तथा भ्रमित होता है। वह नहीं जानता है कि उसे क्या करना चाहिए। वह उस कोमल डंठल की भाँति है जो हवा के छोटे से झोंके से हिल जाता है। वह सुध-बुध खो देता है। भय, कायरता एवं दुर्बलता उस पर अधिकार कर लेते हैं। वह असफलता तथा दुःख प्राप्त करता है। वह विपत्ति तथा दुर्भाग्य के समय अपनी पराजय स्वीकार कर लेता है।

धीरे-धीरे धृति का विकास करिए तथा हिमालय की तरह दृढ़ रहिए। पुनः पुनः धैर्यपूर्वक इस सद्गुण का अर्जन करिए।

धृति चारित्रिक शक्ति की परिचायक है। जिस प्रकार एक उच्चपदासीन मनुष्य के लिए, उसका पद उसकी शक्ति है, एक कुलीन मनुष्य के लिए उसका कुल उसकी शक्ति है, एक महान् नेता के लिए उसका स्थान उसकी शक्ति है, एक धनवान मनुष्य के लिए धन शक्ति है, उसी प्रकार एक चरित्रवान मनुष्य के लिए धृति उसकी शक्ति है। धृति ही उसे सम्पोषित करती है। यह आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता की परिचायक है। जहाँ धृति है, वहाँ निरुत्साहिता तथा निराशा पहुँचने का साहस नहीं कर सकते हैं। अतः धृति ही केवल वास्तविक स्थायी शक्ति है क्योंकि उच्च पद, कुल, नेतृत्वशक्ति तथा धन सब नष्ट हो जाते हैं। चरित्र स्थायी धन है, धृति स्थायी शक्ति है।

आप सब धृति द्वारा सांसारिक जीवन तथा भगवद्द्याक्षात्कार में सफलता प्राप्त करें।

मित्रता (Friendship)

मित्रता आपसी सम्मान अथवा अनुरक्ति है। यह सौहार्द है। यह घनिष्ठ परिचय है।

मित्रता समान विचार रखने वाले व्यक्तियों में पारस्परिक स्नेह अथवा आदर है। मित्रता में व्यक्तियों की भावनाओं में समरूपता होती है, उनके मध्य घनिष्ठता होती है जो उन्हें सहानुभूति अथवा पारस्परिक सहायता हेतु प्रेरित करती है।

मित्रता किसी व्यक्ति के सौहार्दपूर्ण तथा सम्माननीय गुणों के प्रति सकारात्मक धारणा से अथवा घनिष्ठ परिचय तथा प्रत्युपकार भावना से उत्पन्न स्नेह है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह संग चाहता है तथा बातचीत करना चाहता है।

वह मित्र बनाने की इच्छा करता है। वह बिना मित्रों के नहीं रह सकता है।

दो व्यक्ति लम्बे समय तक मित्रता बनाये नहीं रख सकते हैं यदि वे एक-दूसरे के छोटे-छोटे दोषों, कमजोरियों अथवा दुर्बलताओं को क्षमा नहीं कर सकते हैं। ईमानदार तथा सच्चे व्यक्तियों के साथ मित्रता लाभदायक होती है। दम्भी, कपटी, झूठे तथा कुटिल व्यक्ति की मित्रता हानिकारक होती है।

किसी से भी मित्रता करने में शीघ्रता मत करिए। एक बार यदि आपने किसी से मित्रता स्थापित की है, तो उसमें दृढ़ एवं स्थिर रहिए। अपने परिचितों एवं मित्रों को सदैव बदलते मत रहिए।

सच्चे मित्र इस संसार में दुर्लभ हैं। आप स्वार्थी मित्रों की प्रचुरता पायेंगे। आपके हृदय का अन्तर्वासी, अन्तर्यामी तथा आन्तरिक शासक ही आपका एकमात्र सच्चा एवं अमर मित्र है।

आप अनेक मनुष्यों की मित्रता को मात्र बाहरी दिखावा ही पायेंगे। झूठी मित्रता शीघ्र ही समाप्त हो जाती है, परन्तु सच्ची मित्रता नया जीवन तथा उत्साह देती है।

आवश्यकता के समय सहायक होने वाला मित्र ही वास्तविक मित्र है। समृद्धि की । अपेक्षा विपत्ति के समय मित्र के पास जाने को तत्पर रहिए।

सच्ची मित्रता अनन्त एवं अमर होती है।

मित्रता एक सुकोमल वस्तु है तथा यह किसी अन्य सुकोमल वस्तु के समय ही सावधानी की अपेक्षा करती है। सावधान रहिए। इसे विकसित होने दीजिए।

आपका मित्र वह होना चाहिए जिसकी समझ, गुणों तथा विचारों में आप पूर्ण विश्वास रखते हों।

जिसने नौ मित्रों को खो दिया है, उसके दसवें मित्र मत बनिए।

एक अच्छा सद्गुणी मनुष्य ही आपका उत्तम मित्र होगा। उसे तुरन्त मित्र बनाइए। जीवन के अन्त तक उससे मित्रता बनाये रखिए। उसके परामर्श तथा मित्रता से आप अत्यधिक लाभान्वित होंगे। वह आपकी सहायता करेगा, मार्गदर्शन करेगा तथा सेवा करेगा।

एक सच्चा, वास्तविक मित्र आपको उचित परामर्श देगा, हर परिस्थिति में आपकी सहायता करेगा, विपत्ति के समय साहसपूर्वक आपकी रक्षा करेगा तथा सतत आपका मित्र बना रहेगा।

सच्ची मित्रता जीवन के मधुरतम सुखों में से एक है।

कुटिल, लोभी, दुष्ट तथा निम्न प्रकृति के व्यक्तियों के मध्य हुई मित्रता अधिक समय तक नहीं रहती है।

समृद्धि के समय नहीं अपितु विपत्ति के समय मित्रता की श्रेष्ठता का ज्ञान होता है। एक सच्चा मित्र सदैव ही प्रेम करता है।

सच्चे मित्रों के मध्य ही सच्चा एवं स्थायी प्रेम, सामंजस्य तथा सद्भावना होते हैं।

मित्रता प्रसन्नता को दुगुना कर उसमें वृद्धि करती है तथा दुःख को बाँट कर उसे कम कर देती है।

मित्रता आपसी आदर एवं सम्मान पर आधारित गहरा, प्रशान्त तथा स्थायी प्रेम है। मित्रता सदैव अन्योन्याश्रित होती है। कभी एकतरफा मित्रता नहीं होती है।

मित्रता के समय गहरा लगाव न रखते हुए मात्र सौहार्दपूर्ण भावना रखना मैत्री (Friendliness) है।

स्नेह (Affection) स्वाभाविक होता है। मित्रता विकसित होती है। मित्रता में कुछ अंश तक समानता अपेक्षित है।

सौजन्यता (Comity) एक-दूसरे के अधिकार का सम्मान करते हुए आपसी शिष्टाचार है। सौहार्द (Amity) मैत्रीपूर्ण भावना एवं सम्बन्ध है, विशेष मित्रता नहीं यथा राष्ट्रों के मध्य सौहार्द अथवा पड़ोसी देशों के मध्य सौहार्द।

मित्रता प्रेम से अधिक बौद्धिक तथा कम भावनात्मक होती है। प्रेम की अपेक्षा मित्रता के कारण देना सरल होता है। मित्रता अधिक शान्त एवं प्रशान्त होती है, प्रेम अधिक प्रबल होता है। प्रेम प्रायः गहनतम रूप को प्राप्त करता है। हम मित्रता की गहनता के विषय में नहीं कह सकते हैं।

एक मित्र वह है जो अपने मित्र से स्नेह से बँधा हुआ है, जो उसके प्रति आदर तथा सम्मान के भाव रखता है, उसकी संगति की आकांक्षा करता है तथा उसकी प्रसन्नता तथा समृद्धि को बढ़ाने का प्रयास करता है।

बिना विश्वास के मित्रता नहीं हो सकती है तथा बिना सत्यनिष्ठा के विश्वास उत्पन्न नहीं होता है।

मितव्ययिता (Frugality)

मितव्ययिता किफायत अथवा कुशलतापूर्वक की गयी व्यवस्था है। मितव्ययिता धन, वस्तु, सामग्री के सम्बन्ध में की गयी विवेकपूर्ण व्यवस्था है। यह अच्छी अर्थव्यवस्था अथवा गृहव्यवस्था है।

मितव्ययिता एक निर्धन मनुष्य को धनी बनाती है। मितव्ययिता रोपित कर आप स्वतंत्रता की एक सुनहरी फसल प्राप्त कर सकते हैं।

मितव्ययी बनिए, परन्तु कृपण अथवा कंजूस मत बनिए।

मितव्ययिता एक गुण है परन्तु कृपणता अथवा कंजूसी दुर्गुण है।

धन की प्राप्ति श्रम तथा मितव्ययिता पर आधारित है। धन तथा समय का अपव्यय मत करिए। दोनों का सदुपयोग करिए।

मितव्ययिता के बिना कोई धनवान नहीं बन सकता है, और इसे अपनाने पर बहुत कम निर्धन होंगे।

जीवन में अनावश्यक सुख-साधनों का त्याग करिए। सरल बनिए। 'सादा जीवन' तथा उच्च विचार के आदर्श को अपनाइए। आप अभाव से मुक्त होंगे। आप आनन्द का अनुभव करेंगे।

मितव्ययिता विवेक की पुत्री, संयम की बहिन तथा स्वतन्त्रता की जननी है।

जो व्यक्ति अपव्ययी है, खर्चालु है, वह शीघ्र ही निर्धन होगा। वह दूसरों पर आश्रित हो जायेगा। वह भ्रष्ट हो जायेगा।

अपने साधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण तथा सावधानीपूर्ण प्रबन्ध ही मितव्ययिता है।

कृपणता धन एकत्र करने के उद्देश्य से स्वयं को तथा अन्यों को जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं एवं सुविधाओं से वंचित रखना है।

किफायत (Economy) व्यवस्था करती है, मितव्ययिता (Frugality) धन बचाती है, दूरदर्शिता (Providence) योजना बनाती है तथा अल्पव्ययिता (Thrift) उपयुक्त समय में खर्च करने के उद्देश्य से उपार्जित करती है तथा बचाती है।

अपव्यय, फिजूलखर्ची एवं खर्चीलापन मितव्ययिता के विपरीतार्थी शब्द हैं।

उदारता (Generosity)

उदारता दानशीलता अथवा विशालहृदयता की प्रकृति है। आत्मोत्सर्ग उदारता का सारतत्त्व है। एक उदार मनुष्य दानशील होता है।

उदारता मुक्तहस्त से देने अथवा हृदय से देने का स्वभाव है। यह दयालुतापूर्वक तथा मुक्तहस्त देने का कार्य अथवा अभ्यास है। यह उपकारिता अथवा महामनस्कता है। एक उदार मनुष्य का हृदय विशाल तथा दयापूर्ण होता है। उसकी दानशीलता अतिरेक रूप से प्रवाहित होती है।

एक उदार मनुष्य उदात्त प्रकृति अथवा स्वभाव से युक्त होता है। वह अपने से निम्न के प्रति नम्रता तथा शिष्टतापूर्वक व्यवहार करता है।

उदारता उच्च कुलीनता की साथी है। एक उदार मनुष्य सदैव देता ही रहता है। उसका हृदय सहानुभूति से आपूरित रहता है। सहानुभूति तथा परोपकारिता, उदारता के सेवक है।

जीवन में की गयी उदारता मृत्यु काल की उदारता से भिन्न होती है। प्रथम वास्तविक दानशीलता एवं परोपकारिता से तथा द्वितीय गर्व अथवा भय से उत्पन्न होती है।

वदान्यता, महामनस्कता, विशालहृदयता, उदारचरितता एवं उपकारिता उदारता के समानार्थी शब्द हैं।

उदार (Generous) शब्द दानी मनुष्य के आत्मोत्सर्गपूर्ण हार्दिकता को अभिव्यक्त करता है तथा प्रचुर (Liberal) शब्द उपहार की मात्रा को। हृदय की दयालुता के कारण मनुष्य उदार होता है और वह दोषी को सजा देने की अपेक्षा उसके कल्याण में प्रसन्न होता है।

एक बालक एक सेब के उपहार द्वारा स्वयं की उदारता (Generosity) प्रदर्शित कर सकता है, एक लखपति प्रचुर (Liberal) दान करता है। एक वदान्य (Munificent) उपहार मात्रा की दृष्टि से विशाल होता है चाहे दानी का उद्देश्य कुछ भी रहा हो। निःस्वार्थता आत्म त्याग को इंगित करती है। एक मनुष्य अपनी आत्मा की महानता से महामनस्क (Magnanimous) कहलाता है अर्थात् वह अपमान एवं आघात से ऊपर उठ चुका है।

अनुदार, तुच्छ, कृपण, कंजूस एवं अधम प्रकृति उदार प्रकृति के विपरीतार्थी शब्द हैं।

सौम्यता (Gentleness)

सौम्यता स्वभाव तथा आचार में मृदु, नम्र एवं शिष्ट होने का गुण अथवा अवस्था है।

यह भाव की कोमलता है। यह प्रेम तथा सम्मान है। यह सहानुभूति है।

सौम्यता स्वभाव की मधुरता है। यह मृदुलता है। यह विनीतता है। यह कठोरता का अभाव है।

एक सौम्य मनुष्य सुशील, शान्त तथा शिष्ट होता है। वह विनम्र आचरणयुक्त होता है। वह कठोरता तथा अभद्रता से मुक्त होता है। वह मधुर तथा मृदु होता है। आपके आचरण में जो भी आपत्तिजनक है, सौम्यता उसका परिष्कार करती है।

यदि एक मनुष्य सौम्य है, तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह कमजोर अथवा असमर्थ है। केवल शक्तिशाली मनुष्य ही वास्तव में सौम्य हो सकता है। सौम्यता के समान शक्तिशाली कोई नहीं है। अभद्रता अथवा कठोरता दुर्बलता, अज्ञान, अशिष्टता तथा अनुभव की कमी का लक्षण है।
सौम्यता शक्ति है।

'सौम्य'(Gentle) शब्द से मूल स्वभाव परिलक्षित होता है: 'वश्य' (Tame) से अभिप्राय है वह स्वभाव जिसे प्रशिक्षण द्वारा नियन्त्रित किया गया है; मृदुल ऐसा स्वभाव है जो सरलता से उद्वेलित नहीं किया जा सकता है तथा 'विनीत (वह स्वभाव है जो अनुशासन अथवा पीड़ा द्वारा कोमलता तक प्रशिक्षित किया गया है।

भलाई (Goodness)

भगवान् भलाई के सर्वोत्कृष्ट रूप हैं।

भलाई एक गुण है, श्रेष्ठता है तथा परोपकारिता है। भलाई किसी भी प्रकार से भला अथवा अच्छा होने का गुण है, विशेषतः यह दवा, परोपकारिता, नैतिकता आदि गुणों से सम्पन्न होना है। भलाई परोपकारिता, करुणा अथवा दया का कार्य है।

यदि आप मानवता का भला करते हैं, तो आप देवताओं के समकक्ष हो जाते हैं। "भले बनो, भला करो।" सम्पूर्ण नीतिशास्त्र एवं सदाचरण इस उक्ति में निहित है। यदि आप इसका अभ्यास करेंगे, तो शीघ्र ही भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे।

एक भला मनुष्य सदैव भगवान् के साथ रहता है। वह भगवान् में ही रहता है। उसमें दिव्यता वास करती है।

एक भला मनुष्य, जो भले कार्य करता है, यश तथा दीर्घ जीवन प्राप्त करता है। एक भला कार्य कभी व्यर्थ नहीं जाता है। यह हृदय को शुद्ध करता है तथा दिव्य प्रकाश एवं दिव्य कृपा की प्राप्ति की ओर ले जाता है।

शिष्टता का बीज बोने वाला मित्रता का फल प्राप्त करता है तथा दया का बीज रोपित करने वाला प्रेम का फल प्राप्त करता है।

भलाई 'प्रेम' का क्रियान्वित रूप है। भला होना, भद्र होना है।

भलाई महानतम गुण है। प्रत्येक अच्छा कार्य अमरत्व अथवा शाश्वत जीवन प्राप्ति का बीज है। सम्पूर्ण विश्व के कल्याण हेतु कार्य करिए। विश्व की एकता के लिए कार्य करिए।

सदा सर्वदा, प्रत्येक स्थान पर जितने अधिक मनुष्यों की जितनी अधिक भलाई, जितने अधिक प्रकार से आप कर सकते हैं, उसे पूर्ण उत्साह, शक्ति, प्रेम तथा रुचि के साथ करिए।

बुराई के बदले भलाई करिए। यह सच्चे मनुष्य का लक्षण है। प्रेम प्रेम को उत्पन्न करता है, घृणा घृणा को।

दूसरों की भलाई करने तथा उन्हें प्रसन्न करने से आपको भी भलाई एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है।

भलाई बुराई पर विजय है। यह बुराई का अभाव नहीं है।

भलाई जीवन को आशीर्वाद बनाती है। भलाई आपके जीवन में निश्चित रूप से सफलता एवं समृद्धि लायेगी।

भला करना मनुष्यत्व है। भला बनना देवत्व है।

थोड़ा आत्म-त्याग एवं सच्ची सेवा, प्रसन्नता, प्रोत्साहन, सहानुभूति एवं दया के कुछ शब्द, थोड़े दयापूर्ण एवं भले कार्य, प्रलोभनों पर कुछ शान्त विजयें- ये सब शाश्वत आनन्द एवं शान्ति तथा अमरत्व प्राप्ति में सहायक होंगे।

राष्ट्र तथा जनसमुदाय भलाई के नियमों का पालन नहीं करते हैं। अतः वर्तमान विश्व कई प्रकार की बुराइयों से आक्रान्त है।

कारण एवं कार्य का नियम अत्यन्त कठोर तथा अटल है। आप कष्ट, निर्धनता, दुःख एवं पीड़ा की फसल प्राप्त करते हैं क्योंकि भूतकाल में आपने बुराई के बीज बोये हैं। अच्छाई के बीज बोने से आप समृद्धि एवं आनन्द की फसल प्राप्त करते हैं। इस नियम को समझने का प्रयास करिए। इसके बाद आप केवल अच्छाई के बीज ही बोयेंगे।

अच्छे, उच्च तथा दिव्य विचारों को रखिए। बुरे विचारों के विरुद्ध अपने मन के द्वार उसी प्रकार बन्द रखिए, जिस प्रकार आप शत्रुओं, चोर-डाकुओं के विरुद्ध घर के द्वार बन्द रखते हैं। सदैव भले कार्य करिए। अब बुराई आपके मन में प्रवेश नहीं कर सकती है।

अच्छी आदतों को अपनाइए। भलाई एक आदत है। इसके बिना मनुष्य जानवर अथवा कीड़ा है। ऐसा मनुष्य अनिष्टकर, कष्टप्रद एवं घृणास्पद है। वह इस पृथ्वी पर बोझ है।

थोड़े अच्छे विचार तथा थोड़े भले कार्य भी अत्यधिक लाभदायक हैं। ये आपको शाश्वत आनन्द की ओर ले जायेंगे। तब, थोड़े अच्छे विचार एवं अच्छे कार्य करने का प्रयास क्यों नहीं करें?

भलाई, पवित्रता एवं सत्यपरायणता विकसित करने हेतु कुछ निर्देश

१. ऐसा उदारमना व्यक्ति जो सदैव संसार का भला करता है तथा उच्च दिव्य विचारों को धारण करता है, विश्व के लिए आशीर्वाद है।

२. भले कार्य करने वाले तथा अच्छे, प्रिय एवं मधुर शब्द बोलने वाले कोई शत्रु नहीं होता है। यदि आप वास्तव में आध्यात्मिक विकास एवं मोक्ष चाहते हैं, तो उन मनुष्यों का भला करिए जो आपको चोट पहुँचाने अथवा विष देने का प्रयास करते हैं।

३. पवित्रता ज्ञान तथा अमरत्व की ओर ले जाती है। पवित्रता दो प्रकार की होती है-आन्तरिक अथवा मानसिक और बाहरी अथवा शारीरिक। मानसिक पवित्रता अधिक महत्त्वपूर्ण है। शारीरिक पवित्रता भी आवश्यक होती है। आन्तरिक-मानसिक पवित्रता द्वारा मन की प्रफुल्लता, एकाग्रता, इन्द्रियों पर विजय तथा आत्मसाक्षात्कार हेतु योग्यता प्राप्त होती है।

४. पवित्रता योगी का सर्वश्रेष्ठ आभूषण है। यह एक सन्त की सर्वश्रेष्ठ एवं महानतम निधि है। यह एक भक्त का सर्वश्रेष्ठ धन है।

५. करुणापूर्ण कार्यों तथा दयापूर्ण सेवा का अभ्यास हृदय को पवित्र एवं कोमल बनाता है, हृदय-कमल को ऊर्ध्वमुखी कर साधक को दिव्य प्रकाश की प्राप्ति योग्य बनाता है।

६. जप, कीर्तन, ध्यान, दान तथा प्राणायाम सभी पापों को जला सकते हैं तथा हृदय को शीघ्र ही पवित्र बना सकते हैं।

७. सत्य उच्चतम ज्ञान है। जनसमुदाय के समर्थन बिना भी सत्य का अस्तित्व रहता है। सत्य शाश्वत है। सत्य का शासन सर्वोच्च है। सत्यभाषी एवं पवित्र मनुष्यों की मृत्यु नहीं होती है अर्थात् वे जन-जन के हृदयों में जीवित रहते हैं। असत्यभाषी एवं वासनायुक्त मनुष्य मृतवत् ही हैं।

८. यदि आप आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपका मन पवित्र होना चाहिए। जब तक मन समस्त इच्छाओं, तृष्णाओं, चिन्ताओं, मोह, गर्व, कामवासना, आसक्ति तथा राग-द्वेष का त्याग नहीं करता है, वह परम शान्ति तथा परमानन्द अथवा अमरपद के साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता है। ९. मन की तुलना एक उद्यान से की जाती है। जिस प्रकार आप भूमि को जोत कार एवं खाद डाल कर, काँटों एवं खरपतवार को हटा कर तथा पौधों एवं वृक्षों का जल से सिंचन कर अच्छे फूल एवं फल प्राप्त कर सकते हैं, उसी प्रकार आप मन की अशुद्धियों राधा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद को दूर कर तथा दिव्य विचारों के जल से सिंचन कर अपने हृदय के उद्यान में भक्ति का पुष्प विकसित कर सकते हैं। खरपतवार तथा काँटे वर्षा ऋतु में विकसित होते हैं तथा ग्रीष्म में अदृश्य हो जाते हैं लेकिन उनके बीज भूमि के नार्य ही रहते हैं। ज्यूँ ही वर्षा होती है, बीज पुन: अंकुरित हो जाते हैं। इसी प्रकार मन की वृत्तियाँ चेतन मन की सतह पर प्रकट होती हैं, तत्पश्चात् अदृश्य हो जाती हैं और सूक्ष्म बीज-अवस्था अर्थात् संस्कार का रूप धारण कर लेती हैं तथा आन्तरिक अथवा बाहरी उत्प्रेरक प्राप्त होने पर पुनः वृत्तियाँ बन जाती हैं। जब उद्यान स्वच्छ होता है, जब वहाँ खरपतवार एवं काँटे नहीं होते हैं, आप अच्छे फल प्राप्त कर सकते हैं। उसी प्रकार जब मन एवं हृदय पवित्र होते हैं, तब आप गहन ध्यान रूपी फल प्राप्त कर सकते हैं। अतः सर्वप्रथम मन की मलिनताओं को दूर करिए।

१०. यदि आप प्रतिदिन थाली को साफ नहीं करते हैं, तो उसकी चमक खो जाती है। मन के साथ भी ऐसा ही है। यदि प्रतिदिन ध्यान के अभ्यास द्वारा मन को स्वच्छ नहीं रखा जाता है, तो मन अशुद्ध हो जाता है।

११. सत्यभाषण मनुष्य को चिन्ताओं से मुक्त करता है तथा शान्ति एवं शक्ति प्रदान करता है।

१२. एक योगी की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योग्यता सत्यभाषण है। यदि सत्य तथा एक हजार अश्वमेध यज्ञ के फल को एक तराजू पर रख कर तौला जाये तो सत्य का ही पलड़ा भारी रहेगा।

१३. ईश्वर सत्य है। उनका साक्षात्कार सत्यभाषण तथा विचार, वचन एवं कर्म में सत्य के आचरण द्वारा किया जा सकता है।

१४. सत्यपरायणता, आत्म-नियन्त्रण, ईर्ष्यापूर्ण प्रतिस्पर्धा का अभाव, क्षमा, शालीनता, तितिक्षा, मात्सर्य का अभाव, दानशीलता, सहृदयता, निःस्वार्थ परोपकारिता, धीरता, करुणा एवं अहानिकरता-सत्य के तेरह प्रकार हैं।

१५. कुछ मनुष्य मानते हैं कि किसी की अत्यधिक भलाई के लिए बोला गया 'झूठ' सत्य ही है। मान लीजिए एक अधार्मिक राजा अकारण ही एक साधु को फाँसी का दण्ड देता है, उस साधु के जीवन को बचाने के लिए बोला गया झूठ सत्य ही है।

१६. प्रत्येक परिस्थिति में सत्यभाषण करने वाला योगी वासिद्धि प्राप्त कर लेता है। वह जो कुछ भी सोचता है अथवा बोलता है, वह सत्य हो जाता है। वह मात्र अपने विचार द्वारा कुछ भी कर सकता है।

१७. "यह आत्मा सत्य के दृढ़ आचरण द्वारा प्राप्त की जा सकती है। सत्य से महान् कुछ भी नहीं है।" यह श्रुतियों की घोषणा है। युधिष्ठिर तथा सत्यव्रती हरिश्चन्य है। जीवन को देखिए। अत्यन्त घोर संकट के समय भी उन्होंने सत्य का त्याग नहीं किया।

मनोहारिता-रम्यता (Gracefulness)

मनोहारिता रूप एवं आचरण की सहज चारुता है। औचित्य अथवा उपयुक्तता इसके लक्षण होते हैं। यह आत्मा की आन्तरिक समरसता की बाह्य अभिव्यक्ति है।

मनोहारिता आचरण की शिष्टता का गरिमायुक्त सौन्दर्य है।

मनोहारी व्यक्तित्व एक चिरस्थायी अनुशंसा पत्र है। एक मनोहारी मनुष्य दिखावे एवं आडम्बर से मुक्त होता है। उसका व्यक्तित्व गरिमायुक्त होता है। उसके विचार, वाणी एवं कर्म मर्यादित होते हैं।

एक मनोहारी मनुष्य शालीनता, लालित्य, सौन्दर्य, समरसता तथा सहजता द्वारा लक्षित होता है। उसकी आकृति, गति तथा भाषा प्रियकर होती है। उसका रूप, कार्य, मुखाकृति तथा भाषण मनोहारी होते हैं।

मनोहारी शब्द गति अथवा गति की सम्भावना सूचित करता है। सौन्दर्य शब्द पूर्ण स्थिरता के लिए प्रयुक्त होता है। मनोहारिता शब्द आँखों से दृश्यमान सौन्दर्य के लिए प्रयुक्त होता है यद्यपि हम प्रायः मनोहारी कविता अथवा प्रशंसोक्ति भी कहते हैं। मनोहारिता लालित्य युक्त रूपरेखा तथा अनुपात का प्रिय सामंजस्य है।

हम मनोहारी व्यवहार, मनोहारी वस्त्र कहते हैं। हम कहते हैं, "सीता का बोलना एवं चलना मनोहारी है" अर्थात् एक प्रकार की स्वाभाविक सहजता, मर्यादा तथा लालित्य से युक्त है।

कृतज्ञता (Gratitude)

कृतज्ञता उपकारी के प्रति हार्दिक सौहार्दपूर्ण भावना है।

कृतज्ञता उपकारक के प्रति आभार, दयालुता अथवा सद्भावना का भाव है, उससे प्राप्त लाभों के प्रति प्रशंसा का भाव है तथा उपकार अथवा सेवा का उचित प्रत्युपकार करने का स्वभाव है अथवा जब प्रत्युपकार नहीं किया जा सकता है तो उपकारी को समृद्ध तथा प्रसन्न देखने की इच्छा है।

कृतज्ञता एक कर्तव्य है जिसे अवश्य किया जाना चाहिए। यह धन्यवाद की शाब्दिक अभिव्यक्ति से बढ़ कर है। यह सज्जनता की सूचक है। यह सर्वश्रेष्ठ दैवीय सद्गुण है। यह एक भले तथा दयालु मनुष्य से प्राप्त लाभ की स्मृति मात्र नहीं है वरन् उसके भले कार्यों के लिए उसके प्रति हृदय की श्रद्धांजलि है।

कृतज्ञता सभी सद्गुणों में श्रेष्ठतम है तथा सभी कर्तव्यों में से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

जिस प्रकार एक नदी अपना समस्त जल सागर को दे देती है जिससे उसने यह जल प्राप्त किया, उसी प्रकार एक कृतज्ञ मनुष्य प्रत्युपकार करता है। वह अपने उपकारक के प्रति श्रद्धा एवं प्रेम रखता है। यदि वह प्रत्युपकार करने में असमर्थ है तो वह उस उपकार को अपनी स्मृति में सँजोये रखता है। वह उसे जीवनपर्यन्त नहीं भूलता है।

भगवान् आपके सृजनकर्ता हैं, उन्होंने आपको समस्त ऐश्वर्य प्रदान किये हैं, उनके प्रति कृतज्ञ बनिए। अपने हृदय के अन्तरतम से उन्हें भावपूर्वक प्रार्थना कीजिए। उनकी महिमा का गान करिए। निरन्तर उनका स्मरण कीजिए। उनके प्रति स्वयं को पूर्णतया समर्पित करिए, उनकी कृपा प्राप्त कर सदैव के लिए आनन्दित हो जाइए।

एक कृतघ्न मनुष्य संसार का सर्वाधिक दुःखी प्राणी है। उसकी दशा दयनीय, शोचनीय तथा दुःखद है। यह संसार कृतघ्न दुष्टों से भरा हुआ है।

कृतज्ञ बनिए। सभी आपकी प्रशंसा एवं सम्मान करेंगे। आप शान्ति तथा शाश्वत आनन्द की समृद्ध फसल प्राप्त करेंगे।

वीरता (Heroism)

वीरता साहस अथवा हिम्मत है।

एक वीर शक्ति, साहस तथा वीरतापूर्ण कार्यों द्वारा पहचाना जाता है। उसे देवतुल्य समझा जाता है। एक वीर की मृत्यु उसे अधिक उच्च स्थान प्राप्त करा देती है। स्थानीय उत्सवों में उसकी पूजा की जाती है।

वीर विशिष्ट साहस से परिपूर्ण होता है। वह अत्यधिक निर्भीक होता है।

वीरता भय पर, दुःख के भय, मृत्यु के भय आदि पर आत्मा की वैभवशाली विजय है।

वीरता वीरोचित गुणों यथा उच्चादर्श, निर्भयता, दृढ़ संकल्प एवं धृति का समन्वित रूप है।

साहस (Courage) सामान्यतया संकटों से निर्भयता सूचित करता है। धृति (Fortitude) निष्क्रिय साहस है, यह संकटों, खतरों तथा कष्टों को शान्तिपूर्वक सहन करने का स्वभाव है।

युद्धक्षेत्र में अथवा प्रत्यक्ष प्रतिद्वन्द्वियों के साथ संघर्ष में साहस प्रदर्शन बहादुरी (Bravery) है।

निर्भीकता (Intrepidity) दृढ़ साहस है जो घोर संकटों के समय भी पीछे नहीं हटता है।

पराक्रम (Gallantry) एक प्रकार का रोमांचकारी साहस है जो भयंकर युद्ध के मध्य प्रदर्शित होता है। वीरता (Heroism) शब्द में साहस के इन सभी प्रकारों का समावेश हो सकता है।

विश्व ने प्रत्येक युग में अपने वीरों की पूजा की है परन्तु वीरता के मापदण्ड सदैव बदलते रहे हैं। आज वीरता का निर्धारण कार्य की अपेक्षा उसके पीछे निहित उद्देश्य के आधार पर किया जाता है।

ईमानदारी (Honesty)

ईमानदारी न्यायनिष्ठा, सत्यनिष्ठा, छलहीनता, निष्कपटता एवं स्पष्टवादिता है।

ईमानदारी एकमात्र वह सद्गुण है जिसके आधार पर एक व्यक्ति अथवा राष्ट्र का जीवन सुरक्षित रह सकता है। ईमानदारी, न्याय तथा सदाचार पर आधारित समाज ही स्थायी रह सकता है।

एक अपरिवर्तनीय नियम है-ईमानदारी। घर, ऑफिस, राजनीति, व्यवसाय, राजपथ, न्यायालयों, सभी सभाओं में एक ही वस्तु की आवश्यकता है-ईमानदारी।

ईमानदारी सर्वोत्तम नीति नहीं, वरन् सर्वोत्तम सद्गुण है। यह सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है।

ईमानदारी न्याय तथा नैतिक औचित्य के साथ संगतता है।

ईमानदारी न्याय तथा सम्मान्य व्यवहार के अनुसार कार्य करने का स्वभाव है। सामान्यतया यह आचरण की निष्कपटता है। यह न्याय, निष्पक्षता एवं सत्यनिष्ठा है।

उच्च चिन्तन का आधार पूर्ण ईमानदारी है।

एक ईमानदार मनुष्य स्पष्टवादिता, सत्यता एवं निष्कपटता द्वारा जाना जाता है। वह विश्वसनीय, सच्चा, स्पष्टवादी तथा निष्कपट होता है। दूसरों के अधिकारों का सम्मान करते हुए कार्य करना उसका स्वभाव होता है, विशेषतया व्यवसाय तथा सम्पत्ति सम्बन्धित विषयों में। वह आत्मसम्मान के अनुदेशों का पालन करता है जो कि व्यावसायिक कानून की किसी आवश्यकता अथवा लोकमत से ऊँचा स्थान रखते हैं। वह अपनी दिव्य आत्मा की

गरिमा के विरुद्ध कुछ कार्य नहीं करेगा। वह चोरी नहीं करता है, किसी को धोखा नहीं देता है। वह किसी स्थिति का अनुचित लाभ नहीं उठाता है।

जो मनुष्य उच्चतम एवं पूर्णतम रूप से ईमानदार है, वह अपने विचारों में भी सत्य तथा उचित का पालन करने के प्रति अत्यन्त सावधान रहता है।

धोखा, बेईमानी, विश्वासघात, छल-कपट, असत्य तथा आडम्बर ईमानदारी के विपरीतार्थक शब्द हैं।

ईमानदारी के बिना योग में सफलता तथा आध्यात्मिक उन्नति सम्भव नहीं है।

आशा (Hope)

कुछ अच्छा प्राप्त करने की इच्छा अथवा यह विश्वास कि वह प्राप्तव्य है, आशा है। आशा पूर्वापेक्षा है।

आशा उत्प्रेरक है। आशा एक शक्तिवर्द्धक रसायन है। मनुष्य इस धरा पर आशा के सहारे रहता है। वह आत्मसुधार की आशा करता है। वह ऐसा कुछ प्राप्त करने की आशा करता है जो उसे सान्त्वना, तृप्ति, सुख, शान्ति, आनन्द तथा अमरत्व प्रदान करेगा।

आशा के अभाव में महान् कार्य नहीं किये जा सकते हैं, यहाँ तक कि बिना आशा के अल्प सफलता भी प्राप्त नहीं की जा सकती है।

आशा आत्मा की प्राणशक्ति है। आशा आपको बल देती है। आशा आपको प्रयत्न करने, संघर्ष करने तथा लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित करती है।

मनुष्य सदैव कुछ प्राप्त करने की आशा करता है तथा स्वयं को अच्छे से अच्छा बनाना चाहता है। मन की स्वाभाविक उड़ान एक आशा से दूसरी आशा तक है।

निराश मत होइए। हताश मत होइए। प्रत्येक सुबह नया जीवन आरम्भ होता है। भूतकाल की ओर मत देखिए। सदैव आशावादी रहिए। आप सफलता प्राप्त करेंगे।

आशा आपकी मित्र है। आशा सफलता की जननी है। आशा आपका अवलम्ब है,

यह आपको प्रसन्नता प्रदान करती है। आशा आपको भव्यता की उदात्त ऊँचाइयों की ओर अभिप्रेरित करती है। यह अनुकूल पथ द्वारा जीवन व्यतीत करने में सहायक होती है। आशा प्रेरित तथा उत्साहित करती है। यह आपको सरल एवं सुखद मार्ग द्वारा आपकी यात्रा के लक्ष्य तक पहुँचाती है।

इस विश्व में प्रत्येक पुरुष अथवा स्त्री का जीवन आशा पर आश्रित है। चिकित्साविज्ञान का विद्यार्थी एक सफल एवं प्रसिद्ध चिकित्सक बनने की आशा करता है। एक युवती एक सुन्दर, बुद्धिमान एवं धनी पुरुष से विवाह की आशा करती है। एक व्यापारी करोड़पति बनने की आशा करता है। एक मुंसिफ जिला न्यायाधीश बनने की आशा करता है।

हृदय ही वह अंग है जो सबसे अन्त में कार्य करना बन्द करता है। इसी प्रकार मनुष्य में आशा ही वह तत्त्व है जिसकी सबसे अन्त में मृत्यु होती है।

आपका जीवन उस पर अवलम्बित नहीं है जो आपके पास है, वरन् उस पर अवलम्बित है जिसकी आप आशा करते हैं।

आशा (Hope) वह है जो सदैव अभिनन्दनीय अर्थात् सुखद है। प्रत्याशा (Expectation) अथवा उम्मीद प्रिय अथवा अप्रिय होती है। विश्वास तथा भरोसा उस व्यक्ति अथवा वस्तु पर आपकी निर्भरता को प्रकट करता है जिससे आप अपनी इच्छानुसार परिणाम चाहते हैं।

आशा के वचन अत्यन्त मधुर हैं। जो आशा करता है, वह स्वयं अपनी सहायता करता है। व्यर्थ आशाओं का त्याग करिए। सम्भाव्यता की सीमा से परे की आशा मत कीजिए।

हे हृदय! आशावान बनो!

हे शुभ आशा ! तुम्हारे सुन्दर उद्यान में सफलता एवं प्रसन्नता के पुष्प खिलते हैं।

आतिथ्य (Hospitality)

आतिथ्य बिना फलांकाक्षा के अतिथियों तथा अपरिचितों का दयालुतापूर्वक स्वागत-सत्कार करने की भावना, अभ्यास अथवा कला है। एक सत्कारशील मनुष्य उदार तथा दानशील होता है।

आतिथ्य अतिथि यज्ञ है। यह उन पाँच यज्ञों में से एक है जो गृहस्थियों द्वारा प्रतिदिन सम्पन्न किये जाने चाहिए।

सत्कारशील मनुष्य विश्व में दुर्लभ है। अधिकांश मनुष्य अपने गृहों के दरवाजे बन्द कर लोभपूर्वक एवं मूर्खतापूर्वक स्वयं की उदरपूर्ति में लगे रहते हैं।

आतिथ्य स्वर्ग अथवा उच्चतर आनन्दपूर्ण लोकों को ले जाने वाला सीधा मार्ग है।

यदि धनी मनुष्य सत्कारशील हो जायें, तो इस विश्व में दुःख कम हो जायेंगे।

निर्धनों के प्रति अतिथि-सत्कार की भावना बनाये रखी जाये।

विनम्रता (Humility)

यद्यपि आप महान् विद्वान् हैं, आपको विनम्र होना चाहिए। एक विद्वान् मनुष्य, जो विनम्र भी है, सभी के द्वारा सम्मानित होता है।

यदि आप नल के माध्यम से जल पीना चाहते हैं, तो आपको झुकना होगा। इसी प्रकार यदि आप अमरत्व की आध्यात्मिक-सुधा का पान करना चाहते हैं, तो आपको झुकना होगा, विनीत तथा विनम्र बनना होगा।

विनम्रता सर्वश्रेष्ठ सद्गुण है। "विनीत मनुष्य धन्य हैं क्योंकि वे ही पृथ्वी का साम्राज्य प्राप्त करेंगे।" (सेंट मैथ्यू-अध्याय ५-५१) आप एकमात्र इस सद्गुण का विकास करके अपने अहंकार का नाश कर सकते हैं। आप समस्त विश्व को प्रभावित कर सकते हैं। आप चुम्बकवत् अनेक मनुष्यों को अपनी ओर आकर्षित कर पायेंगे। विनम्रता सच्ची होनी चाहिए। झूठी विनम्रता पाखण्ड है। यह स्थायी नहीं होती है।

जब आप पूर्ण विनम्र बनते हैं, तो ईश्वर आपकी सहायता करते हैं। अतः इस सद्गुण का अत्यधिक मात्रा में विकास करिए। विनम्रता का मूर्तिमन्त रूप बनिए।

विनम्रता से श्रेष्ठ कोई अन्य सद्गुण नहीं है। मात्र इस एक सद्गुण के द्वारा आप मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। विनम्रता अहंकार का नाश करती है तथा समभाव, आत्मनियन्त्रण, मानसिक शान्ति, अच्छी निद्रा और विश्राम, समस्त प्राणियों में आत्म भाव अथवा नारायण भाव तथा अन्ततः आत्म-साक्षात्कार अथवा विष्णुपदम् की प्राप्ति कराती है।

कर्मठता-परिश्रमशीलता (Industriousness)

यह परिश्रमी होने का गुण है। यह उद्यमशीलता है। यह श्रम, अध्ययन अथवा लेखन में सतत संलग्नता है।

कर्मठ प्रकृति का मनुष्य परिश्रमी होता है। वह अत्यधिक श्रमशील होता है।

कर्मठता आलस्य, अकर्मण्यता एवं प्रमाद के विपरीत है।

एक कर्मठ मनुष्य सर्वोत्तम फल तथा सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार अर्जित करता है।

कर्मठता आपमें क्षमताओं के अभाव को दूर करेगी, आपकी प्रतिभाओं को और अधिक निखारेगी।

महान् पुरुषों ने प्रखर बुद्धि के बल पर नहीं अपितु अपनी कर्मठता-परिश्रम से महानता प्राप्त की है।

सम्पत्ति एवं समृद्धि परिश्रम तथा मितव्ययिता पर निर्भर है।

परिश्रम से सब कुछ सरल हो जाता है। इसे सदा विजय प्राप्त होती है। एक परिश्रमी मनुष्य कभी भूखा नहीं रहेगा। निर्धनता एवं असफलता से वह अपरिचित होता है।

परिश्रम शरीर को स्वस्थ एवं मजबूत, मन को निर्मल, हृदय को परिपूर्ण और पर्स को भरा हुआ रखता है।

परिश्रमी स्वभाव प्रसन्नता-प्रफुल्लता देता है, बुरी प्रवृत्तियों एवं आदतों का नाश करता है तथा आपकी उपलब्धियों को आनन्ददायक बना देता है।

हम सामान्य बोलचाल की भाषा में कहते हैं- "श्रीमान् ठक्कर एक कर्मठ कार्यकर्ता हैं; श्रीमान् बनर्जी एक कर्मठ साहित्यकार है। "

अँगरेजी भाषा के कवि गोल्डस्मिथ अपनी एक रचना 'द ट्रेवलर' में कहते हैं-

"प्रत्येक हृदय में हो परिश्रमशील भाव
परिश्रम करता सृजन उन्नति के प्रति प्रेम का।"
परिश्रमी बनिए तथा सफलता एवं समृद्धि प्राप्त करिए।

पहल-शक्ति (Initiative)

यह किसी कार्य को प्रारम्भ करने की शक्ति अथवा उपक्रम है। यह प्रारम्भिक कदम होता है। यह प्रथम कार्य का सम्पादन है। यह आरम्भ अथवा शुरुआत है। हम कहते हैं, "रमा ने इस भले कार्य को प्रारम्भ किया।"

पहल-शक्ति नये कार्य अथवा उद्योग को प्रारम्भ करने की अभिवृत्ति है। किसी भी उद्योग में यह प्रथम सक्रिय प्रक्रिया है। यह कार्य का नेतृत्व करने की शक्ति है।

अधिकांश व्यक्तियों में पहल-शक्ति का अभाव होता है क्योंकि वे कायर, संकोची एवं आलसी होते हैं। उनमें कार्य-कौशल, उत्साह, संकल्पशक्ति, सजगता, परिश्श्रमशीलता, अध्यवसायिता तथा साहस नहीं होता है। इसलिए वे जीवन में असफल रहते हैं।

साहसी बनिए। कुशल बनिए। सजग रहिए। अध्यवसायी बनिए। धैर्यशील बनिए। आपमें भी पहल-शक्ति उत्पन्न होगी तथा आप अपने समस्त प्रयासों में सफलता प्राप्त करेंगे।

प्रेरणा (Inspiration)

प्रेरणा एक श्रेष्ठ एवं उन्नयनकारी दिव्य प्रभाव है। यह आध्यात्मिक उपदेशकों तथा लेखकों पर परमात्मा का अलौकिक दिव्य प्रभाव है जिसके माध्यम से उनकी रचनाओं एवं कृतियों को दिव्य सत्ता प्रदान की जाती है।

इस दिव्य प्रेरणा से ही मसीहा, धर्मदूत, सन्त तथा पवित्र लेखक दिव्य सत्यों को अमिश्रित एवं त्रुटिरहित रूप से उद्‌घाटित करने हेतु योग्य बनते हैं।

यह मन को दिये गये सुझावों-संस्कारों के माध्यम से ईश्वरीय इच्छा का मानवीय बुद्धि के साथ सम्पर्क है जिससे उनके दिव्य स्रोत की सत्यता पर कोई सन्देह शेष नहीं रहता है।

समस्त पावन धर्मग्रन्थ भगवद् प्रेरणा से ही हमें प्राप्त हुए हैं।

प्रेरणा अध्यात्मिक शक्ति अथवा परमात्मा द्वारा विचारों अथवा कवित्व का सम्प्रेषण है। प्रेरणा आध्यात्मिक अक्षय निधि है। यह प्रसन्नता, शान्ति एवं शाश्वत आनन्द प्रदान करती है।

एक भगवद्-प्रेरित कृति पापियों, नास्तिकों तथा संशयवादियों में भगवसत्ता के प्रति विश्वास उत्पन्न करती है तथा उन्हें परिवर्तित कर देती है। यह आस्तिकों को सान्त्वना देती है एवं उन्हें उन्नत करती है। यह उन्हें मोक्ष अथवा परमानन्द प्राप्ति हेतु तैयार करती है। यह मोक्षमार्ग हेतु एक सुरक्षित, अचूक एवं विश्वसनीय पथप्रदर्शक है।

ऐसी कृति भव्य, पावन, शक्तिशाली तथा स्पष्ट होती है। यह कृति भगवद वाणी ही है।

न्यायनिष्ठा-सत्यनिष्ठा (Integrity)

न्यायनिष्ठा चरित्र की ईमानदारी अथवा पवित्रता है। यह वास्तविक महानता के और प्रथम कदम है। एक न्यायनिष्ठ व्यक्ति सबके द्वारा आदर-सम्मान प्राप्त करता है। मा उसमें विश्वास रखते हैं।

आत्मत्याग के मूल्य पर न्यायनिष्ठा बनाये रख सकते हैं। इसके विरोधी सम्भावना है, परन्तु इसका परिणाम महान् होता है। समस्त विश्व इसके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करेगा।

न्यायनिष्ठा में सम्पूर्ण नैतिक चरित्र समाहित है परन्तु यह कुछ विशेष प्रसंगों में यदा पारस्परिक लेन-देन, सम्पत्ति एवं शक्ति के हस्तान्तरण आदि में परिलक्षित होती है। न्यायनिष्ठा की नैतिक महिमा विश्व की सर्वाधिक उच्च वस्तु है।

अन्तःप्रज्ञा (Intuition)

अन्तःप्रज्ञा आत्म-साक्षात्कार के माध्यम से आत्मा का मनसातीत अपरोक्ष ज्ञान है। यहाँ तार्किकता का स्थान नहीं है। बुद्धि यहाँ कार्य करना बन्द कर देती है। यहाँ कोई ऐन्द्रिक-संवेदना नहीं है। अन्तःप्रज्ञा सापेक्षिक-जगत् से परे है।

यह एक आन्तरिक आध्यात्मिक अनुभव है जिसे शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। भाषा अपूर्ण है; यह इस परिपूर्ण, अनिर्वचनीय, अलौकिक अनुभव को व्यक्त नहीं कर सकती है। शब्द मात्र परम्परागत होते हैं।

आप भगवद्-साक्षात्कार अथवा आत्म-साक्षात्कार केवल अन्तः प्रज्ञा के माध्यम से ही कर सकते हैं।

अन्तःप्रज्ञा के समक्ष सब कुछ स्पष्ट होता है। समस्त सन्देह पूर्णतया समाप्त हो जाते हैं।

किसी माध्यम से अर्जित परोक्ष ज्ञान की तुलना में अन्तःप्रज्ञा प्रत्यक्ष ज्ञान है। अन्तःप्रज्ञा के माध्यम से साधक बिना किसी तर्क अथवा विश्लेषण के वस्तुओं के सत्य को जानता है।

अन्तःप्रज्ञा अन्तःस्फूर्त ज्ञान है। प्रथमतः अन्तःप्रज्ञा की एक किरण उद्भासित होती है। इसके पश्चात्, मुमुक्षु अपनी आत्मा में संस्थित हो जाता है। ज्ञान-चक्षु द्वारा परम तत्त्व का अपरोक्षानुभव अन्तःप्रज्ञा है। यह इन्द्रियों एवं बुद्धि

द्वारा वस्तु-पदार्थों के ज्ञान के विपरीत है। अन्तःप्रज्ञा तर्कातीत है परन्तु तर्क विरोधी नहीं है। ऐन्द्रिक एवं बौद्धिक शक्ति के बिना आन्तरिक अवबोध द्वारा प्राप्त सत्य अन्तःप्रज्ञा है।

व्यक्त एवं अव्यक्त ब्रह्माण्ड में अन्तर्निहित दिव्य सत्ता की अपरोक्षानुभूति अन्तःप्रज्ञा है।

ऋषि अन्तःप्रज्ञा द्वारा उस मनातीत क्षेत्र तक पहुँचता है जहाँ वह दिव्य सत्ता अथवा परब्रह्म का प्रत्यक्ष अनुभव करता है। यह पराचेतनात्मक अनुभव अत्यन्त स्पष्ट एवं सजीव होता है। ऋषि के लिए यह गहन सत्य होता

है। वह इसमें ही निवास करता है, गति करता है तथा इससे अनुप्राणित होता है। यह अन्तःप्राज्ञिक अनुभव गहन, भव्य एवं दिव्य होता है।

ऋषि-मनीषियों के अनुभव एवं अन्तःप्रज्ञा के बिना मानव-मात्र के लिए भगवद् ज्ञान की प्राप्ति सुलभ नहीं होती।

केवल अन्तःप्रज्ञा के माध्यम से ही परब्रह्म तत्त्व का इसकी परिपूर्णता एवं समग्रता में अनुभव तथा साक्षात्कार किया जा सकता है। ये सीमित इन्द्रियाँ एवं बुद्धि उस सर्वव्यापक सत्ता का बोध नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

मन तथा इन्द्रियों को कार्य करने के लिए देश एवं काल की आवश्यकता है, परन्तु देश, काल एवं कारण से परे उस परम तत्त्व का बोध अन्तःप्रज्ञा द्वारा ही सम्भव है।

बुद्धि केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही देती है तथा यह सैद्धान्तिक ज्ञान आपको परम तत्त्व का परिपूर्ण एवं समग्र अनुभव नहीं दे सकता है; क्योंकि बुद्धि वस्तुओं को विभाजित एवं विखण्डित करती है।

इस भौतिक जगत् की अन्तर्वासी सत्ता शुद्ध चैतन्य है। भारतीय ऋषि-मनीषियों ने इस सत्ता का इसकी परिपूर्ण समग्रता में अन्तः प्राज्ञिक अनुभव प्राप्त किया है तथा मानवता को आत्म ज्ञान रूपी अत्यन्त बहुमूल्य मोती प्रदान किया है।

दयालुता (Kindness)

दयालुता दयाशील होने की अवस्था अथवा गुण है। यह सद्भावना, मानवीयता एवं कोमलता है।

दयालुता ऐसा स्वभाव है जो दूसरों की प्रसन्नता में सहायक सिद्ध हो कर हर्षित होता है। परोपकारिता का कोई भी कार्य जो अन्य व्यक्तियों के कल्याण अथवा प्रसत्रता में वृद्धि करे, दयालुता ही है।

दयालुता भगवद्-अनुग्रह सदृश है।

एक दयालु व्यक्ति दूसरों का भला करने में प्रवण होता है। वह परोपकारी होता है। वह सहानुभूतिपूर्ण, मैत्रीपूर्ण, सहृदय, अच्छे एवं कोमल स्वभाव का होता है।

एक दयालु व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के हृदय जीत लेता है। दयालुता अत्यन्त अल्प मूल्य की अर्थात् सर्वाधिक सस्ती वस्तु है। इसके प्रयोग में अधिक कष्ट तथा त्याग की आवश्यकता नहीं होती है। मुस्कराइए, सेवा करिए, प्रसन्नता का संचार करिए। दयापूर्ण एवं मधुर शब्द बोलिए। एक दुःखी व्यक्ति को प्रसन्न करिए।

दयापूर्ण शब्द श्रोता को सान्त्वना एवं शान्ति प्रदान करते हैं।

दया वह सुनहरी कड़ी है जिसके द्वारा व्यक्ति एक दूसरे से बँधते हैं।

सभी दयाशील व्यक्तियों के लिए स्वर्गद्वार खुला है।

एक दयालु व्यक्ति वास्तव में एक विशाल साम्राज्य का अधिपति होता है। वह वस्तुतः सम्राटों का सम्राट् है।

एक दयापूर्ण दृष्टि, शब्द तथा कार्य एवं एक मैत्रीपूर्ण मुस्कान के लिए आपको कुछ व्यय नहीं करना पड़ता है, परन्तु ये अन्यों के जीवन में प्रसन्नता का संचार करते हैं जो धन द्वारा नहीं खरीदी जा सकती है। ये सब अमूल्य हैं।

दयापूर्ण विचार रखने वाला सदैव शान्त एवं प्रसन्न रहता है। दयापूर्ण विचार आपके शरीर एवं मन में प्राण-ऊर्जा की वृद्धि करते हैं।

वर्तमान में दयापूर्ण कार्य करिए। इन्हें टालिए नहीं।

दयालुता एक शामक औषधि है। यह पीड़ा को शान्त करती है।

दयालुता की भाषा को मूक-बधिर भी सुन एवं समझ सकते हैं।

जिस प्रकार जल की छोटी-छोटी बूँदों से एक विशाल सागर बनता है, उसी प्रकार दयालुतापूर्ण छोटे-छोटे कार्यों से सद्भावना का सागर बनता है।

'अनेक प्रकार की दयालुता' का अर्थ अत्यधिक दयालुता नहीं है, अपितु अनेक अवसरों पर अनेक रूपों में प्रदर्शित दयालुता है।

दयालुता शाश्वत आनन्द के साम्राज्य में प्रवेश करने का पारपत्र (Passport) है। दयालुता का विकास करिए। सबके प्रति दयालु बनिए। आप शीघ्र ही भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे।

प्रेम (Love)

प्रेम दिव्य स्वभाव का सारभूत तत्त्व है जो समस्त प्रकार की अच्छाइयों से परिपूर्ण है। प्रेम वह सुनहरा बन्धन है जो हृदय को हृदय से, मन को मन से तथा आत्मा को आत्मा से बाँधता है। प्रेम मानवता का सर्वोच्च सौन्दर्य है।

यह आत्मा का पवित्रतम अधिकार है। प्रेम शाश्वत आनन्द अथवा मोक्ष के द्वार को खोलने की विशेष चाबी है।

प्रेम विश्व की सर्वश्रेष्ठ वस्तु है। यह भग्न हृदयों को जोड़ता है।

प्रेम जीवन रूपी सुन्दर पुष्प की मधु है। जीवन का महान् सुख प्रेम है। प्रेम आपके हृदय की प्राण-वायु है।

प्रेम वस्तुतः धरा पर स्वर्ग है। यह समस्त प्रकार के भयों का निराकरण कर देता है।

यह विश्व प्रेम से ही सृजित हुआ है, प्रेम में ही अस्तित्ववान है तथा अन्ततः प्रेम में ही लीन हो जाता है।

प्रेम प्रेरित, प्रबोधित एवं निर्देशित करता है। प्रेम, प्रेम को प्रेरित करता है।

प्रेम कभी प्रश्न नहीं करता है, विपुलता से देता ही रहता है। यह अपमान अथवा दुर्व्यवहार से प्रभावित नहीं होता है। यह नेत्रों से नहीं, अपितु हृदय से देखता है। यह एक सूक्ष्मदर्शी यन्त्र के माध्यम से देखता है।

प्रेम महान् त्याग करता है। यह दूसरों की सहायता, सेवा करने तथा उन्हें प्रसन्न करने हेतु सदैव उत्सुक होता है। प्रेम क्षमा करता है।

प्रेम जीवन का रक्षक-उद्धारकर्ता है। प्रेम दिव्य अमृत है। यह अमरत्व, परम शान्ति तथा शाश्वत आनन्द प्रदान करता है।

भगवान् प्रेम के मूर्तिमान विग्रह को भी प्रेम का मूर्तिमन्ती रवारिक भगवद साक्षात्कार करना चाहते हैं, तो आपको भी प्रेम का मूर्तिमन्त स्वरूप करते होगा।

निःस्वार्थ एवं शुद्ध प्रेम में ही महानता निहित है। शुद्ध प्रेम में स्वार्थ का लेश मात्र भी स्थान नहीं होता है।

एक माता का प्रेम कभी समाप्त नहीं होता है। यह कभी परिवर्तित नहीं होता है और न ही कभी श्रान्त होता है। माता का प्रेम शाश्वत होता है। प्रेम कुछ प्राप्त करना नहीं अपितु देना है। प्रेम अच्छाई, शान्ति एवं पवित्र जीवन है।

शुद्ध प्रेम आनन्द है। शुद्ध प्रेम मधुर है। शुद्ध प्रेम स्वार्थपूर्ण आसक्ति से रहित होता है। शुद्ध प्रेम अमर, दिव्य तत्त्व है। शुद्ध प्रेम दिव्य अभिशिखा है, जो सदैव दीप्तिमन्त रहती है। यह कभी बुझती नहीं।

दूसरों की प्रसन्नता में ही अपनी प्रसन्नता मानना तथा दूसरों के कल्याण हेतु कह उठाने हेतु तत्पर रहना ही शुद्ध प्रेम का सार है।

शुद्ध प्रेम मनुष्य के चरित्र को उन्नत एवं सुदृढ़ बनाता है, जीवन के प्रत्येक कार्य को एक उच्च एवं पवित्र उद्देश्य प्रदान करता है तथा मनुष्य को शक्तिशाली, महान् एवं साहसी बनाता है।

सच्चा, पवित्र अथवा दिव्य प्रेम शाश्वत, अपरिवर्तनीय तथा अनन्त होता है। यह अपने जीवन की अपेक्षा अन्य व्यक्तियों के जीवन में तथा उनके कल्याण में निःस्वार्थ रुचि रखता है।

शारीरिक प्रेम पशुता है। यह काम-वासना का ही उच्च एवं परिष्कृत स्वरूप है। यह स्थूल तथा ऐन्द्रिक है।

भगवान् से प्रीति ही प्रेम अथवा भक्ति है। यह शुद्ध प्रेम है। यह प्रेम के लिए प्रेम है।

अपनी स्वार्थसिद्धि हेतु किसी से प्रेम करना स्वार्थपूर्ण प्रेम है। यह आपको बन्धन में डालता है।

नारायण भाव से समस्त प्राणियों को प्रेम करना पवित्र प्रेम है। यह दिव्य प्रेम है। यह मोक्ष की ओर ले जाता है।

शुद्ध प्रेम उद्धार करता है, हृदय को पवित्र बनाता है तथा आपको दिव्यता में रूपान्तरित करता है।

पति अपनी पत्नी से पत्नी के लिए प्रेम नहीं करता है अपितु स्वयं के लिए करता है। वह स्वार्थी होता है। वह पत्नी से इन्द्रिय सुख की आशा करता है। यदि कुष्ठ-रोग अथवा चेचक-रोग से पत्नी का सौन्दर्य नष्ट हो जाये, तो पति का उसके लिए प्रेम समाप्त हो जाता है।

समस्त प्रकार के प्रेम भगवद्-प्रेम की प्राप्ति के सोपान ही हैं।

जप, प्रार्थना, कीर्तन, श्रद्धा, भक्ति, सन्तों की सेवा, मानवता एवं समस्त प्राणियों की सेवा, ध्यान तथा सत्संग के माध्यम से अपने हृदय के उद्यान में धीरे-धीरे शुद्ध प्रेम का विकास करिए।

सबसे प्रेम करिए। सबको हृदय से लगाइए। अपने हार्दिक प्रेम में सबको समाहित कीजिए। वैश्विक प्रेम अथवा असीम प्रेम का विकास करिए।

अपने पड़ोसी को अपने समान प्रेम करिए। भगवान् को अपने सम्पूर्ण हृदय, मन एवं आत्मा से प्रेम करिए।

घृणा का नाश घृणा से नहीं अपितु प्रेम से होता है। घृणा के बदले प्रेम दीजिए। अपने शत्रुओं तथा अपने से निम्न व्यक्तियों से प्रेम करिए। सभी पशुओं से प्रेम

अपने गुरु से प्रेम करिए। सभी सन्त-महापुरुषों से प्रेम करिए।

करिए।

थोड़ा प्रेम करिए परन्तु यह स्थायी हो। प्रेम स्थायी प्रकृति का होना चाहिए।

प्रेमपूर्वक बोलिए। प्रेमपूर्वक कार्य करिए। प्रेमपूर्वक सेवा करिए। आप शीघ्र ही भगवद्-साम्राज्य अथवा परम शान्ति के साम्राज्य में प्रवेश करेंगे।

विनाशशील भौतिक वस्तुओं से प्रेम नहीं करिए। यदि आप उनसे प्रेम करेंगे तो आप दुःख एवं विनाश ही प्राप्त करेंगे।

भगवान् से प्रेम करिए। स्वयं के अमर आत्मा से प्रेम करिए। आप सदैव आनन्दित रहेंगे। आप अमर हो जायेंगे।

प्रेम के भाव से परिपूरित हो कर खाइए, पीजिए, चलिए, स्नान करिए, बात करिए, सोइए, लिखिए, विचार करिए और सेवा करिए। प्रेम के साकार विग्रह बन जाइए।

वैश्विक प्रेम (Universal Love)

इस विश्व में एकमात्र सार वस्तु प्रेम है। यह शाश्वत, अनन्त एवं अक्षुण्ण है। शारीरिक स्तर का प्रेम मोह अथवा वासना है। वैश्विक प्रेम ही दिव्य प्रेम है।

प्रेम तथा वैश्विक प्रेम समानार्थी शब्द हैं। ईश्वर प्रेम हैं। प्रेम ईश्वर है । स्वार्थपरायणता, लोभ, अहंकार, अभियान तथा घृणा हृदय को संकुचित करते हैं तथा वैश्विक प्रेम के विकास में बाधक होते हैं।

निःस्वार्थ सेवा, महात्माओं के साथ सत्संग, प्रार्थना एवं गुरुमन्त्र के जप द्वारा धीरे-धीरे वैश्विक प्रेम का विकास करिए। जब प्रारम्भ में स्वार्थ के कारण हृदय संकुचित धीरे-धीरे तो व्यक्ति केवल अपनी पत्नी, सन्तान, कुछ मित्रों एवं सम्बन्धियों से ही प्रेम करता है। हृदय थोड़ा विकसित होने पर वह अपने जिले के और बाद में अपने राज्य के व्यक्तियों से प्रेम करने लगता है। धीरे-धीरे उसके हृदय में अपने देश के सभी व्यक्तियों के प्रति प्रेम विकसित होता है। अन्ततः वह विभिन्न देशों के व्यक्तियों से अर्थात् सभी व्यक्तियों से प्रेम करने लगता है। वह वैश्विक प्रेम का विकास करता है। अब समस्त भेदों का खण्डन हो चुका है। उसका हृदय अनन्त विस्तार पाता है। वैश्विक प्रेम के विषय में बात करना अत्यन्त सरल है, परन्तु व्यावहारिक जीवन में इसका अभ्यास अत्यन्त कठिन है। सभी प्रकार की तुच्छ क्षुद्र बातें बाधा उत्पन्न करने लगती हैं। भूतकाल में अनुचित रूप से जीवन जीने के कारण आपने जो अनुचित संस्कार उत्पन्न किये हैं, वे पुराने संस्कार ही बाधा स्वरूप खड़े होते हैं। लौह-संकल्प, दृढ़ इच्छा शक्ति, धैर्य, अध्यवसाय तथा उचित विचारों द्वारा आप सरलता से इन बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप सच्चे एवं गम्भीर हैं, तो आपको भगवद्-अनुग्रह प्राप्त होगा।

वैश्विक प्रेम की परिसमाप्ति 'अद्वैतिक एकत्व' अथवा ऋषि-मुनियों द्वारा प्राप्त 'औपनिषदिक चेतना' में होती है। शुद्ध प्रेम महान् समतावादी है। यह समानता तथा समत्व लाता है। हाफिज, कबीर, मीरा, गौरांग, तुकाराम तथा रामदास ने इस वैश्विक प्रेम का आस्वादन किया है। जो अन्य व्यक्ति उपलब्ध कर सकते हैं, उसे आप भी प्राप्त कर सकते हैं।

अनुभव करिए कि समस्त विश्व आपका शरीर है, अथवा आपका अपना घर है। मानव को मानव से पृथक् करने वाले समस्त भेदों को नष्ट करिए। अन्यों से श्रेष्ठता का विचार अज्ञान अथवा भ्रम है। विश्व-प्रेम का विकास करिए। सबसे एकत्व अनुभव करिए। पृथकता मृत्यु है। एकत्व शाश्वत जीवन है। समस्त विश्व 'वृन्दावन' है। अनुभव करिए कि यह शरीर भगवान् का चलता-फिरता मन्दिर है। आप जहाँ भी हों-घर, ऑफिस, रेलवे स्टेशन अथवा बाजार में हों, यही अनुभव करिए कि आप मन्दिर में हैं। प्रत्येक कार्य को भगवद्-चरणों में समर्पित करिए। प्रत्येक कार्य के फल को ईश्वरार्पण करके उसे 'योग' में रूपान्तरित कर दीजिए। यदि आप वेदान्त-मार्ग के साधक हैं, तो अकर्ता, साक्षी भाव रखिए। यदि आप भक्ति मार्ग के साधक हैं तो निमित्त भाव रखिए। अनुभव करिए कि समस्त प्राणी भगवान् के ही रूप हैं। ईशावास्यमिदं सर्वम् - यह विश्व ईश्वर तत्त्व से परिव्याप्त है। अनुभव करिए कि भगवद्-शक्ति ही सभी हाथों के माध्यम से कार्य कर रही है, सभी नेत्रों से देख रही है तथा सभी कानों से सुन रही है। आप

पूर्णतया परिवर्तित हो जायेंगे। आप परम शान्ति एवं आनन्द का अनुभव करेंगे। भगवान् श्री हरि आप सबको अपने हृदय से लगाकर मधुर-प्रेम-जल से स्नात करें। आप सबका हृदय वैश्विक प्रेम से परिपूरित हो।

वैश्विक प्रेम अहिंसा के रूप में (Cosmic Love as Ahimsa)

वैश्विक प्रेम के विषय में बहुत कुछ लिखा एवं कहा जा चुका है। निःस्वार्थता एवं वैश्विक प्रेम का विकास करने की प्रेरणा देना सभी धार्मिक उपदेशों का अंग बन चुका है। ऐसा ही होना चाहिए क्योंकि निःस्वार्थता एवं वैश्विक प्रेम आध्यात्मिक जीवन के प्रारम्भिक घटक हैं। ये दिव्य जीवन की नींव हैं तथा इनका प्रभाव भवन की

मुख्य संरचना पर पड़ता है। यह कहना सत्य ही होगा कि ये दो सद्गुण आध्यात्मिक जीवन की अत्यावश्यक शर्तें, अनुशासन, आध्यात्मिक प्रगति की कसौटी होने के साथ-साथ परम उपलब्धि भी हैं। निःस्वार्थता एवं वैश्विक प्रेम साधना है, तथा ये साध्य एवं सिद्धि भी हैं। ये साधक के लिए पथप्रदर्शक 'प्रकाश' हैं तथा सिद्ध की 'दिव्य आभा' हैं। एक साधक एवं सिद्ध दोनों में ये सद्गुण अनुपस्थित नहीं रह सकते हैं। निःस्वार्थता एवं वैश्विक प्रेम अथवा हम ऐसा भी कह सकते हैं कि निःस्वार्थता अथवा वैश्विक प्रेम; क्योंकि गहन परीक्षण से यही सिद्ध होगा कि ये दोनों वास्तव में एक ही हैं। अतः इनके उचित अर्थ का बोध अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। जो व्यक्ति वास्तव में स्वार्थरहित है, जिसने स्वप्रेम का त्याग कर दिया है, वह स्वयं को वैश्विक प्रेम से पूर्ण पाता है। इसी प्रकार जिसके हृदय में वैश्विक प्रेम का दुर्लभतम पुष्प विकसित हुआ है, वह स्वयं के विषय में सोचता ही नहीं है, स्वप्रेम तो दूर की बात है; वह पूर्णतया निःस्वार्थी होता है।

साधना के रूप में वैश्विक प्रेम राग एवं द्वेष के बीच स्वर्णिम मध्यम मार्ग है। एक साधक के लिए यह स्मरण रखना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि वैश्विक प्रेम किसी एक वस्तु अथवा व्यक्ति के प्रति प्रेम से सर्वथा विपरीत है। एक के प्रति प्रेम मोह एवं राग कहलाता है। यह संसार के बन्धन का मूल है। इसके विपरीत, वैश्विक प्रेम मुक्त करता है, इसे राग से भिन्न समझना चाहिए। इसीलिए शास्त्र एवं सन्त साधक को तीव्र वैराग्य विकसित करने का परामर्श देते हैं।

पुनश्च, वैराग्य एक सीमा तक अच्छा है, परन्तु इसे साधक को स्व-पृथकत्व (Self-exclusiveness) की ओर नहीं ले जाना चाहिए; क्योंकि यह स्वार्थ का ही सूक्ष्म रूप है। यहाँ भी सावधानी की आवश्यकता है। एक साधक जो उत्साहपूर्वक वैराग्य विकसित कर रहा है, वह संसार से पूर्णतया विमुख हो सकता है, अन्य व्यक्तियों के संग तथा सुख-सुविधाओं का पूर्ण त्याग कर सकता है परन्तु वह अत्यन्त स्वार्थी बन सकता है। वह सब समय अपने विषय में, अपनी साधना तथा वैराग्य के विषय में ही सोचता रहेगा। जो भी व्यक्ति एवं वस्तु उसके विचारों, व्यवहार, आचरण एवं साधना के अनुरूप नहीं होगा, उन्हें वह अपना शत्रु अथवा विरोधी समझेगा। वैराग्य तिरस्कारपूर्ण द्वेष नहीं यह राग एवं आसक्ति का अभाव है। तिरस्कारपूर्ण द्वेष तो सूक्ष्म घृणा अथवा सूक्ष्म हिंसा है।

वैराग्य अहिंसा का सहज परिणाम होना चाहिए। 'आत्मा' से प्रेम के अतिरिक अन्य सबसे प्रेम का त्याग करना चाहिए। अपनी क्षुद्र मैं, देह, तथा अपने सिद्धान्तों एवं विचारधाराओं के प्रति प्रेम का त्याग करना चाहिए क्योंकि जो इन तुच्छ वस्तुओं, मिथ्या तथ्यों एवं सांसारिक पदार्थों को महत्त्व देता है, वह राग-द्वेष के बन्धन में फँस जाता है। उदाहरणतः एक व्यक्ति को अपने परिवार, सम्पत्ति, यहाँ तक कि अपने शरीर के प्रति कोई आसक्ति नहीं होगी, परन्तु अपनी किसी प्रिय विचारधारा के प्रति वह आसक्त हो सकता है। बाह्यतः ऐसा प्रतीत होगा कि उसमें महान् वैराग्य है, वह पूर्णतः निःस्वार्थी है। सूक्ष्म विश्लेषण से आप यह जानेंगे कि ऐसा नहीं है। किसी एक विचारधारा को अत्यधिक महत्ता देना किसी अन्य विपरीत विचारधारा से सूक्ष्म रूप में द्वेष रखना है। यद्यपि व्यक्ति इस सूक्ष्म द्वेष को अन्य विचारधारा के व्यक्तियों के साथ शत्रुता में परिवर्तित नहीं करेगा परन्तु उसके मन में यह द्वेष बना रहेगा। एक विचारधारा के प्रति आसक्ति है, अतः यहाँ वैराग्य नहीं है। स्वयं की किसी वस्तु को अर्थात् विचारधारा को इतना महत्त्व दिया जा रहा है, भले ही यह सूक्ष्म रूप में हो; अतः यहाँ निःस्वार्थता भी नहीं है। इसी कसौटी से देखा जाये, तो यहाँ वैश्विक प्रेम भी नहीं है।

अब हमें उसे खोजना है जो 'आसक्ति' भी न हो और न ही 'स्व-पृथकत्व' हो। निश्चयमेव यह वैश्विक प्रेम ही है जिसमें सूक्ष्मतम हिंसा का भी अभाव है। **'अनिर्वचनीयम् प्रेमस्वरूपम्** - वैश्विक प्रेम का वर्णन अथवा व्याख्या करना असम्भव है। इसीलिए महर्षि पतञ्जलि साधकों को अहिंसा में प्रतिष्ठित होने के लिए निर्देश देते हैं। उनकी विद्वत्ता को देखिए कि उन्होंने प्रेम को एक नकारात्मक नाम 'अहिंसा' से अभिहित किया। बुरे विचार मत रखिए, बुरे शब्द मत बोलिए, किसी को हानि मत पहुँचाइए। एक साधक सावधानी एवं बुद्धिमत्तापूर्वक सब प्रकार की विकृतियों को दूर करता है। इस प्रकार जब साधक अहिंसा में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसके हृदय में आत्म-ज्ञान का

प्रकाश प्रकट होता है। वह यह अनुभव कर लेता है कि उसका अन्तरात्मा समस्त प्राणियों का भी अन्तरात्मा है। उसका यह ज्ञान वैश्विक प्रेम के रूप में पूर्णतया अभिव्यक्त होता है।

जिसके हृदय में वैश्विक प्रेम है, ऐसा सन्त समाज से दूर नहीं जाता है; वह किसी से घृणा नहीं करता है। वह सबसे प्रेम करता है। दयापूर्ण अनुग्रह के कारण नहीं अपितु अपने स्वाभाविक आचरण के रूप में वह सबसे प्रेम करता है। वह स्वार्थी नहीं होता है, वह किसी व्यक्ति-वस्तु से घृणा नहीं करता है, उसके हृदय में लेशमात्र भी घृणा अथवा दुर्भावना नहीं होती है। वह समस्त प्राणियों में व्याप्त 'आत्मा' से प्रेम करता है। यह आत्मा सर्वव्यापक है, अतः वह किसी व्यक्ति-वस्तु के प्रति आसक्त नहीं होता है। वह सबके साथ तादात्म्य अनुभव करता है क्योंकि वह आत्म-प्रशंसा के भाव से मुक्त होता है। जीवित प्राणियों में श्वास-प्रश्वास की क्रिया की भाँति उसके द्वारा निःस्वार्थ सेवा सहज ही सम्पन्न होती है। अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में वह जिनके भी सम्पर्क में आता है, उन्हें स्वयं की आत्मा का रूप मान कर उनकी आराधना करता है। वह उनके हित की आकांक्षा करता है। वह सद्भावना से परिपूर्ण होता है, क्योंकि उसने दुर्भावना को अपने हृदय से निकाल दिया है। अहिंसा के अभ्यास ने उसे स्वार्थ का निर्मूलन करने में सक्षम बनाया है। एक स्वार्थी व्यक्ति कभी वास्तव में अहिंसा का अभ्यास नहीं कर सकता है। स्वयं के प्रति प्रेम का अभिप्राय सदैव किसी अन्य के प्रति 'अ-प्रेम' (No-love) होता है; स्वयं के लिए कुछ प्राप्त करने की उत्कण्ठा का अर्थ अन्य किसी को उससे वंचित करना ही होगा। इसके विपरीत, अहिंसा अथवा वैश्विक प्रेम में प्रतिष्ठित सन्त दूसरे के सुख में उतना ही आनन्दित होगा जितना कि वह स्वयं के सुख में होता है। जब वह किसी को कष्ट से पीड़ित देखता है, तुरन्त उसकी सहायता के लिए दौड़ता है। वह इसलिए नहीं दौड़ता है क्योंकि वह उस व्यक्ति विशेष से प्रेम करता है, अपितु इसलिए सहायतार्थ जाता है कि क्योंकि उसने यह अनुभव कर लिया है कि उसका ही आत्मा दूसरे व्यक्ति में भी व्याप्त है। उसके हृदय की सद्भावना तथा वैश्विक प्रेम सहज ही पीड़ित व्यक्ति के प्रति प्रवाहित होते हैं तथा उसके कष्ट निवारण का प्रयास करते हैं। वह सहज भाव से अपनी सेवा अर्पित करता है। 'सेवा के लिए सेवा', 'प्रेम के लिए प्रेम' इन शब्दों का अर्थ आप वैश्विक प्रेम से परिपूर्ण हृदय वाले सन्त के व्यवहार को देख कर ही समझ सकते हैं। यह ऐसा प्रेम है जो प्रेम के प्रतिदान की अपेक्षा नहीं करता है। यह ऐसी सेवा है जो प्रशंसा अथवा पुरस्कार की अपेक्षा नहीं करती है। इस प्रेम में, इस सेवा में विश्वप्रेमी सन्त किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करता है। उसके लिए सब समान हैं, अन्यथा यह वैश्विक प्रेम, अहिंसा तथा निःस्वार्थता नहीं होगी। वह सदैव शान्त-प्रशान्त रहता है क्योंकि वैश्विक प्रेम ने स्वार्थ वासना, क्रोध एवं लोभ की अग्नि को शमित कर दिया है जो एक साधारण मनुष्य की शान्ति को प्रायः भंग करते हैं। वह सदैव आनन्दित रहता है क्योंकि उसकी कोई इच्छा नहीं है, तथा वैश्विक प्रेम भी उसे सबके सुख में सुखी बनाता है। वह आत्मा के अमाला, आत्मा के अविनाशी होने की जाग्रति के साथ जीवन व्यतीत करता है।

विश्वप्रेमी सन्त की जय हो, जय हो। वैश्विक प्रेम सभी के हृदय में निवास करे।

महामनस्कता (Magnanimity)

महामनस्कता आत्मा की महानता है। यह मन का उन्नयन है। यह मन का वह गुण है जो व्यक्ति को तुच्छ अथवा अनुचित बातों से ऊपर उठाता है। यह उदारता है। यह सज्जनता है।

महामनस्कता भाव अथवा व्यवहार में दूसरों के प्रति उदारता है। यह ईर्ष्या, कायरता तथा प्रतिशोधपूर्ण अथवा स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से ऊपर उठना है। यह चरित्र अथवा कर्म की उच्चता है। यह विशालहृदयता है।

महामनस्कता आत्मा की ऐसी गरिमा अथवा उन्नयन है जिससे सम्पन्न व्यक्ति कष्टों एवं कठिनाइयों का शान्ति तथा दृढ़तापूर्वक सामना करता है, प्रतिशोध की भावना का त्याग करता है, परोपकारिता के कार्यों में हर्षित

होता है, अन्याय एवं निम्न प्रकृति से घृणा करता है तथा अच्छे एवं उपयोगी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अपनी सुख-सुविधा एवं सुरक्षा का त्याग करता है।

महामनस्क व्यक्ति की भावनाएँ उच्च होती हैं। वह साहसी तथा निःस्वार्थी होता है। वह प्रलोभनों, निम्न प्रवृत्तियों, लौकिक वैभव-सम्पदा की भर्त्सना करता है।

समस्त सद्‌गुणों में महामनस्कता दुर्लभतम है।

हृदय से बलवान्, मन से बलवान् अर्थात् महामनस्क होना वास्तव में महान् होना है।

उदारता, उच्चाशयता, शूरवीरता, विशालहृदयता एवं सज्जनता महामनस्कता के समानार्थी शब्द हैं।

पौरुष (Manliness)

पौरुष वीरता है।

पौरुष मात्र साहस नहीं है। यह आत्मा का वह गुण है जो मानव जीवन की सभी परिस्थितियों को निर्भयतापूर्वक स्वीकार करता है तथा उनसे निराश अथवा श्रान्त नहीं होने को अपने सम्मान का विषय बनाता है।

गरिमा पौरुष है। सज्जनता पौरुष है।

पौरुष बचकानेपन, स्त्रैण आचरण एवं स्वभाव से मुक्त होता है।

एक पौरुषसम्पन्न व्यक्ति वास्तविक पुरुष की विशेषताओं यथा वीरता, दृढ़ता आदि से सम्पन्न होता है।

एक पुरुषोचित चरित्र के प्रत्येक गुण का प्रारम्भ समस्त स्त्री जाति के प्रति सत्य, शालीनता, दया तथा सम्मानपूर्ण आचरण से होता है।

पौरुष से अभिप्राय पुरुषोचित समस्त गुणों एवं विशेषताओं से है।

हम पुरुषोचित निर्णय, पुरुषोचित दृढ़ता, पुरुषोचित वीरता, पुरुषोचित गरिमापूर्ण आचरण, पुरुषोचित भद्रता एवं निर्भीकता शब्दों का प्रयोग करते हैं।

सभ्याचार (Manners)

सभ्याचार अच्छा व्यवहार अथवा सम्मानजनक आचरण है। यह सच्चरित्र है। यह कुलीनता है।

सभ्याचार एक व्यक्ति विशेष का आचरण है। यह व्यक्तिगत व्यवहार है। यह विनम्र, सभ्य एवं कुलीन व्यवहार है।

एक सुसभ्य व्यक्ति अभद्रता से मुक्त होता है। वह सुशील होता है। वह शिष्ट, संस्कारी एवं विनम्र होता है।

सभ्याचार में अच्छा व्यवहार समाहित है। इसमें शिष्टता एवं दया समाहित है। यह अन्य व्यक्तियों को सहज बनाने की कला है। यह जीवन को सौन्दर्य प्रदान करता है।

सभ्याचार अत्यधिक विवेक, सुशील स्वभाव एवं दूसरों के लिए आत्मत्याग का परिणाम है।

एक सुसभ्य व्यक्ति सदैव मिलनसार एवं विनयशील होता है।

सुयश प्राप्ति तथा मित्रता अर्जित करने का सर्वश्रेष्ठ साधन सभ्याचार है।

एक सुसभ्य व्यक्ति शान्तिपूर्वक भोजन करता है, शान्तिपूर्वक चलता है, शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करता है तथा यहाँ तक कि शान्तिपूर्वक अपना धन भी खोता है।

सभ्याचार विधि-नियमों से दृढ़तर होता है।

सभ्य आचरण जीवन पथ को सुगम बनाता है। यह अपने से वरिष्ठ को प्रिय, समान को अनुकूल तथा कनिष्ठ को स्वीकरणीय बनाता है। सब प्रकार के भेदभाव को समाप्त कर वार्तालाप को मधुर बनाता है। सभ्याचार पारस्परिक सद्भावना को जन्म देता है, उत्तेजित को शान्त करता है, भीरू को उत्साहित करता है तथा हिंसक को दयापूर्ण बनाता है ।

सभ्याचार गौण नैतिक नियम है। यह सद्‌गुणों की छाया है। यह सम्मान प्राप्ति का पारपत्र (Passport) है। यह सद्विवेक एवं सद्भावना का पुष्पित रूप है।

गर्व, अहंकार, अधीरता, दुष्ट-प्रकृति एवं विवेक का अभाव असभ्य आचरण के कारण हैं।

सभ्याचार नैतिक नियमों का भाग है। यह दुर्लभ उपहार है। यह सरलता एवं शीघ्रतापूर्वक नैतिक आचरण के रूप में परिपक्व होता है।

अपने विषय में शान्त रहिए, अधिक न कहिए।

विनयशीलता (Meekness)

यह विनयी एवं सौम्य होने की अवस्था अथवा गुण है। यह आज्ञाकारिता है। यह विनम्रता है। यह स्वभाव की मृदुलता है। यह ईश्वरीय इच्छा के प्रति समर्पण है। यह वह छोटी सी मधुर जड़ है जिससे समस्त दिव्य गुण उत्पन्न होते हैं। विनयशील व्यक्ति धन्य हैं, क्योंकि वे शीघ्र शाश्वत शान्ति प्राप्त करेंगे।

विनयशीलता सद्भावना से पूर्ण होती है। यह प्रतिशोध, क्षुब्धता एवं अतिसंवेदनशीलता का बहिष्कार करती है।

एक विनयी व्यक्ति दूसरों के क्रोध को धैर्यतापूर्वक सहन करता है। विनयशीलता सर्वश्रेष्ठ आत्म-त्याग है। यह स्वप्रेम तथा अभिमान का त्याग है।

विनयशीलता समस्त सद्‌गुणों की सुदृढ़ नींव है।

यह वास्तविक धर्म का सारतत्त्व है। यह एक सन्त का मौलिक गुण है। यह दुर्बल तथा कायर होना नहीं है। यह एक शक्ति है। विनयशीलता सज्जनता है। यह सदैव शालीन रहना है। शालीनता के तने पर विनयशीलता का पुष्प खिलता है।

भगवान् विनयी व्यक्तियों के हृदय में वास करने से आनन्दित होते हैं।

धर्म का प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय तत्त्व विनयशीलता ही है। यह आध्यात्मिक महिमा की प्राप्ति का द्वार है। यह मनुष्य को दिव्य बनाती है।

विनयशीलता समस्त सद्‌गुणों का मूल, उनकी जननी तथा परिपालिका है।

विनयशीलता भगवान् की ओर ले जाने वाला पथ है।

विनयशीलता, शिष्टता, परोपकारिता, विनम्रता एवं सौम्यता एक ही प्रकार के गुण हैं।

एक सन्त अथवा महान् पुरुष की प्रथम कसौटी विनयशीलता है।

विनयशीलता दिव्य प्रकाश को प्रकट करती है। भगवान् विनयशील व्यक्ति के साथ रहते हैं। वे उसके समक्ष स्वयं को प्रकट करते हैं।

करुणा (Mercy)

करुणासागर नारायण।
करुणासिन्धु सदाशिव।

भगवान् करुणा के सागर हैं। वे सर्वकरुणामय हैं। यदि आप उनसे मिलना चाहते हैं, उनके साथ एक होना चाहते हैं, उनमें ही वास करना चाहते हैं तो आपको भी करुणा का मूर्तिमन्त स्वरूप बनना होगा।

करुणा एक सन्त का मौलिक गुण है। यदि आप उनमें करुणा नहीं पाते हैं, तो उन्हें सन्त नहीं मानिए। करुणा क्रूरता, अत्याचार, कठोरता, अशिष्टता एवं उग्रता की शत्रु है। यह कोमलता, मधुरता एवं सौम्यता की मित्र है।

करुणा सद्‌गुणों के तारावृन्द में चन्द्रमा की भाँति है।

करुणा महान् शक्ति एवं बल है। यह शक्तिप्रदात्री है।

करुणा मुक्ति, अमरत्व एवं शाश्वत आनन्द का द्वार खोलती है। यह संकीर्ष हृदय को आकाश के समान विशाल बनाती है। यह परम शान्ति के साम्राज्य की ओर उड़ान हेतु पंख प्रदान करती है।

करुणा आपको दिव्यत्व प्रदान करती है। यह समस्त शक्तिवान् वस्तुओं में सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न है।

मधुर करुणा अमृत है। यह सज्जनता का लक्षण है। यह कृपा एवं प्रेम की दिव्य वर्षा है। यह एक चुम्बक है।

करुणा भगवान् की सर्वश्रेष्ठ विशेषता है। यह पाप से कठोर हुए हृदय को कोमल एवं पवित्र बनाती है।

करुणा न्याय से अधिक दीप्तिमन्त है। यह मन की शान्ति प्रदान करती है। इसलिए करुणाशील बनिए।

करुणा अपने अधीन अपराधी की रक्षा हेतु प्रदर्शित कोमलता एवं सहिष्णुता है। यह क्षमाशीलता है।

करुणा दया अथवा परोपकारिता है। करुणा उच्च कोटि की भलाई है। यह दूसरों की पीड़ा को समझ कर सदैव उनकी सहायता को तत्पर रहना है।

एक करुणावान् व्यक्ति का हृदय नवनीत से भी अधिक कोमल होता है। नवनीत अग्नि के समीप होने पर पिघलता है अर्थात् अपने कष्ट से दुःखी होता है; परन्तु एक करुणावान् व्यक्ति का हृदय दूरस्थ व्यक्तियों के कष्ट देख कर द्रवित हो जाता है।

हृदय की कोमलता, सद्भावना, सहानुभूति, दया, स्नेह, सौहार्द, उदारता, दानशीलता, निःस्वार्थता एवं त्याग से करुणा का निर्माण होता है। ये करुणा के घटक हैं।

करुणा, दया, सहानुभूति एवं तरस समान प्रकृति के गुण हैं। करुणा इनमें सर्वश्रेष्ठ है। यह दिव्य है। इसमें न केवल दया, अपितु क्षमाशीलता, प्रेम एवं सेवा भी समाहित हैं। स्वयं का बुरा करने वाले व्यक्ति से भी करुणाशील मनुष्य प्रेम करता है तथा उसकी सेवा करता है।

दया का स्थान दूसरा है। यह अन्य के दुःख से दुःखी होना है। दया में तरस के भाव की कोमलता, सहानुभूति के भाव की गरिमा तथा करुणा के भाव की सहायता प्रदान करने की तत्परता विद्यमान है, परन्तु यह केवल दुर्भाग्यशाली तथा दुःखी व्यक्तियों के प्रति ही प्रयुक्त होती है। करुणा में उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त क्षमाशीलता, सहनशीलता, सहिष्णुता एवं वैश्विक प्रेम की भावना भी समाहित है।

सहानुभूति एवं तरस खाना अन्य व्यक्तियों के प्रति मात्र एक भावना है। दयावान् व्यक्ति मानव एवं पशु दोनों को प्रेमपूर्वक गले लगाता है। सहानुभूति अपने समकक्ष अथवा उन्नत व्यक्तियों के प्रति होती है परन्तु यह दया अथवा करुणा की भाँति क्रियाशील नहीं होती है।

तरस अपने से हीन व्यक्तियों के कष्ट से उत्पन्न भावना है। अन्य व्यक्ति पर तरस खाने वाले व्यक्ति में गर्व एवं अभिमान का भाव होता है। इस गर्वित भाव के कारण, तरस का अन्त प्रायः शब्दों में ही हो जाता है।

एक करुणाशील व्यक्ति के विचार, शब्द एवं कार्य दयापूर्ण होते हैं। उसके पास जो कुछ भी है, वह सबमें बाँटता है। वह दूसरों के लिए अपनी सुख-सुविधा का त्याग करता है।

यदि आपका हृदय कठोर है, तो छोटे-छोटे करुणापूर्ण कार्य करिए। किसी निर्धन रोगी को दूध का एक कप दीजिए। शीतकाल में किसी निर्धन को कम्बल दीजिए। माह में एक बार किसी निर्धन व्यक्ति अथवा साधु को भोजन कराइए। अस्पताल में जा कर रोगियों की सेवा करिए। इस प्रकार करुणा का विकास कीजिए।

दूसरों के कष्ट का अनुभव करिए। दूसरों के सम्बन्ध में निर्णय देते समय करुणाशील रहिए। स्वयं के दोषों एवं दुर्बलताओं का स्मरण करिए। दूसरों की आलोचना करने में तत्पर मत होइए। बुरे कार्य करने वालों के प्रति उदार रहिए।

दूसरों के प्रति करुणा का भाव रखिए। अन्य व्यक्ति भी आपके प्रति करुणाशील बनेंगे। आपको उस समय करुणा प्राप्त होगी जब आपको इसकी अत्यधिक आवश्यकता होगी। यह भगवान् का अपरिवर्तनीय विधान है।

भगवान् बुद्ध तथा अन्य सन्तों का एवं उनके कार्यों का पुनः-पुनः स्मरण करिए। 'लाइज ऑफ सेन्ट्स' (Lives of Saints) एवं 'सेन्ट्स एण्ड सेजेज' (Saints and Sages) पुस्तकों को पढ़िए। आप धीरे-धीरे करुणा का विकास कर पायेंगे।

सूर्य, वृक्ष एवं नदियाँ निष्पक्ष-समदर्शी होते हैं। इसी प्रकार आप भी अपने मित्रों एवं शत्रुओं के प्रति करुणाशील बनिए।

साधु-सन्तों का संग करिए। भगवान् का ध्यान करिए। उनके नाम का जप करिए। संकीर्तन करिए। भगवान् की महिमा का गान करिए। आपमें करुणा का विकास होगा। प्रातःकाल 'करुणा' के सद्गुण पर ध्यान करिए। व्यावहारिक जगत् में कार्य करते हुए भाव रखिए- "मैं आज करुणाशील रहूँगा। मैं करुणापूर्ण कार्य करूँगा।" धीरे-धीरे करुणा आपके स्वभाव का अभिन्न अंग बन जायेगी।

दुःखी व्यक्तियों एवं पशुओं के प्रति करुणा कीजिए। उनके आँसुओं को पोंछिए आप निश्चयमेव धन्यता प्राप्त करेंगे।

श्री स्वामी चिदानन्द जी के आदर्श का अनुकरण करिए जिनका हृदय करुणा से परिपूरित है। उन्होंने अनेक दिनों तक एक कुत्ते की देखभाल की जिसके शरीर पर कीड़ों से भरा घाव था। उन्होंने तीन महीने तक एक कुष्ठ रोगी की प्रेमपूर्ण सेवा की।

धर्मार्थ संस्थाएँ, धर्मार्थ अस्पताल, वृद्धाश्रम, कुओं-तालाबों का निर्माण, निर्धनों के लिए अन्नक्षेत्र, धर्मशालाएँ, पशु-कल्याण संस्थाएँ, समाजसेवी संस्थाएँ- ये सब करुणा की ही अभिव्यक्ति हैं।

आपके हृदय में करुणा का उदय हो। आपका हृदय करुणा से परिपूरित हो।

मिताचार-सन्तुलन (Moderation)

मिताचार किसी भी प्रकार की 'अति' से मुक्ति है। यह नियन्त्रण करने, कम करने अथवा निरोध करने का कार्य है।

एक मिताचारी व्यक्ति स्वयं को सीमाओं के भीतर रखता है। वह अपने भोजन एवं अन्य कार्यों पर नियन्त्रण रखता है। वह संयमी एवं विवेकी होता है।

मिताचार बुद्धिमत्ता का अभिन्न मित्र है।

मिताचार जीवन को सौन्दर्य देता है। यह दीर्घायु एवं सुस्वास्थ्य प्रदान करता है। जीवन के चयनित सुख मिताचार द्वारा प्राप्त होते हैं।

मिताचार अथवा सन्तुलन दो अतियों के मध्य मार्ग का चयन तथा उत्तेजना- वासना का नियमन है। यह स्वयं में एक सद्गुण न हो कर सद्गुण प्राप्ति का साधन है।

मिताचार एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है जिसका नीति शास्त्र के विद्यार्थी अथवा साधक द्वारा अर्जन किया जाना चाहिए। यह मन की प्रशान्तता है। यह समचित्तता है। यह योग में कुशलता है। बिना मिताचार के योग तथा भौतिक जगत् के कार्यों में भी सफलता असम्भव है। पुरातन काल के समस्त यशस्वी महापुरुषों ने मिताचार का पालन किया है। आपको भोजन, शयन, अध्ययन, हास्य, सम्भोग, वार्तालाप, व्यायाम आदि में

मिताचारी-संयमी बनना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता के छठे अध्याय के श्लोक १६ एवं १७ में भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं, "हे अर्जुन, योग का अभ्यास न तो अधिक भोजन करने वाले के लिए और न ही भोजन का सर्वथा त्याग करने वाले के लिए, न तो अधिक सोने वाले के लिए और न ही निद्रा का सर्वथा त्याग करने वाले के लिए सम्भव है। आहार-विहार, कर्मों की चेष्टा, सोने एवं जागने में नियमित रहने वाले के लिए योग दुःखों को नष्ट करने वाला होता है।" यदि आप बहुत अधिक खायेंगे तो अधिक सोयेंगे। आप उदर, आँत एवं यकृत के विभिन्न रोगों से आक्रान्त हो जायेंगे। आपके सभी आन्तरिक अंग अधिक कार्य से श्रान्त होंगे। अधिक सम्भोग आपकी ऊर्जा का ह्रास करेगा तथा दुर्बलता एवं अन्य अनेक रोगों का कारण बनेगा। अत्यधिक वार्तालाप मानसिक शान्ति को बाधित करेगा।

अपने साधनाभ्यास के प्रारम्भिक काल में भगवान् बुद्ध उग्र तपस्या में लीन हुए थे। उन्होंने भोजन का पूर्णतः त्याग कर कठोर तप किया। इससे उन्हें अत्यधिक कष्ट हुआ; उनका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया। उनकी आध्यात्मिक प्रगति भी अधिक नहीं हुई। तब उन्होंने 'स्वर्णिम मध्यम' मार्ग अपनाया। उन्होंने संयमपूर्वक भोजन लेना प्रारम्भ किया तथा अपने आध्यात्मिक अभ्यासों का भी नियमन किया। इसके पश्चात् ही उन्हें प्रबोधन प्राप्त हुआ। उन्होंने सदैव अपने शिष्यों को मध्यम मार्ग अपनाने की शिक्षा दी। वे स्वयं अनुभव कर यह सीख पाये थे।

कुछ व्यक्तियों के लिए जिह्वा पर नियन्त्रण कठिन होता है। यदि व्यंजन स्वादिष्ट है तो वे संयम की सीमा लाँघ जाते हैं और अपने उदर को ठूँस कर भर देते हैं। महाविद्यालयों के वे विद्यार्थी जिनके पास अधिक धन है, मिठाई की दुकानों पर जाकर अपने उदर को मिठाइयों से भर देते हैं। उदर का पूरा भरना न तो स्वास्थ्यकर है तथा न ही वैज्ञानिक है। व्यक्ति को उदर का आधा भाग भोजन से तथा एक चौथाई भाग जल से भरना चाहिए तथा शेष एक चौथाई भाग वायु-संचरण के लिए खाली छोड़ना चाहिए। यह मिताहार कहलाता है। आप पूर्ण उपवास के माध्यम से अत्यधिक आहार लेने की प्रवृत्ति पर नियन्त्रण कर सकते हैं।

खाने की इच्छा शेष रहते हुए भी सदैव भोजन की थाली छोड़कर खड़े हो जाना चाहिए। एक सप्ताह में दो-तीन दिन नमक का त्याग करने से आपको भोजन की मात्रा घटाने में सहायता मिलेगी। भोजन की मात्रा में कमी आपको मृत्यु नहीं देगी अपितु स्वस्थ रखेगी। यह दीर्घायु प्राप्त करने में सहायक होगी।

कुछ विद्यार्थी सत्रान्त परीक्षा की तैयारी हेतु चाय-काफी आदि के प्रयोग से नींद को भगाकर रात्रि में अध्ययन करते हैं। वे दस माह तक अध्ययन के प्रति लापरवाह रहते हैं। यह बुरी बात है। परीक्षा अवधि में इस प्रकार अत्यधिक तनाव के कारण वे बीमार पड़ते हैं। अध्ययन सुनियोजित रूप से किया जाना चाहिए। आपको प्रतिदिन नियमित रूप से अध्ययन करना चाहिए।

कुछ साधक भोजन का त्याग कर ४० दिन नीम की पत्तियों पर निर्वाह करते हैं। यह मूर्खतापूर्ण तप है। वे बीमार हो जाते हैं, दुर्बल हो जाते हैं तथा इसके बाद साधना करने में भी असमर्थ हो जाते हैं। भगवान् श्री कृष्ण इसकी भर्त्सना करते हुए कहते हैं, "जो व्यकि अहंकार एवं गर्व के वशीभूत हो, अपनी इच्छाओं-वासनाओं की शक्ति से उत्प्रेरित होकर शास्त्रविहित उग्र तपस्या करते हैं, वे मूढ़ दैहिक पंचभूतों तथा मुझ अन्तर्वासी परमात्मा को उत्पीड़ित करते हैं, ऐसे व्यक्तियों को आसुरी प्रकृति का जानो।" तपस्या के नाम पर अपने स्वास्थ्य को नहीं बिगाड़िए। किसी भी क्षेत्र 'अति' तक न जाइए।

साधना भी सुनियन्त्रित होनी चाहिए। ध्यान की अवधि को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए। शीर्षासन की अवधि में धीरे-धीरे वृद्धि करनी चाहिए। निद्रा में भी धीरे-धीरे कमी करनी चाहिए। अनियमित रूप से साधना करने पर आध्यात्मिक प्रगति नहीं होगी।

कुछ व्यक्ति बहुत शीघ्रता से मित्र बना लेते हैं, उनसे कुछ समय अत्यधिक प्रेम करते हैं तथा किसी छोटे से कारण से मित्रता तोड़ देते हैं। वे अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति में 'अतिवादी' हैं। वे गहनतापूर्वक प्रेम अथवा घृणा करते हैं। भावनाएँ भी सुनियन्त्रित होनी चाहिए। किसी के साथ भी अधिक मेलजोल मत रखिए। इस दिशा में भी सन्तुलन अपनाइए। आप प्रत्येक के साथ चिरस्थायी मित्रता रख सकते हैं।

धन के व्यय पर भी नियन्त्रण रखिए। कुछ व्यक्ति अविवेकी होते हैं। वे एक महीने में अविचारपूर्वक अपव्यय करते हैं तथा अगले महीने ऋण लेते हैं।

विचार प्रक्रिया पर नियन्त्रण रखिए। समस्त अप्रांसगिक, मूर्खतापूर्ण एवं क्षुद्र विचारों का नाश करिए। अत्यधिक मत सोचिए। दिव्य एवं उच्च विचार रखिए।

कार्य में भी संयमी बनिए। अत्यधिक कार्य मत करिए। अत्यधिक श्रम अनेक रोगों का कारण है। यदि आप अत्यधिक श्रम करते हैं, तो आप ध्यान नहीं कर सकते हैं।

समस्त क्षेत्रों में पूर्ण मिताचारी-संयमी ही वास्तविक योगी है। वह इहलोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है। वह सदैव प्रफुल्लित-प्रमुदित रहता है। वह सुस्वास्थ्य, उच्चतर बल, ऊर्जा एवं स्फूर्ति से सम्पन्न होता है। वह दीर्घायु तथा यश प्राप्त करता है। वह आध्यात्मिक एवं भौतिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है।

अतः स्वर्णिम अथवा सुखप्रद मध्यम मार्ग को अपनाइए, सदैव इसका अनुसरण करिए। प्रत्येक क्षेत्र में 'अति' का त्याग करिए तथा सदा के लिए आनन्दित हो जाइए। मिताचार ही आपका आदर्श बने।

शील (Modesty)

शील एक उज्ज्वल ज्योति है। यह मन को ज्ञान तथा हृदय को परम सत्य की प्राप्ति हेतु तैयार करता है।

शील सद्गुणों की शोभा है। यह न केवल आभूषण है अपितु सद्गुणों का रक्षक भी है।

शील चरित्र को नवीन आभा प्रदान करता है। यह लावण्यता है। यह सौन्दर्य एवं सद्गुण का दुर्ग है। यह प्रतिभा-योग्यता रूपी हीरे हेतु सुन्दर पृष्ठभूमि है। यह यशस्वी जीवन का सर्वोत्कृष्ट आभूषण है। यह सादगी का संलग्नक है।

शील व्यक्ति को सबका प्रिय बनाता है। यह सद्‌गुणों से समृद्ध हृदय में वास करता है।

शील एक स्त्रियोचित गुण है। यह विनम्रता है। यह विचार-व्यवहार की पवित्रता है। यह सुन्दर व्यवहार है। यह पावनता है। यह संयमशीलता है।

शील मर्यादा की भावना है। यह स्वयं को अधिक महत्ता देने की प्रवृत्ति का अभाव है। यह किसी प्रकार की अपवित्रता का अभाव है। यह शिष्टता है। विशेषतया स्त्रियों के सम्बन्ध में यह आचरण की पवित्रता है।

शील किसी भी प्रकार की अति एवं अतिशयोक्ति आदि से मुक्ति है। यह वाणी एवं आचरण की शिष्ट मर्यादा अथवा औचित्य है। यह विचार, भाव, चरित्र एवं आचरण की शुद्धता है। यह मर्यादाशीलता है।

हम कन्या के शील की बात करते हैं। हम शीलसम्पन्न विद्वान् शब्द का प्रयोग करते हैं।

शीलसम्पन्न स्त्री एवं पुरुष में गर्व नहीं होता है। जिस प्रकार साधारण वस्त्र एक स्त्री को सौन्दर्य प्रदान करते हैं, उसी प्रकार शालीन आचरण अथवा शील ज्ञान का सर्वोत्तम आभूषण है।

शीतलताम्पन्न स्त्री अथवा पुरुष आडम्बर-दिखावे से रहित होते हैं। वे स्वयं को सबके ध्यान अथवा आकर्षण का केन्द्र बनाने को इच्छुक नहीं होते हैं।

एक शीलवान व्यक्ति आत्म-श्लाघा नहीं करता है। वह अपनी प्रशंसा सुनना नहीं चाहता है। वह गर्व-घमण्ड से मुक्त होता है। वह अत्यन्त सरल स्वभाव का होता है एक शीलवती स्त्री लज्जाशील होती है। वह अधिक बहिर्मुखी नहीं होती है। एक अहंकारी व्यक्ति सदैव अपने विषय में बात करेगा, परन्तु शीलसम्पन्न स्वयं को वार्तालाप का विषय बनाने से सदैव बचता है।

एक शीलवान व्यक्ति की वाणी प्रेरक एवं उन्नयनकारी होती है। यह आपके हृदय को छूती है, आपके हृदय में प्रवेश करती है। यह प्रेम एवं ज्ञान का प्रसार करती है तथा सत्य को आभा प्रदान करती है।

अपनी प्रतिभा एवं उपलब्धियों का प्रदर्शन मत करिए। अपना गुणगान स्वयं मत करिए। शीलवान बनिए। सभी आपकी योग्यता, प्रतिभा एवं उपलब्धियों की प्रशंसा करेंगे। जल से भरा घड़ा आवाज नहीं करता है। खाली घड़ा ही आवाज करता है। आपका शीलवान स्वभाव स्वयं ही आपके व्यक्तित्व को अभिव्यक्त करेगा।

एक शीलवान व्यक्ति सबके हृदयों को जीत लेता है। वह सबके द्वारा सम्मानित होता है। अतः विनयी एवं शीलवान बनिए। इस गुण का अधिकतम सीमा तक विकास करिए।

कुलीनता-भद्रता (Nobility)

कुलीनता भद्र होने का गुण है। यह मन अथवा चरित्र की महानता है। यह गरिमा, श्रेष्ठता एवं उदारता है।

कुलीनता कुलीन होने का चारित्रिक गुण एवं अवस्था है जो स्वार्थपरायणता, कायरता एवं क्षुद्रता के सर्वथा विपरीत है। यह महानता, वदान्यता एवं सज्जनता है।

यह आत्मा की वह उन्नत अवस्था है जिसमें साहस, उदारहृदयता, महामनस्कता, वीरता के साथ साथ चरित्र को दूषित करने वाली समस्त प्रवृत्तियों के प्रति उपेक्षा समाहित है।

धन-सम्पदा अथवा उच्च कुल में जन्म नहीं अपितु सम्माननीय आचरण एवं अच्छा स्वभाव आपको महान् बनाता है।

बिना सदगुणों के कुलीनता, बिना हीरे के सुन्दर पृष्ठसज्जा के समान है। सद्गुण कुलीनता की प्रथम आवश्यकता है। यदि आप उदारचेता हैं तो यह सर्वश्रेष्ठ प्रकार की कुलीनता है।

कुलीनता पुरुष एवं स्त्री के लिए सुन्दर आभूषण है। सच्ची कुलीनता सद्गुणों से प्राप्त होती है, उच्च कुल में जन्म लेने से नहीं। किसी भी गुण का वास्तविक स्तर मन से ज्ञात होता है। जो अच्छा सोचता है, वही वास्तव में कुलीन है।

कुलीनता दिव्यता से जुड़े मन एवं हृदय का सार तत्त्व है। वास्तविक कुलीनता का सार 'स्व' का त्याग है। करुणा कुलीनता का सच्चा लक्षण है।

आज्ञाकारिता (Obedience)

आज्ञाकारिता आदेशों का पालन करने की इच्छुकता है।

आज्ञाकारिता आदेश, विधान अथवा प्रतिबन्धों के प्रति समर्पण अथवा उनका पालन है। यह विहित कार्य को करना तथा निषिद्ध कार्य का त्याग करना है। आज्ञाकारिता एक व्यक्ति अथवा विधान के प्रति समर्पण के समान, पद के प्रति समर्पण भी है।

आज्ञाकारिता त्याग से श्रेष्ठ है।

एक आज्ञाकारी व्यक्ति ही आदेश दे सकता है अथवा शासन कर सकता है।

जो व्यक्ति कुशलतापूर्वक आदेश देने में सक्षम है, उसने भूतकाल में स्वयं अन्य व्यक्तियों के आदेशों का पालन किया है तथा जो निष्ठापूर्वक आज्ञापालन करता है, वह ही किसी दिन आदेश देने वाला अधिकारी बनने योग्य है।

आज्ञाकारिता से समस्त सद्गुणों का उद्भव होता है।

सच्ची आज्ञाकारिता आदेश-पालन में न तो देर करती है तथा न ही प्रश्न करती है।

आज्ञाकारिता सफलता की जननी है तथा सुरक्षा प्रदान करने के लिए वचनबद्ध है।

आपके बालक को प्रथम शिक्षा 'आज्ञाकारिता' की दी जानी चाहिए।

दुष्ट व्यक्ति भय से आज्ञापालन करते हैं, सज्जन व्यक्ति प्रेम से आज्ञापालन करते हैं।

आदेश देना चिन्ताप्रद है, आज्ञापालन सुखप्रद है।

अच्छाई वह सरिता है जो भगवान् के चरण-कमलों से आज्ञाकारिता के मार्ग के माध्यम से प्रवाहित होती है।

यदि हृदय सन्तुष्ट नहीं है तो इसका अभिप्राय है कि शरीर द्वारा वास्तविक आज्ञापालन नहीं हुआ है।

आशावादिता (Optimism)

आशावादिता एक सिद्धान्त है जिसके अनुसार सब कुछ अच्छे के लिए होता है। यह वस्तुओं के प्रति उज्ज्वल एवं आशापूर्ण दृष्टिकोण रखने का स्वभाव है।

आशावादिता का यह सिद्धान्त अथवा दृष्टिकोण है कि प्रकृति में तथा मानवता के इतिहास में घटित सब कुछ अच्छे के लिए है; ब्रह्माण्ड की व्यवस्था परम कल्याण हेतु निर्धारित है।

इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड श्रेष्ठ स्थिति की ओर अग्रसर है। यह ऐसा विश्वास रखने का स्वभाव है कि वस्तु-परिस्थिति कितनी विपरीत प्रतीत हो; जो है अथवा घटित हो रहा है, वह उचित एवं कल्याणकारी है। यह निराशावादिता के पूर्णतया विपरीत स्वभाव है।

निराशावादिता आशावादिता का विपरीतार्थी शब्द है।

आशावादी व्यक्ति प्रत्येक कठिनाई में एक नवीन अवसर देखता है; निराशावादी व्यक्ति प्रत्येक अवसर में कठिनाई देखता है।

प्रत्येक परिस्थिति का एक उज्ज्वल पक्ष होता है। मन को आशावादिता एवं आत्मविश्वास से पूर्ण रखिए। इससे ही कठिनाई पर आधी विजय प्राप्त हो जायेगी।

एक आशावादी व्यक्ति जीवन से सर्वश्रेष्ठ लाभ प्राप्त करता है। वह अच्छे की आशा करता है, वस्तु-परिस्थितियों का सदुपयोग करता है तथा सबके लिए अच्छा सोचता है।

आशावादिता आशा है। यह सुखी जीवन है। यह लोगों की रक्षा करती है।

भगवान् की अच्छाई के साथ विश्व में बुराई कैसे विद्यमान है? आशावादी व्यक्ति इस प्रश्न का उत्तर देते हैं कि बुराई अच्छाई का आवश्यक पूर्वगामी तत्त्व है।

आशावादिता आपको प्रमुदित-प्रफुल्लित रखती है। दुर्घटना उतनी भयंकर नहीं होती है जितना आपका भय था। पर्वत की चढ़ाई उतनी खड़ी नहीं होती है जितनी आरोहण से पूर्व आपने सोची थी। कठिनाई उतनी बड़ी नहीं होती है जितनी आपने आशा की थी। धातु-परिस्थितियाँ आपकी आशा-कल्पना से अच्छी अवस्था में ही प्राप्त होती है।

धैर्य (Patience)

धैर्य धैर्यवान् रहने अथवा शान्तिपूर्वक सहन करने का गुण है। यह बिना खिन्न हुए कार सहन करने का गुण है।

एक धैर्यशील व्यक्ति सरलता से उत्तेजित नहीं होता है। वह विपरीत परिस्थितियों में शान्त-प्रशान्त रहता है।

धैर्य शक्ति है। यह दुर्बलता के लिए सहारा है। यह महानतम एवं उच्चतम बल है। धैर्य से आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। यह पर्वतों को हिला सकता है। धैर्य से इस विश्व में कुछ भी प्राप्त किया जा सकता है। सत्य की खोज में धैर्य प्रत्येक कठिनाई पर विजय प्राप्त कर लेगा। एक धैर्यवान् व्यक्ति जो चाहे वह प्राप्त कर सकता है।

यदि आप प्रतीक्षा करें तो सब कुछ प्राप्त होता है। प्रतीक्षा किस प्रकार करें-यही सफलता का महान् रहस्य है। समस्त सुखों का मूल धैर्य ही है। धैर्य इच्छाशक्ति एवं सहनशक्ति विकसित करता है।

धैर्य निष्क्रियता नहीं है। यह उदासीनता है। यह केन्द्रीकृत शक्ति है। यह धरा पर शान्ति का स्तम्भ है।

धैर्य ज्ञान का प्रमुख घटक है। यह धृति एवं सहनशीलता का सारतत्त्व है। यह सन्तोष की कुंजी है। यह एक विजेता का साहस है।

छोटी-छोटी बातों में धैर्यशील रहिए। दैनिक समस्याओं एवं दुःखों को शान्तिपूर्वक सहन करिए। आप महान् शक्ति का अर्जन कर सकेंगे तथा गम्भीर विकट परिस्थितियों, खों एवं कष्टों को सहन कर पायेंगे।

धैर्य आत्मा को सशक्त करता है, स्वभाव को मधुर बनाता है, क्रोध का दमन करता है, इच्छाशक्ति को विकसित करता है, ईर्ष्या को शमित करता है, गर्व को पराभूत करता जिह्वा एवं हाथ पर नियन्त्रण रखता है अर्थात् वाणी एवं कर्म का नियमन करता है।

धैर्य सहनशक्ति की बहिन अथवा पुत्री है।

धैर्य कटु होता है परन्तु इसका फल अत्यन्त मधुर होता है। धैर्य शान्ति की आत्मा है। यह मनुष्य को दिव्य बनाता है। समस्त सन्त-महापुरुष, योगी एवं संन्यासी-वृन्द अत्यधिक धैर्यवान् थे। यह उनका आभूषण अथवा चूड़ामणि था।

धैर्य क्रोध के नियन्त्रण हेतु एक विशिष्ट उपाय है। यह क्रोध के लिए पैन्सिलीर इन्जेक्शन है।

धैर्य निष्क्रिय सहनशक्ति है। यह मानव की सम्भाव्य बुराइयों को अप्रतिरोधपूर्वक सहन करने की मानसिक प्रवृत्ति है।

धैर्य निर्भीक एवं अटल अध्यवसाय है। प्रतिभा धैर्य है। यह किसी इच्छित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अथवा किसी कार्य या उपलब्धि हेतु दृढ़तापूर्वक लगे रहना है। हम कहते हैं, "राम धैर्यपूर्वक अध्ययन करता है।"

धैर्य में क्रियाशीलता भी हो सकती है अर्थात् किसी कार्य को बिना शिकायत किये निरन्तर करते रहना यथा भूमि की जुताई करना, चिलगोजे का छिलका निकालना आदि। इनमें अथक प्रयास की आवश्यकता है।

तितिक्षा (Endurance) कष्ट के विरुद्ध स्वयं को कठोर बना लेती है और मात्र हठधर्मिता हो सकती है। इसमें निष्क्रिय शक्ति हो सकती है।

धृति (Fortitude) साहसयुक्त तितिक्षा-शक्ति है। धैर्य तितिक्षा की भाँति कठोर नहीं होता है, यह समर्पण के भाव के समान स्व को विस्मृत करता है। समर्पण सदैव महान् क्षणों के लिए प्रयुक्त होता है, जबकि छोटी-छोटी चिन्ताओं-परेशानियों के लिए धैर्य का प्रयोग होता है।

सहनशीलता (Forbearance) प्रतिशोध अथवा प्रतिकार का त्याग है। धैर्य दुःखदायी-उद्वेगकर आचरण के समक्ष हृदय में करुणा बनाये रखना है। दीर्घकालीन कष्ट सहन करना सतत धैर्य का परिचायक है।

धैर्य शान्ति अथवा आत्मनियन्त्रण है, यह दूसरे की इच्छा के प्रति समर्पण है।

हम कष्ट 'में' धैर्य रखते हैं। विरोधियों 'के प्रति' धैर्य का प्रयोग करते हैं। अत्यन्त पीड़ा में धैर्य रखने की बात कहते हैं। हम सर्दी-गर्मी अथवा क्षुधा के सन्दर्भ में धैर्य रखने का प्रयोग नहीं करते हैं।

कष्ट, पीड़ा, आघात, अपमान, घोर विपत्ति आदि को शान्तिपूर्वक सहन करना धैर्य है।

एक धैर्यशील व्यक्ति का स्वभाव शान्त एवं अविक्षुब्ध होता है। वह बिना शिकायत, क्रोध अथवा प्रतिशोध की भावना के सहन करता है।

धैर्य बिना असन्तुष्ट हुए न्याय अथवा सुपरिणाम की प्रतीक्षा करने का कार्य अथवा गुण भी है।

एक धैर्यवान् व्यक्ति जल्दबाजी नहीं करता है। वह अति-उत्सुक अथवा क्रोधी नहीं होता है।

धैर्य एवं अध्यवसाय (Patience and Perseverance)

धैर्य एवं अध्यवसाय सत्त्व से उत्पन्न सद्गुण हैं। इन सद्गुणों के बिना न तो भौतिक जगत् तथा न ही आध्यात्मिक जगत् में सफलता प्राप्त करना सम्भव है। ये सद्गुण संकल्प शक्ति का विकास करते हैं। जीवन में प्रत्येक अवस्था में कठिनाइयाँ सामने आती है; धैर्यपूर्वक प्रयास एवं अध्यवसाय द्वारा इन पर विजय प्राप्त की जानी चाहिए। इन सद्गुणों के कारण ही महात्मा गाँधी ने सफलता प्राप्त की। वे असफलताओं से कभी हतोत्साहित नहीं हुए। विश्व के समस्त महापुरुषों ने धैर्य एवं अध्यवसाय से ही सफलता, श्रेष्ठता एवं महानता अर्जित की है। आपको इन सद्गुणों का धीरे-धीरे विकास करना होगा।

एक धैर्यवान् व्यक्ति सदैव स्वयं को प्रशान्तचित्त रखता है। वह मन को सन्तुलित रखता है। वह असफलता एवं कठिनाइयों से भयभीत नहीं होता है। वह स्वयं को सशक्त करने के उपाय खोजता है। चित्त की एकाग्रता के अभ्यास हेतु व्यक्ति के पास असीम धैर्य होना चाहिए। अधिकांश व्यक्ति कुछ कठिनाइयाँ आते ही हतोत्साहित हो जाते हैं तथा इसे निरर्थक मान प्रयास छोड़ देते हैं। यह बहुत बुरी बात है। कठिनाइयाँ आने पर साधकों को अपनी साधना नहीं छोड़नी चाहिए।

चींटियाँ चावल एवं चीनी के छोटे-छोटे कण अपने घरों में एकत्रित करती हैं। वे कितनी धैर्यवान् एवं अध्यवसायी हैं! आप बाइबल में इन शब्दों को पायेंगे, "हे अकर्मण्य-आलसी मनुष्य! चींटियों के पास जाओ, उनके कार्य-व्यवहार को देखो और बुद्धिमान् बनो।" मधुमक्खियाँ प्रत्येक पुष्प से एक-एक बूँद शहद ले कर अपने छत्ते में एकत्रित करती हैं। वे कितनी धैर्यवान् एवं अध्यवसायी हैं। समुद्र एवं नदियों पर विशाल बाँध एवं पुल बनाने वाले इन्जीनियर कितने धैर्यशील हैं! वह वैज्ञानिक कितना धैर्यवान् था जिसने यह खोजा कि हीरा मात्र कार्बन ही था। श्री

जे. सी. बोस प्रयोगशाला में पौधों के साथ प्रयोग करते हुए कितने धैर्यवान् हैं। हिमालय की गुहा में वास करने वाला सन्त मन पर नियन्त्रण के अभ्यास में इन सबसे अधिक धैर्यशील है।

एक धैर्यशील व्यक्ति थोड़ा भी क्षुब्ध नहीं होता है। धैर्य क्रोध पर नियन्त्रण में सहायता देता है। धैर्य अत्यधिक शक्ति प्रदान करता है। अपनी समस्त दैनिक क्रियाओं को धैर्यपूर्वक करिए। धीरे-धीरे सद्गुणों का विकास करिए। उनके विकास हेतु उत्सुक होइए। अपने मन में 'ॐ धैर्य' का चित्र रखिए। इससे आपमें धैर्य का विकास होगा। प्रातःकाल इस सद्गुण पर ध्यान करिए। समस्त दैनिक कार्य धैर्यपूर्वक करने का प्रयास करिए, शिकायत मत करिए। धैर्य के लाभों पर विचार करिए। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप अन्ततः धैर्य के साकार विग्रह बन जायेंगे।

देशभक्ति (Patriotism)

देशभक्ति अपने देश के प्रति प्रेम एवं भक्ति है।

देशभक्ति वह भाव है जो व्यक्ति को देश की बाह्य आक्रमण से रक्षा तथा इसके अधिकारों, विधि-नियमों एवं संस्थाओं की सुरक्षा द्वारा इसकी सेवा हेतु प्रेरित करता है।

इस भाव का आरम्भ देश के प्रति प्रेम से होता है; यह भाव व्यक्ति को देश के अस्तित्व, अधिकारों एवं संस्थाओं की रक्षा और इसके विधि-विधान के पालन तथा इसके कल्याण-संवर्धन हेतु प्रेरणा देता है।

जो वास्तव में अपनी मातृभूमि से प्रेम करता है तथा इसकी सेवा करता है, वही देशभक्ति है।

देश के प्रति प्रेम उच्चतम सद्गुणों में से एक है।

अपने देश का कल्याण आपका प्रथम कर्तव्य है। जो व्यक्ति इसके कल्याण हेतु श्रेष्ठ कार्य करता है, वही अपना कर्तव्य श्रेष्ठ रूप में निर्वाह करता है।

सार्वजनिक कल्याण उच्चतम लक्ष्य है।

जो देशभक्ति व्यक्ति को आत्म-बलिदान, साहस एवं निष्ठापूर्ण कार्यों हेतु, यहाँ तक की मृत्यु-स्वीकार करने को प्रेरित करती है, वह समस्त सद्गुणों में सर्वोच्च है। प्रथम देशभक्ति तथा उसके पश्चात् वेदान्त-निष्ठा का विकास करिए।

शान्ति (Peace)

प्राचीन समय से ही अवर्णनीय-अबोधगम्य शान्ति वह धुरी रही है जिसके चहुँ ओर भारतीय संस्कृति अपने विविध पक्षों में केन्द्रित रही है।

शान्ति प्रशान्त अवस्था है। यह उद्वेग, चिन्ता, विक्षुब्धता एवं हिंसा से मुक्ति है। यह समरसता, मौन एवं विश्रान्ति है। विशेषतया यह युद्ध का अभाव अथवा युद्ध की समाभि है। शान्ति आत्मा का स्वरूप है। मन की समस्त वृत्तियाँ आत्मा में विलय हो जाती हैं।

यहाँ कोई संकल्प-विकल्प नहीं रहता है। निःस्वार्थता, इच्छाशून्यता, अनासक्ति, अहंता-ममता-वासना से मुक्ति, आत्मा अथवा परमात्मा के प्रति भक्ति, आत्म-संयम, इन्द्रियों एवं मन पर नियन्त्रण सुख एवं शान्ति प्रदान करते हैं।

राष्ट्रों के मध्य सद्भावना, सहानुभूति, सहिष्णुता एवं मेल-मिलाप से राष्ट्रीय शान्ति बनी रहती है। वैश्विक प्रेम, दयालुता एवं क्षमाशीलता का विकास करिए; दूसरों के विचारों को समझने का प्रयास करिए।

एक विषय-लोलुप व्यक्ति के हृदय में शान्ति का वास नहीं होता है। मन्त्रियों, वकीलों, व्यापारियों, तानाशाहों एवं सम्राटों के हृदयों में भी शान्ति नहीं रहती है। योगियों, सन्त-महापुरुषों एवं आध्यात्मिक व्यक्तियों के हृदय में ही शान्ति का वास होता है।

प्रार्थना, जप, कीर्तन, ध्यान, सद्विचार एवं सचिन्तन से शान्ति प्राप्त होती है। राष्ट्रों के मध्य सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध, आपसी सद्भावना एवं सर्वकल्याण के भाव के आधार पर शान्ति स्थापित होनी चाहिए।

शान्तिपूर्वक बोलिए, चलिए एवं कार्य करिए। भगवान् की अबोधगम्य असीम शान्ति का अनुभव करिए।

आपके अतिरिक्त आपको कोई अन्य शान्ति नहीं दे सकता है। अपनी निम्न प्रकृति, मन, इन्द्रियों एवं इच्छाओं-कामनाओं पर विजय ही आपको शान्ति प्रदान कर सकती है।

यदि आपके भीतर शान्ति नहीं है, तो इसे बाहरी वस्तु-पदार्थों में खोजना व्यर्थ है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद एवं मात्सर्य-ये शान्ति के छह शत्रु हैं। विवेक, वैराग्य एवं अनासक्ति के खड्ग से इन शत्रुओं का नाश करिए। आप शाश्वत शान्ति प्राप्त करेंगे।

शान्ति धन-सम्पदा, कोठी-बँगले इत्यादि में नहीं है। शान्ति बाह्य वस्तु-पदाथों में नहीं, आपके आत्मा के भीतर निवास करती है। बाह्य वस्तु-पदार्थों से मन को हटा कर ध्यान करिए एवं अपने आत्मा में विश्राम करिए। आप इसी क्षण शाश्वत शान्ति का अनुभव करेंगे।

शान्ति एक बहुमूल्य रत्न है। यह एक अमूल्य निधि है। शान्ति मनुष्य की स्वाभाविक अवस्था है। यह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। युद्ध उसका भ्रष्ट आचरण है, एक लज्जाजनक कार्य है।

भगवदीय शान्ति आपके हृदय में निवास करती है। भक्ति एवं ध्यान द्वारा इस परम शान्ति का अनुभव करिए।

अध्यवसाय-लगन (Perseverance)

अध्यवसाय प्रारम्भ किये गये कार्य में निरन्तर लगे रहना है। यह सफलताप्राप्ति पर्यन्त कार्य में सतत संलग्न रहना है।

अध्यवसाय किसी उद्देश्य अथवा संकल्पपूर्ति हेतु निरन्तर क्रियाशील रहना है। यह सतत श्रमशील होना है।

भगवान् उनके साथ सदैव रहते हैं जो अध्यवसायी हैं।

यदि आपमें अध्यवसाय अथवा लगन है तो आप जो चाहे वह कार्य सम्पन्न कर सकते हैं।

विघ्न-बाधाओं, निराशाजनक एवं असम्भाव्य परिस्थितियों में भी अध्यवसायपूर्वक क्रियाशील रहने की प्रवृत्ति ही एक शक्तिशाली मनुष्य को दुर्बल से पृथक् करती है।

एक अध्यवसायी को कभी असफलता प्राप्त नहीं होती है। वह अपने सभी कार्यों में सदैव सफलता प्राप्त करता है।

जब आप एक कार्य प्रारम्भ करते हैं, तो पूर्ण सफलता प्राप्त होने तक आपको उसमें दृढ़तापूर्वक लगे रहना चाहिए, उसे मध्य में नहीं छोड़ना चाहिए।

एक परिश्रमशील, जागरूक एवं दृढ़ संकल्पवान् मनुष्य ही एक प्रतिभाशाली व्यक्ति के रूप में विकसित होता है।

अथक क्रियाशीलता, सतत सजगता एवं दृढ़ एकाग्रता-ये तीन सद्‌गुण विजय अथवा सफलता के स्वामी हैं।

सर्वाधिक अध्यवसायी को सदैव विजय प्राप्त होती है।

अध्यवसाय दुर्बल को शक्ति प्रदान करता है तथा निर्धन के लिए विश्व की सम्पूर्ण सम्पदा प्राप्ति का मार्ग खोल देता है। सतत अध्यवसाय से बड़ी से बड़ी कठिनाइयाँ भी दूर हो जाती है।

'निरन्तरता' (to continue) से अभिप्राय वह करते रहना है जो अब तक किया है; 'अध्यवसाय' (to persevere) का अर्थ किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक विशिष्ट दिशा में सतत प्रयत्नशील रहना है; 'डटे रहना' (to persist) से अभिप्राय कार्य मध्य में न छोड़ने के संकल्प के साथ कार्यशील रहना है।

मानव-प्रेम (Philanthropy)

मानव-प्रेम समस्त मनुष्यों के प्रति सद्भावना है। यह सम्पूर्ण मानवता के प्रति प्रेम है जो विशेषतया सद्‌कार्यों एवं सेवा कार्यों में परिलक्षित होता है।

यह सम्पूर्ण मानवता के सामाजिक उत्थान एवं हित संवर्धन का प्रयास अथवा स्वभाव है।

मानव-प्रेम सामाजिक बुराइयों को समाप्त कर सामाजिक सुख-सुविधाओं में वृद्धि की आकांक्षा अथवा प्रयास है। यह व्यापक स्तर की परोपकारिता है परन्तु इसके प्राय कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं। यह सक्रिय मानवतावाद है। यह दयापूर्ण कार्यों द्वारा सम्पूर्ण मानवता के प्रति सद्भावना अभिव्यक्त करना है।

जो मानवता को लाभान्वित करने का प्रयास करता है, वह मानव-प्रेमी है।

एक सच्चा मानव-प्रेमी स्वयं के लिए नहीं अपितु विश्व के लिए जीता है। उस हृदय में सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की उदार भावना विद्यमान होती है।

एक मानव-प्रेमी का लक्षण समस्त मनुष्यों के प्रति दया का भाव है। वह मानक के कल्याणार्थ कार्य करता है। वह परोपकारी होता है। वह मानवतावादी होता है।

तरस का भाव (Pity)

यह दूसरों के कष्टों से दुःखी होना है। जहाँ यह भाव है, वहाँ भगवद्शान्ति निवास करती है।

यह दूसरों के दुःख, कष्ट, विपत्तियों से उत्पन्न पीड़ा का भाव है तथा उनके कष्ट दूर करने की इच्छा है। यह दूसरों की पीड़ा के प्रति सहानुभूति है जो उनकी सहायता की इच्छुक है।

सहानुभूति में एक प्रकार की समानता अथवा एकता का भाव निहित होता है। परन्तु तरस का भाव दुर्बल अथवा दुर्भाग्यशाली तथा हमसे किसी क्षेत्र में निम्न के प्रति अभिव्यक्त किया जाता है, अत: सहानुभूति स्वीकार की जाती है परन्तु तरस खाने पर बुरा माना जाता है। सहानुभूति सुख-दुःख अथवा प्रसन्नता-शोक दोनों में अभिव्यक्त की जाती है परन्तु तरस की भावना केवल पीड़ितों के प्रति अभिव्यक्त की जाती है। हम एक विजेता के संघर्षों के प्रति सहानुभूतिशील होते हैं, परन्तु एक बन्धक अथवा दास के प्रति तरस के भाव से भरते हैं।

तरस का भाव केवल मन में रह सकता है, परन्तु करुणा (Mercy) पीड़ितों के लिए कुछ करने को सदैव तत्पर रहती है।

दया (Compassion) भी तरस (Pity) की भाँति दुःखी अथवा पीड़ितों के प्रति ही की जाती है परन्तु इसमें तरस भाव की कोमलता, सहानुभूति की गरिमा तथा करुणा की सक्रियता समाहित होती है।

सह-संवेदना (Commiseration) दया की भाँति कोमल भाव है, परन्तु निरर्थक ही है। यह भाव उन दुःखी व्यक्तियों के प्रति होता है जिन तक हम पहुँच नहीं सकते हैं तथा कोई सहायता भी नहीं कर सकते हैं।

सान्त्वना (Condolence) सहानुभूति की अभिव्यक्ति है। पाशविकता, क्रूरता, उग्रता, कठोरहृदयता, रूक्षता, अमानवीयता, करुणाहीनता आदि तरस-भाव के विपरीत भाव है।

जीवट (Pluck)

जीवट साहस है। यह कठिनाइयों के सम्मुख आत्म-विश्वास एवं उत्साह है। यह अक्लान्त ऊर्जा तथा संकल्प है।

यह सहनशीलता है। यह विपत्ति काल में दृढ़ संकल्पशील होना है। इस गुण से सम्पन्न व्यक्ति महान् उपलब्धि अर्जित कर सकता है।

जब भाग्य आपका साथ नहीं दे रहा हो, आप इस गुण के माध्यम से एक नया जीवन प्रारम्भ कर सकते हैं तथा जो चाहे प्राप्त कर सकते हैं।

राष्ट्रपति चेडबोर्न ने अपने नष्ट हुए फेफड़े के स्थान पर 'जीवट' का प्रयोग किया तथा अपने अन्तिम संस्कार की तैयारी हो जाने के उपरान्त भी पैंतीस वर्ष तक कार्य किया।

उद्यमपूर्ण कौशल (Pluck or Knack)

यह गुण सामान्य व्यक्ति के साथ-साथ एक व्यवसायी के लिए अत्यावश्यक है। यह कौशल अथवा दक्षता है। जब कोई व्यवसाय-व्यापार में उन्नति करता है तो लोग कहते हैं, "श्रीमान् बनर्जी में व्यावसायिक कौशल है।" इसका एक समानार्थी शब्द 'अभिवृत्ति' है। विनम्रता, शिष्टता, सद्व्यवहार आदि इस एक सद्गुण में छिपे हैं। जब कोई व्यक्ति कुछ खरीदने के लिए किसी दुकान में प्रवेश करता है तो सेल्समेन को उसके साथ अत्यन्त सौम्यतापूर्वक व्यवहार करना होता है तथा विनम्रतापूर्वक बात करनी होती है, "श्रीमान्, क्या मैं आपके लिए कुछ कर सकता हूँ? कृपया, यहाँ बैठिए। क्या आप चाय अथवा कुछ शीतल पेय लेंगे?" एक अशिष्ट व्यक्ति व्यवसाय में कभी प्रगति नहीं कर सकता है। व्यवसाय की सफलता में उत्साहपूर्ण स्वभाव भी आवश्यक होता है।

व्यावसायिक कौशल से सम्पन्न व्यक्ति अपने व्यावसायिक लेखे में अत्यधिक सावधान रहता है। उसकी स्मरण शक्ति अच्छी होती है। वह समस्त वस्तुओं के बाजार में वर्तमान मूल्य को जानता है। वह अर्थव्यवस्था से सुपरिचित होता है। वह उन स्थानों को जानता है जहाँ से वह वस्तुओं को सस्ते दामों में खरीद सकता है। वह वस्तुओं का प्रचार-प्रसार करना भी जानता है। वह प्रत्युत्पन्नमति होता है। वह असफलता एवं हानि से भयभीत नहीं होता है। वह किसी अन्य उपाय द्वारा हानि की पूर्ति कर लेगा। ऐसे व्यवसायी का मस्तिष्क रचनात्मक होता है। वह बहुत बुद्धिमान् होता है।

वकीलों एवं चिकित्सकों को भी सफल होने हेतु इस कौशल की आवश्यकता होती है। कुछ व्यक्ति जन्मतः उद्यमपूर्ण कौशल से सम्पन्न होते हैं। यदि आप चाहें तो आप भी शीघ्र ही इसका विकास कर सकते हैं। इस प्रकार कुशल अथवा दक्ष व्यक्ति अनेक आश्चर्यपूर्ण कार्य कर सकता है। धर्मशिक्षकों में ऐसे कौशल की आवश्यकता है। तभी वे लोगों को प्रभावित कर सकते हैं तथा अपनी शिक्षाओं का प्रसार कर सकते हैं। आचार्य शंकर भी उद्यमपूर्ण कौशल से सम्पन्न थे। उन्होंने बौद्धों के विरुद्ध नागा साधुओं की सेना का निर्माण किया । गुरु गोविन्द सिंह में भी यह असाधारण कौशल था। यद्यपि वे एक आध्यात्मिक व्यक्ति थे, उनमें एक योद्धा के भी गुण थे। धर्मगुरुओं को समय, परिस्थिति एवं आवश्यकतानुसार विभिन्न कार्य-विधियों को अपनाना चाहिए।

शिष्टता (Politeness)

शिष्टता शिष्ट आचरण है। यह अच्छा पालन-पोषण दर्शित करती है। यह शिष्ट एवं सभ्य स्वभाव है।

यह आचरण की सहजता एवं चारुता है। यह आचरण का सौन्दर्य है। यह कुलीनता-भद्रता है।

यह आपकी भावनाओं को संयमित एवं कोमल बनाती है। यह एक सरल सद्गुण है परन्तु इसमें महान् शक्ति है।

शिष्टता मानवता का पुष्प है। इससे अभिप्राय दूसरों से वही व्यवहार करना है जैसा आप स्वयं के लिए चाहते हैं।

एक शिष्ट व्यक्ति सबके स्नेह एवं सम्मान का पात्र होता है। उसे सुयश प्राप्त होता है। शिष्टता शिष्टाचार, सभ्यता, विनीतता एवं सुजनता का मिश्रण है।

शिष्टता न केवल आचरण अपितु मन एवं हृदय पर भी प्रभाव डालती है। यह व्यक्ति के भावों, विचारों एवं शब्दों को परिमित एवं सौम्य बनाती है।

शिष्टता सहृदयतापूर्वक अभिव्यक्त सहृदयता है। इसका प्रतिदिन अभ्यास करिए। विनीत बनिए। सभी आपके आचरण से प्रभावित होंगे।

एक शिष्ट व्यक्ति सर्वप्रिय एवं सर्वानुकूल होता है। शिष्टता सद्भाव एवं सद्प्रकृति का परिणाम है। यह व्यक्ति को एक पूर्ण भद्रपुरुष बनाती है।

शिष्टता एक दर्पण है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपनी छवि दिखाता है। यह सद्भाव से नियन्त्रित सद्प्रकृति है।

शिष्टता के लिए विनम्रता, सद्भाव एवं परोपकारिता आवश्यक है।
यह दूसरों के प्रति सद्भावना है। यह अच्छे स्वभाव, दूसरों के शुभ की इच्छा एवं उनके लिए स्वार्थ-त्याग का परिणाम है।

सर्वप्रथम हृदय में शिष्टता का भाव होता है जो बाह्य व्यवहार में प्रकट होता है। एक शिष्ट व्यक्ति के वाणी एवं आचरण में दूसरों की सुख-सुविधा के प्रति सम्मान का भाव होता है। वह अपने व्यवहार एवं भाषा में शिष्ट होता है।

शिष्टता आचरण की चारुता तथा वाणी की विनीतता है। सौजन्यता, भद्रता, सभ्यता, नम्रता, शिष्टाचार, सौहार्दता, मर्यादा, सौम्यता, सुशीलता एवं सुसंस्कृतता आदि शिष्टता के समानार्थी शब्द हैं।

अभिमान, रूक्षता, अशिष्टता, अभद्रता, असभ्यता, उद्धतता, देहातीपन, धृष्टता एवं गँवारुपन आदि शिष्टता के विपरीतार्थी शब्द हैं।

एक शिष्ट व्यक्ति अपनी वाणी एवं आचरण में इस प्रकार की मर्यादा का पालन करता है ताकि वह किसी के प्रति अभद्र न हो पाये। वह सभ्य समाज के आचार-व्यवहार में मान्य एवं स्वीकृत मर्यादाओं के पालन में भी अधिक सजग होता है।

एक व्यक्ति दूसरों के विषय में विचार न करते हुए भी सभ्य हो सकता है क्योंकि उसका आत्म-सम्मान उसे धृष्ट होने से रोकता है, परन्तु एक शिष्ट व्यक्ति दूसरों के विषय में सोचता है। यदि व्यक्ति वास्तविक एवं उच्च रूप में शिष्ट है तो वह छोटे-छोटे विषयों मे भी दूसरों की सुख-सुविधा का ध्यान रखता है।

'सभ्य' (Civil) शिष्ट से थोड़ा शुष्क शब्द है।

सुशिष्टता (Courteousness) अधिक पूर्ण एवं समृद्ध शब्द है जो प्रायः महान् विषयों एवं अच्छे भाव में प्रयुक्त होता है।

कुलीन (Genteel) मात्र बाह्य रूप में सौम्य शालीन होना है। यह विनीतता एवं शिष्टता से निम्न शब्द है।

सुसभ्य (Urbane) शिष्टता का वह भाव है जो दूसरों को सुख एवं प्रसन्नता अनुभव कराने में सफल होता है।

परिष्कृत (Polished) वास्तविक भाव से रहित वाणी-व्यवहार की चारुता से सम्पन्न होना है।

सुसंस्कृत (Cultured) शब्द मन एवं आत्मा के उच्च विकास को दर्शाता है जिसका कुछ अंश बाह्य व्यवहार में अभिव्यक्त होता है।

भद्रता (Complaisance) शिष्टता के क्षेत्र से अधिक आगे जाकर दूसरों को प्रसन्न करने का स्वभाव है।

शिष्टता (Politeness) आचरण की सहजता एवं चारुता है तथा यह अन्य व्यक्तियों की आवश्यकताओ-इच्छाओं का पूर्वानुमान करके उन्हें प्रसन्न करने तथा उन्हें कष्टप्रद लगने वाले व्यवहार को त्यागने की इच्छा है।

शिष्टाचार (Courtsey) वाणी एवं आचरण में परिलक्षित होता है। यह विशेषतया अन्य व्यक्तियों का स्वागत एवं आतिथ्य करते समय प्रदर्शित होता है। यह गरिमापूर्ण शिष्टता एवं दयालुता का संयुक्त रूप है।

तत्परता (Promptness)

तत्परता निर्णय एवं कार्य में शीघ्रता है। यह भाग्योदय, प्रतिष्ठा एवं प्रभाव स्थापित करने में सहायक है।

यह व्यवसाय की आत्मा है।

इस गुण से सम्पन्न व्यक्ति शीघ्र ही योजना बनाता है, संकल्प ले कर उसे क्रियान्वित करता है तथा सफल होता है।

तत्परता आपका कर्तव्य है। यह शिष्टाचार का एक भाग है। समय अत्यन्त मूल्यवान् है। समय के वास्तविक मूल्य को जानिए। प्रत्येक क्षण का आनन्द उठाइए। प्रत्येक क्षण का पूर्णतम उपयोग करिए। आलस्य, प्रमाद एवं दीर्घसूत्रता छोड़िए। जो कार्य आप आज कर सकते हैं, उसे कल के लिए मत टालिए।

पत्रों का उत्तर देने में तत्पर रहिए। इससे आपका पत्र प्राप्त करने वालों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

समझदारी (Prudence)

समझदारी एक सार्वलौकिक सद्‌गुण है। यह अन्य सभी सद्‌गुणों में निहित है। इस सद्‌गुण के बिना साहस, साहस नहीं कहलाता है।

यह समस्त सद्‌गुणों का आवश्यक घटक है। अनेक सद्‌गुण इस पर आश्रित हैं। यह आपकी रक्षा करेगा।

समझदारी विचारपूर्वक कार्य करने की आदत है। यह मुख्यतया कार्यों, उनके साधनों एवं विधियों, क्रम एवं समय से सम्बन्धित है।

इसमें एवं बुद्धिमत्ता में मात्रा का ही अन्तर है। बुद्धिमत्ता (Wisdom) समझदारी (Traurice) का अधिक पूर्ण-परिष्कृत रूप है। समझदारी बुद्धिमत्ता की दुर्बल आदते अथवा कम मात्रा है।

मूर्खता, मूढ़ता, नासमझी, लापरवाही, विवेकहीनता, दुस्साहस, उतावलापन, असावधानी एवं असतर्कता समझदारी के विपरीतार्थी शब्द हैं।
समझदारी बुद्धिमत्ता का व्यावहारिक प्रयोग है। एक समझदार व्यक्ति अपने आचरण में सदैव सतर्क एवं बुद्धिमान् रहता है। वह सावधान एवं विवेकशील होता है। वह कार्य से पूर्व विचार करता है। वह मितव्ययी होता है।

समझदारी सर्वश्रेष्ठ कवच है। समझदार व्यक्ति प्रायः अपने शत्रुओं से भी सीख लेते हैं। वही व्यक्ति समझदार है जो भविष्य की अनिश्चित घटनाओं से न कुछ आशा रखता है और न ही भयभीत होता है। वही व्यक्ति सुखी है जो अपने व्यक्तिगत कष्टों से नहीं अपितु दूसरों के कार्यों एवं अनुभवों से सीख कर समझदार बनता है।

एक समझदार व्यक्ति त्रुटियाँ करने से बचता है। वह सावधान होता है। वह निरीक्षण की क्षमता से सम्पन्न होता है। व्यावहारिक विषयों में वह दूरदर्शी एवं उचित निर्णायक सिद्ध होता है। वह मितव्ययी एवं विचारशील होता है। वह दूरदर्शिता, पूर्वज्ञान, विवेक एवं बुद्धि से सम्पन्न होता है। वह निरीक्षण करता है तथा अपनी रक्षा करता है। चूँकि वह दूरदशीं है, अतः वह भविष्य के विषय में विचार करते हुए कार्य करता है।

एक समझदार व्यक्ति स्वभाववशात् त्रुटियों से बचने तथा लाभप्रद मार्ग चुनने में सावधान रहता है। वह सांसारिक कार्य-व्यवहार को भली प्रकार समझता है। वह अपने हित एवं लाभ के प्रति अत्यन्त सजग रहता है। वह उचित निर्णय लेता है। वह बुद्धिमतापूर्वक विचार करता है। वह सजग सावधान रहता है। वह आने वाली विपत्ति को देख कर स्वयं को बचा लेता है। उसमें व्यावहारिक ज्ञान होता है। वह विवेकी होता है।

एक समझदार व्यक्ति किसी कार्य अथवा आचरण को अपनाने में अत्यन्त सावधान रहता है। वह किसी कार्य, व्यवसाय एवं उद्योग के परिणामों के विषय में सजग रहता है।

नयी सूचना की प्राप्ति की सम्भावना पर्यन्त अन्तिम निर्णय नहीं लेना समझदारी का सूचक है।

'समझदारी' के शब्दों को सुनिए। वह आपको उचित मार्ग पर चलायेगी। वह आपको विवेकपूर्ण परामर्श देगी। उसके परामर्श पर ध्यान दीजिए। उन्हें अपने हृदय में रखिए। सजगतापूर्वक उनका पालन करिए। समस्त सद्‌गुण इस एक गुण पर आश्रित हैं।

दूसरों के अनुभवों से शिक्षा ग्रहण करिए। उनकी असफलताओं को देख कर अपनी त्रुटियाँ सुधारिए। दूरदर्शी बनिए। आप कभी विपत्ति का सामना नहीं करेंगे। जिस वस्तु की कल आवश्यकता पड़ सकती है, उसका आज प्रयोग नहीं करिए। समझदारी के इस सद्‌गुण का अधिकतम सीमा तक विकास करिए।

समयनिष्ठता (Punctuality)

समयनिष्ठता किसी भी कार्य के निर्धारित समय का पालन है। एक समयनिष्ठ व्यक्ति पूर्वनियोजित भेंट अथवा कार्य हेतु समय पर पहुँचता है। समयनिष्ठता वचन दिये हुए समय के प्रति निष्ठा है अर्थात् उसका पालन है।

एक समयनिष्ठ व्यक्ति अपने कार्य की अवधि तथा अन्य व्यक्तियों से मिलने के निर्धारित समय के सम्बन्ध में अत्यन्त सजग होता है। वह किसी भी कार्यक्रम-अवसर के निश्चित समय पर पहुँचता है।

समयनिष्ठता व्यवसाय-उद्योगरत व्यक्तियों तथा महापुरुषों का विशिष्ट सद्गुण है। एक समयनिष्ठ व्यक्ति जीवन में सदैव सफल रहता है।

एक क्षण देरी करने की अपेक्षा दो घण्टे जल्दी पहुँचना श्रेष्ठ है।

जब अमेरिका के राष्ट्रपति वाशिंगटन के सचिव ने अपनी देरी का कारण घड़ी की खरानी बताया तो वाशिंगटन का उत्तर था, "आप नयी घड़ी खरीद लें अथवा मैं नया सचिव नियुक्त कर लूँगा।"

एक चिकित्सक, रसोइये, ऑफिसर एवं प्रोफेसर की सर्वाधिक आवश्यक योग्यता समयनिष्ठता ही है।

मैं हर स्थान पर सदैव निर्धारित समय से आधा घण्टे पहले ही पहुँचता हूँ। यही मेरी सफलता का रहस्य है।

दृढ़ समयनिष्ठता सर्वाधिक सरल सद्गुण है। इसका अभाव सदगुणों का अभाव है। अधिकांश व्यक्ति आदत एवं स्वभाववशात् आलसी होते हैं। सच्ची एवं दृद समयनिष्ठा से युक्त व्यक्ति को खोज पाना अत्यन्त दुर्लभ है।

व्यवसाय तथा समस्त महत्त्वपूर्ण कार्यों की मुख्य धुरी उनकी विधि है। समयनिष्ठता के बिना कोई विधि कार्य नहीं करती है।

"कभी नहीं से थोड़ी देर अच्छी" (Better late than never) इस कहावत से श्रेष्ठ कहावत है-"कभी देर नहीं करना अच्छा (Better never late)।" समयनिष्ठ बनिए। आपको समस्त कार्यों में सफलता प्राप्त होगी।

पवित्रता (Purity)

पवित्रता पाप अथवा दोष से मुक्ति है। पवित्रता मनसा वाचा-कर्मणा शुद्धता है। पवित्रता कामुक विचारों से मुक्ति है। यह नैतिक शुद्धता है।

पवित्रता-शुचिता दो प्रकार की होती है-आन्तरिक एवं बाह्य। राग-द्वेष का अभाव तथा भाव, लक्ष्य एवं उद्देश्य की शुद्धता आन्तरिक पवित्रता है। शरीर, वस्त्रों, अपने घर एवं आस-पास के क्षेत्र की स्वच्छता बाह्य पवित्रता है।

पवित्रता सद्गुण का मुख्य अंग है। यह आत्मा से अपना जीवन प्राप्त करती है। आपका आत्मा नित्य शुद्ध है। मन एवं इन्द्रियों के सम्पर्क के कारण आप अपवित्र-अशुद्ध हो गये हैं। जप, कीर्तन, प्रार्थना, ध्यान, आत्म-विचार, प्राणायाम, स्वाध्याय, सत्संग एवं सात्त्विक आहार द्वारा अपनी मौलिक पवित्रता को पुनः प्राप्त करिए।

पवित्रता के बिना आध्यात्मिक प्रगति सम्भव नहीं है। आत्मा पवित्र है। आपको पवित्रता के सद्गुण के अभ्यास एवं काया-वाचा-मनसा ब्रह्मचर्य पालन द्वारा इस नित्य शुद्ध आत्मा को प्राप्त करना चाहिए।

मैं इस प्रकार प्रार्थना करता हूँ, "हे आराधनीय प्रभु! मेरे मन को पवित्र बनाइए। मुझे समस्त अपवित्र विचारों से मुक्त करिए। मेरे मन को एक स्फटिक की भाँति पारदर्शी, हिमालय की श्वेतहिम की भाँति पवित्र तथा एक उज्ज्वल दर्पण की भाँति दीप्तिमन्त बनाइए।"

अपने जीवन को शत्रुता, अपवित्रता, घृणा एवं कामुकता से मुक्त कर इसे प्रेम, पवित्रता, शान्ति एवं परोपकारिता से परिपूरित करने से अधिक महान् कार्य आपके समक्ष अन्य क्या है?

उत्साहपूर्ण उद्यमी स्वभाव (Pushing Nature)

इस स्वभाव को 'गशिंग नेचर' भी कहा जाता है। यह लज्जा-संकोच का विपरीत भाव है। ऐसा व्यक्ति अति उत्साही होता है। वह सभी स्थानों में ईथर की भाँति प्रवेश करने की प्रवास करता है। कुछ चिकित्सक एवं वकील अपना जीविकोपार्जन नहीं कर पाते । क्योंकि उनका उत्साही-उद्यमी स्वभाव नहीं है। वे अत्यधिक बुद्धिमान् एवं प्रतिभासम्पन्न होते हैं परन्तु अपने स्वभाव में असुधार्य रूप से लज्जाशील-संकोचशील होते हैं। अन्य व्यक्तियों को प्रभावित नहीं कर पाते हैं। एक उत्साहपूर्ण-उद्यमी व्यक्ति मधुरतापूर्वक बात कर सकता है। वह बहुत अधिक साहसी होता है।

इस प्रकार का व्यक्ति अत्यधिक क्रियाशील होता है। वह जानता है कि अन्य व्यक्तियों को कैसे प्रसन्न किया जाये तथा उनका हृदय किस प्रकार जीता जाये। वह भली प्रकार जानता है कि किस प्रकार अन्य व्यक्तियों की सेवा करके उनका विश्वासपात्र बना जाये। वह अपने लिए किसी न किसी कार्य का सृजन कर लेता है। वह निष्क्रिय नहीं बैठ सकता है। वह सदैव योजनाएँ बनाता है तथा उन पर विचार करता है। वह जीवन में अत्यधिक उन्नति करना चाहता है तथा संसार की दृष्टि में स्वयं को ऊपर उठाना चाहता है। वह अत्यन्त हँसमुख स्वभाव का होता है तथा सबके साथ घुलमिल जाता है। वह जानता है कि विभिन्न स्वभावों के व्यक्तियों के साथ स्वयं को कैसे समायोजित किया जाये। जीवन में तथा भगवद्-साक्षात्कार में सफलता हेतु इस प्रकार का स्वभाव आवश्यक है। आपको इस स्वभाव का अधिकतम विकास करना होगा। इस स्वभाव को विकसित करने की तीव्र उत्कण्ठा रखिए तथा इसे अपना घनिष्ठ मित्र बनाने हेतु अधिकतम प्रयास करिए। तब आपके अन्य घनिष्ठ मित्र 'अवचेतन मन' एवं 'संकल्प शक्ति' आपको अपना सहयोग प्रदान करेंगे। जिस वस्तु को आप चाहते हैं, अपने मन में उसका स्पष्ट चित्र रखिए। मात्र इसकी ही आवश्यकता है।

यूरोपियन व्यक्तियों में यह स्वभाव अधिक मात्रा में होता है। ब्रिटिश भारत में व्यापारियों के रूप में आये तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की। धीरे-धीरे अपने उत्साही-उद्यमी स्वभाव के कारण ही वे इस भूमि के शासक बन गये। मालाबार के निवासियों का भी ऐसा ही स्वभाव होता है। आप पृथ्वी के प्रत्येक कोने में मालाबार-निवासियों को पायेंगे। वास्को-डी-गामा का ऐसा स्वभाव था। उसने भारत तक के समुद्री मार्ग की खोज की। कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की। जापानी व्यक्ति अपने इस स्वभाव के कारण प्रसिद्ध हैं। इसी कारण इतनी

कम अवधि में उन्होंने अत्यधिक उन्नति की है। जापान एक छोटा सा राष्ट्र है, परन्तु उद्योग-व्यवसाय के क्षेत्र में यह विश्व के अन्य राष्ट्रों से कम नहीं है।

उत्साहपूर्ण उद्यमी स्वभाव व्यक्ति को सदैव क्रियाशील रखता है तथा यह आध्यात्मिक साधक के लिए भी उपयोगी है। व्यवसायी-व्यापारी वर्ग के व्यक्तियों को इस गुण से सम्पन्न होना चाहिए। यह सभी के लिए एक अत्यन्त महत्वपूर्ण योग्यता है ।

नियमितता एवं समयनिष्ठता (Regularity and Punctuality)

नियमितता एवं समयनिष्ठता के बिना कोई व्यक्ति जीवन तथा भगवद्-साक्षात्कार में सफलता प्राप्ति की आशा नहीं कर सकता है। नियमितता एवं समयनिष्ठता के द्वारा ही पूर्ण अनुशासन का पालन किया जा सकता है। अनुशासन के बिना कहीं कोई सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है। अनुशासन मन का शत्रु है। मन अत्यधिक भयभीत हो जाता है जब बह अनुशासन, नियमितता, तपस्या, वैराग्य, त्याग, साधना इत्यादि शब्द सुनता है। ये अभ्यास मनोनाश का कारण होते हैं।

नियमित अभ्यास से मनुष्य शीघ्र ही उन्नति करता है। जो नियमित रूप से ध्यान करता है, वह शीघ्र ही समाधि अवस्था को प्राप्त होता है। वह बिना किसी प्रयास के सहजतापूर्वक ध्यान की अवस्था में आ जाता है। जो नियमित रूप से शारीरिक व्यायाम करता है, उसका शरीर शीघ्र सुदृढ़ होता है। जो व्यक्ति अनियमित रूप से सभी कार्य करता है, उसे अपने कार्यों का फल प्राप्त नहीं होता है।

प्रकृति से शिक्षा ग्रहण करिए। देखिए किस प्रकार ऋतुएँ नियमित रूप से आती हैं, सूर्य उदय-अस्त होता है, चन्द्रमा गगन में आता है, पुष्प खिलते हैं, फल-सब्जियाँ उत्पन्न होते हैं; पृथ्वी एवं चन्द्रमा गति करते हैं, दिन-रात, सप्ताह, माह एवं वर्ष आते हैं। प्रकृति आपकी गुरु एवं पथप्रदर्शक है। पंचभूत आपके शिक्षक हैं। जाग्रत होइए, उनके निर्देशों को ग्रहण कर अनुपालन करिए।

नियमितता, समयनिष्ठता एवं अनुशासन साथ-साथ चलते हैं। वे अभिन्न हैं। भारत में विद्यालय-महाविद्यालयों के कुछ छात्र एवं छात्राएँ पश्चिम के वस्त्र, वेशभूषा, केशविन्यास आदि का अनुकरण करते हैं। यह निम्न-तुच्छ अनुकरण है। क्या आपने उनसे नियमितता एवं समयनिष्ठता जैसे सद्गुण ग्रहण किये हैं? देखिए, एक अँग्रेज समय के प्रत्येक सैकण्ड के प्रति सजग रहता है। वह कितना समयनिष्ठ है! विशेषज्ञों एवं शोधकर्ताओं की संख्या भारत की अपेक्षा पश्चिमी राष्ट्रों में अधिक है। भारत में टैगोर, बाँस, अरबिन्दो जैसे कुछ ही प्रतिभाशाली व्यक्ति तथा कुछ सन्त एवं योगी हैं। परन्तु पश्चिम में असंख्य विशेषज्ञ एवं विद्वान् हैं। वे भारतीयों की अपेक्षा अधिक अध्ययनशील, नियमित एवं समयनिष्ठ होते हैं। वे अपनी इस एक विशेषता अर्थात् समयनिष्ठता के लिए सुविख्यात हैं। एक यूरोपियन मैनेजर ऐसे लिपिकों को पसन्द नहीं करता है जो समयनिष्ठ नहीं हैं। वह ऐसे व्यक्ति को शीघ्र ही कार्यमुक्ति का आदेश दे देगा। नियमित एवं समयनिष्ठ व्यक्ति जीवन के समस्त क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

'भारतीय अपनी 'भारतीय समयनिष्ठता' के लिए प्रसिद्ध हैं। यदि समाचार में एक सूचना प्रकाशित होती है कि टाउन हॉल में अपराह्न ४ बजे एक मीटिंग आयोजित की जायेगी तो भारतीय ५.३० बजे तक धीरे-धीरे एकत्रित होना प्रारम्भ करेंगे। इसे ही 'भारतीय समयनिष्ठता' कहते हैं। यदि घोषणा द्वारा लोगों को सूचित किया जाता है कि रात्रि ८.०० बजे कीर्तन आयोजित किया जायेगा, तो वे ९.३० बजे तक ही पहुँचेंगे। यदि कुछ मिनटों का ही विलम्ब हो, तो कोई समस्या नहीं। परन्तु घण्टों का विलम्ब उचित नहीं है। मुझे संकीर्तन एवं व्याख्यान यात्राओं में इस

भारतीय समयनिष्ठता का अनुभव हुआ है। भारतीयों को अपने इस दुर्गुण-दोष के कारण लज्जित होना चाहिए तथा शीघ्र ही इसका निराकरण करना चाहिए। हे भारतीय जन, जागिए! जागिए!

इस एक महत्त्वपूर्ण सद्गुण 'समयनिष्ठता' ने ही मुझे जीवन में सफल बनाया है। यूरोपियन भी मेरी समयनिष्ठता की प्रशंसा करते थे। मैं हर स्थान पर निर्धारित समय से पूर्व ही पहुँचता था। इससे व्यक्तियों पर अत्यधिक गहरा प्रभाव पड़ता था। मैं कभी ट्रेन पकड़ने में असफल नहीं हुआ। मैं रेलवे स्टेशन समय पर पहुँचता था। जो व्यक्ति समयनिष्ठ नहीं है, वह सदा ट्रेन पकड़ने में चूक जाता है। वह व्यवसाय में असफल रहता है। वह अपने सभी ग्राहक खो देता है। एक प्रोफेसर ऐसे विद्यार्थियों को पसन्द नहीं करता है, जो समय के पाबन्द नहीं हैं। यदि कोई व्यक्ति समय पर अदालत नहीं पहुँचता है, तो वह अपना मुकदमा हार जायेगा।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नियमित रहिए। अपने सोने एवं जगने के समय में नियमित रहिए। जल्दी सोने एवं प्रातः जल्दी उठने वाला व्यक्ति स्वस्थ, धनवान् एवं बुद्धिमान् बनता है। अपने भोजन, अध्ययन, शारीरिक व्यायाम एवं ध्यान में नियमित रहिए। इससे आपका जीवन सफल एवं सुखद होगा। नियमितता आपके जीवन का 'आदर्श' होना चाहिए।

त्याग (Renunciation)

मात्र त्याग द्वारा ही अमरत्व अथवा आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति होती है।

त्याग मन एवं संकल्प शक्ति को सुदृढ़ करता है तथा शान्ति प्रदान करता है।

वस्तु-पदार्थों का त्याग करिए। यह विषय-त्याग है। वस्तु-पदार्थों के प्रति आसक्ति का त्याग करिए। यह संग-त्याग है। यह मानसिक अनुशासन है।

त्याग के बिना, लेशमात्र भी आध्यात्मिक प्रगति सम्भव नहीं है।

त्याग का रहस्य अहंता, ममता, इच्छाओं, वासनाओं, तृष्णाओं, भेद-बुद्धि तथा कर्तृत्व-अभिमान का त्याग है।

पूर्ण त्याग एक दिन में घटित नहीं होता है। इसमें अत्यधिक समय लगता है। सन्त-महापुरुषों के साथ सत्संग, 'संन्यास की आवश्यकता' (Necessity for Sannyasa) पुस्तक के समान त्याग एवं वैराग्य पर आधारित अन्य पुस्तकों का स्वाध्याय त्याग के अभ्यास में सहायता प्रदान करते हैं।

जो परिपूर्ण त्यागी है, वह सम्राटों का सम्राट् है।

इस धरा पर त्याग महानतम शक्ति है।

पश्चात्ताप (Repentance)

पश्चात्ताप किये गये पाप अथवा दुष्कृत्य के लिए पछतावा है जो जीवन में नवीन सुधार लाता है।

यह भूतकालीन पापाचरण के प्रति दुःख अथवा खेद का भाव तथा उचित कृत्य करने की इच्छा है।

पश्चात्ताप पापों का नाश करता है। यह हृदय को शुद्ध करता है। पश्चात्तापपूर्ण प्रत्येक अश्रु पवित्रकारक होता है।

पश्चात्ताप एक नये एवं श्रेष्ठ जीवन की ओर गतिशील करता है। इसमें अत्यधिक पवित्रकारक शक्ति होती है।

वास्तविक पश्चात्ताप का अर्थ पाप का पूर्ण त्याग है।

पश्चात्ताप भूतकालिक दुष्कृत्य हेतु गहन दुःख तथा भगवदीय विधान के अनुसार कर्म करने का दृढ़ संकल्प एवं सच्चा प्रयास है।

हृदय एवं आचरण में परिवर्तन के बिना किया गया पश्चात्ताप निरर्थक है। मृत्युशय्या पर किये जाने वाले पश्चात्ताप का कोई ठोस परिणाम प्राप्त नहीं होगा।

पश्चात्ताप दुःख एवं खेदपूर्ण हृदय द्वारा होना चाहिए। मन एवं स्वभाव में गम्भीर तथा पूर्ण परिवर्तन घटित होना चाहिए, अन्यथा इसका कोई उपयोग नहीं है।

पश्चाताप आत्म-भर्त्सना सहित दुष्कृत्य के लिए, खेद करना है तथा पाप से पूर्णतया विमुख होना है।

पछतावा (Penitence) क्षणिक होता है तथा इससे चरित्र अथवा आचरण में परिवर्तन नहीं होता है।

गम्भीर अनुताप (Remorse) हृदय को कचोटने-सन्तप्त करने वाला अपराध-बोध है, इसमें भगवान् से क्षमा की आशा भी नहीं होती है।

खेद (Regret) किसी कष्टप्रद विषय में दुःखी होना है। बिना पश्चात्ताप के दुःख हो सकता है परन्तु बिना दुःख के पश्चात्ताप नहीं होता है। अनुताप (Contrition) सत्पुरुष तथा प्रेम के विरुद्ध किये गये पाप के लिए दुःख है। आत्म-श्लाघा, आत्म-सन्तोष एवं आत्म-स्वीकृति पश्चात्ताप के विपरीतार्थी शब्द हैं।

संकल्प (Resolution)

संकल्प अथवा प्रतिज्ञा दृढ़ निश्चय है। यह स्थैर्य है। यह उद्देश्य की निश्चितता एवं स्थिरता है।

एक संकल्पवान् व्यक्ति दृढ़निश्चयी होता है। उसका निश्चित लक्ष्य होता है। वह लक्ष्य प्राप्ति के प्रयास में स्थिर रहता है। वह अविचलित हुए दृढ़ रहता है। वह साहसी एवं निर्भीक होता है। वह दृढ़ इच्छा शक्ति से सम्पन्न होता है। संकटों अथवा कठिनाइयों के सम्मुख भी वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति में स्थिर एवं दृढ़ रहता है। वह सक्रिय धृति से सम्पन्न होता है।

जो व्यक्ति दृढ़ संकल्प शक्ति से युक्त है, वह अपने समस्त कार्यों में सफलता प्राप्त करता है। असफलता से वह अपरिचित रहता है।

दृढ़ संकल्पशीलता अपनाइए। हे वीर! आगे बढ़िए। आपको सभी प्रयासों में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त होगी। समस्त बाधाएँ शीघ्र ही दूर हो जायेंगी।

दृढ़ संकल्प सर्वशक्तिमान् है। एक दृढ़ संकल्पशील व्यक्ति अपने मार्ग में आने वाले समस्त विघ्न-बाधाओं पर विजय प्राप्त करता है। उसके लिए समस्त कठिनाइयाँ अदृश्य हो जाती हैं। साहस, लगन, अध्यवसाय, धृति एवं शक्ति संकल्प के मित्र हैं।

एक दृढ़ संकल्पशील मनुष्य अथक रूप से क्रियाशील, सतत सजग, एकाग्रचित्त एवं अटल उद्देश्य युक्त होता है। वह सदैव सफलता प्राप्त करता है।

दृढ़ संकल्प आवश्यकता के समय आत्मा द्वारा प्रदत्त सहायता है। दृढ़प्रतिज्ञ एवं संकल्पवान् बनिए। दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते रहिए। अपनी कमर कस लीजिए। निरन्तर आरामशील रहिए। आप समस्त विश्व पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

एक दृढ़ संकल्पशील मनुष्य हिमालय को चूर्णित कर सकता है, अग्नि को निगल सकता है तथा एक क्षण में समुद्र के समस्त जल को पी सकता है। वह एक क्षण में तीनों लोकों में कुछ भी करने में सक्षम हैं। यदि सम्पूर्ण विश्व भी उसका विरोध करे, तो भी वह निर्भीकतापूर्वक आगे बढ़ता है।

समस्त महापुरुष, जिन्होंने महानता अर्जित की है तथा अतिमानवीय कार्य सम्पन्न किये हैं, इस गुण से सम्पन्न थे। जहाँ दृढ़ संकल्प है, वहाँ सक्रिय अप्रतिरोध्य दृढ़ इच्छा शक्ति भी है। संकल्प एवं दृढ़ इच्छा शक्ति साथ-साथ चलते हैं।

दृढ़ संकल्पशील बनिए। अपने संकल्पों का पालन करिए। उन्हें सशक्त करिए। इससे आप अपनी इच्छा-शक्ति का विकास कर सकेंगे।

संसाधनपूर्णता-उपायकुशलता (Resourcefulness)

संसाधनपूर्णता किसी प्रकार के साधनों से सम्पन्न होना है।

एक संसाधनपूर्ण व्यक्ति साधनों, उपायों अथवा युक्तियों से परिपूर्ण होता है। वह कार्य करने की विभिन्न विधियों में दक्ष होता है। वह विपुल साधन-सम्पन्न होता है।

जिस वस्तु का आश्रय लिया जाये, जिस पर निर्भर रहा जाये अथवा सहयोग हेतु जिसे उपलब्ध कराया जाये, उसे संसाधन कहते हैं।

जिस उपाय अथवा साधन का सहायता अथवा सुरक्षा हेतु आश्रय लिया जाये, वह संसाधन है।

उदाहरणतः हम कहते हैं "व्यावसायिक संसाधन", "एक स्त्री का संसाधन धैर्य है", "अक्षय संसाधनों का राष्ट्र", "राम विदग्धमना है अर्थात् उसका मस्तिष्क संसाधनपूर्ण है। वह बिना पूर्व तैयारी के किसी विषय पर व्याख्यान दे सकता है । "व्यास ने दर्शन के संसाधनों का उपयोग किया।" ।

संसाधन वे आर्थिक साधन, धन-सम्पत्ति अथवा उपलब्ध क्षमताएँ भी हैं जिनकी कहीं आपूर्ति की जा सकती है।

जो विदग्धमना है अथवा उपायकुशल है, वह थल सेना का जनरल, जल सेना का एडमिरल तथा वैज्ञानिक उपकरणों का अन्वेषक बन सकता है।

सदाचार (Right Conduct)

नीतिशास्त्र अथवा नैतिक विज्ञान, सदाचार अथवा नैतिकता अथवा कर्तव्य का विवेचन करता है। नीतिशास्त्र नैतिक मूल्यों का विज्ञान है। यह दर्शन की वह शाखा है जो मानवीय चरित्र एवं आचरण से सम्बन्धित है।

आचरण व्यवहार है। प्रकृति, स्वभाव, आचार, व्यवहार, चाल-चलन समानार्थी शब्द हैं। विवेकशील प्राणियों को एक-दूसरे के साथ तथा अन्य प्राणियों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए-यह नीतिशास्त्र की विषय-वस्तु है।

सत्य बोलना, अहिंसा का अभ्यास करना, मनसा वाचा-कर्मणा अन्य व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाना, किसी के प्रति कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करना, किसी के प्रति क्रोध नहीं करना, अपशब्द नहीं बोलना तथा समस्त प्राणियों में भगवद्-दर्शन करना सदाचार है। यदि आप किसी को अपशब्द कहते हैं, अन्य व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाते हैं तो वास्तव में आप स्वयं को ही अपशब्द कह रहे हैं तथा भगवान् की भावनाओं को ही ठेस पहुँचा रहे हैं। हिंसा भक्ति एवं ज्ञान की घातक शत्रु है। यह विभक्त तथा पृथक् करती है। यह आत्मा के एकत्व के अनुभव में बाधक है।

वह कार्य, जिससे दूसरों का हित न होता हो अथवा वह कार्य जिसमें स्वयं को लज्जा अनुभव होती हो, कभी नहीं करना चाहिए। वह कार्य किया जाना चाहिए जिसकी समाज में सराहना की जाती है। यह सदाचार का संक्षिप्त वर्णन है।

भगवान् मनु मनुस्मृति में कहते हैं, "श्रुति-स्मृति के अनुसार आचार (सदाचार) ही सर्वोच्च धर्म है। अतः आत्मज्ञानी द्विज सदैव इसमें संलग्न रहें। इस प्रकार आचार को धर्म का स्रोत जानते हुए सन्त-मनीषी समस्त तपस्या के मूल के रूप में आचार का पालन करते हैं।"

धर्माचरण, सत्य, सद्कार्य, शक्ति एवं समृद्धि सदाचार से उद्भूत होते हैं। आप महाभारत में पायेंगे, "धर्म का लक्षण सदाचार है। सदाचार ही कल्याण अथवा शुभ का लक्षण है। समस्त शिक्षाओं से ऊँचा स्थान सदाचार का है। सदाचार से धर्म का जन्म होता है। धर्म जीवन को पोषित करता है। सदाचार से मनुष्य जीवन, समृद्धि तथा इहलोक एवं हरलोक में यश प्राप्त करता है। जो व्यक्ति समस्त प्राणियों का मित्र है, जो मनसा वाचा-कर्मणा सबके कल्याण में संलग्न है, वही वास्तव में धर्म को जानता है।"

धर्म का तत्त्व अतिसूक्ष्म, गूढ़ एवं जटिल है। इसे समझने में सन्त महापुरुष भी भमित होते हैं। धर्म धन, तृप्ति तथा अन्ततः मोक्ष प्रदान करता है। धर्म का चारों पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष) में प्रथम स्थान है। धर्म

को सामान्यतया कर्तव्य भी कहा जाता है। कोई भी कार्य जो मोक्षप्राप्ति में सहायक है, धर्म है। ऐसा कार्य जो समस्त मनुष्यों के लिए कल्याणकारी है, धर्म है।

वे समस्त कार्य जो किसी भी प्राणी को हिंसा पहुँचाने के उद्देश्य से मुक्त हैं, निश्चितरूपेण नैतिक कहे जा सकते हैं। क्योंकि प्राणियों की समस्त प्रकार के दुःख-कष्टों से रक्षा हेतु ही नैतिक नियम बनाये गये हैं। धर्म को इसलिए धर्म कहा जाता है क्योंकि यह सबकी रक्षा करता है। वस्तुतः नैतिकता समस्त प्राणियों की रक्षा करती है।

सदाचार समृद्धि का मूल है। यह यश में वृद्धि करता है, दीर्घायु प्रदान करता है, समस्त प्रकार की विपत्तियों एवं बुराइयों का नाश करता है। सदाचार को ज्ञान की समस्त शाखाओं में श्रेष्ठ कहा गया है। ज्ञान शक्ति है, परन्तु चरित्र उससे महान् शक्ति है।

सदाचार जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति का साधन भी है। सदाचार के बिना कोई परम लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता है। सदाचार पुण्य प्रदान करता है तथा पुण्य से दीर्घायु प्राप्त होती है। सदाचार देवताओं को प्रसन्न करने की सर्वाधिक प्रभावशाली विधि है। स्वयंभू ब्रह्मा जी ने कहा है, "मनुष्य को समस्त प्राणियों के प्रति करुणा का भाव रखना चाहिए।"

सद्‌गुण आचरण में ही परिलक्षित होते हैं। सज्जन एवं सद्‌गुणी अपने आचरण के कारण ही सज्जन एवं सद्‌गुणी हैं। सज्जन एवं धर्मपरायण व्यक्तियों के कार्यों से ही सदाचार के लक्षण प्राप्त होते हैं। इहलोक एवं परलोक में यश महान् कार्यों से प्राप्त होता है तथा ऐसे महान् कार्य सदाचार पर ही निर्भर होते हैं। मनुष्य अपने आचरण द्वारा ही तीनों लोकों पर विजय प्राप्त कर सकता है। ऐसा कुछ नहीं है जो सदाचारी-सद्‌गुणी व्यक्ति प्राप्त नहीं कर सकते हैं। सत्कार्य करने वाला तथा हितकारी एवं मधुर वचन बोलने वाला अद्वितीय होता है। समस्त व्यक्ति ऐसे मनुष्य का सम्मान करते हैं जो धर्मपूर्वक कार्य करता है, शुभ कार्य करता है यद्यपि वे इस मनुष्य से मिले न हों, मात्र उसके विषय में सुरा ही हो।

जिस व्यक्ति का आचरण अनुचित अथवा बुरा है, वह कभी दीर्घ जीवन प्राप्त नहीं करता है। समस्त प्राणी इस प्रकार के दुराचारी व्यक्ति से भयभीत होते हैं तथा उसके द्वारा पीड़ित होते हैं। अतः यदि व्यक्ति अपनी समृद्धि एवं उन्नति चाहता है, तो उसे सदाचार का मार्ग अपनाना चाहिए तथा धर्मपरायण व्यवहार करना चाहिए। सदाचार एक पापी मनुष्य के भी दुःख-कष्ट को दूर कर सकता है।

एक सदाचारी व्यक्ति के जीवन के कुछ निश्चित आदर्श एवं सिद्धान्त होते हैं जिनका वह दृढतापूर्वक पालन करता है। वह अपनी दुर्बलताओं एवं दोषों का निराकरण कर सदाचार का विकास करता है तथा एक सात्विक व्यक्ति बन जाता है। वह अपने माता-पिता, शिक्षकों, आचार्यों, वयोवृद्ध जनों, बहिनों-भाइयों, मित्रों, सम्बन्धियों, अपरिचितों तथा अन्य समस्त प्राणियों के प्रति व्यवहार में अत्यन्त सावधान रहता है। वह साधु-महात्माओं के सत्संग से तथा सद्ग्रन्थों के गहन स्वाध्याय से यह जानने का प्रयास करता है कि क्या उचित है एवं क्या अनुचित है, तदुपरान्त वह प्रसन्नतापूर्वक धर्म के मार्ग पर चलता है।

एक सदाचारी व्यक्ति सदैव समस्त प्राणियों के हित के विषय में सोचता है। वह अपने पड़ोसियों एवं अन्य व्यक्तियों के साथ प्रेमपूर्वक रहता है। वह अन्य व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाता है तथा कभी झूठ नहीं बोलता है। वह ब्रह्मचर्य का पालन करता है। वह मन की दुष्प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण रखता है तथा सदाचार के अभ्यास द्वारा स्वयं को परमात्मा से एकत्व के आनन्द की प्राप्ति हेतु तैयार करता है।

एक बार एक साधक महर्षि वेदव्यास के पास गया और कहने लगा, "महर्षि, आप भगवान् विष्णु के अवतार हैं। मैं दुविधा में हूँ। मैं 'धर्म' शब्द का वास्तविक अभिप्राय नहीं समझ पा रहा हूँ। कुछ कहते हैं कि यह

सदाचार है। अन्य कहते हैं जो श्रेय (मोक्ष) एवं आनन्द की ओर ले जाये, वह धर्म है। जो कार्य पतन की ओर ले जाये, वह अधर्म है। भगवान् कृष्ण कहते हैं कि सन्त-महापुरुष भी यह पूर्णतया समझने में असमर्थ होते हैं कि धर्म क्या है? अधर्म क्या है? मैं भ्रमित हूँ। कृपया मुझे धर्म का सरल शब्दों में अभिप्राय समझाइए जिससे मैं अपने कार्यों में धर्म का पालन कर सकूँ।" महर्षि व्यास ने उत्तर दिया, "हे साधक! सुनो, मैं तुम्हें एक सरल युक्ति बताऊँगा। कोई भी कार्य करते समय इसे स्मरण रखना। दूसरों के साथ वही व्यवहार करो जैसा तुम अपने लिए चाहते हो। इस नियम का सावधानीपूर्वक पालन करो। तुम समस्त कठिनाइयों-कष्टों से मुक्त हो जाओगे। यदि तुम इसका पालन करते हो, तो तुम किसी को दुःख नहीं पहुँचाओगे। अपने दिन- पतिदिन के जीवन में इसका अभ्यास करो। यदि तुम सौ बार भी असफल होते हो, कोई बात नहीं। तुम्हारे पुराने संस्कार एवं अशुभ वासनाएँ, तुम्हारे वास्तविक शत्रु है हो। जारी में बाधा-स्वरूप खड़े हो जायेंगे। परन्तु तुम दृढतापूर्वक अभ्यास करते रहो। तुम्हें साक्ष्य प्राप्ति में अवश्यमेव सफलता मिलेगी।" साधक ने महर्षि व्यास के उपदेश तुम्हें अक्षरशः पालन किया तथा मुक्ति को प्राप्त हुआ।

यह एक अत्यन्त श्रेष्ठ उक्ति है। सदाचार का सार इस कथन में निहित है। यदि व्यक्ति सावधानीपूर्वक इसका अभ्यास करता है, तो वह कभी अनुचित कार्य नहीं करेगा। ईश्वरीय इच्छा के अनुरूप कार्य करना उचित है, उसके विपरीत कार्य करना अनुचित है।

भगवान् एवं धर्म अविभाज्य हैं। धर्माचरण ही समस्त मनुष्यों की विशिष्टता है तथा इसके माध्यम से वे प्रगति-उन्नति करते हुए दिव्यत्व को प्राप्त करते हैं। मनुष्य अपनी जाति, वर्ण एवं स्थिति के अनुसार धर्म का पालन करता हुआ अन्ततः जीवन के परम लक्ष्य 'आत्म-साक्षात्कार' को प्राप्त करता है जिससे उसे अनन्त अखण्ड आनन्द, परम शान्ति, सर्वोच्च ज्ञान, शाश्वत तृप्ति एवं अमरत्व की प्राप्ति होती है। आत्म-साक्षात्कार हेतु नैतिक पूर्णता एक आवश्यक शर्त है।

आध्यात्मिकता नैतिकता पर निर्भर है, नैतिकता आध्यात्मिकता पर निर्भर है। नैतिकता का आधार वेदान्त है। उपनिषद् कहते हैं, "आपका पड़ोसी वस्तुतः आपका अपना आत्मा ही है। भ्रम अथवा माया ही आपको उससे पृथकत्व का बोध कराती है।" अद्वैतिक एकत्व अथवा आत्मा के एकत्व की अनुभूति का आधार सदाचार है। **"सर्वं खल्विदं ब्रह्म**-सब कुछ ब्रह्म ही है। यहाँ नानात्व नहीं है।" नैतिक पूर्णता ही आपको इस वेदान्तिक सत्य के अनुभव हेतु तैयार करती है।

सदाचार की महिमा

जिस व्यक्ति ने सदाचार अथवा यम-नियम के सतत अभ्यास द्वारा नैतिक परिपूर्णता प्राप्त कर ली है, उसके व्यक्तित्व में चुम्बकीय आकर्षण होता है। चरित्र व्यक्ति को एक दृढ़ व्यक्तित्व प्रदान करता है। एक सच्चरित्र व्यक्ति का सभी सम्मान करते हैं। नैतिक रूप से परिपूर्ण व्यक्तियों का सर्वत्र आदर होता है। सच्चा, ईमानदार, निष्कपट, सत्यनिष्ठ एवं उदारहृदयी व्यक्ति सबका सम्माननीय होता है तथा सबको प्रभावित करने में सक्षम होता है। सात्विक गुण मनुष्य को दिव्य बनाते हैं। जो सत्य बोलता है तथा ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह एक महान् व्यक्तित्व का स्वामी बनता है। उसके प्रत्येक शब्द में शक्ति होती है तथा अन्य व्यक्ति उससे प्रभावित होते हैं। यदि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास करना चाहता है, तो चरित्र निर्माण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। ब्रह्मचर्य के बिना एक प्रभावशाली व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं है।

मनुष्य की मृत्यु हो जाती है परन्तु उसका चरित्र, उसके विचार विद्यमान रहते हैं चरित्र ही मनुष्य को वास्तविक बल एवं शक्ति प्रदान करता है। चरित्र शक्ति है। चरित्र के बिना, ज्ञान की प्राप्ति असम्भव है। इस विश्व में चरित्रहीन व्यक्ति मृत व्यक्ति के समान ह है; समाज उसकी अवहेलना एवं तिरस्कार करता है। यदि आप जीवन में सफलता प्रा करना चाहते हैं, अन्य व्यक्तियों को प्रभावित करना चाहते हैं, आध्यात्मिक पथ पर प्रगति करना चाहते हैं, भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको निर्मल-पावन चरित्र का विकास करना होगा। मनुष्य की मृत्यूपरान्त उसका चरित्र शेष रहता है। श्री शंकर, बुद्ध, जीसस एवं अन्य प्राचीन ऋषियों का आज भी स्मरण किया जाता है क्योंकि उनके चरित्र महान् थे। चरित्र प्रबल आत्म-बल है। यह एक सुन्दर पुष्प की भाँति है जो अपनी सुगन्ध चहुँओर बिखेरता है। सद्‌गुणों एवं सच्चरित्र से सम्पन्न व्यक्ति का व्यक्तित्व अत्यन्त भव्य होता है। व्यक्तित्व चरित्र ही है। एक व्यक्ति एक कुशल कलाकार, दक्ष गायक, कवि अथवा महान् वैज्ञानिक हो सकता है, परन्तु चरित्र के बिना वह समाज में सम्मान प्राप्त नहीं कर सकता है।

आपको शिष्ट, विनीत एवं सभ्य बनना चाहिए। दूसरों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। "शिष्ट आचरण एवं मधुर शब्दों ने अनेक कठिन समस्याओं का समाधान किया है।" जो व्यक्ति अन्य व्यक्तियों का सम्मान करता है, वह उनसे सम्मान प्राप्त करता है। विनम्रता से स्वयमेव सम्मान प्राप्त होता है। विनम्रता ऐसा सद्‌गुण है जो दूसरों का हृदय जीत लेता है। एक विनम्र व्यक्ति एक शक्तिशाली चुम्बकवत् होता है।

ध्यानपूर्वक पढ़िए, प्राचीन ऋषि विद्यार्थियों को उनके अध्ययन की समाप्ति के अवसर पर क्या उपदेश-निर्देश देते थे-"सत्य बोलिए। अपने कर्तव्य का पालन करिए। वेदाध्ययन में प्रमाद मत करिए। सत्य एवं कर्तव्य पथ से विचलित मत होइए। अपने कल्याण एवं समृद्धि की उपेक्षा मत कीजिए। वेदों के अध्ययन एवं शिक्षण की उपेक्षा नहीं कीजिए। भगवान् एवं पूर्वजों के प्रति अपने कर्तव्यों में प्रमाद नहीं करिए। आपकी माता आपके लिए भगवद् तुल्य हो (मातृ देवो भव)। पिता आपके लिए भगवद् तुल्य हो (पितृ देवो भव)। आचार्य आपके लिए भगवद् तुल्य हो (आचार्य देवो भव)। केवल पवित्र कर्म ही करिए। अपने से श्रेष्ठ ब्राह्मणों का आसन-अर्ध्यादि दे कर सत्कार करिए। श्रद्धापूर्वक दान करिए। अश्रद्धापूर्वक दान नहीं करिए। प्रसन्नता, विनम्रता, भय एवं दयापूर्वक दीजिए।"

धर्मपरायणता शाश्वत है। जीवन संकट में पड़ने पर भी धर्म के मार्ग को मत छोड़िए। किसी भौतिक लाभ की प्राप्ति हेतु धर्म का त्याग मत कीजिए। एक सदाचारी जीवन एवं पावन अन्तरात्मा जीवन एवं मृत्यु दोनों को सुखद बनाते हैं। एक पवित्र धर्मपरायण व्यक्ति एक शक्तिशाली सम्राट् से अधिक श्रेष्ठ है। भगवान् एक धर्मपरायण व्यक्ति से बहुत अधिक प्रसन्न होते हैं। भगवान् कृष्ण कहते हैं, "यदि एक दुराचारी अनन्य भाव से मेरा भजन करता है, उसे साधु ही समझना चाहिए क्योंकि उसने उचित संकल्प लिया है।" एक अत्यन्त क्रूर-दुराचारी का भी उद्धार सम्भव है, यदि वह दृढ़संकल्पवान् हो कर आध्यात्मिक पथ पर चलना प्रारम्भ कर देता है।

प्रिय मित्रो, सदाचार के नियमों के अनुसार अपने कर्तव्यों का पालन कीजिए। अपने सभी प्रकार के दैनिक कर्तव्यों को निष्ठापूर्वक करिए। शंका होने पर सन्त-महात्माओं का परामर्श लीजिए। अपने चरित्र का निर्माण करिए। यह आपको जीवन में सफलता प्रदान करेगा। पुरानी बुरी आदतों को छोड़ने के लिए प्रतिदिन कड़ा संघर्ष करिए। स्वस्थ-अच्छी आदतों का प्रतिदिन विकास कीजिए। चरित्र आपको जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता प्रदान करेगा। चरित्र ही आपका वास्तविक अस्तित्व है। सदाचार के अभ्यास हेतु कठोर प्रयास करिए। जोंक के समान दृढ़तापूर्वक सदाचार के मार्ग पर डटे रहिए। इसके अभ्यास से इसी क्षण सच्चिदानन्द अवस्था का अनुभव करिए। चरित्र आपको आत्मिक आनन्द एवं आत्म-साक्षात्कार प्रदान करे।

धर्मपरायणता-जीवन का प्राण (Righteousness-The Breath of Life)

धर्मपरायणता वह कल्पवृक्ष है जिस पर शान्ति, सुख एवं समृद्धि के फल विपुलता में विकसित होते हैं। धर्मपरायण व्यक्ति सुख प्राप्त करते हैं। वे धर्म के दिव्य सिद्धान्तों के अनुसार जीवन व्यतीत करने में परम सन्तोष का अनुभव करते हैं। धर्मपरायणता वह अग्नि है जो संसार रूपी काष्ठ के ढेर को पल भर में भस्मीभूत कर देती है। एक धर्मपरायण व्यक्ति यहीं अभी मोक्ष प्राप्त करता है।

धर्मपरायण बनिए। आप भुक्ति एवं मुक्ति दोनों का आनन्द प्राप्त करेंगे। धर्मपरायणता आपको भगवान् के समीप ले जाती है। जब आप दृढ़तापूर्वक धर्मपरायण जीवन व्यतीत करते हैं, तो आप भगवान् के सतत सान्निध्य में रह रहे होते हैं; क्योंकि भगवान् स्वयं धर्मपरायणता है।

धर्मविमुख व्यक्ति को शान्ति एवं सुख प्राप्त नहीं होता है। **सत्यमेव जयते नानृतम्** -सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। एक धर्मविमुख व्यकि असफलता एवं अत्यधिक दुःख को प्राप्त होता है। उसकी दशा वस्तुतः दयनीय है। उसका जीवन चिन्ता, भय, खेद एवं पश्चात्ताप से भरा होता है। वह यहाँ कभी सुख प्राप्त नहीं कर सकता है क्योंकि उसका सुख जगत् के भ्रामक पदार्थों पर निर्भर है। सुख धर्मपरायणता का ही दूसरा पहलू है; जहाँ धर्मपरायणता है, वहाँ सुख भी निवास करता है।

सत्य के सोपान पर आरोहण करिए तथा परम सत्य के शिखर पर पहुँचिए। प्रेम की ज्योति जलाइए तथा प्रत्येक हृदय के वासी उन प्रेम के देवता के दर्शन करिए। पवित्रता के वस्त्र धारण करिए तथा नित्य-शुद्ध आत्मा के साम्राज्य में प्रवेश करिए। एकता से अनुप्राणित होइए तथा सर्वव्यापी ब्रह्म, एकमेव अद्वितीय तत्त्व से एकत्व प्राप्त करिए।

धरा पर आपके जीवन का यही लक्ष्य एवं उद्देश्य है। इस उद्देश्य हेतु आपने मानव रूप में जन्म लिया है, खाने, पीने एवं भोग भोगने हेतु नहीं। प्रत्येक क्षण मूल्यवान् है। प्रत्येक क्षण चुपचाप निकल जाता है एवं शाश्वतता के सागर में समा जाता है। आप इसे पुनः प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अच्छा जीवन व्यतीत करिए। सबसे प्रेम करिए।

वैश्विक प्रेम धर्मपरायणता की नींव है। नि:स्वार्थ सेवा आधारशिला है। विवेक, वैराग्य, सद्‌गुणों का अर्जन एवं तीव्र मुमुक्षुत्व स्तम्भ हैं। इनसे शाश्वत आनन्द, शान्ति, समृद्धि एवं अमरत्व का मन्दिर निर्मित होता है। इस मन्दिर में परमपिता परमात्मा निवास करते हैं। उनकी आराधना करिए। आप शीघ्र ही उन्हें प्राप्त करेंगे।

आप तब ही वास्तविक रूप में धर्मपरायण हो सकते हैं जब आप इस तथ्य के प्रति पूर्णतः आश्वस्त होते हैं कि सच्चा सुख सांसारिक वस्तु-पदार्थों में नहीं अपितु भगवान् में ही प्राप्त हो सकता है। यह निराशावादिता नहीं है। यह भव्य आशावादिता है। आपको सुख-भोग के साधन-वस्तुएँ कभी-कभी प्राप्त होंगे, बाद में आप उन्हें खो देंगे तथा प्रायः वे आपको प्राप्त नहीं होंगे। परन्तु भगवान् के साथ ऐसा नहीं है। वे तो आपका आत्मा हैं। वे आपकी कण्ठ-शिरा से भी अधिक समीप हैं। वे आपकी श्वासों से भी अधिक निकट हैं। आप उनके बिना अस्तित्ववान् नहीं रह सकते हैं। यदि आप यह समझ लेते हैं कि सुख-आनन्द केवल भगवान् में ही है, तथा आप उनके सतत सान्निध्य की प्राप्ति हेतु प्रयास करते हैं तो आप सदैव आनन्द में निमग्न रहेंगे। क्या यह उच्च स्तर की आशावादिता नहीं है?

यह आनन्द प्राप्त करने हेतु आपको क्या करना चाहिए? आपको सांसारिक वस्तु-पदाथों के प्रति उदासीन होना होगा। इससे आपको कोई हानि नहीं है। क्या चारपाई से खटमल को बाहर निकाल फेंकने में कोई हानि है? क्या आपके पैर में चुभे काँटे को बाहर निकाल फेंकने से आपको कोई हानि होती है? इन्द्रिय-सुखों की वासना-तृष्णा का त्याग स्वयं में एक आनन्द है। इस प्रकार के त्याग से धर्मपरायणता का उद्भव होता है।

एक धर्मपरायण व्यापारी लोभी नहीं होगा। वह धन एवं वस्तुओं का संचय नहीं करेगा। वह झूठ, कालाबाजारी तथा वस्तुओं में मिलावट आदि में संलग्न नहीं होगा। वह अपने ग्राहकों में भगवान् के दर्शन करेगा। वह भगवद्-आराधना के भाव से अपने व्यवसाय का संचालन करेगा। ऐसे व्यवसायियों की जय हो। आज विश्व को इनकी अत्यन्त आवश्यकता है।

एक धर्मपरायण मालिक-नियोक्ता अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को भगवद्-मार्ग पर चलने वाले सह-पथिकों के रूप में देखेगा। वह उनके साथ सौहार्द एवं प्रेमपूर्वक व्यवहार करेगा। वह जैसे अपनी देखभाल करता है, उनकी भी देखभाल करेगा। वह सबमें भगवान् के दर्शन करेगा।

एक धर्मपरायण कर्मचारी भी इस प्रकार विचार करेगा कि उसका मालिक-नियोक्ता भगवान् का ही अंश है। वह उसकी श्रद्धा एवं भक्तिपूर्वक सेवा करेगा।

प्रत्येक धर्मपरायण व्यक्ति जीवन के लक्ष्य 'भगवद्-साक्षात्कार' की प्राप्ति हेतु दिन-रात प्रयास करेगा तथा इस प्रकार विश्व के कल्याण एवं शान्ति हेतु अपना योगदान देगा। वह चहुँओर शान्ति का प्रसार करेगा। वह मानवता के कल्याण हेतु कार्य करेगा। ऐसे व्यक्ति का देवता गण भी अत्यधिक सम्मान करते हैं। वह वस्तुतः धरा पर भगवद्-स्वरूप ही है। वह सर्वपूजनीय-आराधनीय है।

आप सभी धर्मपरायण, पवित्र, तेजस्वी एवं ज्ञानवान् बनें। आप इसी जन्म में जीवन्मुक्त सन्तों एवं योगियों की भाँति विभासित हों। भगवान् आप सबको सुस्वास्थ्य, दीर्घायु, शान्ति, समृद्धि एवं कैवल्य मोक्ष से आशीर्वादित करें।

आत्म-विश्लेषण (Self-analysis)

आत्म-विश्लेषण आत्म-परीक्षण है। यह अन्तर्निरीक्षण के माध्यम से स्वयं को परखना है। प्रतिदिन अपने विचारों, शब्दों एवं कार्यों की जाँच करना अच्छा है।

दिन भर किये गये कार्यों का रात्रि में अवलोकन करिए तथा प्रातःकाल दिन में किये जाने वाले कार्यों को निश्चित करिए।

अपने विचारों, शब्दों एवं कार्यों पर दृष्टि रखिए। सावधान रहिए। सजग रहिए । उद्यमशील बनिए। सतर्क रहिए।

रात्रि में सोने से पूर्व अपने दिन भर के विचारों, शब्दों एवं कार्यों का परीक्षण करिए। दैनिक आत्म-विश्लेषण अथवा आत्म-परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। केवल तब ही आप अपने दोषों का निराकरण कर सकते हैं तथा आध्यात्मिकता में शीघ्र विकसित हो सकते हैं। एक माली नन्हें पौधों की अत्यन्त सावधानीपूर्वक देखभाल करता है। वह प्रतिदिन खरपतवार हटाता है। वह पौधों के चारों ओर एक मजबूत बाड़ लगाता है। वह उचित समय पर उन्हें पानी देता है। इस कारण से ही पौधे सुन्दर रूप में विकसित होते हैं तथा शीघ्र फल प्रदान करते हैं। इसी प्रकार आपको प्रतिदिन अन्तर्निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण के द्वारा अपने दोषों को ढूँढ़ना चाहिए तथा उचित विधियों द्वारा उनका निराकरण करना चाहिए। यदि एक विधि असफल होती है, तो आपको संयुक्त विधि अपनानी होगी। यदि प्रार्थना असफल होती है, तो आपको सत्संग, प्राणायाम, ध्यान, आहार-नियन्त्रण तथा आत्मविचार आदि विधियों का आश्रय लेना चाहिए। आपको चेतन मन की सतह पर प्रकट होने वाली अहंकार,

दम्भ, काम, क्रोधादि रूपी विशाल लहरों को ही केवल नष्ट नहीं करना चाहिए अपितु अवचेतन मन के कोनों में छिपे उनके सूक्ष्म संस्कारों का भी नाश करना चाहिए। तभी आप पूर्णतया सुरक्षित हैं।

ये सूक्ष्म संस्कार अत्यन्त विकट होते हैं। ये चोरों की भाँति आपके भीतर छिपे रहते हैं तथा आप पर तब आक्रमण करते हैं जब आप सो रहे हैं अर्थात् सजग नहीं हैं, जब आपका वैराग्य क्षीण होने लगता है, जब आप आध्यात्मिक अभ्यासों में थोड़े शिथिल हो जाते हैं तथा जब आपको उत्तेजित किया जाता है। यदि आप दैनिक आत्म-निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण नहीं कर रहे हैं तथा अनेक अवसरों पर अत्यधिक उत्तेजित किये जाने पर भी ये दोष आपमें प्रकट नहीं होते हैं, तब आप निश्चिन्त हो सकते हैं कि अब इनके सूक्ष्म संस्कार भी मिट चुके हैं। अब आप सुरक्षित हैं। आत्म-निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण के अभ्यास हेतु धैर्य, अध्यवसाय, जोंक के समान दृढ़ लगनशीलता, लौह-संकल्प एवं इच्छा शक्ति, सूक्ष्म बुद्धि एवं साहस की आवश्यकता होती है। परन्तु इससे आपको अपरिमित मूल्य का फल प्राप्त होगा। वह मूल्यवान् फल है-अमरत्व, बरम शान्ति तथा अनन्त आनन्द। इसके लिए आपको बड़ा मूल्य चुकाना होगा। इसलिए तब आप दैनिक अभ्यास करते हैं, तो आपको शिकायत करते हुए बड़बड़ाना नहीं चाहिए । आपको सम्पूर्ण मन, हृदय, बुद्धि एवं आत्मा से आध्यात्मिक साधना करनी चाहिए। केवल तभी शीघ्र सफलता सम्भव है।

प्रतिदिन आध्यात्मिक दैनन्दिनी का पालन करिए तथा रात्रि में आत्म-विश्लेषण करिए । उसमे लिखिए आज दिन भर में आपने कितने अच्छे कार्य किये तथा कौनसी त्रुटियाँ की। प्रात:काल संकल्प करिए, "मैं आज क्रोध नहीं करूँगा। मैं आज ब्रह्मचर्य का अभ्यास करूँगा। मैं आज सत्य बोलूँगा।"

आत्म-नियन्त्रण (Self-control)

आत्म-नियन्त्रण स्वयं पर किया गया नियन्त्रण अथवा संयम है।

आत्म-नियन्त्रण अपनी प्रवृत्तियों, भावनाओं, इच्छाओं, इन्द्रियों एवं मन पर नियन्त्रण रखने की शक्ति अथवा आदत है।

प्रथमतः स्वयं पर नियन्त्रण करिए। तभी आप दूसरों पर नियन्त्रण रख सकते हैं। आत्म-नियन्त्रण मन को स्पष्टता प्रदान करता है, विवेक को दृढ़ करता है तथा चरित्र को उन्नत बनाता है। यह आपको मुक्ति, शान्ति एवं आनन्द प्रदान करता है। यह आपकी इच्छा शक्ति को दृढ़ करता है।

आत्मजयी व्यक्ति एक राष्ट्र पर विजय पाने वाले सेना के सर्वोच्च अधिकारी से श्रेष्ठ है।

आत्म-नियन्त्रण वह कुंजी है जो शाश्वत आनन्द एवं अमरत्व के साम्राज्य का द्वार खोलती है।

स्वयं पर विजय से अधिक भव्य-महिमामय कोई अन्य विजय नहीं है। अपनी इन्द्रियों एवं मन पर नियन्त्रण रखिए। आप आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे। आत्म-संयम रखिए। स्वयं को जीतिए। जब तक आप ऐसा नहीं करते हैं, आप इन्द्रियों के दास बने रहेंगे।

जो व्यक्ति अपनी इच्छाओं-वासनाओं के अधीन है, वह इस धरा का सर्वाधिक अधम दास है। जो व्यक्ति अपनी वासनाओं, इच्छाओं, तृष्णाओं एवं इन्द्रियों पर शासन करता है, वह वास्तव में सम्राटों का सम्राट् है। वह स्व-

शासन व्यवस्था का परम शासक अथवा परमाध्यक्ष है। किरीट-मुकुट आदि उसके लिए कुछ नहीं हैं। उसका शासन सर्वश्रेष्ठ शासन है।

प्रत्येक प्रलोभन जिस पर विजय पायी जाती है; प्रत्येक बुरा विचार जिसका दमन किया जाता है; प्रत्येक वासना अथवा तृष्णा जिसका नाश किया जाता है; प्रत्येक कटु शब्द जिसे रोका जाता है; प्रत्येक दुष्कृत्य जिस पर अंकुश लगाया जाता है, शाश्वत शान्ति एवं आनन्द का मार्ग प्रशस्त करता है।

जो स्वयं पर शासन कर सकता है, वही अन्यों पर शासन कर सकता है। आत्म-नियन्त्रण आपको कठिनाइयों, कष्टों एवं संकटों का सामना करने की शक्ति देता है।

आत्म-नियन्त्रण सर्वोच्च पुण्य प्रदान करता है। आत्म-नियन्त्रण मनुष्य का शाश्वत कर्तव्य है। आत्म-नियन्त्रण दान एवं वेदाध्ययन से श्रेष्ठ है।

आत्म-नियन्त्रण आपकी ऊर्जा-स्फूर्ति में वृद्धि करता है। यह अत्यन्त पवित्र है। इसके अभ्यास से आप समस्त पापों से मुक्त होंगे तथा असीम ऊर्जा एवं सच्चरित्र का उपहार प्राप्त करेंगे। आप परम धन्यता प्राप्त करेंगे।

आत्म-नियन्त्रण के समान महत्त्वपूर्ण अन्य कोई कर्तव्य नहीं है। यह विश्व का सर्वोच्च सद्गुण है। आत्म-नियन्त्रण द्वारा आप इहलोक एवं परलोक में परम आनन्द का अनुभव प्राप्त कर सकते हैं।

आत्म-नियन्त्रण रखने वाला व्यक्ति प्रसन्नतापूर्वक सोता है, प्रसन्नतापूर्वक जागता है तथा इस जगत् में प्रसन्नतापूर्वक संचरण करता है। वह सदैव प्रसन्न रहता है। आत्म-नियन्त्रण समस्त नियमों-प्रतिज्ञाओं में सर्वश्रेष्ठ है।

जो व्यक्ति आत्म-नियन्त्रण का अभ्यास नहीं करता है, वह सदैव कष्ट पाता है। अपनी ही त्रुटियों के कारण वह स्वयं के लिए अनेक कष्टों-विपत्तियों को आमन्त्रित करता है।

क्षमा, धैर्य, अहिंसा, निष्पक्षता, सत्य, निष्कपटता, इन्द्रिय-संयम, विवेक, सौम्यता, विनीतता, दृढ़ता, उदारता, क्रोधमुक्तता, सन्तोष, मधुर वाणी, परोपकारिता तथा द्वेषराहित्य-इन सब सद्गुणों का होना आत्म-नियन्त्रण कहलाता है।

इसमें गुरु के प्रति श्रद्धा-सम्मान एवं सबके प्रति करुणा का भाव भी समाहित है। आत्म-नियन्त्रण रखने वाला व्यक्ति स्तुति एवं निन्दा से परे रहता है। वह भ्रष्ट आचरण, अपकीर्ति, असत्य, काम-वासना, लोभ, गर्व, अहंकार, भय, ईर्ष्या तथा अपमान से स्वयं को मुक्त रखता है।

वह स्वयं को निन्दा का पात्र नहीं बनाता है। वह ईर्ष्यामुक्त होता है।

वैदिक तपस्या से प्रादुर्भूत ब्रह्म का शाश्वत लोक, जो हृद्-गुहा में छिपा है, आत्म-नियन्त्रण से ही प्राप्त किया जा सकता है।

स्वयं पर नियन्त्रण रखने वाला व्यक्ति भौतिक जगत् के सम्बन्धों एवं भावनाओं की आसक्ति में बद्ध नहीं होता है।

जहाँ ऐसा व्यक्ति रहता है, वह स्थान वन ही है। वह एक पवित्र स्थान है। आत्म-नियन्त्रण रखने वाले व्यक्ति के लिए वन का क्या उपयोग है? आत्म-नियन्त्रण नहीं रखने वाले व्यक्ति के लिए भी वन का क्या उपयोग है?

स्वयं पर नियन्त्रण रखने वाला व्यक्ति परलोक में महान् पुरस्कार प्राप्त करता है। वह इस संसार में भी सम्मान प्राप्त करता है तथा बाद में भी उच्च स्थिति प्राप्त करता है। वह ब्रह्मत्व प्राप्त करता है। वह मोक्ष प्राप्त करता है।

आत्म-त्याग (Self-denial)

आत्म-त्याग स्वयं का अर्थात् स्वयं की इच्छाओं का त्याग है। यह स्वयं के परम कल्याण अथवा दूसरों के हित-संवर्धन हेतु अपनी इच्छाओं अथवा प्रवृत्तियों की तृप्ति नहीं होने देना है। विशेषतया यह नैतिक अथवा आध्यात्मिक उद्देश्य से स्वयं की इच्छाओं को तृप्त करने की अस्वीकृति है।

जितना अधिक आप स्वयं के लिए कुछ अस्वीकृत करते हैं, उतना अधिक आप भगवान् से प्राप्त करेंगे तथा उतना ही अधिक आध्यात्मिकता में विकसित होंगे।

योग-वेदान्त की पाठशाला की प्रथम शिक्षा आत्म-त्याग ही है।

एक उच्च एवं सुदृढ़ चरित्र निर्माण हेतु आत्म-त्याग अत्यावश्यक है। यह सद्गुणों का श्रेष्ठ रक्षक है।

हे आध्यात्मिक वीर! हे साहसी योद्धा ! आत्म-त्याग का अभ्यास करिए। अपनी निम्न प्रवृत्तियों, संवेगों एवं इच्छाओं के विरुद्ध युद्ध करिए तथा शाश्वत आनन्द के असीम साम्राज्य में प्रवेश कर आत्म-सम्राट् बनिए।

इसका अभ्यास नहीं करने का परिणाम स्वयं को उच्चतर कल्याण से वंचित रखना है।

आत्म-त्याग का अभ्यास करिए। आत्म-त्याग की शिक्षा दीजिए। आप विश्व के लिए एक श्रेष्ठ भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

इस सदगुण का अभ्यास सर्वोच्च शिक्षा है। इसके बिना अन्य सब शिक्षा भूसे के समान व्यर्थ है।

जानिए कि स्वयं के लिए कुछ अस्वीकृत कैसे किया जाये। यह समस्त सफलता का रहस्य है। जो अपनी अभिलाषाओं, वासनाओं, तृष्णाओं के विरुद्ध सतत सफलतापूर्वक संघर्षरत रहता है तथा उन्हें सदैव अपने नियन्त्रण में रखता है, वह महानतम विजेता अथवा वीर है।

परिवर्जन तथा आत्म-संयम आत्म-त्याग के समानार्थी शब्द हैं।

आत्म-परीक्षण (Self-examination)

आत्म-परीक्षण विशेषतया अपनी धार्मिक भावनाओं एवं कर्तव्यों के सम्बन्ध में अपने आचरण, उद्देश्य, मानसिक एवं नैतिक स्थिति तथा विचारों का परीक्षण है।

आत्म-परीक्षण में आत्म-निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण समाहित है। आत्म-परीक्षण आपको अपने वास्तविक स्वरूप के ज्ञान की ओर ले जायेगा। यह आपके हृदय को शुद्ध करेगा तथा आपकी समस्त त्रुटियों, दोषों एवं दुर्बलताओं को दूर करेगा। यह आपको ज्ञान प्रदान करेगा।

जब आप एकान्त में हैं, तो अपने विचारों का निरीक्षण करिए। अपने हृदय का परीक्षण करिए। अपने दोषों एवं दुर्बलताओं को खोजिए।

सोने से पूर्व उस दिन के आपके विचारों, शब्दों एवं कार्यों को जाँचिए-परखिए। यह जानिए कि "आज मैंने किस दुर्गुण पर विजय प्राप्त की है?" "आज मैंने कौनसे प्रलोभन का प्रतिरोध किया है?" "कौनसे सद्गुण का विकास किया है?" "कौनसी इन्द्रिय पर नियन्त्रण रखा है?" आप शीघ्र ही आध्यात्मिक विकास करेंगे।

आत्म-सहायता (Self-help)

आत्म-सहायता अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अपनी शक्तियों एवं क्षमताओं का प्रयोग है।

आत्म-विश्वास (Self-confidence)

आत्म-विश्वास स्वयं में, स्वयं की शक्तियों में, निर्णय एवं विचारों में विश्वास होने की स्थिति अथवा गुण है। आत्म-विश्वास आत्म-निर्भरता है। आत्म-विश्वास महानता का लक्षण है। एक आत्मविश्वासी व्यक्ति सदैव सफलता एवं विजय प्राप्त करेगा।

आत्म-निग्रह (Self-restraint)

आत्म-निग्रह संकल्पशक्ति द्वारा स्वयं की निम्न प्रकृति अथवा वासनाओं अथवा इन्दियों पर नियन्त्रण है। यह स्वयं की इच्छाओं अथवा तृष्णाओं का निग्रह है। आत्म-निग्रह आत्म-नियन्त्रण है।

आत्मानुशासन (Self-discipline)

आत्मानुशासन शरीर, इन्द्रियों एवं मन का अनुशासन है। आत्मानुशासन द्वारा शरीर, इन्द्रियों एवं मन को अपने नियन्त्रण में रखा जाता है। आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, यम, नियम आदि आत्मानुशासन में सहायक होते हैं। इसके द्वारा भावनाओं एवं संवेगों पर पूर्ण नियन्त्रण रखा जाता है।

आत्म-सुधार (Self-improvement)

स्वयं पर कार्य करिए। स्वयं का सुधार करिए। स्वयं को जानिए। सद्गुणों द्वारा अपने हृदय को सुदृढ़ बनाइए। अपने शरीर, इन्द्रियों एवं मन को अनुशासित रखिए। प्रतिदिन तथा शीघ्र विकसित होइए।

स्वयं को उपयोगी ज्ञान द्वारा प्रबुद्ध बनाइए। बुरे विचारों, बुरे शब्दों एवं बुरी आदतों का नाश करिए तथा अच्छे विचारों, अच्छे शब्दों एवं अच्छी आदतों का विकास कीजिए।

कम बोलिए। अधिक सुनिए। एकान्त में मनन करिए। सन्तों, महापुरुषों एवं योगियों के सदुपदेशों को सुनिए।

शुभ संकल्प लीजिए। दृढ़तापूर्वक उनका पालन करिए। उन्हें सशक्त बनाइए। समय व्यर्थ मत गँवाइए। समय अत्यन्त मूल्यवान् है। खाली समय का अपने अधिकतम लाभ हेतु सदुपयोग कीजिए। जप करिए। ध्यान का अभ्यास करिए। स्वाध्याय करिए। सद्गुणों का अर्जन करिए। अपनी धनार्जन-क्षमता में वृद्धि करिए। समाज की सेवा करिए। राष्ट्र की सेवा करिए। बड़ों की सेवा करिए। गुरुजनों की सेवा करिए। माता-पिता की सेवा करिए। रोगियों की सेवा करिए। निर्धनों की सेवा करिए। आपका हृदय अतिशीघ्र पवित्र हो जायेगा।

अपने चरित्र एवं आचरण को परखिए। अपने हृदय का अध्ययन-निरीक्षण करिए। सन्त-महापुरुषों की छवि को सदैव अपने मन में रखिए। उनकी शिक्षाओं एवं उपदेशों का स्मरण करिए। उनके उपदेशों-निर्देशों का पालन करिए।

प्रत्येक माह एक बुरी आदत को त्यागिए तथा एक सद्गुण का विकास करिए। आप शीघ्र ही आत्म-सुधार कर पायेंगे।

प्रत्येक व्यक्ति-वस्तु से सीखने को उत्सुक रहिए। अपने मन-हृदय को खुला रखिए।

जो दोष आपको दूसरों में अच्छे नहीं लगते हैं, उन्हें स्वयं के भीतर से भी दूर करिए।

किसी भी कार्य को आज श्रेष्ठ रूप में करने का प्रयास करिए। आप आज अच्छा विचार एवं कार्य करके ही आने वाले कल को बेहतर बना सकते हैं।

सेवा करिए। प्रार्थना करिए। चिन्तन-मनन करिए। भगवान् के नाम एवं उनकी महिमा का गान करिए। उचित विचार करिए। मृदु एवं मधुर बोलिए। इस प्रकार स्वयं का सुधार एवं विकास करिए।

आत्म-निर्भरता (Self-reliance)

आत्म-निर्भरता स्वयं की योग्यताओं, शक्तियों, साधनों तथा निर्णयशक्ति पर निर्भरता है। आत्म-निर्भरता चरित्र की स्वतन्त्रता है।

स्वयं पर निर्भर रहिए। अपनी सहायता स्वयं करिए, तब भगवान् भी आपकी सहायता करेंगे।

अपने उद्योग एवं श्रम के बिना आप सदैव निर्धन ही रहेंगे।

भगवान् इनकी सहायता करते हैं, जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। जो स्वयं पर निर्भर रहता है, वह प्रसन्नतापूर्वक जीवन व्यतीत करता है। वह पुरुषोचित चरित्र एवं ज्ञान से सम्पन्न होता है।

आपकी सफलता, शक्ति, ओज एवं विकास का वास्तविक स्रोत आत्म-निर्भरता ही है। यह आपको सम्पोषित एवं ऊर्जस्वित करती है।

दूसरों पर निर्भरता आपको दुर्बल बनाती है तथा असफलता का कारण बनती है। आप कभी समृद्ध नहीं बन सकते हैं।

जिसका स्वयं में तथा स्वयं की शक्तियों में विश्वास नहीं है, वह दुर्बलतम व्यक्ति है।

आपके भीतर शक्ति एवं ज्ञान का विशाल असीम भण्डार है। स्वयं पर निर्भर रहिए तथा इस आन्तरिक स्रोत का उपयोग करिए।

जो यह विश्वास करता है कि वह विजय प्राप्त कर सकता है, वही विजय प्राप्त काता है। जो यह विश्वास करता है कि वह सफलता प्राप्त कर सकता है, वही सफलता प्राप्त करता है।

स्वयं के लिए स्वयं सोचिए। यथासम्भव बाहर से ज्ञान लीजिए। अपने से अधिक अनुभवी जनों के विचारों को सुनिए, परन्तु किसी को अपने लिए सोचने की अनुमति मत दीजिए।

आत्म-निर्भरता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सद्‌गुण है। यह अत्यधिक आन्तरिक शक्ति प्रदान करता है। भौतिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में सफलता हेतु यह एक महत्त्वपूर्ण योग्यता है। आज अधिकांश व्यक्ति निर्भरता की मानसिकता से ग्रस्त हैं। वे आत्म-निर्भरता की शक्तियों को खो चुके हैं। भोग-विलास की आदतों ने उन्हें अत्यन्त दुर्बल बना दिया है। कुछ चिकित्सक एवं वकील जूते-मोजे पहनाने के लिए नौकर चाहते हैं। वे कुएँ से जल का पात्र भर कर नहीं ला सकते हैं। वे एक फर्लांग भी चल नहीं सकते हैं।

हमारे पूर्वज अपने वस्त्र स्वयं धोते थे तथा घर के सभी प्रकार के कार्य भी स्वयं करते थे। वे ईंधन की लकड़ी भी स्वयं काटते थे । वे घण्टों कुएँ से जल निकाल सकते थे। वे प्रतिदिन ४० मील चल सकते थे। वे सुदृढ़-स्वस्थ शरीर एवं ओज से सम्पन्न थे। वे दीर्घजीवी थे। वे सभी प्रकार के रोगों से पूर्णतया मुक्त थे। उन दिनों पायरिया, अपेन्डिसाइटिस तथा रक्तचाप आदि लेटिन एवं ग्रीक भाषा की भाँति अपरिचित शब्द थे।

आज व्यक्ति प्रत्येक कार्य के लिए दूसरों पर निर्भर है। वह आत्म-निर्भरता का यह गुण खो चुका है। वह आत्मिक शक्ति को विस्मृत कर चुका है। वह नहीं जानता है कि आपकी आत्मा के भीतर शक्ति एवं ज्ञान का अक्षय भण्डार है। उसका मन सदैव बाहर जाता है। उसका कोई आन्तरिक जीवन नहीं है।

आपको स्वयं के लिए भोजन पकाना आना चाहिए। आपको नौकरों का त्याग करना चाहिए। आपको अपने वस्त्र स्वयं धोने चाहिए। अपने ऑफिस पैदल चल कर जाना चाहिए । पद-प्रतिष्ठा की मिथ्या धारणा का त्याग करिए। मद्रास हाइकोर्ट के भूतपूर्व न्यायधीश श्री टी मुथुस्वामी कोर्ट तक पैदल जाते थे। आत्म-निर्भरता के गुण के कार उन्हें आज भी स्मरण किया जाता है।

आज के गृहस्थ अपने आध्यात्मिक उत्थान हेतु साधु-संन्यासियों से जादुई गोली की आकांक्षा रखते हैं। वे किसी प्रकार की साधना नहीं करना चाहते हैं। आपमें से प्रत्येक को आध्यात्मिक सोपान पर स्वयं ही एक-एक कदम रखना होगा। आप स्वयं अपने उद्धारक हैं। आप ही अपने रक्षक हैं। इस बात को स्मरण रखिए। कोई किसी दूसरे की रक्षा नहीं कर सकता है। अपने पैरों पर खड़े होइए तथा संसार में एवं आध्यात्मिक पथ पर सफलता प्राप्त करिए। नेत्र बन्द करके अपने आन्तरिक स्रोत से शक्ति प्राप्त करिए।

आत्म-बलिदान (Self-sacrifice)

आत्म-बलिदान दूसरों के लिए अपने जीवन एवं स्वार्थ का त्याग है।

आत्म-संरक्षण अथवा स्व-सुरक्षा प्रकृति का प्रथम नियम है। आत्म-बलिदान अनुग्रह का सर्वोच्च नियम है।

आत्म-बलिदान आत्म-संयम है। यह दूसरों के कल्याण के लिए अथवा कर्तव्यपालन के लिए स्वयं का, स्वयं की सुख-सुविधा का त्याग करना है।

आत्म-बलिदान अहंकार का नाश करता है तथा दिव्य कृपा एवं दिव्य प्रकाश के अवतरण का मार्ग प्रशस्त करता है। एक कर्मयोगी अहंकार का नाश आत्म-बलिदान द्वारा करता है।

शम (Serenity)

शम शान्त रहने की अवस्था अथवा गुण है। यह शान्ति अथवा मन की प्रशान्तता-शीतलता है।

शम मन की समता है। यह मन की अविक्षुब्ध स्थिति है।

एक प्रशान्त मन निर्मल एवं अनुद्विग्न होता है।

एक प्रशान्त मन में ही दिव्य प्रकाश का अवतरण होता है।

जब आप समस्त इच्छाओं एवं तृष्णाओं का नाश कर देते हैं, तभी शम की प्राप्ति होती है। इच्छाएँ, एवं तृष्णाएँ उद्विग्मता-अशान्ति उत्पन्न करती हैं।

यदि आप प्रशान्त हैं, तो यह आपकी शक्ति एवं बल की महानतम अभिव्यक्ति है। किसी कार्य में हड़बड़ी-शीघ्रता मत करिए। चिन्ता मत करिए। खेद मत करिए। क्रोधित मत होइए। चिड़चिड़ाहट पर नियन्त्रण रखिए। क्रोधावेश का निग्रह करिए। सन्तुष्ट रहिए। इससे आपको प्रशान्त मन की प्राप्ति होगी।

प्रतिदिन प्रार्थना, जप एवं ध्यान करिए। आप शम प्राप्त करेंगे। शम अथवा प्रशान्तता की प्राप्ति एक दिन या एक सप्ताह में नहीं होती है। इस दिव्य सगुण के विकास हेतु आपको दीर्घावधि तक कठोर संघर्ष करना पड़ेगा। ज्ञानयोग के अभ्यास हेतु आवश्यक साधन-चतुष्टय में षड्-सम्पद् वर्ग में शम को सर्वप्रथम गुण के रूप में रखा गया है।

प्रशान्त होइए। ध्यान करिए तथा जानिए कि आप सर्वव्यापक अमर आत्म तत्त्व हैं।

मौन (Silence)

मौन चुप रहने की अवस्था है। यह ध्वनि अथवा शब्दों का अभाव है। यह शान्ति है।

मौन ब्रह्म अथवा परम तत्त्व है।

मौन निद्रा की भाँति है। यह ऊर्जा का संरक्षण करता है तथा आपको नवस्फूर्ति प्रदान करता है।

मौन एक शक्तिशाली अस्त्र है जिसका हममें से बहुत कम व्यक्ति प्रयोग करने में सक्षम हैं।

मौन वाचाल व्यक्ति के लिए मृत्यु के समान है। एक साधक अथवा मुनि के लिए यह अमृत है।

वास्तविक मौन मन के लिए विश्राम स्वरूप है। समस्त विचार समाप्त हो जाते हैं। केवल परिपूर्ण शान्ति विद्यमान रहती है।

मौन एक महान् सद्गुण है। इससे कलह, अनावश्यक बाद-विवाद तथा पार।। बचाव होता है।

मौन अर्थपूर्ण होता है। मौन वाणी से भी श्रेष्ठ है।

मौन हो जाइए तथा अन्तरात्मा की आवाज सुनिए।

शब्दों का मौन अच्छा है; परन्तु इच्छाओं तथा वासनाओं का मौन श्रेष्ठ है क्योंकि यह मन को शान्ति प्रदान करता है। विचारों का मौन सर्वाधिक श्रेष्ठ है क्योंकि से आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

मौन में महान् शक्ति है। मौन शान्ति एवं बल प्रदान करता है। मौन द्वारा अनेक उच्च-दिव्य विजय घटित होती हैं।

मौन हो जाइए एवं स्वयं को जानिए।

सरलता (Simplicity)

सरलता निष्कपटता, अकृत्रिमता, सहजता, स्पष्टवादिता, सीधापन, कपटहीनता एवं आडम्बरहीनता है।

सरलता पाखण्ड, ढोंग अथवा दिखावे से मुक्ति है।

वस्त्र, आहार, चरित्र, व्यवहार आदि में सादगी-सरलता ही परम श्रेष्ठता है।

सादगी-सरलता में एक तेजस्विता होती है। सरलता प्रकृति का प्रथम तथा कला का अन्तिम सोपान है।

जो आप कहते हैं, वही बनिए। जो आप हैं, वही कहिए। जो आप बोलते हैं, वही लिखिए। जो आप सोचते हैं, वही बोलिए।

एक बालक की भाँति सरल बनिए। आपके लिए मोक्ष का द्वार खुल जायेगा। महानतम सत्य सरलतम होते हैं, इसी प्रकार महानतम व्यक्ति सरलतम होते हैं।

सज्जनता एवं सरलता अभिन्न-रूप से एक हैं।

एक सरल एवं स्पष्टवादी व्यक्ति सर्वप्रिय होता है।

पवित्रता एवं सरलता दो ऐसे पंख हैं जिनकी सहायता से व्यक्ति भगवद्-साम्राज्य तक उड़ान भर सकता है।

सच्चाई-निष्कपटता (Sincerity)

सच्चाई-निष्कपटता मन की ईमानदारी है। यह दिखावे से मुक्ति है। यह स्पष्टवादिता है।

सच्चाई में उद्देश्य एवं चरित्र की ईमानदारी निहित है। यह ढोंग, छल एवं आडम्बर से मुक्ति है। इसमें यथार्थता, सत्यता एवं ईमानदारी समाहित होती है।

सच्चाई-निष्कपटता वही बोलना है जैसा आप सोचते हैं, वही करना है जो आप कहते हैं, वास्तव में वही बनना है जैसे आप प्रतीत होते हैं तथा अपने दिये हुए वचन का पालन करना है।

मित्रता में स्थिरता एवं स्थायित्व की नींव सच्चाई ही है। जो सच्चा नहीं है, वह निष्ठावान् नहीं है।

एक सद्गुणी व्यक्ति तथा एक साधक का प्रथम लक्षण सच्चाई-निष्कपटता है।

यह सच्चे एवं भद्र पुरुष का गुण है।

इस गुण से सम्पन्न व्यक्ति पर सभी विश्वास करते हैं। वह सबके द्वारा सम्मानित होता है।

यदि आप सच्चे-निष्कपट हैं तो आपके अन्य सभी गुणों में स्वयमेव वृद्धि होती है।

सच्चाई प्रत्येक सद्गुण का आधार है।

एक सच्चा-निष्कपट व्यक्ति वही कहता है जो सोचता है, उससे कम अथवा अधिक नहीं। वह एक बात कहे तथा उसका अभिप्राय दूसरा हो, ऐसा नहीं होता है।

वह सदैव सत्य बोलता है। वह कपट-पाखण्ड रहित, सरल, ईमानदार एवं सच्चरित्र सम्पन्न होता है।

सच्चाई व्यक्ति का मौलिक गुण है। ईमानदारी सच्चाई का एक भाग है। ईमानदारी से अभिप्राय छलपूर्ण दुराव-छिपाव का अभाव है। 'सच्चाई' एवं 'ईमानदारी' वैयक्तिक गुण हैं। 'यथार्थता' वस्तुगत गुण है।

एक सच्चा-निष्कपट व्यक्ति पवित्र, ईमानदार, स्पष्टवादी एवं धर्मपरायण होता है। यह आत्मा का मुख है अर्थात् आत्मा का अभिव्यक्त रूप है। यह समस्त गुणों में प्रथम स्थान पर है।

यह नैतिक आचरण का अपरिहार्य आधार है।

सदगुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें

यदि आप इस गुण से सम्पन्न हैं, तो आपकी धारणा - विश्वास क्या है, यह अधिक महत्ता नहीं रखता है।

इसके अभ्यास से अन्य समस्त सद्गुण सशक्त-सुदृढ़ होते हैं। इस जगत में सम्मानपूर्वक रहने का लघु एवं अचूक मार्ग सच्चा-निष्कपट होना है, अर्थात् वही वास्तव में होना है जैसे आप प्रतीत होते हैं।

ऐसा व्यक्ति ढोंग तथा छल-कपट से अपरिचित होता है। उसके चरित्र की एक गरिमा होती है। वह कभी निम्न स्तर का व्यवहार नहीं करता है।

सामान्य बोलचाल की भाषा में हम कहते हैं, "राम ने सच्चाईपूर्वक यह वचन दिया है।" "कृष्ण का उद्देश्य सच्चा है।" "श्री राम का पश्चात्ताप सच्चा था।" "श्री कृष्ण मेरे सच्चे मित्र हैं।"

एक सच्चा-निष्कपट व्यक्ति अपने लक्ष्य, कार्य-व्यवसाय में ईमानदार होता है। वह सीधा, सरल एवं सच्चरित्रवान् होता है।

वह स्वयं के प्रति ईमानदार होता है। वह साहसी होता है। उसकी अन्तरात्मा एवं हृदय पवित्र होते हैं। वह भय एवं क्लेश से मुक्त होता है। उसकी जिह्वा एवं हृदय एक ही बात कहते हैं। उसके मन के विचार ही उसके मुख के शब्द होते हैं। वह जो भी वचन देता है, उसका पालन करता है।

एक झूठा-पाखण्डी व्यक्ति लेशमात्र भी आध्यात्मिक प्रगति नहीं कर सकता है।

एक सच्चा-निष्कपट एवं ईमानदार व्यक्ति अपने कार्य में सदैव सफलता प्राप्त करता है। वह अपने उच्चाधिकारियों का प्रिय होता है। सच्चाई एवं ईमानदारी सात्त्विक गुण हैं। पश्चिम जगत् में ईमानदारी को सर्वश्रेष्ठ नीति कहा गया है परन्तु पूर्व में यह एक पवित्र सद्गुण है। सच्चाई एवं ईमानदारी, इन सद्गुणों से सम्पन्न व्यक्ति विश्व के किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकता है। सर्वत्र उसका स्वागत ही किया जायेगा। ऐसे व्यक्ति अत्यन्त दुर्लभ हैं।

ऐसा व्यक्ति दूसरों के कष्टों से दुःखी होता है तथा उनके कष्ट-निवारण का यथाशक्य प्रयास करता है। वह अत्यन्त सहानुभूतिशील होता है। उसका हृदय अत्यन्त कोमल होता है। वह अत्यधिक उदार भी होता है। वह चालाकी, छल, कूटनीतिज्ञता, कुटिलता एवं धूर्तता से मुक्त होता है। सभी व्यक्ति उसके शब्दों में गहन विश्वास रखते हैं। वह सदैव सबका विश्वासपात्र होता है। वह अत्यन्त विनीत होता है। उसमें लेशमात्र भी ढोंग नहीं होता है। वह अत्यन्त स्पष्टवादी एवं ईमानदार होता है। उसे कहीं भी नौकरी पाने में कोई कठिनाई नहीं होगी। ऐसे व्यक्ति को कार्य प्रदान करने हेतु सभी उत्सुक होते हैं। वह सदैव अपने नियोक्ता का हित चाहता है। वह कठोर परिश्रम करता है।

आध्यात्मिकता के पथ पर भी सच्चाई-निष्कपटता एक महत्वपूर्ण योग्यता है। सम्पूर्ण गीता में यह एक शिक्षा अनुगुंजित होती है कि आत्म-साक्षात्कार के पथ पर चलने बाते साधक को इस महत्वपूर्ण सदगुण से सम्पन्न होना चाहिए। संस्कृत में इसे आर्जव कहा जाता है।

लक्ष्मण एवं भरत की सच्ची निष्ठा तथा श्री राम के प्रति उनकी अविचल भक्ति को देखिए। जहाँ पर सच्चाई-निष्कपटता है, वहाँ भक्ति है। सावित्री अपने पति सत्यवान् के प्रति सच्ची निष्ठावान् थी। मैत्रेयी की भी अपने पति याज्ञवल्क्य के प्रति सच्ची निष्ठा थी। इसलिए उसे पति से आत्मविद्या प्राप्त हुई। मीराबाई की अपने प्रियतम भगवान् श्री कृष्ण के प्रति सच्ची निष्ठा थी। उसे गिरिधर गोपाल के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एक सच्चा मित्र,

सच्चा भक्त, सच्चा पति, सच्ची पत्नी, सच्चा पुत्र तथा एक सच्चा सेवक धरा पर भगवद्-तुल्य है। सच्चाई अथवा आर्जव से श्रेष्ठ कोई अन्य सद्गुण नहीं है। प्रत्येक को इसका अवश्यमेव विकास करना चाहिए।

हे मित्र ! सच्चे-निष्कपट बनिए

सच्चाई सत्त्व से उत्पन्न सद्गुण है। योग-दर्शन में इसे 'आर्जव' कहा जाता है। यह श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय १३ एवं अध्याय १६ में वर्णित उन सद्गुणों में से एक है जो ब्रह्मज्ञान अथवा आत्मज्ञान प्राप्ति हेतु आवश्यक है। यह दैवीसम्पद् है। यह सत्य का एक पहलू है। यह सात्त्विक अहंकार की एक वृत्ति है।

एक सच्चे व्यक्ति का समाज में सम्मान किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति उस पर विश्वास करता है। "श्रीमान् 'क' सर्वाधिक सच्चे व्यक्ति हैं। मैंने अपने जीवन में उनके समान व्यक्ति नहीं देखा है। मेरे मन में उनके प्रति अत्यधिक श्रद्धा है। मुझे उन पर गहन विश्वास है।"

एक कपटी-पाखण्डी व्यक्ति जीते हुए मृत के समान है। वह इस धरा पर भार है। यदि व्यक्ति कपटी-कुटिल है, तो विश्वविद्यालय के ज्ञान एवं उपाधियों का क्या उपयोग है; तप, आसन, प्राणायाम, जटाओं, गेरुआ वस्त्र, गले में मालाओं का क्या लाभ है; धन-सम्पत्ति का क्या उपयोग है, त्याग का क्या लाभ है?

जो सच्चाई-आर्जव के इस सद्गुण से सम्पन्न है, वह अपने समस्त कार्यों में सफलता प्राप्त करता है। वह सच्चाईपूर्वक कड़ा संघर्ष करता है। वह अपने उत्तरदायित्वों से मुख नहीं मोड़ता है। वह परिश्रमशील एवं अध्यवसायी होता है। वह कठोर श्रम काला वह सजग रहता है।

यदि व्यक्ति इस एक श्लाघनीय सदगुण से सम्पन्न हो जाये, तो उसमें अन्य सद्गुण स्वयमेव आ जायेंगे। इस जगत् में सच्चे व्यक्ति दुर्लभ हैं। अतः सब समय सच्चे रहिए। इस सदगुण का अधिकतम सीमा तक विकास करिए एवं परम तत्त्व अथवा ब्रह्म को प्राप्त करिए। ब्रह्म इस सद्गुण का मूर्तिमन्त विग्रह है। अतः सच्चाई द्वारा उसकी प्राप्ति कीजिए ।

सच्चाई-आर्जव युक्त व्यक्ति अत्यन्त प्रेम एवं भक्ति के साथ कठोर परिश्रम करता है। वह अपने स्वामी, गुरु अथवा नियोक्ता के समस्त उत्तरदायित्व स्वयं वहन करता है । जो कार्य दस व्यक्ति कर सकते हैं, वह अकेला ही उस कार्य को उमंग, उत्साह एवं प्रेमपूर्वक करता है। सच्चाई एक महान् आध्यात्मिक शक्ति है। यह अत्यधिक बल प्रदान करती है।

छल-कपट, कूटनीति, कुटिलता, धूर्तता एवं तुच्छ मानसिकता से ऐसा व्यकि अपरिचित होता है। वह स्पष्टवादी एवं निष्कपट होता है। वह कुछ भी नहीं छिपाता है। वह अपने विचारों को भी नहीं छिपायेगा। उसकी वाणी उसके विचारों के अनुरूप होगी तथा उसके कार्य उसके वचनों के अनुरूप होंगे।

एक कपटी व्यक्ति कभी अपने वचन का पालन नहीं करता है। वह अपने वचन को भंग करता है तथा इसके लिए कोई न कोई बहाना प्रस्तुत करता है। उसके शब्दों में कोई विश्वास नहीं करता है। वह प्रभावपूर्ण रूप में बात नहीं कर सकता है। उसकी संकल्प शक्ति दृढ़ नहीं होती है। वह उपहारों द्वारा, धूर्तता से उत्पन्न कृत्रिम मधुर वचनों द्वारा तथा अन्य धूर्ततापूर्ण तरीकों द्वारा अपने मित्रों को प्रसन्न करने का प्रयास करके स्वयं को एक सच्चा व्यक्ति दिखाने की कोशिश करता है। परन्तु वह यह नहीं जानता है कि उससे बुद्धिमान् व्यक्ति भी हैं जो उधार लिये पंखों से सजने वाले कौए को पहचान लेते हैं अर्थात् उसके पाखण्ड-ढोंग को समझ लेते हैं।

मनुष्य भलीभाँति जानता है कि छल-कपट अच्छी बात नहीं है परन्तु फिर भी वह इस दुर्गुण का त्याग नहीं करता है। इसके नाश हेतु प्रयास नहीं करता है। यह अविद्या अथवा माया से उत्पन्न मोह के कारण है। अविद्या रहस्यमयी है; बुरे संस्कारों की शक्ति एवं प्रभाव रहस्यमय हैं। सत्संग एवं गुरु-सेवा द्वारा इस मोह का नाश किया जा सकता है।

हे मित्र! आप स्वार्थ एवं लोभ से उन्मत्त हो कर कपटी-पाखण्डी बन गये हैं। आप नहीं जानते हैं कि आप क्या कर रहे हैं। आपकी बुद्धि भ्रमित हो गयी है। एक समय आयेगा जब आपकी अन्तरात्मा आपको अत्यधिक उत्पीड़ित करेगी। जब आपको आपकी दशा का बोध होगा, तो आपको हृदयविदारक पीड़ा होगी। पश्चात्ताप से आपके हृदय को अत्यधिक सन्तास होना चाहिए। तभी आप स्वयं को शुद्ध-पवित्र कर सकते हैं । जप करिए। भगवन्नाम का गान करिए। एकादशी के दिन उपवास रखिए। जल की एक बूँद भी मतल ग्रहण करिए। इससे आप सच्चाई-आर्जव का विकास करेंगे तथा आर्जव के द्वारा आप मुक्ति, शान्ति एवं पूर्णता प्राप्त करेंगे।

विशालहृदयता, सरलता, आडम्बरहीनता, ईमानदारी, क्षमा, पवित्रता, निष्ठा, आत्म-नियन्त्रण, निर्भयता, जीवन में पावनता, अक्रोध, शान्ति, निर्लोभिता, सौम्यता, शालीनता, अविक्षुब्धता, ओज, धृति, ईर्ष्या-राहित्य एवं गर्वशून्यता आर्जव से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं।

दम्भ, पाखण्ड, अहंकार, क्रोध, कठोरता, विवेकहीनता, छल, कपट, कूटनीति, कुटिलता, धूर्तता तथा तुच्छ मानसिकता आर्जवहीनता से सम्बन्धित हैं।

एक अफसर धर्म के क्षेत्र में कुछ रचनात्मक कार्य करना चाहता था। वह एक संस्था बनाना चाहता था। इस उद्देश्य हेतु वह नियमित रूप से कुछ धन बचा कर अपने पुत्र को भेजा करता था। परन्तु कपटी पुत्र ने समस्त धन अपनी पत्नी के नाम कर दिया तथा अपने पिता से छल किया। एक गुरु ने अपने एक शिष्य को अपनी शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार हेतु किसी स्थान पर भेजा। उस शिष्य ने अपनी ही एक संस्था बना ली तथा उसका संस्थापक-अध्यक्ष बन गया। परन्तु अपने कपटपूर्ण आचरण के कारण वह प्रगति नहीं का पाया। उसने यत्र-तत्र कुछ अपराध किये तथा अन्ततः पुलिस से बचने के लिए उसे कहीं छिपना पड़ा। इस जगत् में पाप स्वयं अपना दण्ड लाता है। कपटी व्यक्ति समृद्ध नहीं हो सकते हैं। उन्हें यहाँ असफलता, अपमान एवं दुःख प्राप्त होगा तथा मृत्यूपरान्त नरक की पीड़ा झेलनी होगी।

यदि पति सच्चा-निष्कपट नहीं है तो पत्नी सदैव सन्देहशील रहती है तथा घर में प्रतिदिन कलह-झगड़ा होता रहता है। यदि मुख्य लिपिक झूठा पाखण्डी है तो कार्यालय का समस्त कार्य प्रभावित होता है तथा कार्यालय अधीक्षक भी अप्रसन्न रहता है। यदि मन्त्री झूठा-कपटी है तो महाराजा उसे तुरन्त कार्यमुक्त करते हैं। एक कपटी-पाखण्डी व्यक्ति किसी भी सामाजिक अथवा आध्यात्मिक संस्था में असामंजस्य एवं अशान्ति उत्पात्र करता है जिससे समस्त कार्य बहुत अधिक प्रभावित होता है।

गुरु से दीक्षित होने वाले शिष्य भी कपटी, श्रद्धाहीन एवं कृतघ्न हो जाते हैं। एक पाखण्डी शिष्य ने भगवान् जीसस के साथ विश्वासघात किया। भगवान् बुद्ध के कुछ शिष्य उनके शत्रु बन गये। वे उन्हें छोड़ गये तथा उन्होंने भगवान् बुद्ध को अत्यधिक हानि पहुँचायी। अभी भी ऐसे अनेक पाखण्डी शिष्य होते हैं जो अपने गुरु के साथ छल करते हैं यह कितनी लज्जाजनक बात है! कितनी दुःखद स्थिति है। उनकी नियति अत्यन्त दयानीय है। ऐसे व्यक्ति कष्टपूर्ण मृत्यु को प्राप्त होंगे। उन्हें महारौरव नरक में उत्पीड़ित किय जायेगा। उन्हें निम्न योनियों में जन्म प्राप्त होगा तथा वे असाध्य रोगों से ग्रस्त होगे।

पद्मपाद श्री शंकराचार्य के सर्वाधिक सच्चे शिष्य थे। अपने गुरु के अनुग्रह से वह नदी को चल कर पार कर सके; उनके हर कदम पर एक पद्म (कमल) पुष्प था। इसलिए उनका नाम पद्मपाद हुआ। श्री शंकराचार्य श्री गोविन्दपाद के सर्वाधिक निष्ठावान् शिष्य थे। उन्होंने सर्वप्रथम अपने गुरु की वन्दना किये बिना कोई ग्रन्थ नहीं लिखा। एक सच्चा शिष्य ही आध्यात्मिक पथ पर प्रगति करेगा। उसे अमिट यश की प्राप्ति होगी। केवल वही जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करेगा तथा अमरत्व पायेगा।

यह जगत् ऐसे सच्चे व्यक्तियों एवं शिष्यों से पूर्ण हो, जो महान् कार्य सम्पन्न कर सकते हैं। आपका हृदय श्रद्धा, भक्ति एवं आर्जव से परिपूरित हो।

सहानुभूति (Sympathy)

सहानुभूति दूसरों के प्रति संवेदनशील होना है। यह करुणा है। यह दया है। यह दूसरों के साथ उनके संघर्षों एवं कष्टों में एकत्व अनुभव करना है।

सहानुभूति दूसरों के दुःखों के प्रति करुणा का भाव है। यह सौहार्दपूर्ण भावना है। यह दूसरों की स्थिति से प्रभावित हो कर उनके समान अनुभव करने का गुण है।

मौन सहानुभूतियुक्त कुछ अधिक मुस्कराहटें, सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि, कुछ मृदु एवं मधुर शब्द, कुछ और दयालुतापूर्ण कार्य पीड़ित मानवता को सुख प्रदान करने में अत्यधिक योगदान देंगे।

वास्तविक सहानुभूति स्वयं को दूसरे के स्थान पर रखना है।

दूसरे के सिरदर्द अर्थात् कष्ट को दूर करने का प्रयास स्वयं का कष्ट भूल जाना है। किसी अन्य के कष्ट को कम करना स्वयं के कष्ट को कम करना है।

सहानुभूति वह कुंजी है जो प्रत्येक हृदय को खोलती है अर्थात् प्रभावित करती है। ग्रेनाइट के समान कठोर हृदय वाले व्यक्तियों को लज्जा आनी चाहिए जिनके हृदय दूसरों के दुःख-कष्ट देख कर द्रवित नहीं होते हैं। अपने हृदय को सहानुभूतिशील बनाइए। सहानुभूति मन को सद्गुणों के संस्कारों हेतु तैयार करती है। सहानुभूति के बिना विनीतता अथवा शिष्टता सम्भव नहीं है।

सहानुभूति सार्वभौमिक समाधानकारक शक्ति है।

मधुरता (Sweetness)

इस जगत् में वास्तविक रूप से मधुर व्यक्ति दुर्लभ हैं। मधुरता स्त्रियोचित गुण है परन्तु कुछ स्त्रियों में यह नहीं पाया जाता है। वे स्त्रियाँ कठोरहृदया होती हैं यद्यपि उनके वचन मधुर प्रतीत होते हैं। कुछ व्यापारी, वकील एवं चिकित्सक अपने ग्राहकों से धनप्राप्ति-पर्यन्त ही मधुर व्यवहार करते हैं। यह सहज, स्थायी, लाभप्रद एवं उन्नयनकारी मधुरता नहीं है। यह मिथ्या चमक है। यह व्यावसायिक मधुरता है।

एक वास्तविक मधुर स्वभाव का व्यक्ति दिव्य होता है। वह दूसरों से कभी कुछ अपेक्षा नहीं करता है। उसका सहज स्वभाव ही मधुर होता है। वह अपनी अन्तर्जात माधुर्यपूर्ण प्रकृति से सबको आनन्द प्रदान करता है।

मधुरता सत्त्व से उत्पन्न होती है। यह दीर्घावधि तक की गयी योग-साधना से रजस् एवं तमस् की पूर्णतया समाप्ति के पश्चात् शेष रहा मधुर शक्तिशाली दिव्य स्वर्णिम तत्त्व है। यह सत्त्व का घनीभूत सार है। यह दीर्घावधि तक गहन तपस्या, योगाभ्यास तथा मौन-साधना द्वारा परिपूर्णता को प्राप्त हुए सिद्ध-पुरुषों अथवा अर्हतजनों रूपी दुर्लभ मनोहारी पुष्पों के पुष्पित-पल्लवित होने से प्रसारित मधुर सुगन्ध है।

मधुरता एक आध्यात्मिक प्रचारक एवं समाजसेवी का आवश्यक गुण होना बाहिए। बिना इस सद्गुण के कोई प्रचारक ठोस एवं प्रभावशाली कार्य नहीं कर सकता है। जो मठ अथवा आश्रम अथवा आध्यात्मिक संस्था की स्थापना करना चाहता है, उसे इस उदात सद्गुण से सम्पन्न होना चाहिए। समस्त जनसेवियों तथा आश्रमवासियों को इस दिव्य सद्गुण को धारण करना चाहिए।

योगाग्नि में राजसिक अहंकार को भस्म किया जाना चाहिए। तब यह स्वर्णिम मधुरता अपनी पूर्ण दीप्ति से विभासित होगी। रजस् का मन्थन किया जाना चाहिए, तभी सात्विक मन की सतह पर मधुरता रूपी नवनीत प्रकट होगा।

वाणी में मधुर बनिए। आचरण-व्यवहार में मधुर बनिए। कीर्तन-गान एवं व्याख्यान में मधुर बनिए। मधुरतापूर्वक देखिए। मधुरता पूर्वक दूसरों की सेवा कीजिए । मृदु, विनीत एवं शिष्ट भी बनिए। इससे आपके माधुर्य में वृद्धि होगी।

सेवा, आत्म-संयम, मौन, प्रार्थना, प्राणायाम, ध्यान, अन्तर्निरीक्षण आत्मविश्लेषण तथा क्रोध पर नियन्त्रण द्वारा मधुरता का विकास कीजिए।

मधुरता राधा तत्त्व है। मधुरता से ही श्री राधा जी का हृदय बना है। सत्य, प्रेम, आर्जव, वैश्विक प्रेम तथा अहिंसा मधुरता के ही विविध रूप हैं। मधुरता इन सब सात्विक गुणों का दुर्लभ दिव्य सम्मिश्रण है। यह सहस्रगुणी क्षमता से युक्त है।

एक विवादप्रिय, असहिष्णु, अधीर, अहंकारी, क्रोधी तथा परदोषदर्शी अर्थात् छिद्रान्वेषक मधुरता का विकास नहीं कर सकता है।

सभी मधुरता रूपी उच्च सद्गुण से सम्पन्न हों जिसके द्वारा आप रस अर्थात् दिव्य आनन्द के मूर्तिमन्त रूप ब्रह्म में प्रतिष्ठित होने में सक्षम बनेंगे।

मधुरता के माधुर्य ब्रह्म की जय हो।

व्यवहार-कुशलता (Tact)

व्यवहार-कुशलता व्यक्तियों की भावनाओं का उचित प्रबन्धन करने की कुशलता अथवा चतुरता है। यह किसी भी परिस्थिति में क्या श्रेष्ठ है, उसे जान लेने एवं करने का नवीन दृष्टिकोण है। यह अनेक प्रतिभाओं से सम्पन्न होने के समान है।

किस स्थिति में क्या योग्य एवं उचित है, इसका शीघ्र एवं अन्तःप्राज्ञिक ज्ञान व्यावहारिक-कौशल है। यह उचित बोलने एवं करने अथवा विशेषतया अनुचित एवं विक्षुब्धकारी की उपेक्षा करने का त्वरित मानसिक निर्णय है। यह व्यक्तियों से अथवा आकस्मिक परिस्थितियों में उचित व्यवहार करने की योग्यता है।

इसमें आत्म-संयम, सप्रकृति तथा दूसरों की भावनाओं के प्रति त्वरित एवं सौहार्दपूर्ण सहानुभूति निहित है। एक व्यवहारकुशल व्यक्ति जीवन में सदैव सफलता प्राप्त करेगा। व्यवहार-कुशलता समस्त बाधाओं एवं कठिनाइयों को दूर करती है।

इसके लिए शीघ्र एवं उचित निर्णय, सहज-सामान्य ज्ञान, सौहार्दपूर्ण भावना तथा अन्य व्यक्ति के चरित्र के स्वाभाविक बोध की आवश्यकता है।

प्रतिभा शक्ति है, व्यवहार-कुशलता निपुणता है। प्रतिभा धन है, व्यवहार- कुशलता नकद रुपया है।

एक व्यवहार-कुशल व्यक्ति उचित व्यक्तियों से उचित समय पर उचित बात करता है।

व्यवहार-कुशलता खुले नेत्र, सतर्क कर्ण, सजग नासिका, सक्रिय स्पर्शेन्द्रिय तथा विवेकपूर्ण स्वादेन्द्रिय से सम्पन्न होना है।

व्यवहार-कुशलता समय एवं अवसरों को व्यर्थ नहीं गँवाती है। यह समस्त संकेतों को ग्रहण करती है। यह सदैव सजग एवं सतर्क होती है। यह कोई अनुचित कदम नहीं उठाती है।

एक नैतिक विषय के रूप में व्यवहार-कुशलता के मुख्य तत्त्व हैं- (१) भावनाओं के प्रति संवेदनशीलता (२) दूसरों के उद्देश्यों के सम्बन्ध में अन्तःदृष्टि (३) आचरण के परिणामस्वरूप अनुभव का आकलन (४) किसी भी विषय के समस्त पक्षों के विश्लेषण की सूक्ष्मता।

संयम (Temperance)

संयम मिताचार है; विशेषतया स्वाभाविक इच्छाओं-वासनाओं की पूर्ति पर नियमन है। सीमित अर्थ में यह मदिरापान पर नियन्त्रण अथवा इसका पूर्ण त्याग है।

संयम विवेकपूर्ण आत्म-नियन्त्रण की प्रकृति तथा अभ्यास है। यह स्वभावगत मिताचार है।

संयम स्वयं के जीवन अथवा कार्यों में नियन्त्रण है। यह उत्तेजनापूर्ण कार्य करने की प्रवृत्ति का दमन है। यह शान्ति है, धीरता है।

संयम किसी भी प्रकार की स्वाभाविक प्रवृत्ति अथवा उत्कण्ठा की पूर्ति पर नियन्त्रण है। यह इन्द्रिय-भोग अथवा भावना व्यक्त करने पर नियमन है यथा खान-पान का संयम, पुस्तकें पढ़ने में संयम, हर्ष अथवा शोक की अभिव्यक्ति में संयम।

यदि आप संयमी हैं तो आपका मस्तिष्क स्पष्ट, स्वास्थ्य श्रेष्ठ, हृदय हल्का तथा पर्स भारी रहेगा।

संयम स्वास्थ्य, शक्ति एवं शान्ति की नींव एवं स्रोत है।

संयम प्रकृति माता को पूर्ण स्वतन्त्रता देता है जिससे वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति एवं ओज के साथ कार्य करे।

मदिरा का मुख्य घटक असुर है। यह आपको सभी प्रकार के बुरे एवं लज्जाजनक कार्य करने को उत्तेजित करेगा। यह आपकी जीवन-शक्ति का नाश करेगा। अतः परिणा का त्याग करिए।

मदिरा का त्याग पर्स में धन, घर में सन्तोष एवं शान्ति, शरीर में बल, मस्तिष्क में बुद्धिमत्ता तथा सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ओजस्विता प्रदान करता है। अतः संयमी बनिर मदिरा का त्याग करिए।

संयम शारीरिक बल, स्वास्थ्य, शक्ति, मन की पवित्रता एवं शान्ति, निर्मल बुद्धि तथा परिष्कृत-शुद्ध भावनाएँ प्रदान करता है। यह युवावस्था का सर्वश्रेष्ठ संरक्षक तथा वृद्धावस्था का सहारा है। यह शरीर एवं आत्मा का चिकित्सक है। यह स्वास्थ्य का देवता तथा जीवन की सार्वभौमिक औषधि है।

बुद्धिमत्ता का विकास करिए। आप भोग-विलास के प्रलोभनों से अपनी रक्षा कर सकते हैं।

आपके कुटिल मित्र आपको प्रलोभित करेंगे। वे आपको मदिरागृहों में ले जायेंगे तथा मदिरापान हेतु उकसायेंगे। गिलास में रखी मदिरा आपको मोहित करेगी। यह आपको शिक्षा देगी, "यहाँ प्रसन्नता एवं आनन्द है।" यही संकट का समय है। अभी आपकी बुद्धि एवं विवेक को आपकी रक्षा हेतु दृढ़तापूर्वक कार्य करना होगा।

मदिरापान करने वालों के संग का तुरन्त त्याग करिए। वे आपके साथ विश्वासघात करेंगे। वे आपको पूर्ण विनाश की ओर ले जायेंगे।

मदिरागृहों में पाया गया सुख रोगों एवं मृत्यु की ओर ले जायेगा। सावधान, सावधान, सावधान। क्या मदिरापान करने वाले दुर्बल एवं रोगग्रस्त नहीं हैं? क्या वे उत्साह एवं उमंगशून्य नहीं हैं?

यदि मन एवं शरीर को स्वस्थ रखना चाहते हैं, तो सब प्रकार की मदिरा का त्याग करिए।

संयम अर्थात् मद्य निषेध समस्त सामाजिक एवं राजनीतिक सुधारों की नींव है।

यदि संयम है, तो शिक्षा भी सफल होती है। संयम के असफल होने से शिक्षा भी असफल होती है।

संयम बुद्धि की शोभा, आत्मा की शक्ति तथा सद्गुणों का आधार है। यह रोगों के विरुद्ध दृढ़तम रक्षाकवच है।

संयम आपकी इन्द्रियों को निर्मल-शुद्ध रखता है तथा आपको कठिन एवं महान् कार्य करने योग्य बनाता है। यह आपको प्रसन्न एवं प्रफुल्लित रखता है। यह रक्त को शुद्ध करता है, मस्तिष्क को स्वच्छ करता है, उदर को विश्राम देता है, स्नायुओं को सशक्त बनाता है तथा पाचन को पूर्ण करता है।

मदिरा अस्थायी-क्षणिक उत्तेजना उत्पन्न करती है। निराशा, हताशा, उदासीनता, विक्षुब्धता, पेट-दर्द, क्षुधा की कमी, सिर-दर्द तथा शारीरिक दुर्बलता इसका अनुसरण करते हैं।

एक असंयमी अर्थात् मदिरापान करने वाला व्यक्ति लड़खड़ाते कदमों से चलता है। उसके अंगों में शक्ति नहीं होती है। उसका हृदय लज्जा, चिन्ता, कष्ट, उद्वेग एवं पश्चात्ताप से पूर्ण होता है। अनेक प्रकार के अभाव एवं रोग उसे त्रस्त करते हैं।

एक संयमी व्यक्ति गाता है, नाचता है। उसके गाल गुलाब के पुष्प की भाँति लाल होते हैं। उसके नेत्रों में दीप्ति, मुख पर प्रसन्नता तथा होठों पर उज्ज्वल मुस्कान थिरकती है। वह शक्ति, ऊर्जा एवं ओज से परिपूर्ण होता है। वह सदैव प्रसन्न, साहसी, क्रियाशील एवं ओजस्वी होता है। वह शान्तिपूर्वक सोता है। उसका मन शान्त-विश्रान्त होता है। वह शान्त-प्रशान्त रहता है। उसका मस्तिष्क निर्मल एवं शीतल रहता है।

संयम का विकास करिए एवं सुखी जीवन व्यतीत करिए।

'टेम्परेन्स मूवमेन्ट' सब प्रकार की मदिरा पर प्रतिबन्ध हेतु किया गया एक राजनीतिक आन्दोलन है।

'टेम्परेन्स सोसायटी' मदिरापान नहीं करने वालों की संस्था है।

'टेम्परेन्स ड्रिन्क' एल्कोहॉल रहित पेय है जिसे सरसप्रिला से सुगन्धित बनाया जाता है।

'टेम्परेन्स होटल' ऐसा होटल होता है जहाँ मादक पेय उपलब्ध नहीं होते हैं।

सहिष्णुता (Tolerance)

सहिष्णुता अप्रिय-अरुचिकर व्यक्तियों अथवा विचारों को सहन करना है।

सहिष्णुता कट्टरता से मुक्ति है। यह उदारता का भाव है।

सहिष्णुता आचार-विचार में होने वाले मतभेदों को सहन करने अथवा उनके रुद्ध कठोर निर्णय नहीं देने का स्वभाव है।

आपका ज्ञान पर एकाधिकार नहीं है। विध्वंसात्मक आलोचना मत करिए। आपके पड़ोसी के विचार एवं तरीके आपसे भिन्न हो सकते हैं; तथापि वे अच्छे भी हो सकते हैं।

शीघ्रता में कभी किसी की भर्त्सना मत करिए अपितु उचित निर्णय करिए । एक-दूसरे के प्रति उदार एवं सहृदयी बनिए। सहिष्णु बनिए।

धार्मिक सहिष्णुता अत्यावश्यक है। यह राष्ट्र में धार्मिक एकता की स्थापना करेगी। श्रेष्ठ व्यक्तियों में भी विचारों की विभिन्नता रहती है। इससे घृणा का जन्म नहीं होना चाहिए। प्रकृति में कोई भी दो मन समान नहीं होते हैं।

असहिष्णुता अपराध है।

विशाल-विस्तृत दृष्टिकोण अपनाइए। अपने हृदय में प्रत्येक को, प्रत्येक धर्म के अनुयायी को स्थान दीजिए। गगनवत् विशालहृदयी बनिए।

समस्त संघर्ष एवं श्रम का सर्वोत्तम फल धर्म में सहिष्णुता अर्थात् धार्मिक सहिष्णुता है।

सहिष्णुता आनन्द की ओर ले जाती है

व्यक्तियों के स्वभाव, क्षमताएँ एवं रुचियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं, अतः विभिन्न विचारधाराओं, सम्प्रदायों एवं संस्थाओं का होना आवश्यक है। किसी भी सम्प्रदाय के अनुयायियों का हृदय विशाल होना चाहिए जिससे वे अन्य सम्प्रदायों के अनुयायियों को सहर्ष स्वीकार कर सकें। समस्त धर्मों के मूलभूत सिद्धान्त अथवा तत्त्व एक ही हैं। व्यक्ति के हृदय में अन्य धर्मों के प्रति पूर्ण सहिष्णुता का भाव होना चाहिए। मण्डल अथवा सम्प्रदाय प्रारम्भिक साधकों के विकास में सहायता देते हैं परन्तु अन्ततः सभी सम्प्रदायों की परिसमाप्ति वेदान्त में होती है।

संस्थापक के जीवन-काल में ही कुछ संस्थाएँ, मण्डल तथा सम्प्रदाय उचित कार्य करते हैं। उनके देहावसान के पश्चात्, उनके अनुयायी संस्था की एकता एवं प्रतिष्ठा को बनाये रखने में असफल होते हैं। गुरुवाद का प्रवेश हो जाता है। संस्थाध्यक्ष स्वार्थ से अभिभूत हो जाते हैं तथा संस्थाएँ धनार्जन का केन्द्र बन जाती हैं। उनकी प्रारम्भिक आध्यात्मिक सुरभि धीरे-धीरे नष्टप्राय हो जाती है। इन संस्थाओं के अनुयायी अपने सम्प्रदाय अथवा संस्था की महिमा का गान करके तथा अन्य सम्प्रदायों की निन्दा करके सामान्य जनों के मनों को उद्वेलित करते हैं तथा इस प्रकार उन्हें अत्यधिक क्षति पहुँचाते हैं। ये धर्म के नाम पर व्यवसाय प्रारम्भ कर देते हैं। इसी कारण कुछ सम्प्रदाय, मण्डल एवं संस्थाएँ आध्यात्मिकता के सक्रिय केन्द्र बनने के स्थान पर कलह-संघर्ष के केन्द्र बन जाते हैं।

अनुयायी वृन्द कठोर तप तथा ध्यान नहीं करते हैं। वे उग्र तपस्या एवं साधना हेतु एकान्तवास नहीं करते हैं। वे त्याग, वैराग्य एवं विवेक से सम्पन्न नहीं होते हैं। वे बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। वे चतुर्थ क्षेत्र, पंचम भूमिका, सप्तम मण्डल आदि की बातें मात्र करते हैं। वह संस्था, जो संस्थापक के जीवन-काल में आध्यात्मिक ख्याति एवं प्रतिष्ठा से सापन थी, योग्य आध्यात्मिक उत्तराधिकारी के अभाव के कारण मात्र एक सामाजिक संस्था बन कर रह जाती है। सत्य का बौद्धिक बोध अथवा वक्तृत्व कला व्यक्ति को योगी अथवा सन्त नहीं बनाती है।

जो कहते हैं कि भगवान् श्री कृष्ण एवं भगवान् श्री राम सामान्य कोटि के व्यक्ति हैं, वे धर्म एवं दर्शन के विषय में कुछ नहीं जानते हैं। पंजाब के एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक एक सम्प्रदाय-विशेष के प्रमुख से मिलने गये। उन्होंने उन्हें यह कहते सुना, "भगवान् श्री कृष्ण सामान्य कोटि के व्यक्ति हैं।" वे चिकित्सक तुरन्त वह स्थान छोड़ कर चले गये। उन्होंने मुझे बाद में बताया कि उन्हें श्रीमद्भगवद्गीता के इस श्लोक में पूर्ण विश्वास है- "हे धनंजय ! मुझसे परतर अर्थात् उच्चतर-श्रेष्ठ अन्य कुछ नहीं है; सूत्र में मणियों के सदृश ये सब मुझमें पिरोया हुआ है।" (अध्याय ७-७)

यह कहना कि भगवान् श्री कृष्ण की स्थिति श्रेष्ठ नहीं है तथा इस विश्वास के साथ ही शान्ति प्राप्त हो सकती है, अत्यन्त शोचनीय है। कुछ कहते हैं, "हमारे सम्प्रदाय अधवा संस्था में सम्मिलित हो जाइए, आपको पन्द्रह दिनों के भीतर भगवद्-दर्शन प्राप्त होंगे। यदि आप हमारे सम्प्रदाय में सम्मिलित होते हैं, तो आप परब्रह्म से भी परे चले जायेंगे। केवल हमारे सम्प्रदाय द्वारा ही आप शान्ति एवं मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।" यह पूर्ण असहिष्णुता एवं संकीर्णता है।

जरा सुनिए, भगवान् श्री कृष्ण स्वयं श्रीमद्भगवद्गीता में क्या कहते हैं; वे कहते है, "हे अर्जुन! भक्तगण जिस प्रकार से मेरा भजन करते हैं, मैं उसी प्रकार से उन्हें भजता हूँ अर्थात् फल प्रदान करता हूँ। सभी मनुष्य सब प्रकार से मेरा ही अनुसरण करते हैं।" (अध्याय ४-११)

भगवान् आप सबको सहिष्णुता एवं विशालहृदयता से आशीर्वादित करें। आप अन्यों के दोष निकालने की प्रवृत्ति से मुक्त हों। आप सभी आत्मा के एकत्व का बोध पायें। आप दूसरों को दिव्य प्रेमपूर्वक स्वीकार करें। आप सभी समस्त धर्मों की एकता का अनुभव करें। आप धार्मिक विवादों में संलग्न न हों।

आप सब अपने आनन्दमय, शान्त आत्मा में विश्रान्ति पायें तथा गहन ध्यान द्वारा शाश्वत आनन्द को प्राप्त करें।

सत्यमेव जयते (Truth alone Triumphs)

सत्य सरल है, विभ्रान्त बुद्धि के कारण यह जटिल प्रतीत होता है। उच्चतम-श्रेष्तभ सदैव सरलतम होता है।

सत्य असत्य द्वारा पराजित नहीं किया जा सकता है। सत्य की असत्य पर सदैव विजय होती है। जब व्यक्ति सत्य के पथ पर चलता है, तो अन्य सब कुछ स्वयमेव से जाता है। वृक्ष की जड़ में पानी देने से शाखाएँ भी स्वतः ही सिंचित हो जाती हैं।

सत्य का पथ एक विकट पथ है। यह फिसलन-भरा तथा छुरे की धार के समान तीक्ष्ण है। इस विकट पथ पर चलना अत्यधिक कठिन है। आध्यात्मिक व्यक्तियों में महानतम-श्रेष्ठतम ही इस पथ पर चल कर परिपूर्णता की नगरी पहुँचते हैं।

परम तत्त्व सब कुछ है। सत्य ही परम तत्त्व है। आप वही हैं। यह समस्त आध्यात्मिक उपदेशों का सार है।

सत्य पूर्णतः सार्वजनिक होता है। यदि कोई इसे छिपाने का प्रयास भी करे, तो वह इसे छिपा नहीं सकता है। असत्य की चरम सीमा में भी सत्य विद्यमान रहता है एवं अभिव्यक्त होता है। सत्य की पराकाष्ठा परम तत्त्व है। असत्य सत्य की छाया मात्र है। यह जगत् असत्य है तथा परम तत्त्व सत्य है। यह जगत् अहंकार एवं वासना का प्रतीक है तथा परम तत्त्व गूढ़ परासत्ता का प्रतीक है।

परम सत्य 'सच्चिदानन्द' शब्द से भी अभिव्यक्त नहीं होता है। यह केवल सत्य के सामीप्य का सूचक है। परम सत्य इससे भी महान्, भव्य एवं श्रेष्ठ है।

उसका सर्वतोमुखी कल्याण होता है जिसका हृदय परम सत्य की ओर लगा है। शारीरिक अथवा मानसिक रोग उसे आक्रान्त नहीं कर सकते हैं।

सत्य की ओर गतिशील व्यक्ति बलवान् होता है, दीर्घायु प्राप्त करता है, सब कुछ जानता है तथा सदैव आनन्दित रहता है क्योंकि वह परम तत्त्व के समीप पहुँच रहा है।

सत्य का ही अस्तित्व है, असत्य का अस्तित्व नहीं है। अतः यह कहना भी अनुचित होगा कि सत्य एक है; क्योंकि सत्य स्वयं अस्तित्व है तथा यह न एक है और न 'एक-नहीं' है। सत्य अविभाज्य सत्ता है।

परम तत्त्व श्रेष्ठतम विद्वान् के मस्तिष्क को भी भ्रमित कर देता है। यह प्रखरतम बुद्धि ही पहुँच से भी परे है। परम तत्तव का शुद्ध चैतन्य के रूप में अनुभव होता है जहाँ बुद्धि एवं यह का नाश हो जाता है तथा सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही खो जाता है अर्थात् इसमें समाहित हो जाता है। सब कुछ खो जाता है, तथा सब कुछ प्राप्त हो जाता है।

परम तत्व पूर्णतः वैज्ञानिक, युक्तियुक्त, युक्तिसंगत, सन्तुलित, सुव्यवस्थित, तर्कसंगत एवं बुद्धिसंगत है। यह अनियमित एवं अव्यवस्थित नहीं है। यह प्रकृति से अतीत रहस्य नहीं है अपितु जीवन का सहज-स्वाभाविक तथ्य है। सत् (अस्तित्व) का अनंत एवं अविभाज्य स्वरूप एक आश्चर्य नहीं है, यह उसकी वास्तविक स्थिति है जिस प्रकार अग्नि की दीप्ति, जल की तरलता तथा ताँबे का भार उनकी वास्तविक प्रकृति है।

यह शाश्वत, अनश्वर एवं वास्तविक जीवन की सर्वोच्च परिपूर्णता है। प्रत्येक वस्तु, जो परिवर्तित होती है, असत्य है। परम सत्य अनन्त है। सब कुछ विन्ह होता है, मात्र सत्य विद्यमान रहता है। ब्रह्मा से तृणपर्यन्त, प्रत्येक प्राणी कुछ चेतन अथवा कुछ अचेतन रूप से सत्य की ओर ही गतिशील है। उनमें चेतना के स्तर अथवा मानसिक शुद्धता की सीमा अथवा स्थिति की सूक्ष्मता का अन्तर ही होता है। वायु में कम्पित होने वाला प्रत्येक पत्ता, हमारी प्रत्येक श्वास, दूसरे शब्दों में कहें तो वैश्विक जीवन का प्रत्येक कार्य सत्य की ओर ही एक कदम है; क्योंकि यह परम सत्य ही सबका शाश्वत निवास है। इसमें ही सब प्रविष्ट होते हैं तथा शाश्वत तृप्ति एवं शान्ति प्राप्त करते हैं। असत्य की सत्य पर नहीं अपितु सत्य की असत्य पर विजय होती है, चाहे तात्कालिक अनुभव कुछ भी हो।

सत्य

सत्य वेदों का सार है। इच्छाओं-वासनाओं पर नियन्त्रण सत्य का सार है। सांसारिक भोगों का त्याग आत्म-नियन्त्रण का सार है। एक पवित्र-धर्मपरायण व्यक्ति में ये सब गुण विद्यमान रहते हैं।

सत्य शाश्वत ब्रह्म तत्त्व है। सत्य एक अक्षय तप है। सत्य एक अक्षय स्वरूप है। सत्य एक अक्षय वेद है। सत्य से प्राप्त फल सर्वोच्च कहे गये हैं। सत्य से धर्मपरायणता एवं आत्म-नियन्त्रण का उद्भव होता है। सब कुछ सत्य पर निर्भर होता है।

सत्य के समान कोई तप नहीं है। सत्य समस्त प्राणियों का सृजन करता है। सत्य सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का पालन करता है। सत्य की सहायता से मनुष्य स्वर्ग प्राप्त करता है। जो भूत, वर्तमान एवं भविष्य तीनों कालों में विद्यमान रहता है, वह सत्य है।

सत्य समस्त प्राणियों का स्रोत है। सत्य उनकी सन्तति है। सत्य से ही जगत् गति करता है, सूर्य ऊष्मा देता है, अग्नि प्रदीप्त होती है। सत्य पर ही स्वर्ग अधिष्ठित है। सत्य, यज्ञ, तप, वेद, सामसंहिता, मन्त्र तथा सरस्वती है।

सत्य ज्ञान है। सत्य धर्मविधि हैं। सत्य व्रत-उपवासों का पालन है। सत्य आद्य अक्षर 'प्रणव' है। जहाँ धर्मपरायणता है, वहाँ सत्य है। सत्य द्वारा प्रत्येक वस्तु वृद्धि को प्राप्त होती है। सत्य धर्मपरायणता है। धर्मपरायणता प्रकाश है तथा प्रकाश आनन्द है। अहिंसा, ब्रह्मचर्य, पवित्रता, न्याय, समरसता, क्षमा एवं शान्ति सत्य के रूप ही हैं।

सत्य कर्तव्य है। सत्य योग है। सत्य महान् यज्ञ है।

निष्पक्षता, आत्म-नियन्त्रण, शील, तितिक्षा, परोपकारिता, त्याग, ध्यान, गरिमा, धृति, करुणा एवं अहिंसा सत्य के ही विविध रूप हैं।

सत्य अपरिवर्तनीय एवं शाश्वत है। यह योग द्वारा प्राप्त होता है। यह उन अभ्यासों द्वारा प्राप्त होता है जो अन्य सद्गुणों के विपरीत नहीं हैं। सतत सत्यनिष्ठा से आप वैश्विक सद्भावना प्राप्त करेंगे।

एक भला एवं ख्यातिप्राप्त व्यक्ति प्रिय तथा अप्रिय दोनों स्थितियों में क्षमा के गुण द्वारा ही सम बना रहता है। आपको सत्यनिष्ठा के अभ्यास द्वारा इस गुण का विकास करना चाहिए।

आपको सदैव क्षमा एवं धृति का अभ्यास करना चाहिए। आपको सदैव सत्यनिष्ठ होना चाहिए। जो बुद्धिमान् व्यक्ति सुख, भय एवं क्रोध का त्याग कर सकते हैं, वे धृति का विकास कर सकते हैं। मनसा-वाचा-कर्मणा किसी को आघात नहीं पहुँचाना तथा सब प्राणियों पर दया करना एक सज्जन व्यक्ति के शाश्वत कर्तव्य हैं। उपरोक्त बताये सद्गुण भिन्न प्रतीत होते हैं परन्तु ये सब सत्य के ही रूप हैं। ये सब सत्य को सशक्त बनाते हैं।

सत्य के पुण्य का क्षय करना असम्भव है। इसीलिए देवता एवं ब्राह्मण सत्य की महिमा गाते हैं।

सत्य से श्रेष्ठ कोई अन्य कर्तव्य नहीं है तथा असत्य से भयंकर कोई अन्य पाप नहीं है।

सत्य से दान, यज्ञ, तीन प्रकार के अग्निहोत्र, वेद तथा धर्मपरायणता की ओर ले जाने वाले समस्त सद्गुणों का उद्भव होता है।

एक बार तुला के एक पलड़े में सत्य को रखा गया तथा दूसरे पलड़े में सहस्त्र सद्गुणों सहित समस्त व्रत-अनुष्ठानों को रखा गया; इस प्रक्रिया में सत्य का पलड़ा ही भारी रहा। राजा हरिश्चन्द्र सत्यनिष्ठ थे। उन्होंने जीवन संकट में पड़ने पर भी सत्य का त्याग नहीं किया तथा अमरत्व, शाश्वत आनन्द एवं अक्षुण्ण कीर्ति प्राप्त की। वे आज भी हमारे हृदयों में वास करते हैं।

सत्य सदैव शुद्ध एवं अमिश्रित अवस्था में रहता है। सत्य एक सदाचारी व्यक्ति का चित्य कर्तव्य है। सत्य शाश्वत कर्तव्य है। सत्य सबका महानतम आश्रय है। इसीलिए श्रद्धापूर्वक सत्य को नमन करिए। ब्रह्म सत्य है। सत्य के अभ्यास द्वारा ही सत्य की प्राप्ति होती है। अतः सत्य में हृढ़तापूर्वक स्थिर रहिए। सत्य के पालन द्वारा परम सत्य का साक्षात्कार करिए।

सत्यनिष्ठता

श्रुति यह प्रबल घोषणा करती है, "**सत्यं वद**-सत्य बोलिए। **सत्यमेव जयते नाऽमृतम्** - असत्य की नहीं, सत्य की विजय होती है।" भगवान् सत्य है तथा सत्य का साक्षात्कार सत्य बोलने के अभ्यास द्वारा ही होना चाहिए। एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति चिन्ताओं एवं उद्वेगों से पूर्णतः मुक्त होता है। उसका मन शान्त रहता है। वह समाज द्वारा सम्मानित होता है। यदि आप बारह वर्ष तक सत्य बोलने के व्रत का पालन करें, तो आपको वाक् सिद्धि प्राप्त होगी। फिर आप जो बोलेंगे, वह घटित हो जायेगा। आपकी वाणी में शक्ति होगी। आप तब सहस्रों व्यक्तियों को प्रभावित कर सकेंगे।

आपके शब्द आपके विचारों के अनुरूप होने चाहिए तथा आपके कार्य आपके शब्दों के अनुरूप होने चाहिए। जगत् में व्यक्ति एक बात सोचते हैं, दूसरी बात कहते हैं तथा कुछ अन्य ही करते हैं। यह बहुत बुरा है।

यह कुटिलता ही है। आपको अपने विचारों, शब्दों एवं कार्यों का सावधानीपूर्वक निरीक्षण करना चाहिए। असत्य बोलने से होने वाला अल्प लाभ वास्तव में लाभ नहीं है। इससे आप अपनी अन्तरात्मा एवं अवचेतन मन को दूषित करते हैं। असत्य बोलने की आदत अगले जन्म तक साथ जाती है तथा इस प्रकार आप जन्म-जन्मान्तर तक कष्ट भोगते हैं। क्या आपने कभी इस विषय में सोचा है? अत्यधिक गम्भीर बनिए एवं इसी क्षण से असत्य बोलने की इस बुरी आदत का त्याग कर दीजिए।

राजा हरिश्चन्द्र का नाम आज भी घर-घर में प्रसिद्ध है क्योंकि वे एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति थे। उन्होंने किसी भी परिस्थिति में सत्य का त्याग नहीं किया। उन्होंने अपनी पत्नी एवं राज्य की परवाह नहीं की, सब प्रकार के कष्ट सहन किये। वे अन्त तक सत्यनिष्ठ रहे । ऋषि विश्वामित्र ने उन्हें असत्य अपनाने को विवश करने हेतु यथाशक्य प्रयास किया परन्तु वे अपनी विभिन्न योजनाओं में असफल ही रहे। अन्ततः सत्य की ही विजय हुई।

कार्ड बोर्ड पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखिए "सत्य बोलो" तथा इसे अपने घर के विभिन्न स्थानों पर लगाइए। जब भी आप असत्य बोलने को उद्यत होंगे, यह आपको सत्य बोलने का स्मरण करायेगा। आप तुरन्त स्वयं को रोक लेंगे। एक समय आयेगा जब आप सत्य बोलने की आदत में पूर्णतः प्रतिष्ठित हो जायेंगे। यदि आप असत्य बोलते हैं. तो उपवास रख कर स्वयं को दण्डित करिए तथा स्वयं द्वारा बोले गये असत्य-वचनों को दैनिक डायरी में भी लिखिए। धीरे-धीरे आपका असत्य बोलना कम हो जायेगा तथा आप एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति बन जायेंगे।

सत्य बोलिए

सत्य एक ऐसा सामान्य शब्द है जिसके पालन हेतु पीढ़ी-दर-पीढ़ी, समय-समय पर, दिन-प्रतिदिन तथा क्षण-प्रतिक्षण प्रत्येक मनुष्य द्वारा परामर्श दिया जाता है। यह एक आदर्श है जिसका पालन किया जाना चाहिए तथा जिसकी आराधना की जानी चाहिए। भगवान् सत्य हैं तथा सत्य भगवान् है। जिस प्रकार आप उन सर्वशक्तिमान् प्रभु की आराधना करते हैं, उसी प्रकार सत्य की आराधना करते हैं। यह जीवन का आवश्यक तत्त्व है। यह स्वयं में एक आशीर्वाद है। इसमें सूर्य की दीप्ति है। इसे भगवान् का आशीर्वाद प्राप्त है। यह स्वयं में पूर्ण है। सत्य एक दृढ़ आधारशिला है। यह साहसी तथा भयरहित होता है। यह देश-काल की सीमा से परे है। यह गगन का निर्भय-स्वच्छन्द पक्षी है। यह पद-प्रतिष्ठा की परवाह नहीं करता है। यह स्वयं tilde pi सम्पत्ति है।

सत्य की हरे-भरे चारागाहों से युक्त एक मार्ग से तुलना की जा सकती है तथा असत्य की काँटों भरी एक झाड़ी से तुलना की जा सकती है। जो व्यक्ति असत्य का आश्रय लेता है, उसके भीतर सदैव भय, उद्विग्नता, आत्म-विश्वास की कमी, 'कहीं कुछ अनुचित-बुरा न घटित हो जाये' की भावना रहती है। सत्य धर्मपरायणता का मार्ग है जो अन्ततः सफलता की ओर ले जाता है। यह एक सीधा मार्ग है जिसमें भ्रमित करने वाले विभाजक-मार्ग नहीं हैं। हम राजा हरिश्चन्द्र के विषय में सुन चुके हैं कि सत्य की प्रतिष्ठा के लिए उन्होंने अनेक कष्ट सहन किये। आज के दिन-प्रतिदिन के संसार में, सत्य का दृढ़तापूर्वक पालन करना असम्भव प्रतीत होता है; परन्तु यदि आप इसे अपना आदर्श एवं लक्ष्य मान कर इसका अभ्यास करें, तो आप सफलता प्राप्त करेंगे। जैसे-जैसे आप इस सीधे मार्ग पर आगे बढ़ेंगे, समस्त बाधाएँ स्वयमेव समाप्त होती जायेंगी।

सत्य के इस सीधे मार्ग पर चलते समय कुछ भ्रान्तियों का जन्म होता है। इसमें कोई हानि नहीं है यदि कोई माता बालक की प्रेमपूर्वक देखभाल करते समय उसका ध्यान यह कह कर दूसरी ओर खींचती है कि मिठाई का टुकड़ा अभी-अभी कौआ ले गया है; तथा वह इसके लिए अत्यधिक दुःखी होने का प्रदर्शन करती है एवं फिर बालक को सायंकाल में बड़ा केक लाने का आश्वासन भी देती है। एक पिता अपने सातवर्षीय बालक को यह आश्वासन देता है कि यदि वह दिन समाप्त होने से पूर्व अपनी अंकगणित की पुस्तक के पाँच कठिन सवालों को सफलतापूर्वक पूर्ण करता है तो उसे पुरस्कार प्राप्त होगा; परन्तु बालक के द्वारा कार्य-समाप्ति से पूर्व ही पिता कम्बल ओढ़ कर सो जाने का बहाना करता है। अतः बालक दौड़ कर माँ के पास जाता है और कहता है, "मैंने

अपना कार्य पूरा कर लिया है परन्तु पिताजी तो सो गये हैं। मैं उन्हें परेशान नहीं करना चाहता हूँ, क्योंकि वे बहुत अधिक धके हुए हैं।" यदि अपने वचनों से आप किसी के कार्य में हस्तक्षेप नहीं करते हैं, अन्य व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाते हैं, उन्हें हानि नहीं पहुँचाते हैं, तो इसे असत्य नहीं कहा जायेगा। यदि आपको स्वयं धन की आवश्यकता है, तो आप दूसरे को अल्प ऋण देना अस्वीकृत करते हैं; आप अपना पेन अथवा अन्य वस्तु दूसरे को नहीं देना चाहते हैं, अतः उन्हें वह वस्तु देना अस्वीकृत करते हैं; तो इन्हें असत्य नहीं कहा जा सकता है।

यदि आपके असत्य से आपकी तथा अन्य व्यक्तियों की शान्ति भंग होती है, दूसरों के कार्य-व्यवसाय को हानि पहुँचती है तो संसार में इससे बड़ा पाप अन्य कोई नहीं है। आपको अत्यधिक पश्चात्ताप के साथ अपने इस कृत्य का परिणाम भुगतना होगा। आप वास्तव में त्रुटि कर रहे हैं तथा सदाचार के पथ से च्युत हो रहे हैं तथा यह कुपथगामी होना आपको आत्म-साक्षात्कार के मार्ग से विचलित करता है। सत्य एक आदर्श है जिसकी आराधना की जानी चाहिए तथा प्रत्येक परिस्थिति में जिसका पालन किया जाना चाहिए। यह मानव-जीवन का सर्वस्व है, सर्वोपरि उद्देश्य है।

जब आप केवल एक साधारण अधिकारी हैं जिसकी अपनी कोई पद-प्रतिष्ठा नहीं है, तो आप स्वयं को इतना श्रेष्ठ क्यों मानते हैं तथा दूसरों को मिथ्या वचन क्यों देते हैं? क्या आप व्यवहार में सरल नहीं हो सकते हैं तथा अपने मित्र को उचित मार्गदर्शन नहीं दे सकते हैं? अपने मित्र को लम्बे समय तक अनिश्चितता की अवस्था में रखना तथा बाद में उसे सत्पथ पर चलने हेतु कुछ दयापूर्ण परामर्श दे कर छोड़ देना क्या आपके अथवा आपके मित्र के लिए किसी भी प्रकार से लाभप्रद है?

सदैव साहसी एवं सरल बनिए; एक दुर्बल-भीरू व्यक्ति के समान संकोची बनिए। सीधे मार्ग का अनुसरण करिए। उस अल्प सीमा तक ही दूसरों की सेवा कर जिसे करने में आप सक्षम हैं। अपने को बहुत बड़ा मत समझिए। सदैव सरल बनिए। अपने पड़ोसी से प्रेम करिए तथा उसे केवल उचित परामर्श दीजिए अथवा परामर्श बिलकुल नहीं दीजिए। उसे अनुचित मार्ग मत दिखाइए। उसे मिथ्या आशा-आश्वासन मत दीजिए। ऐसा मत कहिए, "मैं प्रयास करूंगा; एक-दो दिन में आपको बताऊँगा; मैं देखता हूँ कि इस विषय में क्या कर सकता हूँ।" इस प्रकार के अनिश्चितता भरे शब्दों से आपकी को हानि नहीं होती है, परन्तु आपके पड़ोसी की अत्यधिक हानि होती है क्योंकि आप पर निर्भर रह कर उसने अपना बहुत अधिक समय व्यर्थ गँवा दिया है, आपके अनुचित परामर्श से उसने अपने जीवन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अवधि खो दी है क्योंकि अब वह गलती सुधारने अथवा समस्या सुलझाने के लिए कुछ भी नहीं कर सकता है। एक पुरानी कहावत है, "कला दीर्घजीवी है तथा समय अल्प है।" समय को व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। असत्य आचरण वाला व्यक्ति स्वयं का तथा दूसरों का भी समय नष्ट करता है। जब आपको यह अनुभव होगा कि आपने उसे अनुचित मार्गदर्शन दिया है, तब आप समझेंगे कि आप सत्य के पथ से च्युत हुए हैं तथा यह कार्य आपको दीर्घावधि तक उत्पीड़ित करता रहेगा।

अतः प्रत्येक स्थिति में सत्य के पथ पर अडिग रहिए। सत्य की अपनी एक दीप्ति होती है। यह स्वयं प्रकाशित होता है तथा दूसरों को भी प्रकाशित करता है। जब आप सत्य को अपना एकमात्र धर्म मान कर इसका पालन करेंगे, तो आप सबके प्रिय बनेंगे। सत्य के मार्ग पर चलने से आप किसी को हानि नहीं पहुँचा सकते हैं। अतः सर्वत्र आपका सम्मान होगा, आप अपने चारों ओर शान्ति एवं आनन्द का वातावरण पायेंगे। सत्य के मार्ग से विशाल कोई अन्य साम्राज्य नहीं है, इससे आनन्दपूर्ण अन्य आनन्द नहीं है तथा इससे सुखप्रद कोई अन्य सुख नहीं है। इसके परिणामस्वरूप, आपके तथा आपके साथियों-सहयोगियों के मध्य सदैव प्रेम एवं मुस्कराहटों का सम्बन्ध बना रहेगा। क्योंकि आप किसी प्रकार के बोझ से दबे नहीं हैं, आप भूतकालीन विचारों से आक्रान्त नहीं है तथा आप पूर्णतः स्वतन्त्र-मुक्त हैं।

सम्पूर्ण जगत् प्रत्येक प्रकार की स्वतन्त्रता चाहता है, प्रत्येक मनुष्य का इदप अनावश्यक विचारों से मुक्ति चाहता है, अतः प्रत्येक मनुष्य आपसे मुक्त-वार्तालाप को इच्छुक होगा। ऐसा आदर्श आपके सम्मुख होने पर भी आप सत्यनिष्ठता का दृढ़तापूर्वक पालन क्यों नहीं कर सकते हैं? ऐसी कोई अबोधगम्य परिस्थिति नहीं होती है, जैसा कि आप कहते हैं कि आपको उस अबोधगम्य परिस्थिति में असत्य बोलना पड़ता है। असत्य एक ऐसा साधन है जो किसी लक्ष्य तक नहीं ले जाता है। दुर्बल, कायर एवं भीरु व्यक्ति ही असत्य बोलते हैं। संकोचशील एवं अस्थिरमना व्यक्ति असत्य विचार एवं असत्य भाषण करते हैं।

सत्य के पथ पर चलने वाला व्यक्ति प्रत्येक कार्य पूर्ण साहस, स्वतन्त्र इच्छा एवं सुख के साथ करता है; क्योंकि वह अपने समस्त विचारों को मुक्त छोड़ देता है तथा स्वयं को अन्य व्यक्तियों से भिन्न मान कर कुछ विशेष महत्ता नहीं देता है। उसके लिए सेवा ही महत्वपूर्ण है, वह उसी अल्प सेवा से शान्त-सन्तुष्ट रहता है जितनी वह कर पाता है। उसके सम्मुख सदैव एक साहस एवं निश्चिततापूर्ण कदम होता है। उसमें अहंकार नहीं होता है। वह दूसरों के प्रेम में स्वयं को खो देता है। सेवा, सेवा, केवल सेवा ही उसका आदर्श होता है। वह सेवा के फल के विषय में किसी प्रकार की कल्पना अथवा विचार नहीं करता है। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' (गीता : २/४७) - यही शिक्षा उसके जीवन का लक्ष्य है। वह नकारात्मक परिणामों से हताश नहीं होता है। सम्पूर्ण जगत् उसके लिए एक नाटक की भाँति है। वह इससे लेशमात्र भी प्रभावित नहीं होता है। वह इस नाटक को देखता है तथा शान्तिपूर्वक आगे चला जाता है। इस प्रकार का शान्त कार्य-व्यवसाय सफलतम कार्य-व्यवसाय होता है। सर्वशक्तिमान् प्रभु हमें सत्य एवं अहिंसा के पथ पर चलने का आशीर्वाद प्रदान करें।

संकल्प शक्ति (Will-power)

संकल्प चयन अथवा निश्चय करने की शक्ति है। यह इच्छा शक्ति है ।

संकल्प बोध तथा विशेषतया विचारपूर्वक चयन द्वारा स्वयं की गतिविधियों, भावनाओं, विचारों तथा आन्तरिक अवस्थाओं पर नियन्त्रण की शक्ति है। यह स्वनिश्चय की क्षमता है जो बाह्य उद्दीपकों से प्रेरित होने वाली समस्त दैहिक एवं मानसिक क्रियाओं से तथा आदत, संग एवं मूल प्रवृत्ति द्वारा प्रभावित समस्त बौद्धिक एवं भावनात्मक क्रियाओं से सर्वथा भिन्न है। यह सदैव समझना चाहिए कि चयन अथवा संकल्प के अनिश्चित स्तर होते हैं; तथा ध्यान-अवधान पर नियन्त्रण मानसिक जीवन में 'संकल्प शक्ति' की विद्यमानता का मुख्य एवं सर्वाधिक स्पष्ट प्रमाण है।

अरस्तु के अनुसार स्वतन्त्र-संकल्प एक विवेकपूर्ण इच्छा है जिसकी शांति प्रचार वायु के समान है।

संकल्प वह दक्षता अथवा शक्ति है जिसके द्वारा हम अपनी सामर्थ्य में निहित किसी कार्य को करने अथवा नहीं करने का निश्चय करते हैं। इस क्षमता का प्रयोग दो या दो से अधिक वस्तुओं अथवा कार्यों में से एक के चयन हेतु होता है। यह मन की नियन्त्रण-शक्ति है जिसके द्वारा वह अपनी ही क्रियाओं पर नियन्त्रण रखता है।

प्राचीन विद्वानों द्वारा मानसिक क्षमताओं का 'बोध' एवं 'संकल्प' दो भागों में विभाजन किया गया। यह विभाजन भावना तथा आत्मनिर्णय की शक्ति के संयोजन द्वारा भावना की तृप्ति पर आधारित था।

समाजीकृत क्षमताओं के अधिक विस्तृत एवं पूर्ण विश्लेषण से आधुनिक विद्वानों द्वारा इन्हें इन तीन भागों में बाँटा गया-बुद्धि, भावना एवं संकल्प।

मनोविज्ञान के विद्यार्थियों द्वारा अभी हाल में किया सम्पूर्ण विश्लेषण संकल्प को मात्र एक क्षमता नहीं मानता है, अपितु उनके अनुसार संकल्प मानसिक जीवन का पूर्ण क्रियात्मक पक्ष है क्योंकि यह चेतनापूर्वक किया गया स्वैच्छिक कार्य है तथा इसका अन्त एक विवेकपूर्ण निर्णय में होता है।

इच्छा (Desire), चाह (Wish) एवं संकल्प (Will) मन की अवस्थाएँ हैं जिनसे प्रत्येक व्यक्ति भली-भाँति परिचित है तथा जिन्हें किसी परिभाषा की आवश्यकता नहीं है।

यदि इच्छा के विषय में हम यह जानते हैं कि इसकी पूर्ति सम्भव नहीं है तो हम मात्र उसकी चाहना करते हैं, परन्तु यदि हमें विश्वास है कि उसकी पूर्ति हमारी शक्ति अथवा सामर्थ्य से बाहर नहीं है तो हम उसकी प्राप्ति अथवा पूर्ति हेतु संकल्प करते हैं।

विभिन्न चिन्तकों द्वारा तथा जनसामान्य द्वारा भी मनुष्य के मानसिक जीवन के इस आत्मनिर्णायक पक्ष को सामाजिक एवं नैतिक कर्तव्य का आधार माना गया है यद्यपि इसके प्रयोग के विविध प्रकार हो सकते हैं।

संकल्प की अवधारणा में इच्छा अथवा आकांक्षा तथा इच्छा की पूर्ति की शक्ति अथवा क्षमता दोनों ही समान रूप से समाहित हैं।

महान् व्यक्ति सदैव संकल्प करते हैं; दुर्बल व्यक्ति मात्र चाहना करते हैं। वेदान्त के अनुसार संकल्प आत्म बल अथवा आध्यात्मिक बल है जो आत्मा से प्राप्त होता है।

दृढ़, शुद्ध एवं अपतिरोध्य संकल्पयुक्त व्यक्ति विश्व में कोई भी कार्य करने में सक्षम है । वह सम्पूर्ण विश्व को तथा तीनों लोकों को प्रभावित कर सकता है।

जब आप इच्छाओं-वासनाओं से मुक्त होते हैं, तो संकल्प दृढ़ से दृढ़तर हो जाता है ।अन्ततः आप संकल्प की स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेते हैं।

भावान् के प्रति पूर्ण समर्पण कीजिए। तब आपकी वैयक्तिक इच्छा अथवा संकल्प भगवदीय इच्छा से एकरूप हो जायेगा। आप प्रत्येक बोझ को हल्का तथा प्रत्येक कर्तव्य को आनन्दपूर्ण पायेगे।

भगवदीय इच्छा को अपनी इच्छा अथवा संकल्प मान कर कार्य करिए; फिर भगवान् आपकी इच्छा को अपनी इच्छा मान कर पूर्ण कर देंगे। भवदीय इच्छा के अनुरूप इच्छा अथवा संकल्प रखना पूर्ण शान्ति एवं विश्राम हानि का एकमात्र मार्ग है।

संकल्प शक्ति का विकास कैसे करें

एकाग्रता, तितिक्षा, द्वेष एवं उद्विग्नता पर नियन्त्रण, कष्टों में धृति, तपस्या (एक पैर पर खड़े होना, तीक्ष्ण धूप में बैठना) अथवा पंचाग्नि तप, शीत ऋतु में ठण्ढे जल में खड़े होना, हाथों को ऊपर उठा कर एक ही स्थिति में एक घण्टा रखना, उपवास, धैर्य, क्रोध पर नियन्त्रण, सहनशीलता, मृदुलता, संकट का सामना करने की दृढ़ता, प्रतिरोध की गाने, सत्याग्रह तथा दैनिक डायरी रखना आदि सभी संकल्प शक्ति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। व्यक्ति को दूसरों के शब्दों को धैर्यपूर्वक सुनना चाहिए चाहे वे रूचिकर अथवा मोहक न हों। उसे क्षुब्ध नहीं होना चाहिए। धैर्यपूर्वक सुनना संकल्प शक्ति का विकास करता है तथा अन्य व्यक्तियों के हृदयों पर विजय

भी प्राप्त कराता है। व्यक्ति को अरुचिकर लगने वाले कार्यों को करना चाहिए। इससे भी संकल्प शक्ति का विकास होता है। जो कार्य अभी अरुचिकर प्रतीत होते हैं, कुछ समय बाद रुचिकर हो जायेंगे।

बुरे वातावरण के लिए कभी शिकायत मत करिए। जहाँ भी आप जायें तथा रहें, अपना मानसिक जगत् बनायें। जहाँ भी आप जाते हैं, वहाँ कुछ न कुछ असुविधाएँ तथा कठिनाइयाँ होती हैं। यदि आपका मन आपको प्रत्येक क्षण, प्रत्येक पग पर भ्रमित करता है. तो उचित साधनों द्वारा उन विघ्नों-कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास करिए। बुरे तथा अनुविधाजनक वातावरण से भागने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। आपके शीघ्र विकास हेतु भगवान् ने आपको उस वातावरण में रखा है।

यदि आपको किसी स्थान पर सब प्रकार की सुविधाएँ मिलती हैं, तो आप सशक्त-दृढ़ नहीं बनेंगे। किसी भी नये स्थान पर, जहाँ आपको ये सुविधाएँ नहीं मिल रही हैं, आपका मन विक्षुब्ध-व्यथित हो जायेगा। अतः सभी स्थानों का सदुपयोग करिए । स्थान एवं वातावरण के विरुद्ध कभी शिकायत मत करिए। अपने मानसिक जगत् में रहिए । तब कुछ भी आपके मन को विक्षुब्ध नहीं कर सकता है। आप गंगोत्री के समीप हिमालय के हिमाच्छादित क्षेत्र में भी राग-द्वेष की उपस्थिति पायेंगे। आप विश्व के किसी भी भाग में एक आदर्श स्थान तथा आदर्श वातावरण प्राप्त नहीं कर सकते हैं। काश्मीर बहुत ठण्ड़ा क्षेत्र है, वहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य मनोहारी है परन्तु रात्रि में आपको पिस्सू परेशान करते हैं अतः आप सो नहीं सकते हैं। बनारस संस्कृत शिक्षण का उत्तम केन्द्र है परन्तु यह गर्मी में चलने वाली प्रखर उष्ण वायु के लिए प्रसिद्ध है। हिमालय में उत्तरकाशी अत्यन्त सुन्दर स्थान है, परन्तु वहाँ आप फल-सब्जियाँ प्राप्त नहीं कर सकते हैं; यहाँ कड़ाके की सर्दी भी पड़ती है। यह जगत् अच्छे एवं बुरे का समन्वित क्षेत्र है। इस तथ्य को सदैव स्मरण रखिए। किसी भी स्थान पर, कैसी भी परिस्थिति में प्रसन्नतापूर्वक रहने का प्रयास करिए। आप दृढ़मना बनेंगे तथा स्वर्गिक लोकों, आध्यात्मिक लोकों एवं शाश्वत धाम का द्वार खोलने में सक्षम होंगे। दृढ़ संकल्प शक्ति से आप किसी भी कार्य में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त कर सकते हैं। किसी भी कठिनाई पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

संकल्प शक्ति को दृढ़ करने में एकाग्रता का अभ्यास अत्यधिक सहायक है। आपको अपने मन की आदतों को बुद्धिमत्तापूर्वक समझना चाहिए कि वह किस प्रकार कार्य करता है तथा किस प्रकार यत्र-तत्र भटकता है। आपको मन के इस भटकने पर नियन्त्रण करने हेतु सरल एवं प्रभावशाली विधियों को जानना चाहिए। विचार-नियन्त्रण का अभ्यास, एकाग्रता का अभ्यास तथा स्मृति-संवर्धन का अभ्यास एक-दूसरे से सम्बन्धित विषय हैं। ये सभी संकल्प शक्ति के विकास में अत्यधिक सहायक हैं। आप इनके मध्य एक विभाजक रेखा नहीं खींच सकते हैं कि कहाँ एकाग्रता अथवा स्मृति विकास का अभ्यास समाप्त होता है तथा कहाँ से संकल्प शक्ति के विकास का अभ्यास प्रारम्भ होता है। इसमें कोई कठोर नियम नहीं है। एकाग्रता के अभ्यास हेतु विशिष्ट जानकारी के लिए कृपया मेरी पुस्तक 'धारणा एवं ध्यान' (Concentration and Meditation) पढ़िए।

श्रीमान् ग्लेडस्टोन एवं श्रीमान् बेलफोर अपने संकल्प बल से शय्या पर जाते ही गहन निद्रा में चले जाते थे। उनकी इतनी दृढ़ संकल्प-शक्ति थी। महात्मा गाँधी जी का भी ऐसा अभ्यास था। वे प्रातःकाल ठीक उसी समय पर उठ जाते थे जितने बजे उठने का संकल्प करते थे। अवचेतन मन उनका आज्ञाकारी सेवक था। यह उन्हें ठीक उसी क्षण जगा देता था। आपमें से प्रत्येक को संकल्प द्वारा इस आदत का विकास करना चाहिए तथा गांधीजी,ग्लेउस्टोन एवं बेलफोर के समान बनना चाहिए। सामान्यतया अधिकांश व्यक्ति शय्या में घण्टों करवटें बदलते रहते हैं तथा आधे घण्टे भी गहन निद्रा प्राप्त नहीं करते हैं। निद्रा का समय नहीं अपितु इसकी गुणवत्ता व्यक्ति में स्फूर्ति का संचार करती है। एक एक घण्टे की गहन निद्रा शरीर एवं मन को स्फूर्ति एवं शक्ति प्रदान करने हेतु पर्याप्त है। शय्या पर जाते ही आप मन को शिथिल-शान्त कर यह निर्देश दें, "अब मैं अच्छी नींद सोऊँगा " अन्य कुछ चिन्तन मत करिए। नेपोलियन की यह आदत थी। युद्ध क्षेत्र में नगाडे एवं बिगुल बजते समय भी वह

खर्राटे ले सकता था अर्थात् गहन निद्रा में सोता था। उसका अवचेतन मन उसे ठीक उसी क्षण जगा देता था जब वह जागना चाहता था। प्रशान्तमना नेपोलियन युद्धभूमि में सिंह के समान उग्र होता था।

व्यक्ति को स्वयं को चलती कार, ट्रेन, हवाईजहाज में बैठे-बैठे सोने का प्रशिक्षण देना चाहिए। यह अभ्यास उन व्यस्त चिकित्सकों, वकीलों तथा व्यवसायियों के लिए अच्चान्त उपयोगी है जिन्हें प्रतिदिन बहुत अधिक कार्य करना पड़ता है तथा बहुत अधिक यात्राएँ करनी पड़ती हैं। आजकल जीवन इतना जटिल हो गया है कि व्यस्त व्यक्तियों के पास पर्याप्त निद्रा हेतु भी समय नहीं है। उन्हें जब भी खाली समय मिलता है, चाहे वह पाँच मिनट भी क्यों न हो; आँखें बन्द कर सो जाना चाहिए। इससे उन्हें विश्राम प्राप्त होगा; इसके उपरान्त वे अपना कार्य कर सकते हैं। इस प्रकार का अभ्यास व्यस्त व्यक्तियों के लिए आशीर्वाद-वरदान स्वरूप है। उनके स्नायु सदैव तनाव एवं दबाव में रहते हैं। थोड़ी-थोड़ी देर में स्नायुओं को शिथिल कर वे स्वयं को स्फूर्तिवान् कर सकते हैं तथा आगे के कार्य हेतु स्वयं को तैयार रख सकते हैं। व्यक्ति को हावड़ा एवं बाम्बे रेलवे स्टेशन के प्लेटफामों पर सोने में सक्षम होना चाहिए जहाँ हर समय रेलगाड़ियाँ आती-जाती रहती हैं। यह एक अद्भुत अभ्यास है जो अत्यधिक शक्ति प्रदान करता है। डॉ. एनी बेसेन्ट कार में यात्रा करते हुए सम्पादकीय आलेख लिखती थीं। कुछ व्यस्त चिकित्सक शौचगृह में समाचार-पत्र पढ़ते हैं। वे अपने मन को पूर्णतया व्यस्त रखते हैं। मन को पूर्णतया व्यस्त रखने का अभ्यास शारीरिक एवं मानसिक ब्रह्मचर्य के पालन हेतु सर्वोत्तम अभ्यास है। जो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को चुम्बकीय, आकर्षक एवं विलक्षण आमा बाहते हैं, उन्हें अपने प्रत्येक क्षण का यथासम्भव लाभ हेतु सदुपयोग करना चाहिए तथा स्वयं के मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु प्रयास करना चाहिए। व्यर्थ गपशप का पूर्णतः त्याग करना चाहिए। हममें से प्रत्येक को समय की महत्ता समझनी बाहिए। यदि व्यक्ति अपने समय का अत्यन्त लाभप्रद रूप से सदुपयोग करता है, तो उसकी संकल्प-शक्ति निश्चयमेव दृढ़ एवं क्रियाशील बनती है।

परिश्रम एवं दृढ़ता, रुचि एवं एकाग्रता, धैर्य एवं अध्यवसाय, विश्वास क आत्मनिर्भरता व्यक्ति को विश्व का महानतम व्यक्ति बना सकते हैं।

उमंग-उत्साह (Zeal)

उत्साह किसी वस्तु अथवा कार्य के लिए अत्यधिक जोश है। यह उमंग है। यह किसी लक्ष्य प्राप्ति हेतु गहन उत्सुकता विशेषतया निःस्वार्थ उत्सुकता है। यह उत्साहयक्ष भक्ति है। यह धर्मोत्साह है।

सफलता योग्यता से अधिक उत्साह पर निर्भर रहती है। अपने शरीर, मन एवं आत्मा को कार्य के प्रति पूर्णतया अर्पित कर दीजिए। सफलता निश्चयमेव आपकी ही है।

आपकी भेंट का स्वरूप नहीं अपितु आपका उत्साहपूर्ण भाव प्रभु को प्रसन्न करता है।

उत्साह अग्नि के समान है।

न्याय (Justice)

न्याय ईमानदारी है, निष्पक्षता है।

एक न्यायनिष्ठ व्यक्ति विधिपालक, ईमानदार, सच्चा, धर्मपरायण एवं न्यायप्रिय होता है।

न्याय स्थायी शासन करता है। अन्याय अस्थायी एवं भ्रामक है। जो व्यक्ति न्याय में विश्वास रखता है, वह सब प्रकार की विपत्ति-कठिनाइयों में शान्त रहता है।

किसी को आघात नहीं पहुँचाना न्याय है। न्याय शालीनता है। एक न्यायनिष्ठ व्यक्ति किसी को अप्रसन्न नहीं करता है।

समाज की शान्ति न्याय पर निर्भर करती है। वकीलों, न्यायाधीशों, सरकारी अभियोक्ताओं, पुलिस अधिकारियों, अधीक्षकों तथा समस्त सरकारी अधिकारियों को न्यायनिष्ठ होना चाहिए। न्याय-हस्त अर्थात् न्याय की अवधारणा उन्हें उचित मार्ग पर ले जाये।

शासन में न्याय की स्थापना सामाजिक सुरक्षा, मानव-कल्याण तथा राष्ट्र की प्रगति एवं सुधार की नींव है।

सरकारी-शासकीय सन्दर्भ में न्याय से अभिप्राय प्रत्येक व्यक्ति को वह उपलब्ध कराना है जिसके वह योग्य है। समता प्रत्येक को अधिकाधिक सुविधा तथा विशेषाधिकार देना है। व्यक्तिगत तथा सामाजिक सन्दर्भ में न्याय से अभिप्राय मनसा-वाचा-कर्मणा प्रत्येक को वह देना है जो उसका अधिकार है। साहित्यिक कृतियों के सम्बन्ध में न्याय सत्य अथवा वास्तविक तथ्य की निष्ठापूर्वक एवं पूर्वाग्रह रहित अभिव्यक्ति है। हम किसी विषय अथवा कथन के साथ न्याय की बात कहते हैं।

न्याय राष्ट्र का पोषक आहार है अर्थात् राष्ट्र के विकास हेतु आवश्यक तत्त्व है। न्याय की ही विजय होती है।

न्याय वह महानतम सरल सिद्धान्त है जो सम्पूर्ण शासन की सफलता का रहस्य है। यह अधिकारियों का प्रथम गुण है।

दूसरों की सम्पत्ति मत हड़पिए। लोभी मत बनिए। दूसरों से लिए ऋण का भुगतान करिए। दूसरों की सम्पत्ति पर बुरी दृष्टि मत डालिए। किसी प्रलोभन से आकर्षित मत होइए, तथा न ही किसी कारण से उत्तेजित होइए।

यदि आपने अन्यायपूर्ण कार्य किया है, तो पश्चात्ताप करिए, भगवान् से प्रार्थना करिए, उनके नाम का जप करिए। स्वयं को तुरन्त सुधार लीजिए तथा भविष्य में सावधान रहिए।

कालाबाजारी का तुरन्त त्याग कीजिए। दूसरों को धोखा मत दीजिए। आपको कष्ट उठाना पड़ेगा। आपको निम्न योनियों में जन्म लेना पड़ेगा। आप नरक में कठोरतापूर्वक दण्डित किये जायेंगे। आप असाध्य रोगों से पीड़ित होंगे तथा आपकी असामयिक मृत्यु होगी। आपकी अन्तरात्मा आपको उत्पीड़ित करेगी।

वस्तुओं को बेचते समय ग्राहकों से अधिक धन मत लीजिए। अपने लिए अल्प लाभ रख कर वस्तुएँ बेचिए।

निर्धनों पर अत्याचार मत कीजिए। भोले-भाले, अज्ञानी एवं दुर्बल जनों का शोषण मत करिए।

विश्वासघात मत करिए। अपने स्वामी के प्रति निष्ठावान् रहिए। आप पर विश्वास काने वाले, आप पर निर्भर रहने वाले व्यक्ति के साथ छल मत करिए।

अन्यों के साथ व्यवहार में सदैव निष्पक्ष, ईमानदार एवं न्यायपूर्ण रहिए।

किसी के विरुद्ध मिथ्या साक्षी मत बनिए।

पूर्णतया न्यायनिष्ठ होना दिव्य स्वभाव का लक्षण है। एक न्यायनिष्ठ व्यक्त महिमाशाली होता है। वह इस धरा पर साक्षात् भगवद् तुल्य है।

निष्पक्षता न्याय का प्राण है। न्याय प्रत्येक को उसकी योग्यतानुसार देने की सतत् इच्छा एवं प्रयास है।

एक ईमानदार व्यक्ति सदैव न्यायपूर्ण ढंग से विचार करता है।

अन्याय के परिणामों को अच्छी तरह समझिए। आप न्यायनिष्ठ बन जायेंगे।

न्यायनिष्ठ बनिए तथा भयभीत मत होइए।

बिना बुद्धिमत्ता-ज्ञान के न्याय सम्भव नहीं है। न्याय विधि-कानून के अनुरूप होता है।

यदि आप शान्ति चाहते हैं, तो न्यायप्रिय बनिए।

न्याय भगवान् का विचार है। यह मनुष्य का आदर्श है। यह मनुष्य के आचरण हेतु नियम है। अतः न्यायनिष्ठ बनिए। न्याय का अभ्यास कीजिए।

एक न्यायनिष्ठ व्यक्ति विधि तथा कानून के अनुरूप कार्य करता है। वह व्यक्ति के कार्यानुसार दण्ड एवं पुरस्कार प्रदान करता है।

न्याय नीतिशास्त्र अथवा प्राकृतिक नियमों के सन्दर्भ में सही एवं उचित के निर्धारण से सम्बन्धित है तथा कभी-कभी शासकीय विधि के सन्दर्भ में सही एवं उचित का निर्धारण है।

समता, न्यायसंगतता, निष्पक्षता, ईमानदारी, विधिनिष्ठा, आर्जव, सदाचारिता तथा सत्य न्याय के समानार्थी शब्द हैं।

ईमानदारी, आर्जव, सदाचार एवं सद्‌गुण व्यक्तिगत आचरण की नैतिक नियमों के साथ अनुरूपता बताते हैं तथा इस प्रकार इनमें न्यायनिष्ठा भी सम्मिलित होती है जिसका अर्थ अन्यों को वह देना है जिसके वे अधिकारी हैं।

भ्रष्टाचार, बेईमानी, विश्वासघात, एकपक्षीयता, पक्षपात, कपट, अन्याय एवं अनैतिकता न्याय के विपरीत शब्द हैं।

हे मनुष्य! सदैव न्यायनिष्ठ रहिए। अपने हृदय का निरीक्षण करिए। अन्तरात्मा की मन्द ध्वनि को सुनिए। आप प्रचुर शान्ति एवं आनन्द प्राप्त करेंगे।

बारह सद्गुणों पर ध्यान (Meditation on Twelve Virtues)

प्रतिदिन दश मिनट इन सद्गुणों पर ध्यान करिए-

जनवरी में विनम्रता
फरवरी में आर्जव
मार्च में साहस
अप्रैल में धैर्य
मई में करुणा
जून में विशालहृदयता
जुलाई में निष्कपटता
अगस्त में शुद्ध प्रेम
सितम्बर में उदारता
अक्तूबर में क्षमा
नवम्बर में समचित्तता
दिसम्बर में सन्तोष

पवित्रता, अध्यवसाय, परिश्रम, साहस एवं उत्साह पर भी ध्यान करिए। ऐसी कल्पना करिए कि आप वास्तव में इन सद्गुणों से सम्पन्न हो गये हैं। स्वयं से कहिए, "मैं धैर्यशील हूँ। आज से मैं अधीर-विक्षुब्ध नहीं होऊँगा। मैं अपने दैनिक जीवन में इस सद्गुण को अभिव्यक्त करूँगा। मुझमें सुधार हो रहा है।" इस सद्गुण की प्राप्ति से होने वाले लाभों तथा विक्षुब्धता के दुष्परिणामों के सम्बन्ध में विचार करिए।

आध्यात्मिक पथ कण्टकाकीर्ण, विषम एवं कठिन है। यह बहुत लम्बा है। पैर थक सकते हैं तथा आहत हो सकते हैं। हृदय पीड़ा से व्यथित हो सकता है। परन्तु इसका पुरस्कार अत्यन्त महान् है। आप अमर हो जायेंगे। दृढ़ता एवं अध्यवसायपूर्वक लगे रहिए। सजग-सतर्क रहिए। गिलहरी की भाँति दक्ष एवं पुरतीले बनिए। इस पथ पर विश्राम हेतु स्थान नहीं बने हैं। आन्तरिक मन्द ध्वनि को सुनिए। यदि आप पवित्र एवं सच्चे हैं, तो यह आपका मार्गदर्शन करेगी।

विकसित किये जाने वाले सद्गुणों की सूक्ती (List of of Virtues to be Developed)

(इसे एक पृष्ठ पर लिख कर अपने घर के मुख्य स्थान पर लगाइए)

मुख्य सद्गुण

दान	सदैव सत्य वाचन
समबुद्धि	ब्रह्मचर्य
ब्रह्मचिन्तन	प्रशान्त एवं प्रफुल्लित स्वभाव

साहस	इच्छाशून्यता
श्रमशीलता	अनुशासन
समत्व	निर्भयता
सदैव सभी कार्यों में भगवान् की उपस्थिति का अनुभव	सहनशीलता स्पष्टवादिता
उदारता	विनम्रता
मौन	विशालहृदयता
आज्ञाकारिता	धैर्य
अध्यवसाय	तितिक्षा
हृदय की पवित्रता	त्याग
आत्म नियन्त्रण एवं आत्म बलिदान	प्रशान्तता
सेवा-भावना	सरलता
आर्जव	दृढ़ संकल्प शक्ति
सहिष्णुता	मन की शान्ति
सत्यान्वेषण	अविचल भक्ति
वैराग्य अनासक्त भाव से कर्म	भगवान् में अटल विश्वास

गौण सद्गुण

संयम	निर्लोभिता
स्वयं के दोषों-दुर्बलताओं को स्वीकार करना	स्नेह इष्टमन्त्र का सतत जप
तपस्या	कुसंग-त्याग
परनिन्दा में अरुचि	दानशीलता

अपमान-आघात सहन करना	स्वच्छता
शौर्यपूर्ण स्वभाव	स्थिरता
प्राणीमात्र के प्रति दया	तृप्ति
मननशीलता	निर्भीकता
इन्द्रिय-निग्रह	उद्योगशीलता
अनासक्ति	मुख्य दिवसों पर उपवास
समचित्तता	स्वयं के साथ हुए दुर्व्यवहार को
दृढ़ता	क्षमा एवं विस्मृत करना
धृति	सौम्यता
दर्प एवं द्वेष से मुक्ति	देने का स्वभाव
वीरता	निर्दोषिता
प्रफुल्लित स्वभाव	अपने वचनों का पालन
सबके प्रति सहृदयता	उदारहृदयता
स्नेहपूर्ण स्वभाव	प्रत्येक वस्तु-कार्य में संयम
करुणा	लोभहीनता
शील	अचौर्य
मनसा-वाचा-कर्मणा अहिंसा	लोकनिन्दा की परवाह नहीं करना
रोगियों की भावपूर्वक सेवा	शिष्टता
सुशिष्ट व्यवहार	विनीतता
प्रत्येक कार्य में दक्षता एवं फुरतीलापन	दूसरों की प्रशंसा करना
सन्तोष	निद्रा कम करना

महात्माओं के साथ सत्संग	संसाधनशीलता
निःस्वार्थ सेवा	सदाचार
ज्ञान, भक्ति, कर्म में निष्ठा	आत्म-विलोपन
उच्च विचार	दूसरों के लिए अच्छा बोलना
सबके प्रति दयालु एवं उदार होना	निष्ठा शास्त्रों का स्वाध्याय
ओज-बल सबके प्रति सहानुभूति	अल्प एवं मधुर बोलना ईमानदारी

सद्गुणों के शब्द-चित्र (Word-picture of Virtues)

१. **संयम**- इतना अधिक न खायें कि तन्द्रालु-स्फूर्तिहीन हो जायें; एमा अधिक न पीयें कि सन्तुलन खो बैठें।

२. **मौन**- आपके लिए अथवा दूसरों के लिए हितकारी वचन ही बोलिए व्यर्थ-तुच्छ वार्तालाप का त्याग करिए।

३. **व्यवस्था**- आपकी सब वस्तुएँ अपने-अपने स्थान पर हों, आपके कार्य-व्यवसाय की प्रत्येक क्रिया अपने समय पर हो।

४. **संकल्प**- जो आपको करना चाहिए उसका संकल्प लें; जो संकल्प लिया है, उसे बिना चूके पूर्ण करिए।

५. **मितव्ययिता**- स्वयं के अथवा दूसरों के भले के लिए धन व्यय कीजिए अर्थात् धन व्यर्थ मत गँवाइए।

६. **उद्योगशीलता**- समय व्यर्थ मत खोइए; किसी न किसी उपयोगी कार्य में संलग्न रहिए; समस्त अनावश्यक कार्यों को छोड़ दीजिए।

७. **निष्कपटता**- छल-कपट मत करिए, सरल एवं न्यायपूर्ण चिन्तन करिए तथा ऐसा ही बोलिए।

८. **न्याय**- किसी को आघात नहीं पहुँचाइए; स्वयं के कर्तव्यों का पालन करिए।

९. **मिताचार**- अति का त्याग करिए। अपमान-आघात यथाशक्य सहन १०. स्वच्छता-शरीर, वस्त्र एवं आवास की स्वच्छता बनाये रखिए। करिए।

११. **प्रशान्ति**- छोटी-छोटी बातों पर तथा सामान्य अथवा अपरिहार्य दुर्घटनाओं से विक्षुब्ध मत होइए।

१२. **पवित्रता**- वीर्य का उपयोग सन्तान प्राप्ति के लिए करिए; अपने स्वास्थ्य को दुर्बल बनाने तथा अपने

एवं दूसरे की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचाने हेतु मत करिए।

१३. **विनम्रता-** जीसस एवं सुकरात का अनुकरण करिए।
(जिन अन्य सद्‌गुणों का आप विकास करना चाहते हैं, उनके ऐसे शब्द-चित्र बनाइए)

अठारह सद्‌गुणों का गीत (Song of Eighteen Ities)

प्रशान्तता, नियमितता, गर्वहीनता
निष्कपटता, सरलता, सत्यता

समता, दृढ़ता, अविक्षुब्धता
समायोजनशीलता, विनम्रता, अध्यवसायिता

न्यायनिष्ठा, उदारचित्तता, विशालहृदयता
दानशीलता, उदारता, पवित्रता

नित्य अभ्यास करिए इन अठारह सद्‌गुणों का,
आप शीघ्र ही करेंगे प्राप्त अमरता।

ब्रह्म ही एकमात्र वास्तविक सत्ता,
श्रीमान् अमुक-अमुक है मिथ्या सत्ता।

आप निवास करेंगे शाश्वतता एवं अनन्तता में,
आप दर्शन करेंगे विविधता में एकता के।

आप नहीं प्राप्त कर सकते हैं यह ज्ञान विश्वविद्यालय में,
परन्तु प्राप्त कर सकते हैं इसे योग-वेदान्त अरण्य विश्वविद्यालय में।

अठारह सद्‌गुण

प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में सफलता प्राप्ति तथा विशेषतया एक साधक को आध्यात्मिक जीवन में सफलता प्राप्ति हेतु कुछ मुख्य सद्‌गुणों का अवश्यमेव विकास करना चाहिए। सद्‌गुण बल एवं शक्ति है तथा शान्ति की कुंजी है। एक सद्‌गुणी व्यक्ति सदैव प्रसन्न, शान्त एवं समृद्धिशाली होता है। लोग मुझसे पूछते हैं कि उन्हें किन सद्‌गुणों का विकास करना चाहिए। 'अठारह सद्‌गुणों का गीत' उन गुणों को उल्लिखित करता है जिनका प्रत्येक व्यक्ति को विकास करना चाहिए। किसी एक सद्‌गुण को लीजिए तथा उसका पूर्णता की उच्च सीमा तक विकास करिए; उसके विपरीत दुर्गुण का सूक्ष्मतम क तथा इनके विकास की विधियों में पूर्णतया नाश करिए। इन सद्‌गुणों, इनके लाभों ध्यान करिए। ये अठारह सद्‌गुण हैं-

१. प्रशान्तता-भीतर प्रशान्त रहिए। आपकी आन्तरिक शान्ति एवं आपका आन्तरिक आनन्द आपकी प्रशान्त मुखाकृति से प्रकटित हो। एक प्रशान्त मुखाकृतिय शान्त, आनन्दपूर्ण एवं गम्भीर होती है तथा किसी प्रकार के उग्र भाव को प्रकट नहीं करते। है। यह एक शान्त झील की सतह के समान होती है।

२. नियमितता-अपनी दैनिक आदतों-क्रियाओं एवं साधना में नियमित रहिए। प्रतिदिन एक निश्चित समय पर उठिए तथा निश्चित समय पर सोइए। अपनी दैनिक गतिविधियों में घड़ी की भाँति नियमित रहिए। आप चिन्ता, उद्वेग, अव्यवस्थित कार्य एव व्यवहार से मुक्त हो जायेंगे। आप उचित समय पर उचित कार्य करेंगे।

३.गर्वहीनता-अपने जन्म, पद, योग्यता एवं आध्यात्मिक उपलब्धियों पर गर्व मत करिए। भौतिक वस्तु-पदार्थों की क्षणभंगुरता को स्मरण रखिए। अन्य व्यक्तियों की प्रशंसा करिए। सबमें अच्छाई देखिए। निम्नतम प्राणी को भी अपने समान समझ कर व्यवहार करिए।

४. निष्कपटता-आपके शब्द आपके विचारों के अनुरूप हों; आपके कार्य आपके शब्दों के अनुरूप हों; आपके विचारों, शब्दों एवं कार्यों में एकता होनी चाहिए।

५. सरलता-सरल बनिए। अपनी वाणी में सरल रहिए। शब्दों एवं विषयों को विकृत मत करिए। कूटनीति, चालाकी तथा धूर्तता का त्याग करिए। अपनी वेशभूषा एवं आहार में सरल रहिए। बालवत् सरल स्वभाव का विकास करिए।

६. सत्यता-सत्यवादी बनिए। अपने वचनों का पालन करिए। अतिशयोक्तिपूर्ण बातें मत करिए। तथ्यों की मिथ्या व्याख्या मत करिए। बोलने से पहले दो बार विचार करिए। सत्य एवं मधुर बोलिए। अपने शब्दों में स्पष्टता रखिए।

७. समता-शान्त रहिए। अपमान, आघात, कष्ट, असफलता एवं निन्दा को धैर्यपूर्वक सहन करिए। प्रशंसा, सम्मान, सुख एवं सफलता में गर्वोन्मत्त मत होइए। दोनों को समदृष्टि से देखिए। शत्रु एवं मित्र के साथ समान व्यवहार करिए। किसी बात से भी अपनी आन्तरिक शान्ति को भंग मत होने दीजिए।

८. दृढ़ता-स्मरण रखिए यदि आपका चित्त अस्थिर चंचल है, तो आप कुछ भी उपलब्ध नहीं कर सकते हैं। विचार करिए तथा स्वयं के लिए एक आदर्श अथवा लक्ष्य का बात कीजिए। अपने लक्ष्य को सदैव स्मरण रखिए। इसे एक क्षण के लिए भी विस्त नहीं करिए।

१९. अविक्षुब्धता - विक्षुब्धता-चिड़चिड़ापन उग्र क्रोधावेग का पूर्वगामी है। जायके गानसिक सन्तुलन में हुए विक्षोभ को देखिए। मन की झील में उठी क्रोध करती है। को देखिए। उन्हें वहीं तुरन्त शान्त कर दीजिए; विशाल रूप मत लेने दीजिए। इससे उस शान्ति एवं प्रेमपूर्ण अविक्षुब्धता की स्थिति प्राप्त करेंगे।

१०. समायोजनशीलता-अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के स्वभाव को समधिए। अपने आचरण-व्यवहार में इस प्रकार समायोजन करिए जो उन्हें प्रियकर लगे। अन्य व्यक्तियों की सनकपूर्ण चेष्टाओं को प्रसन्नतापूर्वक सहन करिएकर सरोव सदभावपूर्ण-मैत्रीपूर्ण व्यवहार करिए। सबकी सेवा करिए तथा सबसे प्रेम करिए। सदैव यही भाव रखिए कि भगवान् सबके आत्मा के रूप में विराजमान हैं।

११. विनम्रता-सबका सम्मान करिए। प्रत्येक को हाथ जोड़ कर नमन करिए। बड़ों एवं सम्माननीय व्यक्तियों की उपस्थिति में कभी ऊँची आवाज में बात मत करिए। चलते समय अपनी दृष्टि अपने पैरों के अँगूठों पर रखिए। सबमें भगवान् का दर्शन करिए तथा यह भाव रखिए कि आप भगवान् के सेवक हैं, अतः सबके सेवक हैं। किसी को भी अपने से निम्न-हीन मत मानिए।

१२. अध्यवसायिता-यह दृढ़ता का सहज सखा है। जब एक बार आपने लक्ष्य तथा मार्ग का निर्धारण कर लिया है तो दृढ़तापूर्वक चलते रहिए। विचलित मत होइए। स्थिर रहिए। अपने सिद्धान्तों के साथ कभी समझौता मत

करिए। यह मानसिक अभिवृत्ति रखिए, "मैं अपना जीवन त्याग सकता हूँ, परन्तु अपने पथ से च्युत नहीं होऊँगा, अपना वचन भंग नहीं करूँगा।"

१३. न्यायनिष्ठा-एक न्यायनिष्ठ व्यक्तित्व का विकास करिए। अपने चरित्र की दुर्बलताओं को दूर करिए। उच्च नैतिक सिद्धान्तों से सम्पन्न व्यक्ति बनिए। धार्मिक जीवन व्यतीत करिए। आपसे सदाचार-धर्मपरायणता की सुरभि प्रसारित हो। सभी आप पर विश्वास करेंगे, आपका सम्मान करेंगे तथा आपकी आज्ञा का पालन करेंगे।

१४. उदारचित्तता-तुच्छ मानसिकता को गोमय तथा विष समझ कर त्याग दीजिए। अन्य व्यक्तियों के दोषों को मत देखिए। प्रत्येक व्यक्ति के गुणों की प्रशंसा करिए। गरिमापूर्ण व्यवहार करिए। तुच्छ विचारों, शब्दों एवं कार्यों में कभी संलग्न मत होइए।

१५. विशालहृदयता-वस्तुओं-व्यक्तियों के प्रति उदार-विशाल दृष्टिकोण रखिए। अन्य व्यक्तियों की त्रुटियों की उपेक्षा करदेव क्का के कामायने में का रखिए। अन्य एवं महानता लक्षित हो। मूर्खतापूर्ण एवं बचकाने वार्तालाप का कारए। आपका मन तुच्छ एवं महत्वहीन वस्तुओं-घटनाओं का चिन्तन न करें।

१६. दानशीलता-दान करिए, दीजिए, बाँटिए। प्रेम एवं सद्भावना के विका को प्रसारित करिए। अन्य व्यक्तियों की त्रुटियों को क्षमा करिए। आपको आपात सि बाले व्यक्ति को आशीर्वाद दीजिए। जो भी आपके पास है, उसे अन्यों के साथ जात्र सबको भोजन एवं वस्त्र दीजिए। सर्वत्र आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार-प्रसारक सबबाद-प्रदत्त धन-सम्पदा, ज्ञान एवं आध्यात्मिक निधि को एक दिव्य न्यास (मान कर उसको भगवान् की अन्य सन्तानों के साथ बाँटिए।

१७. उदारता- जो भी आप दें, उदारतापूर्वक दें। विशालहृदयी बनिए। कृपण बनिए। अन्य व्यक्तियों के सुख में तथा उन्हें सुखी बनाने में आनन्दित होइए। उदा दानशीलता की बहिन है। उदारता दानशीलता, विशालहृदयता एवं उदारचित्तता परिपूर्णता है।

१८. पवित्रता-शुद्ध-हृदयी बनिए। काम, क्रोध, लोभ एवं अन्य दुष्प्रवृतिक का नाश करिए। अपने विचारों को शुद्ध-पवित्र रखिए; कोई कुविचार आपके मन प्रविष्ट न होने पाये। सदैव भगवद्-चिन्तन करिए, सब प्राणियों के कल्याण का चिन्तन करिए। अपने वचनों में पवित्र रहिए; कभी भी अपशब्दों एवं कटुशब्दों का प्रयोग नहीं करिए। अपने शरीर, वस्त्र एवं आस-पास के क्षेत्र को भी शुद्ध-स्वच्छ रखिए। शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक शुद्धता के नियमों का पालन करिए।

ये अठारह सद्गुण भगवद्-साम्राज्य की प्राप्ति की ओर आपका मार्ग-प्रशस्त करेंगे। ये आपके लिए अमरत्व के द्वार खोलेंगे। आप धरा पर इस जीवन में भी महान् सफलता प्राप्त करेंगे। जो इन सद्गुणों का स्वामी है, वह वास्तव में एक सन्त है; वह सबके द्वारा सम्मानित, पूजित-वन्दित होगा। आप सभी जीवन्मुक्त तथा इन सद्गुणों के साकार विग्रह बनें।

भाग-२

दुर्गुणों का नाश कैसे करें

दम्भ (Affectation)

दम्भ वह दिखाने का प्रयास है जो स्वाभाविक अथवा वास्तविक नहीं है। यह मिथ्या प्रदर्शन है।

यह सुविचारित अथवा आडम्बरपूर्ण दिखावा है। यह कृत्रिम, मिथ्या अथवा क्षुद्र प्रदर्शन है। यह व्यवहार-आचरण का बनावटीपन है।

दम्भ मिथ्याभिमान अथवा पाखण्ड से प्रारम्भ होता है। मिथ्याभिमान (Vanity) प्रशंसा-सम्मान प्राप्ति हेतु झूठा प्रदर्शन करना है। पाखण्ड (Hypocricy) निन्दा से बचने हेतु अपने दुर्गुणों को उनके विपरीत सद्गुणों के मिथ्या आवरण में छिपाना है।

दम्भ का प्रारम्भ यह मानने से होता है कि उसके पास विश्व के समस्त व्यक्तियों से कुछ श्रेष्ठ है।

दम्भ मिथ्याभिमान की एक चाल अथवा युक्ति है। यह झूठे प्रदर्शन द्वारा वास्तविक चरित्र को सदैव छिपाये रखना है।

दम्भ अज्ञान अथवा मूर्खता का प्रतीक है।

एक दम्भी व्यक्ति अपने दोषों-दुर्गुणों को जानता है तथा कृत्रिम श्रेष्ठता का प्रदर्शन कर उन्हें छिपाने का प्रयास करता है। अन्य व्यक्ति सरलता से उसके दम्भाचरण को पहचान लेते हैं। वह अपने सहयोगियों-पड़ोसियों की घृणा का पात्र बनता है।

सहज रहिए। जो आप हैं, वही रहिए। किसी की भी नकल मत करिए। समस्त प्रकार के दम्भ का त्याग करिए। सहज-स्वाभाविक ही सर्वश्रेष्ठ है।

सरलता, विनम्रता, उदारचित्तता, सत्यनिष्ठा एवं विशालहृदयता का विकास करिए।

एक व्यक्ति विनम्र नहीं होता है, परन्तु विनम्र होने का दिखावा अथवा दम्भ करता है।

दम्भ क्षुद्र पाखण्ड है।

दिखावे (Pretence) से अभिप्राय है वह दिखाना है जो नहीं है। पाखण्ड (Hypocricy) किये गये अनुचित को छिपाने अथवा सद्गुण से प्राप्त लाभ-प्रशंसा हेतु नैतिक श्रेष्ठता का मिथ्या प्रदर्शन है।

बगुलाभगत-धर्मध्वज (Sanctimoniousness) सन्तत्व के बिना सन्त होने का प्रदर्शन करना है।
शब्दाडम्बर (Cant) शब्दों में पाखण्ड करना है।

बगुलाभगत अथवा धर्मध्वज बाह्य रूप एवं आकृति तथा बोलने की शैली में पाखण्ड-प्रदर्शन करता है।

दम्भ बुद्धि एवं रुचि के विषयों में किया जाता है; पाखण्ड नैतिकता तथा धर्म के सम्बन्ध में प्रदर्शित किया जाता है।

स्वाँग करना अथवा ढोंग करना (Sham) वह युक्ति है जो व्यक्ति को लज्जित करती है।

अहंकार (Egoism)

१

अहंकार मनुष्य में 'अपने होने' का दावा करने का भाव है। यह मन में उत्पन्न होने वाली एक वृत्ति है। महर्षि पतञ्जलि इसे 'अस्मिता' कहते हैं। मन ही अहंकार का रूप धारण करता है जब व्यक्ति अपने होने का, अपने अस्तित्व का दावा करता है। प्रथम अहंकार प्रकट होता है तथा इसके बाद ममता का उद्भव होता है।

यह विनाशकारी अहंकार ही कर्मों, इच्छाओं एवं दुःखों का जन्मदाता है। यह समस्त बुराइयों का स्रोत है। यह भ्रामक है तथा मनुष्यों को मोहित-भ्रमित करता है। यद्यपि यह कुछ नहीं है, परन्तु सांसारिक मनुष्यों के लिए यह सब कुछ है। यह ममता अथवा मेरेपन से जुड़ा है। इसका जन्म अविद्या से होता है। यह मिथ्या गर्व से उद्‌भूत होता है। मिथ्या गर्व ही इसका पोषण करता है। यह महानतम शत्रु है। यदि व्यक्ति इस घोर शत्रु का त्याग कर दे, तो वह सुखी-आनन्दित हो जायेगा। त्याग का रहस्य अहंकार का त्याग है। अहंकार का स्थान मन है। अहंकार के वशीभूत हो कर मनुष्य दुष्कृत्य करता है। इसकी जड़ें गहरी होती हैं। अहंकार से ही चिन्ताओं एवं कठिनाइयों का जन्म होता है। अहंकार हमारे सद्‌गुणों एवं मन की शान्ति को नष्ट करता है। यह हमें बन्धन में डालने के लिए स्नेह-जाल बिछाता है। अहंकारमुक्त व्यक्ति सदैव प्रसन्न एवं शान्त रहता है। अहकार के कारण ही इच्छाओं में वृद्धि होती है। हमारे इस चिरकालिक शत्रु ने ही हमें पत्नी, मित्र एवं सन्तान की आसक्ति के ऐसे जाल में बाँधा है जिसे तोड़ना अत्यधिक कठिन है। अहंकार से बड़ा अन्य कोई शत्रु नहीं है।

जो इच्छा-द्वेष से रहित है तथा जो सदैव मन की शान्ति को बनाये रखता है, वह अहंकार से प्रभावित नहीं होता है। इस जगत् में तीन प्रकार के अहंकार हैं। इनमें से दो श्रेष्ठ प्रकृति के हैं तथा हितकारी हैं, परन्तु तीसरा प्रकार निकृष्ट तथा त्याज्य है।

प्रथम प्रकार परम एवं अविभाज्य अहंकार है जो शाश्वत तथा सर्वव्यापी है। यह परमात्मा है जिनके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। 'अहं ब्रह्मास्मि' महावाक्य पर ध्यान करिए तथा परब्रह्म से तादात्म्य स्थापित करिए। यह सात्त्विक अहंकार है। वह ज्ञान, जो हमें हमारे आत्मा का धान की पुआल (Paddy Straw) के अन्तिम छोर से भी अधिक सूक्ष्म अथवा एक बाल के सौवें भाग के समान सूक्ष्म होने तथा इसकी सतत विद्यमानता का बोध कराता है, दूसरे प्रकार का अहंकार है। ये दो प्रकार के अहंकार जीवन्मुक्त सन्तों में होते हैं। ये अहंकार मनुष्य को मोक्ष की ओर ले जाते हैं। ये बन्धन का कारण नहीं बनते हैं, अतः ये श्रेष्ठ एवं हितकारी हैं। तीसरे प्रकार का अहंकार वह ज्ञान है जो 'मैं' का शरीर से तादात्म्य स्थापित करता है तथा जो शरीर को आत्मा मानता है। यह निकृष्ट प्रकार का अहंकार है। सभी सांसारिक व्यक्तियों में यह पाया जाता है। यही पुनर्जन्मों रूपी विषैले वृक्ष के उद्भव का कारण है। इस प्रकार के अहंकार से युक्त व्यक्ति कभी विवेकवान नहीं होते हैं। असंख्य व्यक्ति अहंकार के इस प्रकार से भ्रमित हैं। वे अपनी बुद्धि, विवेक-शक्ति तथा विचार-शक्ति को खो चुके हैं। इस अहंकार के परिणाम अत्यन्त हानिकारक होते हैं। व्यक्ति सब प्रकार की बुराइयों से ग्रस्त हो जाता है। इस अहंकार के दास अनेक इच्छाओं-वासनाओं से व्यथित होते हैं जो उन्हें दुष्कृत्य करने को उत्प्रेरित करती हैं। यह अहंकार उन्हें पशुतुल्य स्थिति में पहुँचा देता है। प्रथम दो प्रकार के अहंकारों द्वारा इस तीसरे प्रकार के अहंकार का नाश किया जाना चाहिए। आप जितना इस अहंकार का नाश करेंगे, उतना ही आत्मा का प्रकाश अथवा परब्रह्म का बोध आपके हृदय में प्रकट होगा।

पुनश्च अहंकार के तीन अन्य प्रकार हैं-सात्विक अहंकार, राजसिक अहंकार एव तामसिक अहंकार। सात्त्विक अहंकार व्यक्ति को संसार बन्धन में नहीं डालेगा, वरन् साधक की मोक्ष प्राप्ति में सहायता करेगा। यदि आप निश्चयपूर्वक यह कहने का प्रयास करते हैं, 'अहं ब्रह्मास्मि' मैं ब्रह्म हूँ, यह सात्त्विक अहंकार है। जीवन्मुक्त में भी सात्त्विक अहंकार की हल्की रेखा विद्यमान होती है। इस सात्विक अहंकार के माध्यम से वह कार्य करता है। "मैं राजा हूँ, मैं सब जानता हूँ, मैं बहुत बुद्धिमान् हूँ" यह राजसिक अहंकार है। "मैं मूर्ख हूँ। मैं कुछ नहीं जानता हूँ"-यह तामसिक अहंकार है।

'अहं' पद का वाच्यार्थ मन में उत्पन्न होने वाली अहंवृत्ति अर्थात् क्षुद्र 'मैं' है जो शरीर के साथ तादात्म्य भाव रखती है। 'अहं' पद का लक्ष्यार्थ आत्मा अथवा ब्रह्म, विशाल अथवा अनन्त 'मैं' है। माया ही अहंकार का कारण है। भौतिक वस्तु-पदार्थों का ज्ञान अहंकार का कारण है। यह ज्ञान शरीर, वृक्ष, नदी, पर्वत, गाय, घोड़ा आदि भ्रामक

पदार्थों के रूप होता है। यदि ये वस्तु-पदार्थ नहीं हैं, तो हमें इनका ज्ञान भी नहीं होगा। तब मन का बीज रूप अहंकार समाप्त हो जायेगा।

समस्त दोषों-दुर्बलताओं का आश्रय स्थान 'मैं' का यह विचार ही मन रूपी वृक्ष का बीज है। अहंकार के बीज से प्रथम प्रस्फुटित होने वाला अंकुर बुद्धि है। इस अंकुर से संकल्प रूपी विविध शाखाएँ उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार के विभेदीकरण से मन, बुद्धि एवं चित्त तो अहंकार के ही विविध नाम अथवा गुण हैं। वासना रूपी शाखाएँ असंख्य कर्मों रूपी फसल उत्पन्न करेंगी; परन्तु यदि आप ज्ञान-खड्ग से इन्हें काट दें, तो ये पूर्णतः विनष्ट हो जायेंगीं। मन रूपी वृक्ष की शाखाओं को पहले काटिए तथा अन्त में इसके मूल को पूर्णतः नष्ट कर दीजिए। शाखाओं को काटना गौण कार्य है; वृक्ष का मूलोच्छेदन मुख्य कार्य है। यदि आप सत्कार्यों द्वारा 'मैं' के विचार का ही नाश कर देते हैं, तो मन रूपी वृक्ष उत्पन्न नहीं होगा। आत्मज्ञान वह अग्नि है जो इस वृक्ष के बीज अर्थात् अहंकार की धारणा को भस्मीभूत कर देती है।

अहंकार का एक और वर्गीकरण भी किया गया है-स्थूल अहंकार तथा सूक्ष्म अहंकार। जब आप अपने स्थूल भौतिक शरीर से तादात्म्य अनुभव करते हैं, यह स्थूल अहंकार है। जब आप मन तथा कारण-शरीर से तादात्म्य करते हैं, यह सूक्ष्म अहंकार है। यदि आप अभिमान, स्वार्थ, इच्छाओं तथा भौतिक शरीर के साथ तादात्म्य को नष्ट करते हैं, तो स्थूल अहंकार नष्ट होगा परन्तु सूक्ष्म अहंकार बना रहेगा। आपको सूक्ष्म अहंकार का भी पूर्ण नाश करना होगा। सूक्ष्म अहंकार अत्यधिक विपत्तिकारक है तथा इसे समाप्त करना अत्यधिक कठिन है। "मैं धनी हूँ, मैं राजा हूँ, मैं ब्राह्मण हूँ" -यह स्थूल अहंकार है। "मैं एक महान् योगी vec 5 , मैं एक ज्ञानी हूँ, मैं कर्मयोगी हूँ, मैं नैतिक व्यक्ति हूँ, मैं अच्छा साधक अथवा साधु हूँ"-यह सूक्ष्म अहंकार है। अहंकार को दो अन्य प्रकारों में विभाजित किया जाता है-सामान्य अहंकार तथा विशेष अहंकार। सामान्य अहंकार पशुओं में तथा विशेष अहंकार मनुष्यों में विद्यमान होता है।

आप कहते हैं, "यह शरीर मेरा है।" गिद्ध, गीदड़ तथा मछलियाँ भी यही कहते हैं, "यह शरीर मेरा है।" यदि आप एक प्याज की परत दर परत निकालते जायें, तो अन्त में कुछ शेष नहीं रहता है। इसी प्रकार यह 'मैं' अथवा अहंकार है। यह शरीर, मन, प्राण, इन्द्रियाँ आदि पंचभूतों एवं तन्मात्राओं से मिल कर बने हैं। ये सभी प्रकृति के ही विविध रूप-रूपान्तर हैं। तब 'मैं' कहाँ है? यह स्थूल शरीर विराट् का, सूक्ष्म शरीर हिरण्यगर्भ का तथा कारण-शरीर ईश्वर का है। तब फिर 'मैं' कहाँ है ? 'मैं' मन रूपी जादूगर द्वारा निर्मित एक भ्रम है। कुछ भी अस्तित्व में नहीं है। जो कर्मों के कारण उत्पन्न हुआ है, वह स्वयं कारण नहीं है। इस शरीर का बोध अथवा ज्ञान भी भ्रामक है। अतः ज्ञान के इस भ्रम से उत्पन्न अहंकार एवं इसके अन्य प्रभाव भी अस्तित्वहीन हैं। वास्तविक 'मैं' सच्चिदानन्द ब्रह्म ही है।

जिस प्रकार चलती हुई ट्रेन अथवा नाव की गति किनारे पर लगे वृक्षों को हस्तान्तरित हो जाती है अर्थात् वृक्ष गतिशील प्रतीत होते हैं, उसी प्रकार माया के जादू से 'मैं' शरीर, मन, प्राण एवं इन्द्रियों को स्थानान्तरित-संचरित हो जाता है। जब आप कहते हैं, 'मैं' मोटा हूँ, 'मैं' पतला हूँ, तब 'मैं' शरीर को स्थानान्तरित हो जाता है तथा आप शरीर से तादात्म्य अनुभव करते हैं। जब आप कहते हैं, 'मैं' भूखा हूँ, 'मैं' प्यासा हूँ, तब 'मैं' प्राणों को स्थानान्तरित होता है तथा आप प्राणों से तादात्म्य करते हैं, जब आप कहते हैं, 'मैं' क्रोधी हूँ, 'मैं' कामी हूँ, तब 'मैं' का संचरण मन को हो जाता है। यदि आप परम तत्त्व से तादात्म्य स्थापित करेंगे, तो समस्त मिथ्या तादात्म्य-सम्बन्ध समाप्त हो जायेंगे।

यदि आप सेना के सेनानायक का वध कर देते हैं, तो आप सरलता से सैनिकों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार यदि आप आध्यात्मिक युद्धक्षेत्र में अहंकार रूपी सेनानायक का नाश कर देते हैं, तो अपने स्वामी 'अहंकार' के लिए संघर्ष करने वाले सैनिकों अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मद, ईर्ष्या, मोह तथा पाखण्ड आदि को सरलता से समाप्त कर सकते हैं।

प्रथम दो प्रकार के श्रेष्ठ अहंकारों द्वारा ब्रह्म-साक्षात्कार का प्रयास करिए। यदि आप उस परम शुद्ध अवस्था में दृढ़तापूर्वक संस्थित हैं जहाँ इन दोनों प्रकार के अहकारों का भी एक-एक करके, त्याग कर दिया जाता है, तो यह स्थिति ब्रह्म का शाश्वत धाम है। 'मैं' का शरीर से तादात्म्य नहीं करिए। स्वयं का तादात्म्य परब्रह्म से स्थापित करिए।

आपने अपने अहंकार का अधिकतम सीमा तक नाश कर लिया हो परन्तु यदि अब भी आप निन्दा-स्तुति से प्रभावित होते हैं तो जान लीजिए कि आपमें सूक्ष्म अहंकार अभी तक विद्यमान है।

भक्ति मार्ग का साधक भगवान् के प्रति आत्मार्पण अथवा आत्मनिवेदन द्वारा अपने अहंकार का नाश करता है। वह कहता है, "हे प्रभु! मैं आपका हूँ। सब कुछ आपका है। आपकी इच्छा पूरी हो ।" वह स्वयं को भगवान् के हाथों का उपकरण अनुभव करता है।

वह अपने समस्त कार्यों एवं उनके फलों को भगवद्-चरणों में अर्पित कर देता है। वह ऐसा अनुभव करता है कि भगवान् के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है, सब कुछ भगवान् द्वारा ही किया जा रहा है, एक अणु भी भगवान् की इच्छा के बिना गति नहीं कर सकता है तथा समस्त प्राणी भगवान् में ही जी रहे हैं, गति कर रहे हैं तथा उनमें ही संस्थित हैं।

एक कर्मयोगी आत्म-त्याग द्वारा अपने अहंकार का नाश करता है। एक ज्ञानयोगी स्व-त्याग, सतत विचार, 'मैं शरीर-प्राण-इन्द्रियाँ नहीं हूँ'- प्रकार नेति-नेति के अभ्यास तथा 'मैं सर्वव्यापी आत्मा अथवा ब्रह्म हूँ' इस वेदान्तसूत्र पर ध्यान द्वारा परमात्मा से तादात्म्य स्थापित करके अपने अहंकार का नाश करता है।

आप आत्म-त्याग अथवा आत्मार्पण द्वारा माया से उत्पन्न इस क्षुद्र 'मैं' का पूर्ण नाश करके अनन्त 'मैं' शुद्ध सच्चिदानन्द ब्रह्म में विश्रान्ति पायें तथा शाश्वत आनन्द का उपभोग करें।

२

एक ब्राह्मण एक जमींदार के पास साधुओं के लिए भण्डारा आयोजित करने हेतु स्थान की याचना करने हेतु गया। जमींदार ने ब्राह्मण को एक घर दे दिया। ब्राह्मण ने भण्डारे के आयोजन हेतु घर का उपयोग किया परन्तु अगले दिन उसे खाली नहीं किया, वहीं कुछ माह तक रहा। जमींदार ने ब्राह्मण से पूछा कि वह घर कब खाली करेगा। ब्राह्मण ने कहा कि वह अपने पुत्र के विवाह के आयोजन हेतु कुछ माह और घर में रहेगा। जमींदार ने अनुमति दे दी। लोभी ब्राह्मण ने दो वर्ष के उपरान्त भी घर खाली नहीं किया। जमींदार ने पुनः ब्राह्मण से पूछा कि वह घर कब खाली करेगा। ब्राह्मण ने कहा कि उसकी माता का निधन हो गया है, अतः उनकी वार्षिक तिथि के आयोजन पर्यन्त वह घर में रहेगा। जमींदार ने धैर्यपूर्वक अनुमति दे दी। इस प्रकार तीन वर्ष व्यतीत हो गये। अब लोभी ब्राह्मण ने सोचा कि वह इस घर पर अपना अधिकार स्थापित कर सकता है क्योंकि वह इसमें अनेक वर्षों तक रह चुका है तथा पड़ोसी भी उसे ही घर का स्वामी मानते हैं। जब जमींदार ने इस बार ब्राह्मण से घर के विषय में पूछा, तो ब्राह्मण ने कहा कि यह घर उसका है तथा वह इसे खाली नहीं करेगा। विवाद न्यायालय तक पहुँचा। यद्यपि ब्राह्मण ने मिथ्या साक्षियों को एकत्रित किया, परन्तु वह उचित दस्तावेज प्रस्तुत नहीं कर सका। अत: उसे जमींदार को घर लौटाना पड़ा।

इसी प्रकार आपको शरीर के रूप में एक घर कुछ वर्षों के लिए दिया गया है, इस अवधि में आपसे सच्चिदानन्द ब्रह्म के साक्षात्कार तथा विदेह-कैवल्यम् में शरीर त्याग की अपेक्षा की जाती है। ऐसा करने के स्थान पर, अहंकार के कारण आप लोभी ब्राह्मण के समान व्यवहार कर रहे हैं। अहंकार का नाश करिए तथा ब्रह्म में संस्थित होइए।

क्रोध (Anger)

क्रोध मन रूपी झील में उठी एक नकारात्मक वृत्ति अथवा एक भँवर है। इसका जन्म अज्ञान से होता है।

यह वास्तविक अथवा काल्पनिक आघात-अपमान से उत्पन्न तीव्र भावोद्वेग है तथा इसमें प्रतिशोध की इच्छा समाहित है।

क्रोध अप्रसन्नता तथा विरोध का वह भाव है जो अपने वास्तविक एवं काल्पनिक अपमान से उद्दीप्त होता है तथा अपमान-आघात के कारण के प्रति प्रकट किया जाता है। क्रोध कष्ट-पीड़ा पहुँचने अथवा इसकी आशंका के विचार से उत्पन्न होता है।

क्रोध के साथ प्रतिशोध की इच्छा प्रायः जुड़ी रहती है। इसका आरम्भ मूर्खता से तथा अन्त पश्चात्ताप में होता है। जो क्रोध रूपी अग्नि आप अपने शत्रु के लिए प्रज्वलित करते हैं, उसमें आप स्वयं ही जलते हैं।

जब क्रोध उत्पन्न हो, उसके परिणामों के विषय में सोचिए। यह शीघ्र ही शान्त हो जायेगा।

आप इन्द्रिय-विषयों का चिन्तन करते हैं, तो इससे उनके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है। आसक्ति से इच्छा का जन्म होता है। इच्छा से क्रोध, क्रोध से सम्मोह तथा सम्मोह से स्मृति-विभ्रम उत्पन्न होता है। स्मृति-विभ्रम से बुद्धि का नाश होता है तथा बुद्धि के नाश से आपका नाश होता है।

राग अथवा आसक्ति क्रोध का चिरकालिक सहयोगी है।

धैर्य, विचार, आत्म-निग्रह, प्रेम तथा ध्यान द्वारा क्रोध पर नियन्त्रण करिए। यह नियन्त्रण पुरुषोचित एवं दिव्य है। यह बुद्धिमत्ता एवं भव्यता है।

छोटी-छोटी बातों पर क्रोधित होना तुच्छ, बचकाना एवं पाशविक व्यवहार है। जब आप क्रोधित हैं, तो बोलने से पूर्व बीस तक गिनती करिए। यदि आप अत्यधिक क्रोधित हैं, तो सौ तक गिनती करिए।

एक क्रोधी व्यक्ति क्रोधावेश समाप्त होने पर पुनः स्वयं पर क्रोधित होता है।

जब क्रोध सिंहासनारूढ़ होता है, तो विवेक-बुद्धि पलायन कर जाते हैं।

दूसरों की त्रुटियों को क्षमा करने हेतु सदैव तत्पर रहिए। प्रतिशोध की भावना को समाप्त करिए। बुराई के बदले भलाई करिए।

क्रोध मूर्खता अथवा दुर्बलता से प्रारम्भ होता है। इसका अन्त खेद तथा पश्चात्ताप में होता है। तीव्र क्रोधावेग में कार्य मत कीजिए।

क्रोधाविष्ट व्यक्ति अत्यधिक मदिरापान से उन्मत्त व्यक्ति के समान है। क्रोधोन्माद, रोष, गुस्सा, प्रकोप, क्रोधान्धता, नाराजगी, क्षुब्धता तथा अमर्ष क्रोध के समानार्थी शब्द हैं।

अप्रसन्नता (Displeasure) मृदु तथा अत्यधिक सामान्य शब्द है। बोलचाल की भाषा में मिजाज (Temper) क्रोध के अर्थ में प्रयुक्त होता है। हम कहते हैं, "श्रीमान् क गरम मिजाज (Hot Temper) का व्यक्ति है।

क्रोध (Anger) तीक्ष्ण, क्षणिक एवं सहसा उत्पन्न होने वाला है। नाराजगी- मनोमालिन्य (Resentment) स्थायी रहने वाला भाव है। यह अपमान-आघात का सतत चिन्तन है। कोप (Exasperation) क्रोध की अत्यधिक गहनता है जो तुरन्त अभिव्यक्त होने की माँग करती है।

क्रोधान्धता (Rage) व्यक्ति को विवेकहीन अथवा बुद्धिहीन बना देती है। क्रोधोन्माद (Fury) अधिक उग्र होता है तथा व्यक्ति को अनियन्त्रित हिंसक व्यवहार करने हेतु उत्प्रेरित करता है।

क्रोध वैयक्तिक तथा प्रायः स्वार्थपूर्ण होता है। यह स्वयं के साथ हुए वास्तविक अथवा काल्पनिक अनुचित व्यवहार से उत्पन्न होता है। जबकि रोष (Indignation) अनुचित-लज्जात्मक कार्यों के प्रति अवैयक्तिक एवं स्वार्थशून्य अप्रसन्नता है। शुद्ध रोष के पश्चात् खेद नहीं होता है तथा इसमें पश्चात्ताप की भी आवश्यकता नहीं होती है। यह क्रोध से अधिक नियन्त्रित अवस्था में रहता है। क्रोध सामान्यतया एक पाप है। रोष प्रायः एक कर्तव्य है। हम "उचित रोष" शब्द का प्रयोग करते हैं।

प्रकोप (Wrath) गहन एवं प्रतिशोधपूर्ण अप्रसन्नता-नाराजगी का भाव है। यह औचित्यपूर्ण रोष की परिसमाप्ति सूचित करता है।

क्रोध नाराजगी से कठोर शब्द है परन्तु रोष से सशक्त शब्द नहीं है जो किसी जघन्य कृत्य अथवा आचरण के प्रति अभिव्यक्त किया जाता है। क्रोध प्रकोप, क्रोधोन्माद एवं क्रोधान्धता शब्दों से सशक्त शब्द भी नहीं हैं जिनमें क्रोध क्रमशः तीव्रता को प्राप्त करता जाता है। क्रोध अप्रसन्नता की सहसा उत्पन्न भावना है; नाराजगी सतत क्रोध है तथा प्रकोप क्रोध का तीव्रतम-उग्रतम रूप है।

क्रोध पर नियन्त्रण

क्षमा, प्रेम, धैर्य तथा निरभिमानिता के अभ्यास द्वारा क्रोध पर नियन्त्रण करिए।

जब आप क्रोध पर नियन्त्रण करते हैं, तो यह ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है तथा इस ऊर्जा द्वारा आप सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित कर सकते हैं।

क्रोध काम-वासना का दूसरा रूप है। यदि आप काम-वासना पर नियन्त्रण कर सकते हैं, तो आपने क्रोध पर स्वतः ही नियन्त्रण कर लिया है।

क्रोधित होने पर थोड़ा जल पीजिए। इससे आपका मस्तिष्क शीतल तथा उत्तेजित स्नायु शान्त हो जायेंगे।

"ॐ शान्ति", दस बार दोहराइए।

बीस तक गिनिए। बीस तक गिनती समाप्त होने के साथ ही आपका क्रोध भी समाप्त हो जायेगा।

अवचेतन मन से चेतन मन की सतह पर आने का प्रयास कर रहे क्रोध को वहीं समाप्त कर दीजिए। क्षोभ की लघु लहर अथवा संवेग का सावधानीपूर्वक निरीक्षण करिए। तब इसे समाप्त करना सरल होगा। सब प्रकार से सावधानी बरतिए। इसे विस्फोटित होने तथा विशाल रूप धारण करने मत दीजिए।

यदि आपको क्रोध पर नियन्त्रण करना अत्यधिक कठिन लग रहा है, तो उस स्थान को तुरन्त छोड़ दीजिए, तथा आधे घण्टे तक तेज-तेज चलिए।

भगवान् से प्रार्थना करिए। जप करिए। भगवान् का ध्यान करिए। आपको अत्यधिक शक्ति प्राप्त होगी।

अपने मित्रों-साथियों के चयन में सावधान रहिए। सत्संगति में रहिए। संन्यासी, भक्त एवं महात्मावृन्द का संग करिए। श्रीमद्भगवद्गीता एवं योगवासिष्ठ का अध्ययन करिए। वीर्य क्षय मत करिए। दूध, फल आदि सात्विक आहार लीजिए। मिर्च-मसालेदार कढ़ी, चटनी, मांस, मदिरा एवं धूम्रपान का त्याग करिए। तम्बाकू आपके हृदय को रोगी बनाता है। यह निकोटिन विष उत्पन्न करता है।

व्याकुलता (Anxiety)

व्याकुलता किसी आशंका-सन्देह से सम्बन्धित बेचैनी-व्यग्रता है। व्याकुलता किसी संकटपूर्ण अथवा दुर्भाग्यपूर्ण अनिश्चित स्थिति से उत्पन्न मन की विक्षुब्धता अथवा व्यग्रता है।

व्याकुलता किसी वस्तु अथवा लक्ष्य की प्राप्ति की तनावपूर्ण अथवा चिन्तापूर्ण इच्छा एवं उत्सुकता भी है- जैसे सबको प्रसन्न रखने की व्याकुलता। यह हृदय में पीड़ा के भाव के साथ अशान्ति एवं अधीरता की स्थिति है।

व्याकुलता जीवन का विकार है। यह जीवन-दीप्ति का नाश करती है तथा जीवन-शक्ति को दुर्बल करती है।

व्याकुलता मानव-जीवन का विष है। जो कभी घटित नहीं होगा, उसके विषय में चिन्तित-व्याकुल मत होइए। प्रत्येक दिन के कर्तव्य एवं संघर्ष उस दिन के लिए पर्याप्त हैं, अतः आने वाले कल की व्यर्थ चिन्ता मत करिए।

भगवान् में पूर्ण विश्वास व्याकुलता का नाश करता है। भगवान् में बालसुलभ एवं

अटल विश्वास ही व्याकुलता का सर्वश्रेष्ठ उपचार है।

भविष्य की चिन्ता मनुष्य को तनावग्रस्त करती है। काल्पनिक संकटों अथवा विपत्तियों से स्वयं को उत्पीड़ित मत करिए। सदैव प्रसन्न एवं प्रफुल्लित रहिए। भगवान् में विश्वास रखिए एवं उचित कर्म करिए। शेष भगवान् पर छोड़ दीजिए।

भगवान् सबकी देखभाल करते हैं। वे शिलाओं के बीच की दरार में रहने वाले मेंढक के भोजन की भी व्यवस्था करते हैं। अतः व्याकुल हो कर यह मत कहिए, "अगले वर्ष मेरी क्या नियति होगी? मैं कल क्या खाऊँगा? मैं अपने वस्त्र-कम्बल आदि की व्यवस्था कैसे करूँगा ? मैं अपने पुत्र की शिक्षा अथवा पुत्री के विवाह हेतु कैसे प्रबन्ध कर पाऊँगा ?" भगवान् जानते हैं कि आपको इन सब वस्तुओं की आवश्यकता है। वे आपके लिए सब कुछ करेंगे।

भविष्य में किसी दुर्घटना-आपदा की कल्पना करके स्वयं को दुःखी मत करिए। दुर्भाग्य-विपत्ति की प्रत्याशा अर्थात् पहले से आशा मत करिए। सदैव व्यस्त रहिए। स्वयं को विविध कार्यों में संलग्न रखिए। चिन्ता-व्याकुलता भाग जायेगी।

जो भगवान् की आराधना करता है, उनकी महिमा का गान करता है, उनके नाम का जप करता है, वह भौतिक पदार्थों के लिए व्याकुलता से ऊपर उठ जाता है, उससे मुक्त हो जाता है।

आप आपत्ति, संकट, कष्ट आदि की प्रत्याशा अथवा पूर्वानुमान करते हैं। परन्तु वे कभी नहीं आते हैं। आप क्यों स्वयं को अनावश्यक रूप से चिन्तित करके अपने समय, ऊर्जा एवं शक्ति को व्यर्थ गँवाते हैं?

प्रसन्न रहिए। कष्ट के विषय में तब तक मत सोचिए जब तक कष्ट वास्तव में आ कर आपको कष्ट प्रदान नहीं करता है।

व्याकुलता मानसिक होती है। वह अज्ञात से अथवा जो होने की सम्भावना है, उससे सम्बन्धित होती है। यह सदैव भविष्य की किसी सम्भाव्य घटना के विषय में होती है।

चिन्ता (Worry) इसका अधिक तुच्छ एवं अशान्त रूप है। व्याकुलता मौन रह सकती है, परन्तु चिन्ता सर्वत्र बतायी जाती है।

फिक्र (Solicitude) व्याकुलता का मृदुल रूप है।

परेशानी (Perplexity) में व्याकुलता प्रायः निहित होती है, परन्तु यह इससे मुक्त भी होती है। एक विद्यार्थी किसी अनुवाद के विषय में परेशान हो सकता है, परन्तु यदि उसके पास पर्याप्त समय है तो वह इसके लिए व्याकुल बिलकुल नहीं हो सकता है।

विश्वास, प्रशान्ति, बेपरवाही, आत्मविश्वास, चैन, प्रसन्नचित्तता, सन्तोष एवं शान्ति व्याकुलता के विपरीतार्थी शब्द हैं।

दर्प (Arrogance)

दर्प स्वमहत्ता की अनुचित धारणा है। यह अपनी श्रेष्ठता का अयुक्तिसंगत अथवा अत्यधिक बलपूर्वक दावा करना है। यह उद्धत गर्व है।

एक दर्पयुक्त व्यक्ति अपनी धन-सम्पदा, पद-प्रतिष्ठा तथा विद्वत्ता आदि पर अनुचित रूप से अथवा अत्यधिक गर्वित होता है। वह इस गर्व को अपने आचरण-व्यवहार में प्रकट करता है। वह अकारण ही उद्धत, अभिमानी एवं घमण्डी होता है।

दर्प गर्व की वह प्रजाति है जो पद, प्रतिष्ठा, महत्ता अथवा शक्ति का अमर्यादित दावा करती है अथवा जो एक व्यक्ति की महत्ता या मूल्य को अनुचित स्तर तक बढ़ा देती है। यह दूसरों के प्रति तिरस्कार के भाव के साथ गर्व का भाव है।

एक दर्पयुक्त व्यक्ति नीच तथा अधम होता है। उसका मस्तक जलोदर रोग की सूजन की भाँति सूजा होता है। घमण्ड (Haughtiness) स्वयं को श्रेष्ठ तथा अन्यों को निम्न मानना है।

दर्प (Arrogance) स्वयं के लिए अधिक का दावा करना तथा अन्यों को बहुत कम देना है।

गर्व (Pride) स्वयं की अत्यधिक महानता का भाव है।

तिरस्कार (Disdain) घृणापूर्वक दूसरों को अपने से हीन मानना है।

धृष्टता (Presumption) औचित्य से अधिक विशिष्ट स्थान की माँग करना है।

गर्व किसी को स्वयं से अधिक उच्च अथवा श्रेष्ठ नहीं मानता है।

अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों की उपस्थिति में, आत्यन्तिक गर्व धृष्टता अथवा अभद्रता के रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करता है।
गर्व स्वयं में इतना सन्तुष्ट होता है कि अन्यों से प्रशंसा नहीं चाहता है।
मिथ्याभिमान (Vanity) प्रशंसा एवं सम्मान की तीव्र उत्कण्ठा रखना है।

उपेक्षाविहारिता (Superciliousness), भौंहें ऊपर चढ़ाये अभिमान एवं अन्यों के प्रति तिरस्कार के भाव के मिश्रित रूप को अभिव्यक्त करती है।

धृष्टता तिरस्कार एवं विद्वेष की अभद्र अभिव्यक्ति है जो प्रायः सेवक की स्वामी की अथवा कनिष्ठ की अपने से श्रेष्ठ के प्रति व्यक्त होती है।

दर्प का खेल

या देवी सर्वभूतेषु दर्परूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।

उन देवी को बारम्बार प्रणाम है जो समस्त मनुष्यों में दर्प के रूप में निवास करती हैं।

दर्प राजसिक-तामसिक अहंकार, धृष्टता, अशिष्टता, अभद्रता, उद्धत प्रकृति तथा ढीठता का मिश्रण है। यह अहंकार का ही एक रूप है। यह अहंकार ही है। यह अज्ञान से उत्पन्न होता है। माया मोहित-भ्रमित जीवों के दर्प द्वारा अपनी लीला का संचालन करती है।

एक व्यक्ति एक वृद्ध पुरुष के साथ अशिष्ट व्यवहार करता है, उसका उपहास करता है तथा उसके प्रति अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करता है। यह दर्प है।

एक दूसरा व्यक्ति क्रोध में अपने सामने बैठे व्यक्ति पर एक पुस्तक या पुस्तिका फेंकता है तथा अपशब्द बोलता है। यह दर्प है।

एक व्यक्ति एक अन्य व्यक्ति से क्रोधपूर्वक कहता है, "क्या तुम नहीं जानते हो कि मैं कौन हूँ? मैं तुम्हारा जबड़ा तोड़ दूँगा। मैं तुम्हारे दाँत तोड़ दूंगा। मै तुम्हारा रक्त पी जाऊँगा।" यह दर्प है।

एक अन्य व्यक्ति कहता है, "मैं किसी के अधीन नहीं रह सकता हूँ। मेरे अपने तौर-तरीके हैं। कोई मुझसे प्रश्न नहीं कर सकता है। मैं उसकी अंगुलियों पर नहीं नाच सकता हूँ। मैं उसके पास क्यों जाऊँ? मैं उसके निर्देशों का पालन क्यों करूँ? क्या वह मुझसे अधिक जानता है? वह है कौन? तुम मुझे आदेश देने वाले कौन होते हो? तुम मुझसे प्रश्न करने वाले कौन होते हो?" यह दर्प है।

सामान्यतया एक विचारहीन व्यक्ति जो आत्म-निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण का अभ्यास नहीं कर रहा है, वह कहता है, "मुझमें दर्प बिलकुल नहीं है। मैं विनम्र, विनीत एवं सहृदय हूँ।" परन्तु जब परीक्षा की घड़ी आती है, वह हजार बार बुरी तरह से असफल होता है। दर्प की ऐसी शक्ति है।

एक साधक बहुत अच्छा है। वह बहुत बुद्धिमान् एवं विद्वान् है। वह व्याख्यान देता है। वह एकान्तकक्ष में घण्टों ध्यान करता है, तथापि वह दर्प से मुक्त नहीं होता है। जब कोई व्यक्ति उसकी इच्छा के विपरीत कार्य करता है; जब कोई उसकी निन्दा-आलोचना करता है; जब उसे सम्मान प्राप्त नहीं होता है, तब वह दर्प से युक्त होकर अत्यन्त अशिष्ट व्यवहार करता है।

दर्प अनेक स्वरूप धारण करता है। एक व्यक्ति अपने अत्यधिक शारीरिक बल के कारण दर्पयुक्त हो सकता है। वह कह सकता है, "मैं अभी तुम्हें हरा दूँगा, यहाँ से चले जाओ।" एक अन्य व्यक्ति अपने धन, पद तथा शक्ति के कारण दर्पयुक्त हो सकता है। एक अन्य व्यक्ति अपने पुस्तकीय ज्ञान तथा दूसरा अपनी शास्त्रीय विदग्धता के कारण दर्पयुक्त हो सकता है। कोई अपनी सिद्धियों, सद्गुणों, आध्यात्मिक प्रगति, संन्यासी अथवा महन्त होने के कारण दर्पयुक्त हो सकता है।

व्यक्ति अपनी पत्नी, सन्तान, धन-सम्पत्ति एवं पद इत्यादि का त्याग कर सकता है। वह संसार का त्याग कर सकता है तथा योग-साधना का अभ्यास करते हुए वर्षों तक हिमालय की कन्दरा में रह सकता है; तथापि दर्प का त्याग उसे कठिन प्रतीत होता है। जब वह संवेगाधीन होता है, तो दर्प द्वारा अभिभूत हो जाता है। वह नहीं जानता है कि वह वास्तव में क्या कर रहा है। वह बाद में पश्चात्ताप करता है।

आवेग-संवेग में व्यक्ति को दर्पयुक्त बनाने की शक्ति है।

अपने विचारों, वचनों एवं कार्यों का सावधानीपूर्वक निरीक्षण करिए। शब्दों की शक्ति को जानिए तथा उनका सावधानीपूर्वक प्रयोग करिए। सबका सम्मान करिए। अल्प एवं मधुर शब्द बोलिए। सहृदय बनिए। धैर्य, प्रेम एवं विनम्रता का विकास करिए। विचार करिए। मौन-व्रत का पालन करिए। पुनः पुनः विचार करिए, "यह जगत् मिथ्या है। दर्पयुक्त होने से मुझे क्या लाभ होगा?" इसके विपरीत सद्गुण 'विनम्रता' के लाभों के विषय में सोचिए।

आप सौ बार असफल हो सकते हैं, परन्तु पुनः खड़े होइए एवं अपने संकल्प को दृढ़ करिए, "मैं कल असफल हुआ। आज मैं विनम्र, दयालु एवं धैर्यशील रहूँगा।" धीरे-धीरे आपकी संकल्प-शक्ति विकसित होगी तथा आप शान्ति, भक्ति एवं ज्ञान के इस शत्रु 'दर्प" पर विजय पा लेंगे।

आपकी सजगता एवं सावधानी रहते हुए भी दर्प दिन में अनेक बार अपना सिर उठायेगा। आप विवेक रूपी दण्ड उठाइए तथा विनम्रता रूपी खड्ग से इसका सिर काट दीजिए। दर्प देवी भगवती से युद्ध करने वाले रक्तबीज असुर के समान है। वह अपना एक सिर कटने पर और अधिक सिर उत्पन्न कर लेगा। अधिक शक्ति, बल एवं ओज के साथ संघर्ष करते रहिए। प्रार्थना, ध्यान, विचार, ब्रह्माभ्यास, आत्म-संयम, जप, कीर्तन एवं प्राणायाम की संयुक्त विधि का प्रयोग करिए। समन्वययोग का आश्रय लीजिए। दर्प पूर्णतः भस्मीभूत हो जायेगा।

यदि एक दर्पयुक्त व्यक्ति कन्दरा अथवा कक्ष में रहता है, तो इस वृत्ति के नाश की सम्भावना नहीं है। यह उसके मन में छिपी रहेगी तथा उसे उत्पीड़ित करेगी। एक साधक को विभिन्न स्वभावों एवं मानसिकताओं वाले व्यक्तियों से मिलना-जुलना चाहिए तथा स्वयं के प्रति हुए दुर्व्यवहार, अपमान तथा उत्पीड़न के समय अपने विचारों का निरीक्षण करना चाहिए। यदि ऐसी विषम-विकट परिस्थितियों में भी वह शान्त-प्रशान्त तथा विनाम रहता है, तो जानना चाहिए कि उसने इस घोर शत्रु का नाश कर दिया है।

जितना अधिक ज्ञान होता है, उसका दर्प भी उतना अधिक होता है। जितना बड़ा पद है, दर्प भी उतना गहन होता है। जितनी अधिक धन-सम्पदा होती है, दर्प भी उतना अधिक होता है।

आप सभी इस दुर्गुण से मुक्त हों। आप सब विनम्रता, धैर्य, दयालुता एवं प्रेम द्वारा इस असुर पर विजय पायें तथा शाश्वत आनन्द एवं अमरत्व प्राप्त करें।

लोभ (Avarice)

लोभ धन-प्राप्ति की तीव्र इच्छा है। यह लोलुपता अथवा लालच है। लोभ धन प्राप्त करने तथा उसे एकत्रित करने की वासना है। लोभ अशमनीय है। यह अत्यधिक असन्तोष एवं अशान्ति को जन्म देता है। यह शान्ति, ज्ञान एवं भक्ति का शत्रु है।

स्वर्ण में वृद्धि तथा बैंक में धनराशि में वृद्धि के साथ-साथ लोभ में भी वृद्धि होती है।

समस्त दुर्गुणों में से हृदय को सर्वाधिक कलुषित-भ्रष्ट करने वाला दुर्गुण लोभ ही है।

एक लोभी व्यक्ति धन एकत्रित करने हेतु अमर्यादित रूप से उत्कण्ठित होता है। वह लाभ प्राप्ति का लालच करता है। वह सदैव लेना-पाना चाहता है।

लोभ एवं लालच विशेषतया धन की प्राप्ति से सम्बन्धित हैं, कृपणता, कंजूसी एवं किफायत धन के व्यय से सम्बन्धित हैं। लोभी व्यक्ति धन प्राप्त तथा एकत्रित करने की इच्छा रखता है, लालची व्यक्ति सम्पत्ति के स्वामी से कुछ सम्पत्ति छीनना चाहता है। व्यक्ति अत्यधिक हुए व्यय के कारण भी लोभी बन सकता है।

अत्यधिक लोभी (Rapacious) व्यक्ति में लूटने की प्रवृत्ति होती है तथा वह इसका

प्रयोग भी करता है। ऐसे व्यक्ति लाभ पाने हेतु सदैव तत्पर होते हैं।

लालच (Greed) केवल धन के सम्बन्ध में नहीं, अपितु अन्य वस्तुओं यथा भोजन के सम्बन्ध में भी प्रयुक्त होता है। एक लालची बालक प्रत्येक वस्तु का स्वयं उपभोग करना चाहता है; एक कृपण बालक दूसरों को इसे प्राप्त करने से वंचित रखना चाहता है।

लोभ मनुष्य की सुन्दर-सुकोमल भावनाओं तथा सुखों पर विनाशकारी प्रभाव डालता है। लालची व्यक्ति दूसरों को हानि पहुँचा कर भी धन प्राप्त करना चाहते हैं; लोभी इसे एकत्रित करते हैं; कृपण व्यक्ति स्वयं के सुख

का त्याग कर लज्जाजनक रूप में इसे बचाते हैं तथा कंजूस व्यक्ति दूसरों के साथ क्षुद्र व्यवहार करके धन बचाते हैं। कृपण (Miserly) एवं कंजूस (Niggardly) व्यक्ति अल्प-तुच्छ बचत करके धन

एकत्रित करना चाहते हैं; कृपण स्वयं के सुख-भोगने पर नियन्त्रण द्वारा तथा कंजूस दूसरों के सुख-भोगने पर नियन्त्रण द्वारा धन बचाता है।

कृपणता एवं किफायत स्वयं पर तथा दूसरों पर व्यय से सम्बन्धित हैं, ये कंजूसी से कुछ कम कठोर एवं कम भत्सर्नात्मक शब्द हैं।

मुक्तहस्तता, उदारता, दानशीलता एवं वदान्यता आदि लोभी स्वभाव के विपरीत शब्द हैं।

लोभ-लोलुपता का गीत (Song of Avidity)

(जिस प्रकार 'अठारह सद्गुणों का गीत' आपके समक्ष अठारह सद्गुण रखता है जिनका आपको विकास करना चाहिए; यह 'लोभ-लोलुपता का गीत' आपके समक्ष उन दुर्गुणों को रखता है जिनसे आपको स्वयं की रक्षा करनी है। यह गीत इन सद्गुणों पर विजय प्राप्ति का मार्ग भी दिखाता है।)

लोलुपता, कामुकता, मूर्खता
धृष्टता, अस्पष्टता, अस्थिरता
मिथ्याभिमानिता, विचित्रता, विक्षुब्धता
ये हैं विघ्न समाधि प्राप्ति के
ये हैं अशुद्धियाँ मन की।
लोलुपता है लालच अथवा लोभ
कामुकता है काम अथवा वासना
मूर्खता है मोह अथवा आसक्ति
धृष्टता है दर्प अथवा ढीठता
अस्पष्टता है मन की भ्रान्त अवस्था

अस्थिरता है मन की विक्षेपकारिता-चंचलता
मिथ्याभिमानिता है एक प्रकार गर्व का
विचित्रता है सनकपूर्णता
विक्षुब्धता है क्रोध उसके समस्त रूपों में।
नाश करें इन अशुद्धियों का, इनके विपरीत सद्गुणों द्वारा,
उदारता के अभ्यास से लोलुपता
पवित्रता के अभ्यास से कामुकता
त्राटक एवं प्राणायाम, तथा
उपासना एवं जप से अस्थिरता
विनम्रता के अभ्यास से मिथ्याभिमानिता
सदाचार के अभ्यास से विचित्रता
धैर्य व सहनशीलता के अभ्यास से विक्षुब्धता ।

आप शीघ्र प्रवेश पायेंगे समाधि में
तथा प्राप्त करेंगे कैवल्य-मोक्ष।

परनिन्दा-चुगलखोरी (Back-biting)

यह तुच्छ-मानसिकता वाले व्यक्तियों की एक बुरी एवं घृणित आदत है। इस घातक रोग से प्रायः अधिकांश व्यक्ति ग्रस्त हैं। यह संकीर्णहृदयी व्यक्तियों की पक्की आदत बन चुकी है। यह एक तमोगुणी वृत्ति है। मनुष्य की इस बुरी आदत द्वारा जगत् की यह लीला चलती रहती है। यह सम्पूर्ण विश्व में अशान्ति फैलाने हेतु माया का बलशाली अस्त्र है। यदि आप चार व्यक्तियों को साथ बैठे हुए देखें तो समझ जाइए कि वहाँ निश्चित रूप से परनिन्दा की जा रही है। यदि आप चार साधुओं को वार्तालाप करते हुए देखें, तो आप निःसन्देह यह अनुमान लगा सकते हैं कि ये किसी अन्य साधु अथवा व्यक्ति की निन्दा में लगे हैं। "इस क्षेत्र का भोजन बहुत बुरा है। वह स्वामी जी बहुत दुष्ट व्यक्ति हैं।" चिन्तन-ध्यान में संलग्न सच्चा साधु सदैव एकान्त में रहेगा। परनिन्दा-चुगलखोरी गृहस्थों की अपेक्षा तथाकथित साधुओं में अधिक प्रचलित है। कुछ शिक्षित संन्यासी एवं गृहस्थ भी इस घातक रोग से मुक्त नहीं हैं।

इस रोग का मुख्य कारण अज्ञान अथवा ईर्ष्या है। एक परनिन्दक सुसमृद्ध व्यक्ति की मिथ्या निन्दा, मिथ्यारोपण तथा मिथ्यापवाद फैलाने आदि द्वारा उसकी अवनति अथवा विनाश करना चाहता है। उसके लिए व्यर्थ-गपशप एवं परनिन्दा के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं है। उसका जीवन इसी पर निर्भर रहता है। उसे परनिन्दा तथा किसी का अनिष्ट करने में सुख मिलता है। यह उसका स्वभाव है। ऐसे व्यक्ति समाज के लिए महान् संकट हैं। वे निकृष्ट अपराधी हैं। उन्हें मृत्युदण्ड देने की आवश्यकता है। कुटिलता, पूर्तता, कूटनीति, छल-कपट, वक्रोक्ति, चालबाजी आदि चुगलखोरी के परिजन ही हैं।

एक चुगलखोर व्यक्ति का मन कभी शान्त-प्रशान्त नहीं रह सकता है। उसका मन सदैव अनुचित दिशा में कार्य करने की योजनाएँ बनाता रहता है। एक साधक को इस भयंकर दुर्गुण से पूर्णतः मुक्त होना चाहिए। उसे अकेले चलना चाहिए, अकेले रहना चाहिए, अकेले भोजन करना चाहिए तथा अकेले ध्यान करना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति ने ईर्ष्यां, परनिन्दा, घृणा, अहंकार एवं स्वार्थ का नाश नहीं किया है तथा वह कहता है, "मैं प्रतिदिन छः घण्टे ध्यान करता हूँ।" यह उसका निरर्थक प्रलाप है। जब तक व्यक्ति इन समस्त दुर्गुणों का नाश नहीं कर लेता है तथा अपने मन को छः वर्षों तक निःस्वार्थ सेवा करके पवित्र नहीं बना लेता है, तब तक छः मिनट भी ध्यानावस्था में रहना सम्भव नहीं है।

आत्म-स्तुति (Boasting)

आत्म-स्तुति व्यर्थ दिखावा अथवा स्वयं की प्रशंसा है। यह गर्व की अभिव्यक्ति है।

आत्म-स्तुति से अभिप्राय स्वयं के विषय में गर्वपूर्ण अर्थात् बढ़ा-चढ़ा कर बोलना है।

जो आप कर सकते हैं अथवा करेंगे, उसके विषय में गर्वपूर्वक बात मत करिए। कार्य शब्दों से अधिक प्रभावकारक होते हैं। कार्य ही वास्तविक उपलब्धि है।

ज्ञानी के लिए विनम्रता सहज है। अज्ञानी के लिए आत्म-प्रशंसा सहज है।

आत्म-प्रशंसक अधिक नहीं जानता होगा परन्तु इतना तो निश्चित है वह उतना नहीं जानता है जितना वह सोचता है कि वह जानता है।

सूर्य को अपने प्रकाश तथा चन्द्रमा को अपनी दीप्ति के विषय में गर्वित रूप में कुछ कहने की कोई आवश्यकता नहीं है। ईमानदार एवं साहसी व्यक्तियों को अपनी ईमानदारी तथा साहस के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं होती है।

एक खाली पात्र ही अधिक ध्वनि करता है। उसी प्रकार एक आत्म-प्रशंसक भी अधिक बोलता है। वह स्वयं के विषय में गर्वपूर्वक बात करता है। उसके पड़ोसियों को यह प्रिय नहीं है। वे उसकी वास्तविकता को जानते हैं। वे उस पर हँसते हैं।

जहाँ आत्म-प्रशंसा समाप्त होती है, वहाँ से गरिमा का प्रारम्भ होता है।

प्रायः अत्यधिक आत्म-प्रशंसा करने वाले व्यक्ति न्यूनतम कार्य करने वाले होते हैं।

जल से पूर्ण गहरी विशाल नदियाँ, छिछली छोटी नदियों की अपेक्षा समुद्र को अधिक जल समर्पित करती हैं तथा वे ऐसा शान्तिपूर्वक अर्थात् बिना अधिक ध्वनि किये करती हैं।

जो अपने मूल्य का स्वयं आकलन करता है, वह भिक्षुक है।

एक आत्म-प्रशंसक को भयभीत होना चाहिए कि शीघ्र ही उसकी वास्तविकता सबको ज्ञात हो जायेगी।

जब आप अपनी योग्यताओं-क्षमताओं का स्वयं प्रचार-प्रसार करते हैं, तो आप अपनी योग्यताओं को कलंकित करते हैं तथा अपने शील-विनय को आहत करते हैं।

रिश्वतखोरी (Bribery)

आज रिश्वत लेने की आदत बहुत सामान्य है। यदि आप ऑफिस में कार्य करने वाले किसी व्यक्ति से पूछेंगे, "श्रीमान्, आपका वेतन कितना है?" वह कहेगा, "मेरा वेतन तो ५० रुपये है परन्तु मेरी आय लगभग ७५ रुपये है।" यह अतिरिक्त आय रिश्वत ही है। मनुष्य अज्ञानी है। तथाकथित शिक्षित मनुष्य भी क्रिया-प्रतिक्रिया के सिद्धान्त से तथा संस्कारों एवं उनकी शक्ति से परिचित नहीं हैं। यदि आप रिश्वत लेते हैं, तो इस अनुचित कार्य के लिए आप दण्डित किये जायेंगे; रिश्वत लेने के संस्कार आपको अपने अगले जन्म में भी रिश्वत लेने के लिए बाध्य करेंगे। आप अपने अगले जन्म में भी एक कपटी-बेईमान व्यक्ति होंगे। आपके विचार एवं कार्य आपके अवचेतन मन में अंकित होते जाते हैं। आप अपनी बेईमानी-कपट को जन्म-जन्मान्तर तक साथ ले जायेंगे तथा अत्यधिक कष्ट भोगेंगे। अपनी आवश्यकताओं को कम करिए तथा अपने वेतन के साथ ईमानदारीपूर्ण जीवन व्यतीत करिए। आपकी अन्तरात्मा निर्मल-शुद्ध होगी। आप चिन्ताओं-परेशानियों से सदैव मुक्त रहेंगे तथा शान्तिपूर्ण मृत्यु प्राप्त करेंगे। मैं मानता हूँ कि अब आप कर्म के सिद्धान्त की गम्भीरता को समझ गये होंगे। इन पंक्तियों को पढ़ने के क्षण के साथ ही सच्चे एवं ईमानदार व्यक्ति बन जाइए। उन कार्यालयों में कार्य मत करिए जहाँ भ्रष्टाचार एवं विविध प्रलोभनों की सम्भावना है। आप भ्रष्ट हो जायेंगे। शिक्षा का क्षेत्र बहुत अच्छा है। यहाँ रिश्वत लेने अथवा अपराध करने के अवसर बहुत कम हैं। आप एक शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं। इसमें आपको अवकाश के दिन भी अधिक प्राप्त होते हैं जिनका सदुपयोग धार्मिक दार्शनिक ग्रन्थों के स्वाध्याय तथा व्यावहारिक साधना के

अभ्यास हेतु किया जा सकता है। इस प्रकार आप आध्यात्मिक क्षेत्र में शीघ्रता एवं सरलतापूर्वक प्रगति कर सकते हैं।

चिन्ता, परेशानी एवं व्याकुलता (Cares, Worries and Anxities)

चिन्ताएँ, परेशानियाँ तथा व्याकुलता अविद्या से उत्पन्न होते हैं। निद्रावस्था में जब मन ब्रह्म में विश्राम करता है, एनस्थीसिया अथवा क्लोरोफार्म द्वारा जब मन का शरीर से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है, तब कोई दुःख नहीं है; चिन्ताएँ, परेशानियाँ तथा व्याकुलता भी नहीं होती हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि चिन्ताएँ, परेशानियाँ तथा व्याकुलता मानसिक सृष्टि हैं। आनन्दमय आत्मा में इनका अस्तित्व नहीं है। यदि इनके मूल कारण 'अज्ञान' का नाश कर दिया जाये, तो ये स्वतः ही नष्ट हो जाती हैं। अतः आपको आत्म ज्ञान द्वारा इनके मूल कारण को समाप्त करना होगा।

चिन्ता, परेशानी तथा व्याकुलता एक ही है। जल, पानी, वाटर, एक्वा की भाँति मात्र इनकी ध्वनि में अन्तर है। ये साथ-साथ रहती हैं। एक व्यक्ति कहता है, "मुझे अपनी पत्नी, बच्चों एवं वृद्ध माता-पिता की देखभाल करनी है; मुझे अपने घर तथा जमीन की देखभाल करनी है; मुझे अपनी गायों की देखभाल करनी है; मुझे अपने शरीर की देखभाल करनी है।" देहाध्यास अथवा देहाभिमान चिन्ताओं एवं परेशानियों का प्रमुख कारण है। यह अध्यास अज्ञान का परिणाम है। जब अज्ञानी जीव इस अशुद्ध नश्वर शरीर को शुद्ध अविनाशी आत्म तत्त्व मानने की त्रुटि करता है, तब इन समस्त बुराइयों का जन्म होता है। इन सबका मूल कारण शरीर ही है। अतः शरीर आपका प्रथम शत्रु है। आपको इस पर अभिमान नहीं करना चाहिए अपितु इसके साथ श्वानवत् व्यवहार करना चाहिए। जब इसे भूख-प्यास लगे, तब इसे उसी प्रकार कुछ भोजन-जल दे दीजिए जिस प्रकार आप अपने गाय-बैल को भोजन-जल देते हैं। इतना पर्याप्त है। इसके प्रति उदासीन बनिए।

प्रतिदिन दर्पण में पचास बार मुख देखना, साबुन, पाउडर, सुगन्धित तेल का प्रयोग करना, फैशनपरस्त टाई, कॉलर, वस्त्र पहनना देहाभिमान को दृढ़ करते हैं तथा चिन्ताओं में वृद्धि करते हैं। आत्मा का इस शरीर के साथ तादात्म्य उन व्यक्तियों तक विस्तृत हो जाता है जो इस शरीर के सम्बन्धी हैं यथा पत्नी, पुत्र, माता, पिता, बहिन आदि। इससे चिन्ताएँ भी सौ गुना बढ़ जाती हैं। आपको इन सब व्यक्तियों की भी देखभाल करनी होगी। आपको अपने पुत्र के खिलौनों की भी देखभाल करनी होगी क्योंकि खिलौने आपके पुत्र से सम्बन्धित हैं। इन चिन्ताओं-परेशानियों का कोई अन्त नहीं है। मनुष्य स्वयं अपने लिए इन समस्त चिन्ताओं का सृजन करता है। किसी अन्य को दोष नहीं दिया जा सकता है। जिस प्रकार रेशम का कीड़ा तथा मकड़ी अपनी ही लार से अपने विनाश हेतु जाल तैयार करते हैं, उसी प्रकार मनुष्य अपने अज्ञान से स्वविनाश हेतु इन बिन्ताओं-परेशानियों का सृजन करता है। सूर्य की ऊष्मा से समुद्र का जल वाष्पित हो कर मेघ बनता है तथा फिर यही मेघ सूर्य को भी आच्छादित कर देते हैं। इसी प्रकार, मनुष्य द्वारा इन चिन्ताओं-परेशानियों का सृजन अपने विनाश हेतु ही किया जाता है। शान्तिस्वरूप एवं आनन्दस्वरूप आत्मा में इन चिन्ताओं-परेशानियों की वास्तविक सत्ता कैसे हो सकती है? देहाभिमान का नाश करिए। इसी क्षण समस्त सम्बन्ध एवं चिन्ताएँ स्वयमेव नष्ट हो जायेंगे। ऐसा अभी करिए तथा आनन्द का अनुभव करिए। कस्टर्ड-पुडिंग बनाने की विधि को सुनने का कोई उपयोग नहीं है। पुडिंग खाइए एवं आनन्दित होइए। मैं आपसे इसके अविलम्ब क्रियान्वन की अपेक्षा करता हूँ।

एक व्यवसायी चिन्तित होता है, "मैं अपना ऋण कैसे चुका सकता हूँ। व्यवसाय में मन्दी चल रही है।" महाविद्यालय का विद्यार्थी इस प्रकार चिन्ता करता है, "मैंने एम. ए. की परीक्षा दी है। मैं नहीं जानता हूँ कि उत्तीर्ण रहूँगा अथवा नहीं। मैं यह भी नहीं जानता हूँ कि जीविकोपार्जन हेतु मैं क्या कार्य करूँगा। आज कल सब जगह अत्यधिक प्रतियोगिता है। किसी ऑफिस में नियुक्ति पाने की कोई सम्भावना नहीं है। स्नातक तथा एम. एस. सी.

उत्तीर्ण व्यक्ति चीनी के कारखाने में अत्यन्त अल्प वेतन पाते हैं। इस पद हेतु भी कोई रिक्त स्थान नहीं है। मेरे पिता ने मेरी शिक्षा हेतु अपनी समस्त सम्पत्ति बेच दी है। अब वे स्वयं के लिए भोजन की भी व्यवस्था नहीं कर पा रहे हैं। मैं केश विन्यास सैलून अथवा जूते बनाने की दुकान प्रारम्भ कर सकता हूँ। अब मुझे श्रम की गरिमा-महत्ता समझ में आयी है। मैं अब महात्मा गाँधी जी की शिक्षाओं एवं उनके बताये मार्ग का अनुसरण करूँगा। इन दिनों सिनेमा व्यवसाय: अत्यधिक सफल है। परन्तु मुझमें न तो अभिनय की प्रतिभा है, न ही मेरी आवाज अच्छी है। मैं अपने माता-पिता का एकमात्र सहारा हूँ।" एक राजा कहता है, "मेरे काश्तकारों ने इस वर्ष कर अदा नहीं किया है। वे कहते हैं कि फसल अच्छी नहीं हुई है। मेरा कोष रिक्त है। मैंने अपनी महाद्वीप-यात्रा में दो लाख रुपये व्यय कर दिये हैं। मैंने भूकम्प-राहत कोष में पाँच लाख दानस्वरूप दिये हैं।" वह भी विलाप करता है। इस प्रकार आप देखते हैं कि इस जगत् में कोई मनुष्य भी चिन्ताओं-परेशानियों से मुक्त नहीं है। परन्तु एक योगी, एक ज्ञानी अथवा एक भक्त इनसे पूर्णतः मुक्त है।

यदि एक व्यक्ति बहुत अधिक चिन्ता करता है तो उसके केश कुछ ही घण्टों में श्वेत हो जाते हैं। चिन्ताएँ मस्तिष्क की कोशिकाओं, स्नायुओं एवं ऊतकों पर विनाशकारी प्रभाव डालती हैं। चिन्ताएँ पाचन में बाधा डालती हैं, व्यक्ति की जीवनी-शक्ति एवं ओज को नष्ट कर उसे दुर्बल बनाती हैं। चिन्ताएँ व्यक्ति को एनीमिया (रक्ताल्पता) रोग से ग्रस्त करती हैं। चिन्ताओं-परेशानियों से मानसिक ऊर्जा का क्षय होता है। क्रोध एवं भययुक्त चिन्ताएँ मनुष्य को एक क्षण में समाप्त कर सकती हैं। ये मनुष्य को अल्पायु बनाती हैं। चिन्ताएँ अनेक रोगों का मूल हैं। ये संकल्प-शक्ति को दुर्बल करती हैं। एक चिन्ताग्रस्त व्यक्ति ध्यानपूर्वक कोई अच्छा कार्य नहीं कर सकता है। वह असावधान एवं लापरवाह होता है। वह स्वयं को किसी कार्य में निष्ठापूर्वक संलग्न नहीं कर सकता है। वह जीवित होते हुए भी मृत के समान है। वह अपने परिवार तथा धरती माता के लिए भारस्वरूप है।

कुछ व्यक्तियों ने चिन्ता करने को अपनी आदत बना लिया है। आप उनके मुखों पर लेशमात्र प्रसन्नता नहीं देखेंगे। उनके मुख सदैव 'कुनैन मुख' अथवा 'एरण्ड तेल मुख' होते हैं। क्या आपने किसी व्यक्ति का उस समय मुख देखा है जब वह कुनैन औषधि अथवा एरण्ड तेल मुँह में ले रहा होता है? चिन्ताग्रस्त व्यक्ति सदा हताश-निराश होते हैं। ऐसे व्यक्तियों को अपने कमरों से बाहर नहीं आना चाहिए। वे बाह्य जगत् एवं विचारों के जगत् को दूषित करते हैं तथा अन्य व्यक्तियों को प्रभावित करते हैं। उदासी-विषाद एक संक्रामक रोग है। ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति तुरन्त ही स्वयं भी उदास-विषादग्रस्त हो जाते हैं। एक उदास व्यक्ति को अपने मुख को ढक कर बाहर निकलना चाहिए।

अत्यधिक चिन्ता करने वाला मन भीतर झूले झूलता है। मैं मानता हूँ कि आप सब जानते हैं कि झूले झूलना से मेरा क्या अभिप्राय है। मन में चिन्ता करने की आदत घर कर जाती है। चिन्ताजनक विचार मन में पुनः पुनः आते रहते हैं तथा मन उनमें गोल-गोल घूमता रहता है।

किसी भी विषय में कभी चिन्तित मत होइए। सदैव प्रसन्न-प्रफुल्लित रहिए। चिन्ता के विपरीत गुण 'प्रसन्नता' के विषय में सोचिए। अपने सहज ज्ञान एवं बुद्धि का प्रयोग करिए। विवेकशील एवं समझदार बनिए। आप असफलताओं-संकटों से बच सकते हैं। आप किसी भी दोष-दुर्बलता पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप सजग एवं सावधान हैं, यदि आप ईमानदार एवं स्पष्टवादी हैं, यदि आप प्रतिदिन सन्ध्या वन्दन, ध्यान, प्रार्थना तथा वर्णाश्रम के अन्य कर्तव्यों का पालन करते हैं, यदि आप सत्य एवं ब्रह्मचर्य का अभ्यास करते हैं, तो विश्व का कोई व्यक्ति-वस्तु आपको हानि नहीं पहुँचा सकता है। सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी आपसे भयभीत होंगे। सब कुछ सरलता-सुगमतापूर्वक होगा। आपका जीवन अक्षुब्ध-शान्त रहेगा। कठिनाइयाँ भी आपको लेश मात्र प्रभावित किये बिना आगे निकल जायेंगी। अत: अपने जीवन में चिन्ता व्याकुलता को क्यों स्थान दिया जाये ? मन को सदैव सन्तुलित अवस्था में रखिए। सदैव हँसिए-मुस्कराइए। इस आदत का विकास करिए। यदि कोई कठिनाई समक्ष आती भी है, तो मन को शान्त रखिए। इस सूत्र का स्मरण रखिए-"यह भी गुजर जायेगा।"

विचार करिए तथा स्वयं से यह कहिए, "मैं अनावश्यक रूप से स्वयं को चिन्तित क्यों करूँ ? मुझे अब बल प्राप्त हो गया है। मैं इस जगत् में रहने की विधि जान गया हूँ। मैं किसी से भी भयभीत नहीं हूँ। अब मेरी इच्छा शक्ति सुदृढ़ हो चुकी है। मैं आत्मा का ध्यान करता हूँ। मुझे अब कुछ भी उद्वेलित-उद्विग्न नहीं कर सकता है। मैं अजेय हूँ। मैं सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित-प्रेरित कर सकता हूँ। मेरा व्यक्तित्व अब सुदृढ़ एवं ओजस्वी हो गया है। मैं जानता हूँ कि अपने आस-पास के परिवेश एवं वातावरण से किस प्रकार सामंजस्य बिठाया जाये। मैं अब अन्य व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता हूँ। मैं निर्देशन एवं स्वनिर्देशन की कला जानता हूँ। मैं अब स्वयं को किसी भी विषय में कभी चिन्तित नहीं करूँगा। मैं सदैव शान्तिपूर्ण एवं शक्तिपूर्ण हूँ। मैं भीतर से आनन्द प्राप्त करता हूँ। मैं अब कहता हूँ, 'हे चिन्ता, आपको अलविदा ।' मैं अब परिवर्तित हो चुका हूँ। मैं सुदृढ़ व्यक्तित्व सम्पन्न हो चुका हूँ। चिन्ताएँ अब मुझे अपना मुख दिखाने में भयभीत अनुभव करती हैं। मैं अब अन्य लाखों व्यक्तियों की चिन्ताएँ भी दूर कर सकता हूँ।"

हे अल्प-विश्वास रखने वाले क्षुद्र प्राणी! देखिए, पक्षी किस प्रकार चिन्तामुक्त एवं प्रसन्न हैं। पक्षी अथवा एक परमहंस संन्यासी की भाँति चिन्तामुक्त हो जाइए। अपने आत्मा में विश्वास रखिए, उस पर ही निर्भर रहिए। उठिए तथा अपने आत्मा की दिव्य महिमा को दृढ़तापूर्वक स्वीकार करिए। आप यह नश्वर शरीर नहीं हैं। आप सर्वव्यापक आनन्दमय आत्मा हैं। यदि आपके पास खाने तथा पहनने को कुछ नहीं है, तब भी अपने इस वास्तविक स्वरूप से लेश मात्र भी च्युत मत होइए। वह व्यक्ति धन्य है जो चिन्तामुक्त है एवं स्वस्वरूप में स्थित हुआ सदैव हँसता-मुस्कराता रहता है तथा अन्य व्यक्तियों में प्रसन्नता-आनन्द का संचार करता है।

असावधानी एवं विस्मृति (Carelessness and Forgetfulness)

असावधानी एवं विस्मृति दो अन्य ऐसे दुर्गुण हैं जो मनुष्य की सफलता में बाधक होते हैं। एक असावधान-लापरवाह व्यक्ति कोई भी कार्य सुन्दर एवं उचित रूप में नहीं कर सकता है। ये दोनों दुर्गुण तमोगुण से उत्पन्न होते हैं। विस्मृति एवं असावधानी इन दोनों दुर्गुणों से युक्त व्यक्ति परिश्रम एवं लगन से अपरिचित होता है। उसमें एकाग्रता तथा अवधान का अभाव होता है। वह प्रतिदिन अपनी चाबी, जूते, छाता तथा पेन खो देता है। वह ऑफिस में उचित समय पर रिकार्ड-अभिलेख आदि नहीं दे सकता है। वह इनकी अनदेखी करता है। स्मृति-विकास के सिद्धान्तों का अनुसरण करिए; इससे आप कुछ ही समय में दृढ़ स्मृति का विकास कर सकते हैं। आपको इन दोनों दुर्गुणों के निराकरण तथा इनके विपरीत सद्‌गुणों के विकास हेतु प्रबल इच्छा से सम्पन्न होना चाहिए। यह महत्त्वपूर्ण है क्योंकि तभी आपका संकल्प एवं अवचेतन मन आपके लिए कार्य करेंगे। अपने धन को अन्दर की जेब में रखिए तथा चश्मे को साइड की जेब में रखिए। ट्रेन में यात्रा करते समय अपने सामान की गिनती करिए। अपने आय-व्यय का नियमित विवरण रखिए।

धन-लोलुपता (Covetousness)

धन-लोलुपता लोभ अथवा लालच है। धन की अपरिमित अभीप्सा धन-लोलुपता है।

एक धन-लोलुप व्यक्ति से समस्त सद्‌गुण, ईमानदारी एवं शान्ति दूर भागते हैं।

ऐसा व्यक्ति सदैव निर्धन एवं असन्तुष्ट रहता है। वह एक मूर्ख है। वह एक दुःखी जीव है। वह निरन्तर दासता, भय, सन्देह, दुःख एवं असन्तोष में रहता है। वह कभी जीवन का आनन्द नहीं उठाता है।

वह धन-सम्पत्ति का उपभोग करने हेतु नहीं, अपितु मात्र उसे एकत्रित करने हेतु संचय करता है। वह प्रचुरता-समृद्धि के मध्य स्वयं को भूखा रखता है। उसके पुत्र शीघ्र ही उसकी समस्त धन-सम्पत्ति नष्ट कर देते हैं।

भ्रष्ट स्वभाव में प्रथम प्रकट होने वाला तथा अन्त में नष्ट होने वाला दुर्गुण धन-लोलुपता ही है।

एक धन-लोलुप व्यक्ति अनैतिक-अनुचित साधनों द्वारा धन एकत्रित करता है। वह दुःखपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। उसकी नियति दयनीय तथा शोचनीय है।

कायरता (Cowardice)

कायरता साहस का अभाव है। यह भीरुता है। एक कायर व्यक्ति दुर्बल हृदयी होता है। वह सकंटों से भयभीत होता है। वह अपने से उच्च-श्रेष्ठ जनों की चाटुकारिता करता है। वह उनके समक्ष बोलने में लड़खड़ाता है। वह भयग्रस्त हो जाता है। वह दुःख अथवा हानि से अनावश्यक रूप से भयभीत होता है। एक कायर व्यक्ति साहसहीन होता है। वह डरपोक होता है। वह भीरु होता है। एक कायर व्यक्ति अपनी मृत्यु से पूर्व ही अनेक बार मरता है। एक कायर व्यक्ति कभी भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त नहीं कर सकता है।

कायरता एक भयंकर पाप है। कायरता यश की हानि है। एक झूठ मुख्यतः इसलिए घृणायोग्य है क्योंकि यह कायरतापूर्ण है।

कुटिल-मानसिकता (Crooked-mindedness)

इस जगत् में कुटिल प्रवृत्ति के व्यक्ति भी प्रचुरता में हैं। कुटिल-मानसिकता एक तमोगुणी वृत्ति है। ऐसे व्यक्ति वार्तालाप तथा वाद-विवाद में सदैव कुटिल होते हैं। वे वाक्-छल तथा वाद-विवाद में लगे रहते हैं। उन्हें व्यर्थ एवं गर्वपूर्ण बात करना प्रिय होता है। वे बलपूर्वक घोषित करते हैं कि केवल उनका कथन सत्य है तथा अन्य व्यक्तियों के कथन मिथ्या एवं असंगत हैं। वे एक क्षण के लिए भी मौन नहीं रह सकते हैं। उनके तर्क अत्यधिक विलक्षण होते हैं। वे किसी व्यक्ति से सम्मानजनक रूप में तर्क-वितर्क नहीं करेंगे। वे अपशब्दों-दुर्वचनों का प्रयोग करेंगे तथा अन्त में झगड़ा कर लेंगे। उदारचित्तता, विनीतता एवं स्पष्टवादिता के विकास से इस दुर्गुण का निराकरण होगा।

विषाद (Depression)

विषाद हताश अथवा उदास होना है। यह निरुत्साहित तथा खिन्न होना है।

विषाद से निराशावादिता उत्पन्न होती है। यह समस्त प्रयासों को निष्प्रभावी कर देता है; उपक्रम क्षमता का नाश करता है। यह मन एवं शरीर के अनेक रोगों को जन्म देता है।

विषाद उत्साह का अभाव है। यह उदासी खिन्नता है। यह जीवनी-शक्ति का क्षीण होना है। यह दुःख की अवस्था है। यह साहस एवं क्रियाशीलता का अभाव है।

आशा, साहस एवं कार्यशीलता विषाद तथा भय पर विजय प्राप्त करते हैं तथा आपकी पर्वत समान कठिनाइयों को राई समान नगण्य बना देते हैं। स्थितियाँ कभी उतनी बुरी नहीं होती हैं जितनी आपने कल्पना की थी।

उठिए तथा अपनी कमर कस लीजिए। प्रार्थना करिए। जप करिए। कीर्तन करिए। आनन्दमय आत्मा पर ध्यान कीजिए। प्रसन्नता-प्रफुल्लता का विकास करिए। विषाद तिरोहित हो जायेगा।

विषाद एक नकारात्मक स्थिति है। यह अधिक समय तक नहीं रह सकती है। प्रसत्र होइए। सकारात्मक की नकारात्मक पर सदैव विजय होती है।

'ॐ' का उच्चारण करिए। प्राणायाम करिए। मेरे आलेख 'आपका वास्तविक स्वरूप' (Thy Real Nature) को पढ़िए। 'आपका वास्तविक स्वरूप' रिकार्ड को सुनिए। आप नवीन शक्ति, आनन्द एवं प्रसन्नता से भर जायेंगे।

आपका वास्तविक स्वरूप सच्चिदानन्द है। इसका अनुभव करिए तबा आनन्दपूर्वक संचरण करिए।

साधकवृन्द कभी-कभी विषादग्रस्त हो जाते हैं। अपच, मेघपूर्ण गगन, सूक्ष्मजगत् की निम्न शक्तियों तथा पुराने संस्कारों के प्रभाव से यह विषाद की दशा उत्पन्न होती है। कारण ज्ञात कर उसका नाश करिए। स्वयं को विषाद से पराजित मत होने दीजिए। तुरन्त तेज व लम्बे भ्रमण हेतु निकल जाइए। खुली हवा में दौड़िए। भक्ति गीत गाःए। एक घण्टे तक 'ॐ' का उच्च स्वर में उच्चारण करिए। नदी अथवा समुद्र के किनारे चलिए। यदि हारमोनियम बजाना जानते हैं, तो उसे बजाइए। कुम्भक एवं शीतली प्राणायाम करिए। सन्तरे के रस अथवा गर्म चाय या कॉफी का एक कप पीजिए। अवधूत गीता तथा उपनिषदों से कुछ आत्मोन्नयनकारी अंशों को पढ़िए।

आत्म-संशय (Diffidence)

आत्म-संशय स्वयं में विश्वास तथा स्वनिर्भरता का अभाव है। आत्म-संशय आत्म-विश्वास की कमी है। यह अपनी शक्ति, औचित्य, ज्ञान, निर्णय अथवा क्षमता में विश्वास का अभाव है। यह भीरूता, आत्म-विश्वासहीनता एवं संकोचशीलता है।

आत्म-संशय संकल्प तथा कार्य-निष्पादन को बाधित करता है। यह आपको निरुत्साहित करता है।

आत्म-विश्वास एवं आत्म-निर्भरता का विकास करिए। इस विषय में कम सोचिए कि अन्य व्यक्ति आपके बारे \mathfrak{pi} क्या सोचते हैं। इससे आपको आत्म-संशय पर विजय प्राप्त करने तथा आत्म-संयम, आत्म-विश्वास एवं आत्म-निर्भरता प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

उदाहरणतः हम कहते हैं, "आलोचकों के भय से राम ने संकोचपूर्वक लिखा।" "कृष्ण आत्म-संशय के कारण ही असफल हुआ।" अधिकांश व्यक्ति सदैव आत्मसंशयी होते हैं। उनमें आत्म-विश्वास का अभाव होता है। वे ऊर्जा, क्षमता एवं योग्यता सम्पन्न होते हैं, परन्तु उन्हें अपनी शक्तियों-क्षमताओं में तथा सफलता प्राप्ति में विश्वास नहीं होता है। यह एक प्रकार की दुर्बलता है जिससे व्यक्ति को उसके समस्त प्रयासों में असफलता प्राप्त होती है। एक व्यक्ति व्याख्यान देने हेतु मंच पर चढ़ता है। वह योग्य-सक्षम व्यक्ति है। वह विद्वान् है। परन्तु आत्मसंशयी-संकोचशील है। वह मूर्खतापूर्वक सोचता है कि वह एक प्रभावशाली व्याख्यान नहीं दे पायेगा। जिस क्षण उसके मन में यह नकारात्मक विचार आता है, उसी क्षण वह अधीर-व्यग्र हो जाता है, उसके पैर डगमगाने लगते हैं तथा

वह मंच से नीचे उतर आता है। इस असफलता का कारण आत्म-विश्वास का अभाव है। आपकी योग्यता-क्षमता कम हो सकती है, परन्तु आपको स्वयं में पूर्ण विश्वास होना चाहिए कि आप अपने प्रयत्न में सफल होंगे। कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जिनकी प्रतिभा क्षमता बहुत कम है परन्तु वे अपने व्याख्यान से श्रोताओं को रोमांचित कर सकते हैं। यह उनके आत्म-विश्वास के कारण होता है। यह विश्वास एक प्रकार की शक्ति है। यह संकल्प का विकास करती है। सदैव इस प्रकार सोचिए, "मैं सफल होऊँगा। मैं अपनी सफलता के प्रति पूर्णतः आश्वस्त हूँ।" आत्म-संशय रूपी दुर्गुण को कभी अपने मन में स्थान मत दीजिए। आत्म-विश्वास ही आधी सफलता है। आपको अपनी वास्तविक महत्ता से पूर्ण परिचित होना चाहिए। आत्म-विश्वास से पूर्ण व्यक्ति अपने समस्त कार्यों-प्रयासों में सदैव सफलता प्राप्त करता है।

वृथा परिभ्रमण (Dilly-dallying)

कुछ साधकों में वृथा परिभ्रमण की आदत होती है। वे एक सप्ताह से अधिक किसी स्थान पर रह नहीं सकते हैं। वृथा परिभ्रमण की इस आदत पर नियन्त्रण लगाना चाहिए। वे नये स्थान एवं नये चेहरे देखना चाहते हैं तथा नये व्यक्तियों से बात करना चाहते हैं। अस्थिरता से कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता है। एक साधक को कम से कम बारह वर्ष की अवधि तक एक ही स्थान पर रहना चाहिए। यदि उसका स्वास्थ्य दुर्बल है, तो बह गर्मी एवं वर्षा ऋतु के छः महीने किसी एक स्थान पर रह सकता है तथा सदर्दी में छः महीने किसी अन्य स्थान पर रह सकता है। सर्दी में वह राजपुर (देहरादून) अथवा ऋषिकेश में रह सकता है तथा गर्मी में वह बद्रीनाथ अथवा उत्तरकाशी जा सकता है। यदि साधक निरन्तर भ्रमणशील रहता है, तो साधना बाधित होती है। जो साधक उग्र तप, साधना तथा गहन स्वाध्याय करना चाहते हैं, उन्हें एक ही स्थान पर रहना चाहिए। अत्यधिक भ्रमण थकावर एवं दुर्बलता का कारण होता है।

धूर्तता (Dishonesty)

धूर्तता एक अन्य दुर्गुण है। अधिकांश व्यक्तियों में किसी न किसी प्रकार की धूर्तता होती है। पूर्ण ईमानदार एवं सच्चे व्यक्ति अत्यधिक दुर्लभ हैं। धूर्तता लोभ अथवा लालव की सहयोगी है। जहाँ धूर्तता है, वहाँ धोखा, कूटनीति, छल, कपट एवं प्रवंचना आदि होते हैं। ये सब धूर्तता के परिजन परिकर हैं। लोभ वासना का प्रमुख अधिकारी है। काम-वासना की तृप्ति हेतु व्यक्ति सब प्रकार के धूर्ततापूर्ण साधन अपनाता है। यदि कामवासना एवं लोभ का नाश कर दिया जाये, तो व्यक्ति ईमानदार बन जाता है। एक धूर्त व्यक्ति किसी भी व्यवसाय में सफलता-समृद्धि नहीं प्राप्त करता है। शीघ्र ही उसकी धूर्तता सबके समक्ष प्रकट हो जायेगी। वह समाज में सबकी घृणा का पात्र बन जायेगा। वह अपने समस्त कार्य-व्यवसाय में असफल ही रहेगा। एक धूर्त व्यक्ति रिश्वत लेने एवं झूठ बोलने में जरा भी नहीं हिचकेगा। एक झूठ को छिपाने के लिए, वह दस नये झूठ बोलेगा। दस नये झूठों को सत्य सिद्ध करने के लिए, पचास झूठ बोलेगा। वह सत्य भी बलपूर्वक कहने में असमर्थ होगा। उसका अन्तःकरण मलिन हो चुका है। धूर्तता का त्याग करके ईमानदारी का विकास करिए। अपनी स्थिति से सन्तुष्ट रहिए। अधिक की लालसा मत रखिए। साद जीवन व्यतीत करिए। आपके विचार सदा उच्च रहें। भगवान् से भयभीत होइए। सत्य बोलिए। सबसे प्रेम करिए। सबमें अपनी आत्मा को ही देखिए। तब आप अन्य व्यक्तियों से धूर्ततापूर्ण व्यवहार नहीं करेंगे। आप अपनी अल्प सम्पत्ति का त्याग करने को भी तत्पर रहेंगे। आप विशालहृदयी एवं उदारमना बनेंगे। यही आपसे अपेक्षित है यदि आप जीवन एवं भगवद्-साक्षात्कार में सफलता प्राप्ति के इच्छुक हैं।

ईर्ष्या (Envy)

ईर्ष्या अन्य व्यक्ति की सफलता एवं समृद्धि को देख कर हृदय का दुःखी एवं सन्तान होना है।

ईर्ष्या द्वेषभाव, घृणा एवं दुर्भावना है; यह कुत्सित दृष्टि है।

ईर्ष्या अन्य व्यक्ति की श्रेष्ठता अथवा सफलता से उत्पन्न विक्षुब्धता, पीड़ा अथवा असन्तुष्टि है, इसमें कुछ सीमा तक घृणा अथवा द्वेष भी साथ रहता है तथा प्रायः उस व्यक्ति की निन्दा की इच्छा अथवा प्रयास किया जाता है।

ईर्ष्या गर्व की पुत्री तथा हत्या एवं प्रतिशोध की लेखिका है। ईर्ष्या अग्नि की भाँति है जो व्यक्ति का शीघ्र नाश कर देती है। यदि आप अन्य व्यक्ति की प्रसन्नता में आनन्दित होते हैं, तो अपने आनन्द में ही वृद्धि करते हैं।

व्यक्ति उस वस्तु के प्रति ईर्ष्यालु होता है जो किसी अन्य की है तथा जिस पर उसका कुछ अधिकार नहीं है।

वह अपने अधिकार की वस्तु पर अधिकार जताने वाले व्यक्ति के प्रति भी ईर्ष्यालु होता है। ईर्ष्या वह विष है जो मनुष्य के शरीर को जर्जरित नष्ट कर देता है।
कार्यालय में सहकर्मी, सम्बन्धी जन अपने समान पद-स्थिति वाले व्यक्तियों से तब ईर्ष्या करते हैं जब उन्हें पदोन्नति अर्थात् श्रेष्ठ स्थिति प्राप्त होती है।

सन्तोष, सौहार्द, तृप्ति तथा अच्छा स्वभाव ईर्ष्या के विपरीतार्थी शब्द हैं। शान्ति, भक्ति एवं ज्ञान के इस घोर शत्रु ईर्ष्या को विशालहृदयता, उदारता एवं सन्तोष के अभ्यास द्वारा नष्ट करिए।

दुःसंग-कुसंगति (Evil Company)

दुःसंग अर्थात् कुसंगति के प्रभाव अत्यन्त अनर्थकारी हैं। एक साधक को सब प्रकार की कुसंगति का त्याग करना चाहिए। दुर्जन व्यक्तियों के सम्पर्क से मन कुविचारों से भर जाता है। व्यक्ति भगवान् में तथा शास्त्रों में अपने अल्प-विश्वास को भी खो देता है। एक व्यक्ति अपनी संगति द्वारा ही जाना जाता है। समान पंखों के पक्षी ही साथ-साथ रहते हैं अर्थात् समान प्रकृति एवं स्वभाव वाले व्यक्ति ही मित्र बनते हैं। ये सब बुद्धिमत्तापूर्ण कहावतें हैं। ये बिलकुल सत्य हैं। जिस प्रकार प्रारम्भ में एक पौधशाला की गाय आदि पशुओं से रक्षा हेतु सुदृढ़ बाड़ लगायी जाती है; उसी प्रकार एक नये साधक को बाह्य कुप्रभावों से अत्यन्त सावधानीपूर्वक स्वयं की रक्षा करनी चाहिए, अन्यथा वह पूर्णतः प्रष्ट-विनष्ट हो जाता है। झूठ बोलने वाले, व्यभिचार, छल, कपट, चोरी, परनिन्दा, चुगलखोरी, व्यर्थ गपशप करने वाले एवं जिन्हें भगवान् तथा शास्त्रों में विश्वास नहीं है, ऐसे व्यक्तियों के संग का त्याग करना चाहिए। साधकों के लिए स्त्रियों तथा स्त्रीसंगियों की संगति अत्यन्त अनिष्टकारी है।

दूषित वातावरण में रहना, उपन्यास पढ़ना, अश्लील चित्र, गीत, सिनेमा, नाटक तथा पशुओं की मैथुनक्रिया देखना, मन में कुविचारों को जन्म देने वाले अशिष्ट शब्द बोलना-सुनना, संक्षेपतः जो कुछ भी कुविचार उत्पन्न करे उसे कुसंगति ही कहा जायेगा। प्रायः साधक शिकायत करते हैं, "हम पिछले पन्द्रह वर्ष से साधना कर रहे हैं, परन्तु हमारी कुछ ठोस आध्यात्मिक प्रगति नहीं हुई है।" इसका स्पष्ट कारण है कि उन्होंने अभी तक कुंसगति का पूर्णतः त्याग नहीं किया है। समाचार-पत्र सभी प्रकार के सांसारिक विषयों से सम्बन्धित होते हैं।

साधकों को समाचार-पत्र पढ़ने का सर्वथा त्याग करना चाहिए। समाचार-पत्र से सांसारिक संस्कार जाग्रत होते हैं, मन अत्यधिक उत्तेजित एवं बहिर्मुखी होता है तथा इससे व्यक्ति संसार को ठोस वास्तविकता मान कर इस नामरूपात्मक जगत् के पीछे विद्यमान परम सत्य को विस्मृत कर देता है।

धर्मोन्माद-धार्मिक कट्टरवाद (Fanaticism)

धर्मोन्माद उग्र तथा अपरिमित धार्मिक उत्साह है।

धर्मोन्माद अथवा अविवेकपूर्ण उत्साह के अतिरिक्त अन्य किसी ने धर्म को इतनी क्षति नहीं पहुँचायी है अथवा सत्य को इतना अपयश नहीं प्रदान किया है।

किसी भी प्रथा के प्रति इतने आग्रही मत बनिए कि उसके पालन से सत्य दाव पर लग जाये।

धर्म के प्रति निष्ठा-गम्भीरता अच्छी है परन्तु धार्मिक उन्माद इसकी अति है तथा परिणामस्वरूप यह प्रतिक्रियात्मक होता है।

धर्मोन्माद मिथ्या उत्साह एवं अन्धविश्वास की सन्तान है। यह असहिष्णुता एवं अत्याचार का जनक है।

यह एक अत्यधिक क्रोधी मन की मिथ्या अग्नि है। एक व्यक्ति का अन्धा-विवेकहीन धार्मिक उन्माद सौ दुष्टों के संयुक्त प्रयाप्स से अधिक हानिकारक है।

मतान्धता (Bigotry) संकीर्णता है, धर्मोन्माद (Fanaticism) उग्रता है। अन्धविश्वास (Superstition) ज्ञानशून्यता है। मतान्धता किसी सम्प्रदाय अथवा लक्ष्य के प्रति विवेकशून्य एवं हठधर्मितापूर्ण आसक्ति है।

धर्मोन्माद एवं मतान्धता में प्रायः असहिष्णुता समाहित होती है जो अपने विपरीत विचारों एवं धारणाओं को सहन करने की अनिच्छुक होती है अर्थात् उन्हें सहन नहीं करती है।

अन्धविश्वास अज्ञानपूर्ण एवं अतार्किक धार्मिक विश्वास है।

विश्वासशीलता (Credulity) मुख्यतः धार्मिक नहीं होती है, यह बिना पर्याप्त प्रमाण प्राप्त किये किसी भी बात में विश्वास करने की तत्परता है, अद्‌भुत चमत्कारी को स्वीकार करने की प्रवृत्ति है। विश्वासशीलता दुर्बल होती है, असहिष्णुता उग्र होती है।

मतान्धता में उचित विचार करने की क्षमता का अभाव है; धर्मोन्माद में धैर्य का अभाव है, अन्धविश्वास में ज्ञान तथा मानसिक अनुशासन का अभाव है; असहिष्णुता में शील-संयम का अभाव है।

मतान्धता, धर्मोन्माद एवं अन्धविश्वास धार्मिक भावों के विकृत रूप हैं। विश्वासशीलता तथा असहिष्णुता प्रायः सन्देहवाद अथवा नास्तिकता के साथ रहते हैं। दोषदर्शिता, उदासीनता एवं सिद्धान्त-निरपेक्षता धार्मिक कट्टरता के विपरीत शब्द हैं।

फैशन-एक भयंकर अभिशाप (Fashion - A Terrible Curse)

यह विषय कर्मयोग के लिए अप्रासंगिक-अनुपयुक्त नहीं है। जो सादे वस्त्र पहनता है तथा फैशन के इस भयंकर अभिशाप से मुक्त है, वही कर्मयोग का अभ्यास कर सकता है। व्यक्ति को फैशन के विनाशकारी प्रभावों से पूर्ण परिचित होना चाहिए। इसलिए मैंने यह लेख यहाँ सम्मिलित किया है।

सामान्य व्यक्ति फैशन के पीछे उन्मत्त हो रहे हैं। स्त्री-पुरुष फैशन के दास बन गये हैं। यदि गाउन अथवा यूनिफार्म की सिलाई कटाई में छोटी सी भी त्रुटि हो गयी है, तो व्यक्ति लन्दन या पेरिस की अदालतों में दर्जी के विरुद्ध हानि का दावा प्रस्तुत करते हैं। आजकल दिल्ली एवं बम्बई भी पेरिस हो गये हैं। आप यहाँ सायंकाल में फैशन के विविध रूपों को देख सकते हैं। अर्द्ध-नग्नता फैशन है। वे इसे अनावृत अंगों के लिए वैज्ञानिक एवं स्वास्थ्यकर वायुसंचरण मानेंगे। आधा वक्ष, आधी बाँहें, आधे पैर अनावृत अर्थात् वस्त्र-हीन होने चाहिए। यह फैशन है। उनका अपने केशों पर पूर्ण नियन्त्रण है। यह उनकी सिद्धि है। वे सैलून में जा कर अपने केशों को इच्छानुसार कटवा सकते हैं तथा विभिन्न रूपों में केश-विन्यास करवा सकते हैं। फैशन वासना में वृद्धि करता है तथा इसे उत्तेजित करता है।

बम्बई की एक निर्धन महिला भी एक फ्रॉक बनवाने हेतु अधिक रुपये खर्च करती है। वह थोड़ा सा विचार भी नहीं करती है कि उसका पति किस प्रकार सब व्यवस्था करेगा। बेचारा पति, वासना का दास, एक दुःखी जीव। वह इधर-उधर कहीं से कुछ ऋण लेता है, विविध रूपों में रिश्वत लेता है तथा बाह्य मुस्कान एवं भीतर रोष के साथ अपनी पत्नी को किसी प्रकार प्रसन्न करने का प्रयास करता है। वह अपनी अन्तरात्मा एवं बुद्धि का नाश करता है तथा जगत् में दिग्भ्रमित सा भटकता है; अपने दुष्कर्मों के परिणामस्वरूप फोड़े-फुंसी तथा पायरिया रोग से ग्रस्त होता है। कष्टप्रद अवस्था में वह चिल्लाता है, "मैं एक घोर पापी हूँ। मैं यह कष्ट सहन करने में असमर्थ हूँ। मैंने अपने पूर्वजन्म में अनेक दुष्कृत्य किये हैं। हे भगवान्, मुझे क्षमा करिए, मेरी रक्षा करिए।" परन्तु वह इस जन्म में अपनी दशा सुधारने हेतु लेश मात्र भी प्रयत्न नहीं करता है।

मिथ्याभिमानी फैशनपरस्त व्यक्तियों के सिले वस्त्रों से बचे हुए कपड़ों द्वारा समस्त विश्व को वस्त्राच्छादित किया जा सकता है। फैशन में धन का अत्यधिक अपव्यय होता है। मनुष्य की आवश्यकताएँ वस्तुतः अत्यन्त अल्प हैं-दो जोड़ी साधारण वस्त्र, चार रोटी एवं एक लोटा पानी। यदि फैशन में अपव्यय होने वाले धन का सत्कार्यों में, समाज सेवा के कार्यों में सदुपयोग किया जाये तो मानव दिव्यता में परिवर्तित हो जायेगा। वह शाश्वत शान्ति एवं आनन्द का उपभोग करेगा। अभी आप इन फैशनेबल व्यक्तियों के मुखों पर क्या देखते हैं? अशान्ति, उद्विग्नता, चिन्ता, भय, विषाद एवं कान्तिहीनता। उन्होंने दोहरे कॉलर, टाइ, बो सहित रेशमी गाउन अथवा सूट पहना हुआ होगा, परन्तु उनके मुखों पर उदासी एवं कुरूपता ही दिखायी देगी। चिन्ता, लोभ, वासना तथा घृणा के घातक रोगों ने इनके हृदयों को पूर्णतः आक्रान्त कर रखा है।

यदि आप इंग्लैण्ड के बैरन अर्थात् सामन्त से एक हिन्दू मन्दिर में प्रवेश करते समय अपने जूते एवं टोपी उतारने को कहते हैं, तो उसे ऐसा अनुभव होता है कि उसने अपना सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही खो दिया है। एक अहंकारी व्यक्ति की मिथ्याभिमानिता देखिए! चमड़े का एक छोटा टुकड़ा (जूता) तथा वस्त्र से ढका एक कार्ड-बोर्ड (टोपी) उसे एक बैरल बनाते हैं; इनके बिना वह मात्र शून्य अर्थात् अस्तित्वहीन हो जाता है। उसमें अपना कोई तेज अथवा बल नहीं है। वह स्वयं को दुर्बल अनुभव करता है। अब वह पहले के समान शक्तिपूर्वक बात नहीं कर सकता है। यह जगत् क्षुद्र हृदयी तथा क्षुद्र बुद्धि व्यक्तियों से भरा हुआ है। वे सोचते हैं कि पगड़ी, फैशनेबल लम्बे कोट, टोपी तथा जूते पहनने से व्यक्ति बड़ा-श्रेष्ठ बन जाता है। एक वास्तविक श्रेष्ठ व्यक्ति वह है जो सरल है तथा अहंकार एवं राग-द्वेष से मुक्त है।

स्त्री-पुरुष फैशनेबल वस्त्र क्यों पहनते हैं? वे दूसरों की दृष्टि में स्वयं को श्रेष्ठ दिखाना चाहते हैं। वे सोचते हैं कि फैशनेबल वस्त्र पहनने से उन्हें आदर-सम्मान प्राप्त होगा। पत्नी अपने पति की दृष्टि में सुन्दर दिखना चाहती

है; वह उसे आकर्षित करना चाहती है। पति अपनी पत्नी को आकर्षित करने के लिए फैशनेबल वस्त्र पहनता है। यह सब उनका भ्रम है। क्या फैशनेबल वस्त्र वास्तविक सुन्दरता प्रदान करते हैं? यह कृत्रिम सज्जा, अस्थायी एवं मिथ्या चमक-दमक तथा विनाशशील मिथ्या सौन्दर्य है। यदि आप सद्गुणों यथा करुणा, सहानुभूति, प्रेम, भक्ति एवं सहनशीलता से सम्पन्न हैं, तो आप सर्वत्र सम्मानित होंगे। ये व्यक्ति को शाश्वत सौन्दर्य प्रदान करेंगे यद्यपि वह फटे-पुराने वस्त्र पहने हुए हैं।

फैशन एक भयंकर अभिशाप है। यह शान्ति का घोर शत्रु है। यह व्यक्ति के मन में कुविचारों, काम-वासना, लोभ एवं आसुरी प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है। यह मन को सांसारिक कलुष से भरता है। यह निर्धनता को जन्म देता है। फैशन ने आपको भिक्षुक बना दिया है। फैशन की इच्छा का समूल नाश करिए। सादे वस्त्र पहनिए। उच्च विचार रखिए। फैशनेबल व्यक्तियों का संग मत करिए। उन सन्तों का स्मरण करिए जिन्होंने सरल जीवन व्यतीत किया। आधुनिक समय में सरल जीवन व्यतीत कर रहे व्यक्तियों से प्रेरणा लीजिए। सादगी-सरलता से आपको पवित्रता प्राप्त होगी। इससे आपके मन में दिव्य विचारों का संचार होगा। आप चिन्ता तथा अनावश्यक विचारों से मुक्त होंगे। आप भगवद्-आराधना एवं ध्यान आदि आध्यात्मिक अभ्यासों हेतु अधिक समय अर्पित कर सकेंगे।

एक सात्त्विक पुरुष अथवा स्त्री ही वास्तव में सुन्दर होता है। उन्हें फैशनेबल वस्त्र अथवा स्वर्णाभूषणों द्वारा कृत्रिम अलंकरण की आवश्यकता नहीं है। यद्यपि वे सादे-पुराने वस्त्र पहनते हैं, लाखों व्यक्ति स्वयमेव उनकी ओर आकर्षित होते हैं।

महात्मा गाँधी जी की वेशभूषा कितनी सादी थी? वे केवल एक धोती पहनते थे। भगवान् रमण महर्षि कितने सरल थे? वे मात्र एक कौपीन धारण करते थे। धोती तथा कौपीन ही उनकी व्यक्तिगत सम्पदा थे। उन्हें अपने वस्त्रों को रखने अथवा कहीं ले जाने हेतु सूटकेस तथा ट्रंक की आवश्यकता नहीं थी। वे एक पक्षी के समान मुक्त थे। गंगोत्री के स्वामी कृष्णाश्रम, दक्षिण भारत के सलेम जिले के सेन्दा मंगलम के स्वामी ब्रहोन्द्र सरस्वती कौपीन भी धारण नहीं करते हैं। वे दिगम्बर अवस्था में रहते हैं। वे आज भी उसी अवस्था में हैं जिसमें उनका जन्म हुआ था।

यह शरीर निरन्तर मलिन पदार्थ उत्सर्जित करने वाले एक बड़े व्रण अथवा घाव के समान है। इसे किसी भी वस्त्र द्वारा मात्र ढकने की आवश्यकता है। रेशमी, झालरदार चमकीले वस्त्रों की आवश्यकता नहीं है। अस्थि-मांस के इस नश्वर एवं मल के ढेर को कलात्मक वस्त्रों से अलंकृत करना मूर्खता की पराकाष्ठा है। क्या अब आपको अपनी मूर्खता का अनुभव हो गया है? अभी फैशन का त्याग कर दीजिए। प्रतिज्ञा करिए। मुझे वचन दीजिए कि आप इसी क्षण से सादे वस्त्र धारण करना प्रारम्भ कर देंगे।

आप इस संसार में वस्त्रहीन ही आये थे तथा वस्त्रहीन ही जायेंगे। जब आप मृत्युशय्या पर होंगे, तब आपका रेशमी कटिसूत्र एवं दुशाला भी आपके पौत्र-पौत्रियों के उपयोग हेतु छीन लिया जायेगा। फिर आप धनार्जन एवं फैशनेबल वस्त्र बनाने हेतु सतत स्वार्थपूर्ण प्रयास में क्यों संलग्न हैं? अपनी मूर्खता समझिए। विवेक करना सीखिए। आत्म-ज्ञान प्राप्त करिए तथा शाश्वत शान्ति में विश्राम करिए।

हे फैशनेबल पुरुष! हे फैशनेबल स्त्री ! हे आत्मा के हननकर्ता! आप मिथ्याभिमानिता तथा फैशनेबल वस्त्रों के पीछे भागने में अपने समय, ऊर्जा एवं जीवन को व्यर्थ क्यों गँवा रहे हैं? यह सर्वथा निरर्थक है। सौन्दयों का सौन्दर्य, सौन्दर्य का अक्षय स्रोत, शाश्वत सौन्दर्य आपके ही हृदय-कक्ष में सतत देदीप्यमान हो रहा है। इस जगत् का समस्त सौन्दर्य, उन सौन्दर्य के स्रोत की छाया अथवा प्रतिबिम्ब मात्र है। अपने हृदय को पवित्र बनाइए। मन एवं इन्द्रियों पर नियन्त्रण करिए। कक्ष में शान्तिपूर्वक बैठिए तथा इस सौन्दयों के सौन्दर्य, आपके शाश्वत सखा,

'आत्मा' का ध्यान करिए। आत्मानुभव करिए। केवल तभी आप वास्तव में सुन्दर हो सकते हैं। केवल तभी आप वास्तव में आनन्दित हो सकते हैं। केवल तभी आप वास्तव में एक समृद्ध एवं श्रेष्ठ व्यक्ति हो सकते हैं।

परदोषदर्शन (Fault-finding)

यह मनुष्य की पुरानी घृणास्पद आदत है। यह आदत उससे दृढ़तापूर्वक चिपकी रहती है। सदैव दूसरों के विषयों में हस्तक्षेप करने वाले साधक का मन सदा बहिर्मुखी ही रहता है। वह भगवद्-चिन्तन कैसे कर सकता है, जब उसका मन सतत दूसरों के दोष-त्रुटियाँ ढूँढ़ने में संलग्न है?

यदि आप इस व्यर्थ गँवाये समय का एक अंश भी अपने दोषों को खोजने में लगाते, तो अब तक आप एक महान् सन्त बन गये होते। आप दूसरों के दोषों-त्रुटियों की चिन्ता क्यों करते हैं? सर्वप्रथम स्वयं को शुद्ध करिए। सर्वप्रथम स्वयं में सुधार करिए। स्वयं में परिवर्तन लाइए। अपने मन के कलुष-अशुद्धियों को स्वच्छ करिए। आध्यात्मिक साधना में गम्भीरतापूर्वक संलग्न व्यक्ति के पास दूसरों के विषयों में झाँकने हेतु क्षण भर का समय भी नहीं होता है।

यदि परदोषदर्शन की यह प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है, तो दूसरों की निन्दा- आलोचना का कोई अवसर नहीं होगा। व्यक्ति का बहुत अधिक समय परनिन्दा, चुगलखोरी, निरर्थक गपशप आदि में व्यर्थ जाता है। समय अत्यधिक मूल्यवान् है। हम नहीं जानते हैं कि यमदेवता कब हमारे प्राणों का हरण कर लेंगे। प्रत्येक क्षण का भगवद्-चिन्तन हेतु सदुपयोग किया जाना चाहिए। जगत् को अपने मार्ग पर चलने दीजिए। आप अपने विषय में सोचिए। अपनी मानसिक फैक्ट्री को स्वच्छ रखिए।

जो व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के विषयों में हस्तक्षेप नहीं करता है, वह इस जगत् का सर्वाधिक शान्त-प्रशान्त व्यक्ति है।

परदोषदर्शन दूसरों के दोष ढूँढ़ने की कला है। यह अन्य व्यक्तियों के कार्य-व्यवहार पर आपत्ति अथवा आक्षेप करना है। यह टीका-टिप्पणी करना है।

व्यक्तियों को उनकी त्रुटियाँ-दोष बताने में शीघ्रता मत करिए। अपने दोषों को देखिए।

किसी में दोष-त्रुटियाँ खोजना सरल है; उनसे श्रेष्ठ कार्य कर पाना कठिन है।

दूसरे के दोष देखने में प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि गिद्धदृष्टि-तुल्य होती है।

दूसरों के दोष एवं अपूर्णताओं के प्रति सदैव धैर्यशील रहने का प्रयास करिए, क्योंकि आपमें भी अनेक दोष एवं अपूर्णताएँ हैं जिन्हें सहन किये जाने की आवश्यकता है। यदि आप स्वयं में अपनी इच्छानुसार सुधार-परिवर्तन लाने में असमर्थ हैं, तो आप अन्य व्यक्ति से आपकी इच्छा के अनुरूप बनने की आशा कैसे कर सकते हैं?

परदोषदर्शन का स्वभाव मन की संकीर्णता एवं दुर्भावना का सूचक है।

बिना किसी उपयोगी उद्देश्य के अन्य के दोषों के विषय में मत बोलिए।

परगुणदर्शन के स्वभाव का विकास करिए। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ सद्‌गुण तथा सकारात्मक प्रवृत्तियाँ होती हैं जिनकी प्रशंसा की जा सकती है। इससे परदोषदर्शन का स्वभाव नष्ट हो जायेगा।

परदोषदर्शी व्यक्ति समाज द्वारा अपमानित एवं तिरस्कृत किया जाता है।

आप अन्य व्यक्तियों के दोष क्यों देखते हैं, जब कि आपमें सहस्राधिक दोष हैं? सर्वप्रथम स्वयं को सुधारिए। अन्य व्यक्ति अपने दोषों की चिन्ता स्वयं करेंगे। आप अपने विषय में चिन्ता करिए। अन्य व्यक्तियों के विषय में हस्तक्षेप मत करिए। आप शान्ति प्राप्त करेंगे।

एक राजसिक व्यक्ति दूसरों में केवल दोष ही देखता है। वह उनके गुण नहीं देख सकता है। वह दूसरों पर ऐसे दुर्गुण भी अध्यारोपित करता है, जो वास्तव में उनमें नहीं हैं। परन्तु एक सात्त्विक व्यक्ति दूसरों mathfrak 7 सदैव गुण ही देखता है।

एक सन्त समस्त प्राणियों में आत्मा का दर्शन करता है। अतः वह किसी में न तो गुण तथा न ही दोष देखता है।

भय (Fear)

भय मानव के लिए एक महान् अभिशाप है। यह एक नकारात्मक विचार है। यह आपका घोर शत्रु है। यह विविध रूप धारण करता है यथा रोग का भय, मृत्यु का भय, लोक-निन्दा का भय, धन-सम्पत्ति खोने का भय आदि।

भय अनेक जीवनों को नष्ट कर देता है, मनुष्य को असफल एवं दुःखी बनाता है। ऐसा चिन्तन करिए कि आप अमृत अभय आत्मा हैं। धीरे-धीरे भय तिरोहित हो जायेगा। इसके विपरीत सद्‌गुण अर्थात् साहस का विकास करिए। भय शनैः-शनैः अदृश्य हो जायेगा।

मन की कल्पना शक्ति भय को अधिक गहन बनाती है। देहासक्ति एवं देहाध्यास समस्त प्रकार के भयों का कारण है। जो साधक योग अथवा ज्ञान द्वारा स्वयं को अन्नमय कोश अर्थात् शरीर से पृथक् कर सकता है, वह भयमुक्त हो जायेगा।

जिसने भय पर विजय प्राप्त कर ली है, उसने सब पर विजय प्राप्त कर ली है, उसने अपने मन पर स्वामित्व स्थापित कर लिया है।

कुछ व्यक्ति युद्धश्क्षेत्र में गोली अथवा तोप का साहसपूर्वक सामना कर सकते हैं, परन्तु वे लोकनिन्दा तथा लोक-धारणा से भयभीत होते हैं। कुछ वन में एक चीते का वीरतापूर्वक सामना करते हैं, परन्तु वे शल्यचिकित्सक के चाकू से भयभीत होते हैं। आपको समस्त प्रकार के भयों से मुक्त होना चाहिए।

यह एक विचार कि आप अमर आत्मा हैं, प्रत्येक प्रकार के भय का प्रभावशाली रूप में नाश कर सकता है। इस भय रूपी भयंकर रोग के उपचार हेतु यही एकमात्र शक्तिशाली रसायन है, अचूक रामबाण औषधि है।

भय भगवद्-साक्षात्कार के पथ की एक महान् बाधा है। एक कायर-भीरु साधक आध्यात्मिक पथ के सर्वथा अनुपयुक्त है। वह सहस्रों वर्षों में भी आत्म-साक्षात्कार प्राप्ति का स्वप्न नहीं देख सकता है। यदि व्यक्ति अमरत्व प्राप्त करना चाहता है, तो उसे जीवन को संकट में डालने हेतु तत्पर रहना चाहिए।

बिना आत्म-त्याग एवं आत्म-बलिदान के आध्यात्मिक निधि प्राप्त नहीं हो सकती है। देहाध्यास रहित एक निर्भीक डाकू भगवद्-साक्षात्कार प्राप्ति के योग्य-उपयुक्त व्यक्ति है। मात्र उसकी विचारधारा को परिवर्तित करने की आवश्यकता है।

भय एक काल्पनिक वस्तु नहीं है। यह अनेक ठोस आकार-रूप आदि धारण करके साधक को उत्पीड़ित करता है। यदि साधक भय पर विजय प्राप्त कर लेता है तो उसकी सफलता प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। वह अपने लक्ष्य तक लगभग पहुँच ही गया है।

तान्त्रिक साधना व्यक्ति को निर्भय बनाती है। इस पथ का यह एक महान् लाभ है। इसमें साधक को मध्यरात्रि में श्मशान भूमि में एक शव के ऊपर बैठ कर साधना करनी होती है। इस प्रकार की साधना उसे साहसी निर्भीक बनाती है।

भय अनेक स्वरूप धारण करता है। व्यक्ति को मृत्यु, रोग, सर्प-बिच्छू के दंश का भय होता है; वह एकान्त अथवा संगति से भयभीत होता है; उसे कुछ खोने का भय होता है; 'लोग मेरे विषय में क्या कहेंगे' इस प्रकार लोकनिन्दा का भय होता है। कुछ व्यक्ति वन्य पशु चीते से भयभीत नहीं होते हैं; वे युद्धक्षेत्र में बरसने वाली गोलियों से भी भयभीत नहीं होते हैं, परन्तु उन्हें लोकनिन्दा से अत्यधिक भय लगता है। लोकनिन्दा का भय एक साधक की आध्यात्मिक प्रगति में बाधा सिद्ध होता है। चाहे उसे उत्पीड़ित-प्रताड़ित किया जाये, मशीनगन के सामने खड़ा कर दिया जाये, तब भी साधक को अपने सिद्धान्तों एवं संकल्पों पर अडिग रहना चाहिए। केवल तभी वह प्रगति कर पायेगा एवं आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करेगा।

समस्त साधक इस गम्भीर रोग 'भय' से पीड़ित हैं। आत्मचिन्तन, विचार, भक्ति तथा साहस के विकास द्वारा सभी प्रकार के भय का पूर्णतः नाश किया जाना चाहिए। सकारात्मक की नकारात्मक पर विजय होती है। साहस भय तथा कायरता को पराजित कर देता है।

भय संकट से उत्पन्न एक दुःखप्रद भावना है। यह संकट अथवा दुःख का पूर्वानुमान है। भय आने वाले संकट तथा दुःख से उत्पन्न एक भाव है जिसमें उस दुःख-संकट से बचने तथा स्वयं की सुरक्षा की इच्छा समाहित है।

भय अज्ञान से उत्पन्न होता है। यह मन की एक नकारात्मक वृत्ति है। इसका वास्तविक आकार अथवा अस्तित्व नहीं होता है। यह कल्पना की उपज है।

निरन्तर भय आपकी जीवनी शक्ति का हास करता है, आपके आत्मविश्वास को डिगाता है तथा क्षमताओं को नष्ट करता है। यह आपको दुर्बल-शक्तिहीन बना देता है। यह आपकी सफलता का शत्रु है। अतः भय का त्याग करिए तथा सदैव साहसी-निर्भीक बनिए।

भय से दुर्भाग्य का आगमन होता है। एक कायर का भय उसे संकटों में डालता है। मिथ्या भयों से स्वयं को आक्रान्त मत करिए। हे मित्र! साहसी बनिए। भय मन में बजने वाली एक घण्टी है जो मन को संकट से रक्षा हेतु सजग-सचेत करती है।

भय समस्त बुराइयों का प्रारम्भ-बिन्दु है। अतः अभय आत्मा पर ध्यान द्वारा अथवा साहस के विकास द्वारा भय पर विजय प्राप्त करिए।

भय के विचारों के कारण निर्धनता एवं असफलता प्राप्त होती है।

यदि आप किसी से भयभीत हैं, तो सीधे उसके मुख पर देखें अर्थात् उसका सामना करें। भय भाग जायेगा।

मन के लिए भय वैसा ही है, जैसा शरीर के लिए पक्षाघात अर्थात् लकवा । भय मन को गतिहीन-अशक्त करता है तथा आपको दुर्बल बनाता है।

भय सर्वाधिक विध्वंसात्मक भाव है। यह स्नायु तन्त्र को क्षतिग्रस्त करता है तथा आपके स्वास्थ्य को दुर्बल करता है। यह चिन्ता उत्पन्न करता है तथा मन की शान्ति एवं सुख को असम्भव बना देता है।

जहाँ-जहाँ वस्तु-पदार्थों के प्रति आसक्ति है, वहाँ-वहाँ भय तथा क्रोध भी होते हैं। क्रोध एवं चिन्ता भय के पुराने सहयोगी हैं।

भय अपने समस्त रूपों-प्रकारों में मनुष्य का महानतम शत्रु है। इसने मनुष्य के सुख एवं कार्यक्षमता का नाश किया है। इसने अधिकाधिक मनुष्यों को कायर एवं असफल बनाया है।

भगवान् का भय होना ज्ञान का प्रारम्भ है। यह विश्वास का परिणाम है, अतः सकारात्मक भय है।

संशय के परिणामस्वरूप होने वाला भय नकारात्मक है।

आपका आधा से अधिक भय निराधार एवं काल्पनिक होता है। भय कार्य एवं प्रयास को कुंठित करता है।

सन्त्रास, आशंका, सम्भ्रान्ति, भयाकुलता, निराशा, भीति, आतंक, सन्देह, भीरुता एवं घबराहट भय के समानार्थी हैं।

साहस, वीरता, आत्मविश्वास, निर्भयता, निर्भीकता, निडरता एवं विश्वास भय के विपरीतार्थी शब्द हैं।

चंचलता (Fickleness)

चंचलता मन की अस्थिरता है। यह अनिश्चयता अथवा अदृढ़ता है। एक चंचल मन प्रतिक्षण परिवर्तित होता है, विचलित होता है। यह कभी स्थिर नहीं रहता है। यह सदैव भटकता है।

एक चंचलचित्त व्यक्ति एक क्षण वचन देता है तथा अगले ही क्षण अपने वचन को भंग कर देता है। आप उस पर विश्वास नहीं कर सकते हैं।

एक चंचल स्मृति बुरी है; चंचलतायुक्त आचरण उससे बुरा है; परन्तु एक अस्थिर-चंचल हृदय एवं उद्देश्य सर्वाधिक बुरे हैं।

एक चंचलचित्त व्यक्ति अपने भावों, निर्णयों एवं उद्देश्यों में सदैव परिवर्तन करता है। वह अस्थिर एवं अनिश्चयी होता है।

वह एक अशान्त-विक्षुब्ध समुद्र अथवा बन्दर की भाँति है। वह अनिश्चयी, दुविधाग्रस्त एवं सनकी होता है।

ऐसा व्यक्ति अपने प्रत्येक प्रयत्न में सदैव असफल रहता है। सफलता से बह अपरिचित ही रहता है। वह रोता एवं पश्चात्ताप करता है।

मन की चंचलता-अस्थिरता ध्यान में एक महान् बाधा है। हल्का सात्त्विक आहार तथा प्राणायाम का अभ्यास मन की इस अवस्था को दूर करेगा। उदर को अधिक मत भरिए। अपने घर के आँगन में लगभग आधा घण्टे तक तेज चलिए। किसी कार्य का दृढ़ संकल्प लेते ही उसे तुरन्त क्रियान्वित करिए। इससे मन की अस्थिरता-चंचलता दूर होगी तथा आपकी संकल्प शक्ति का विकास होगा।

स्थिरता, निर्णय, निश्चय, दृढ़ता, अपरिवर्तनशीलता, दृढनिश्चयता एवं दृढ़ निष्ठा चंचलता के विपरीतार्थी शब्द हैं।

मन की चंचलता का कारण रजस् की अधिकता है। सत्त्व अथवा पवित्रता अथवा सन्तुलन में वृद्धि द्वारा रजस् को समाप्त करिए। सात्त्विक आहार लीजिए। जप, कीर्तन, धारणा-ध्यान, त्राटक तथा प्राणायाम का अभ्यास करिए। पवित्र ग्रन्थों का स्वाध्याय करिए। चंचलता-अस्थिरता दूर हो जायेगी। केवल स्थिरता ही रहेगी।

चलचित्र दर्शन (Film-going)

मद्यपान, मांसाहार, अश्लील संगीत सुनना, नाच पार्टी, थियेटर, सिनेमा आदि जाना व्यक्ति की वासनाओं को उत्तेजित करते हैं तथा उसे नरकाग्नि में झोंकते हैं। भारत में भी सिनेमा एक अभिशाप बन गया है। एक अधिकारी अपना आधे से अधिक वेतन सिनेमा देखने में व्यय करता है तथा ऋणग्रस्त हो जाता है। सब व्यक्तियों में किसी प्रकार के दृश्य देखने की बुरी आदत विकसित हो गयी है। वे इसके बिना रह नहीं सकते हैं। आँखें किसी प्रकार का प्रकाश तथा उत्तेजनात्मक दृश्य देखना चाहती हैं। सिनेमा का व्यवसाय आजकल अधिक समृद्ध हो चुका है। परदे पर विभिन्न प्रकार के अर्द्धनग्न चित्र एवं अश्लील दृश्य दिखाये जाते हैं। इससे महाविद्यालयों के युवक एवं युवतियाँ मानसिक रूप से उत्तेजित हो जाते हैं। सिनेमा द्वारा अनेक प्रकार की बुराइयों का समाज में प्रचार होता है। सिनेमा भक्ति की शत्रु है। यह जगत् का विध्वंस कर रही है। यह जनसामान्य को अत्यधिक क्षति पहुँचाती है। यह व्यक्ति के संसाधनों का क्षय करती है। यह अत्यन्त प्रलोभनकारी है। बुरे चलचित्रों-फिल्मों की पूर्ण जाँच कर उन पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। फिल्मों को जनसामान्य के सम्मुख प्रदर्शित करने से पूर्व एक धार्मिक संस्था द्वारा स्वीकृत कराना चाहिए। केवल उन्हीं फिल्मों को प्रदर्शित करने की अनुमति दी जानी चाहिए जिनके कथानक धार्मिक हैं तथा जो मनुष्य के नैतिक एवं दार्शनिक पक्षों का विकास करती हैं।

यह देखना सन्तोषजनक है कि कुछ उच्च शिक्षित पुरुष एवं स्त्री सिनेमा में अभिनय करते हैं। परन्तु उनकी उच्च शिक्षा का कोई प्रभाव नहीं होगा। यदि वे जनसामान्य को प्रभावित करना चाहते हैं तथा विश्व का आध्यात्मिक कल्याण चाहते हैं, तो उन्हें तपस्या, ध्यान एवं ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करना चाहिए।

सिनेमा व्यक्ति में बुरी आदत उत्पन्न करती है। व्यक्ति सिनेमा देखे बिना एक दिन भी नहीं रह सकता है। उसकी आँखें कुछ रंग-बिरंगे चित्र, अर्द्ध-नग्न चित्र देखना चाहती हैं, उसके कान संगीत सुनना चाहते हैं। जो आध्यात्मिक क्षेत्र में स्वयं का विकास करना चाहते हैं, उन्हें सिनेमा देखने का पूर्णतः त्याग करना चाहिए। केवल आध्यात्मिक व्यक्ति ही नैतिक शिक्षा पर आधारित उन रुचिकर कथा-कहानियों का सृजन कर सकते हैं जो दर्शकों के मन एवं हृदय को उन्नत कर सके।

विस्मरण (Forgetfulness)

विस्मरण स्मृति से किसी बात का निकलना अथवा खोना है।

विस्मरण मन से किसी बात को निकालने अथवा भुलाने की योग्यता है।

यह स्मृति-क्षय है।

हम मानवीय चिन्ताओं के मधुर-विस्मरण की बात कहते हैं।

विस्मरण असावधानी अथवा प्रमादपूर्वक कर्तव्य से च्युत होना है; लापरवाही कर्तव्य को भूलना है।

एक उदात्त प्रकार का विस्मरण होता है जो स्वयं के प्रति हुए अपमान-आघात का स्मरण नहीं करता है।

विस्मरण की कला को सीखिए; आप प्रायः वह स्मरण रखते हैं जो आपको विस्मृत करना चाहिए तथा उसे विस्मृत नहीं कर सकते हैं जो आपको विस्मृत करना चाहिए।

विस्मरण भगवान् का आशीर्वाद है। यदि आप कुछ दुःखद घटनाओं का सतत स्मरण करते रहेंगे, तो आप शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होंगे।

जिनकी स्मृति शक्ति अच्छी नहीं है, वे विस्मरणशील होते हैं। वे लापरवाह होते हैं। वे आवश्यक कर्तव्य भूल जाते हैं। दृढ़ स्मृति के विकास द्वारा इस दुर्गुण से मुक्त होइए। आपके कष्ट के समय अन्य व्यक्तियों द्वारा की गयी सहायता का विस्मरण मत करिए; उनके सत्कार्यों का विस्मरण मत करिए। उनके प्रति कृतज्ञ रहिए।

विस्मरण एक वैयक्तिक लक्षण है; जैसा कि हम कहते हैं, "वह अपनी विस्मरण की आदत के लिए प्रसिद्ध था।" पूर्ण विस्मृति (Oblivion) इससे प्रबल शब्द है जिसका अभिप्राय उस स्थिति से है जो एक व्यक्ति अथवा वस्तु पूर्णतः प्राप्त कर चुका है।

प्रार्थना, प्राणायाम, ध्यान, "जीवन एवं आत्म-साक्षात्कार में सफलता के रहस्य (Sure Ways for Success in Life and God-Realisation)" पुस्तक में निर्देशित स्मृति-शक्ति विकसित करने की विधियों के अभ्यास, ब्राह्मी-आँवला तेल के प्रयोग तथा दूध के साथ ब्राह्मी घी अथवा ब्राह्मी पाउडर के सेवन द्वारा आपकी स्मृति शक्ति में वृद्धि होगी।

उदासी एवं निराशा (Gloom and Despair)

जिस प्रकार मेघ सूर्य को आवृत-आच्छादित कर लेते हैं, उसी प्रकार उदासी एवं निराशा आपके साधनाभ्यास में बाधास्वरूप आते हैं। ऐसे समय में भी आपको जप, धारणा एवं ध्यान का अभ्यास नहीं छोड़ना चाहिए। उदासी एवं निराशा के ये छोटे-छोटे मेघ शीघ्र ही दूर चले जायेंगे। मन को यह निर्देश दीजिए, "यह भी गुजर जायेगा।"

द्यूतक्रीड़ा-जुआ खेलना (Gambling)

द्यूतक्रीड़ा एक अन्य भयंकर दुर्गुण है। यह शैतान की परम मित्र है अर्थात् भगवान् की विरोधी है। यह माया का श्रेष्ठ अस्त्र है। इसने अनेक हृदयों को तोड़ा है। यह आकर्षित, प्रलोभित एवं मोहित करती है। प्रथम दांव में थोड़ा सा लाभ द्यूतक्रीड़ा करने वालों को उत्प्रेरित करता है तथा उन्हें एक बड़ी धनराशि दाव पर लगाने हेतु विवश करता है। अन्ततः वे अपना सब कुछ खो कर रोते हुए घर लौटते हैं। द्यूतक्रीड़ा से व्यक्ति दिवालिया-निर्धन हो जाता है। वह बुरी तरह रोता है, क्रन्दन करता है, परन्तु इसका त्याग नहीं करता है। माया अनुचित आदतों, अनुचित चिन्तन एवं संस्कारों, कुसंगति, द्यूतक्रीड़ा, सिनेमा, मद्यपान, धूम्रपान एवं मांसाहार द्वारा विध्वंस करती है। इन सबमें विवेक एवं विचार शक्ति असफल हो जाते हैं। बुद्धि विकृत हो जाती है। द्यूतक्रीड़ा एवं मद्यपान में बहुत बड़ी धनराशि व्यर्थ गँवा दी जाती है। द्यूतक्रीड़ा में आसक्त व्यक्ति के हृदय में कोई सद्गुण नहीं रह सकता है। द्यूतक्रीड़ा, भ्रमित जीवों को आबद्ध करने हेतु माया का फैलाया एक जाल है। द्यूतक्रीड़ा से अधिक बुरा अन्य कुछ नहीं है। द्यूतक्रीड़ा करने से व्यक्ति में समस्त दुर्गुण स्वतः ही आ जाते हैं। उसे कोई वास्तविक लाभ प्राप्त नहीं होता है। वह सदैव दुःख में निमग्न रहता है। वह एक कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। ताश खेलना तथा घुड़दौड़ में धन लगाना द्यूतक्रीड़ा के ही प्रकार हैं।

हे मानव! मनुष्य जन्म प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। यह जीवन भगवद्- साक्षात्कार हेतु प्राप्त हुआ है। अक्षय-शाश्वत आनन्द भगवान् में ही है। इस बहुमूल्य जीवन को मद्यपान, द्यूतक्रीड़ा, धूम्रपान एवं मांसाहार करने में व्यर्थ मत गँवाइए। मृत्यु के समय आप यमदेवता से क्या कहेंगे? कोई आपकी सहायता नहीं करेगा। आप अपने विचारों एवं कर्मों को साथ ले जायेंगे। इसी क्षण से द्यूतक्रीड़ा, मांसाहार, मदिरापान, सिनेमा एवं धूम्रपान का त्याग कर दीजिए। मुझे अभी दृढ़ वचन दीजिए। मैं आपका मित्र एवं हितैषी हूँ। जाग्रत होइए। सजग होइए। एक पवित्र-सद्गुणी व्यक्ति बनिए। सत्कर्म करिए। भगवान् के नाम का गायन करिए। भगवन्नाम समस्त बुरी आदतों के निवारण हेतु एक शक्तिशाली एवं प्रभावशाली औषधि है। धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करिए। सन्तों एवं भक्तों की संगति करिए। आपकी सभी बुरी आदतें नष्ट हो जायेंगी। सेवा करिए। प्रेम करिए। दान करिए। पवित्र बनिए। धारणा ध्यान का अभ्यास करिए। इसी क्षण साक्षात्कार प्राप्त करिए। जगत् में समय सर्वाधिक मूल्यवान् वस्तु है। मूर्ख-अज्ञानी जन ताश खेलने एवं द्यूतक्रीड़ा में अपना सम्पूर्ण समय व्यर्थ गँवाते हैं। कितनी भयंकर दशा है! कितनी दुःखद दशा है! अविद्या कितनी शक्तिशाली है? व्यक्ति अन्धकार के दलदल में आकण्ठ निमग्न हैं। हे मानव जाति के दयनीय प्रतीको! हे आत्मा के हननकर्ताओ ! आपके अन्तर्वासी भगवान् श्री कृष्ण आपको इन बुरी आदतों पर विजय पाने हेतु शक्ति प्रदान करें। उनका आशीर्वाद आप सब पर हो।

लालच (Greed)

प्रथम काम आता है। फिर क्रोध आता है। उसके उपरान्त क्रमशः लालच एवं मोह आते हैं। काम अत्यधिक शक्तिशाली है। अतः इसे प्रमुख स्थान दिया गया है। काम एवं क्रोध में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी प्रकार लालच एवं मोह में घनिष्ठ सम्बन्ध है। एक लालची व्यक्ति का अपने धन के प्रति अत्यधिक मोह होता है। उसका मन सदैव उसकी तिजोरी एवं उसके कटिसूत्र से बँधे चाबी के गुच्छे में रहता है। धन ही उसका प्राण एवं जीवन है।

वह धन एकत्रित करने हेतु जीवन व्यतीत करता है। वह अपने धन का मात्र चौकीदार अर्थात् संरक्षक है। उसका अपव्ययी पुत्र ही इस धन का उपभोग करता है। लालची व्यक्ति निर्धनों से अत्यधिक ब्याज (२५% ,५०% तथा कभी-कभी १००%) ले कर उनका रक्त चूसता है। ये व्यक्ति क्रूरहृदयी होते हैं। ये अन्नक्षेत्र खोल कर तथा भवन निर्माण करवा कर स्वयं को उदार-दानशील दिखाना चाहते हैं।

ऐसे कार्य उनके घोर पापों एवं क्रूर कर्मों को नष्ट नहीं कर सकते हैं। इनके कारण अनेक निर्धन परिवार विनष्ट हुए हैं। वे नहीं सोचते हैं कि उनके महल-बंगले निर्धनों के रक्त से बने हैं। लालच ने उनकी बुद्धि का नाश कर उन्हें पूर्णतया अन्धा अर्थात् विवेकशून्य बना दिया है। उनकी आँखें हैं परन्तु वे देख नहीं सकते हैं। लालच मन को सदैव अशान्त रखता है। एक लाख रुपये का स्वामी दस लाख रुपये पाने की योजना बनाता है। दस लाख का स्वामी सौ लाख के लिए प्रयास करता है। लालच अशमनीय है। इसका अन्त नहीं है। यह अनेक सूक्ष्म रूप धारण करता है। एक व्यक्ति नाम, यश एवं प्रशंसा के लिए उत्कण्ठित रहता है। एक अधीनस्थ न्यायाधीश उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनना चाहता है; एक तृतीय श्रेणी का मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी का मजिस्ट्रेट बनना चाहता है। एक साधु अलग-अलग स्थानों पर अपने आश्रम बनाना चाहता है। ये सब भी लोभ एवं लालच है। एक लालची व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन हेतु सर्वथा अनुपयुक्त है। विचार, ईमानदारी एवं निःस्वार्थता द्वारा समस्त प्रकार के लालच का नाश करके शान्ति प्राप्त करिए।

द्वेष (Hatred)

द्वेष एक अन्य दुर्गुण है। यह जगत् द्वेष से भरा है। यहाँ सच्चा प्रेम नहीं है। पुत्र अपने पिता से द्वेष करता है तथा उसकी सम्पत्ति की शीघ्र प्राप्ति हेतु उसे विष देता है। एक पत्नी किसी अन्य धनी एवं प्रतिष्ठित युवक से विवाह हेतु अपने पति को विष देती है। भाई सम्पत्ति हेतु अदालतों में संघर्ष करते हैं। गुरु नानक जी एवं कबीर जी ने हमारे राष्ट्र के विभिन्न सम्प्रदायों में एकता स्थापित करने हेतु यथाशक्य प्रयास किया परन्तु वे असफल रहे। केवल वेदान्त ही उन्हें एकत्व के सूत्र में बाँध सकता है। जो व्यक्ति सबमें अपने आत्मा का दर्शन करता है, वह किसी अन्य व्यक्ति से घृणा अथवा द्वेष कैसे कर सकता है? समस्त विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में वेदान्त के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जानी चाहिए। यह अत्यन्त आवश्यक है। इसे जितना शीघ्र किया जाये, उतना अच्छा है। युवकों के मन में उनकी कुमारावस्था से ही स्वस्थ-उन्नत विचारों के बीजों का वपन किया जाना चाहिए। सभी युवकों को मानवता की सेवा हेतु प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। वैश्विक प्रेम की आवश्यकता को स्पष्ट रूप में समझाया जाना चाहिए। केवल तभी घृणा-द्वेष के नाश तथा शुद्ध प्रेम के विकास की आशा की जा सकती है। आप सभी को अभी से घृणा एवं द्वेष के नाश हेतु गम्भीरता एवं सच्चाईपूर्वक प्रयास करना चाहिए। घृणा, ईर्ष्या एवं असहिष्णुता पर प्रेम द्वारा विजय प्राप्त करिए; आप जीवन में सफलता प्राप्त करेंगे।

द्वेष एक साधक का घोर शत्रु है। यह उसका पुराना शत्रु है। यह जीव के साथ चिर काल से रह रहा है। घृणा, पूर्वाग्रह, तिरस्कार, ताने कसना, मजाक उड़ाना, सताना, त्यौरी चढ़ाना आदि द्वेष के ही रूप हैं। द्वेष पुनः पुनः प्रकट होता है। यह काम एवं लोभ की भाँति अशमनीय है। यह कुछ समय के लिए अस्थायी रूप से समाप्त हो जाता है, तथा पुनः द्विगुणित शक्ति के साथ प्रकट हो जाता है। यदि एक पिता किसी व्यक्ति से द्वेष रखता है, तो उसके पुत्र-पुत्रियाँ भी उस व्यक्ति के प्रति अकारण द्वेष रखना प्रारम्भ कर देते हैं यद्यपि उस व्यक्ति ने इनके साथ कुछ अनुचित नहीं किया है। यह द्वेष की शक्ति है। यदि कोई उस व्यक्ति का स्मरण करता है जिसने ४० वर्ष पूर्व उसे कुछ गम्भीर हानि पहुँचायी थी, तो उसके मन में तुरन्त द्वेष प्रकट हो जाता है तथा उसके मुख पर शत्रुता एवं द्वेष के स्पष्ट चिह्न देखे जा सकते हैं।

द्वेष का विकास द्वेष वृत्ति के बार-बार प्रकट होने से होता है। घृणा-द्वेष का नाश घृणा-द्वेष से नहीं, अपितु प्रेम से होता है। द्वेष को दीर्घ एवं गहन उपचार की आवश्यकता है क्योंकि इसकी शाखाएँ अवचेतन मन के विभिन्न भागों एवं कोनों तक फैली होती हैं। इसके नाश हेतु बारह वर्ष तक सतत निःस्वार्थ सेवा एवं ध्यान की आवश्यकता है। एक व्यक्ति प्रथम भेंट में ही दूसरे व्यक्ति से अकारण द्वेष करता है। यह स्वाभाविक है क्योंकि सांसारिक व्यक्ति शुद्ध प्रेम भाव से सर्वथा अपरिचित हैं। स्वार्थ, ईर्ष्या, लोभ एवं काम द्वेष के ही परिजन हैं। कलियुग में घृणा द्वेष की शक्ति में वृद्धि हो गयी है।

एक पुत्र अपने पिता के विरुद्ध अदालत में मुकदमा दायर करता है। पत्नी पति को तलाक देती है। ऐसा भारत में भी होने लगा है। कुछ समय बाद भारत में भी तलाक की विशेष अदालतें स्थापित हो जायेंगी। हिन्दू स्त्रियों का पातिव्रत्य धर्म कहाँ है? क्या यह भारत भूमि से अदृश्य हो गया है ? भारत में विवाह एक पवित्र संस्कार है, एक पावन कार्य है। यह पश्चिम जगत् की भाँति मात्र एक समझौता नहीं है। भारत में पति पत्नी का हाथ पकड़ता है, दोनों अरुन्धती नक्षत्र की ओर देखते हैं तथा पवित्र अग्नि के समक्ष वचन लेते हैं। पति कहता है, "मैं भगवान् राम की भाँति पवित्र रहूँगा तथा तुम्हारे साथ शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करूंगा; स्वस्थ एवं बुद्धिमान् सन्तानों का पिता बनूँगा। मैं मृत्युपर्यन्त तुमसे प्रेम करूँगा। मैं कभी किसी अन्य स्त्री के मुख की ओर नहीं देखूँगा। मैं तुम्हारे प्रति सदैव सच्चा रहूँगा। मैं स्वयं को तुमसे कभी पृथक् नहीं करूँगा।" पत्नी कहती है, "जैसे राधा जी भगवान् कृष्ण के प्रति एवं सीता जी भगवान् राम के प्रति निष्ठावान् थी, मैं आपके प्रति निष्ठावान् रहूँगी। मैं जीवन के अन्तिम क्षण तक सच्चे हृदय से आपकी सेवा करूँगी। आप ही मेरे जीवन हैं। आप मेरे प्राणवल्लभ हैं। मैं आपको भगवान् मान कर सेवा करूँगी तथा इस प्रकार सेवा द्वारा भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करूँगी।" आज की भयानक स्थिति को देखिए। आधुनिक सभ्यता एवं आधुनिक शिक्षा के कारण यह दुःखद स्थिति उत्पन्न हुई है।

पति-पत्नी का माउण्ट रोड अथवा मेरीन बीच पर एक-दूसरे का हाथ पकड़े हुए घूमना भारतीय संस्कृति नहीं है। यह वास्तविक स्वन्त्रता नहीं है। यह अन्धानुकरण है। यह स्त्रियों के लिए उपयुक्त नहीं है। यह उनके स्त्रियोचित शील-सौन्दर्य को नष्ट करता है जो उनकी विशिष्टता तथा आभूषण है।

शुद्ध निःस्वार्थ प्रेम का विकास किया जाना चाहिए। व्यक्ति को भगवान् का भव होना चाहिए। सोलोमन कहते हैं, "भगवान् का भय ज्ञान का प्रारम्भिक बिन्दु है।" आत्मभाव के साथ सेवा घृणा-द्वेष का पूर्णतः नाश करके जीवन के एकत्व का अनुभव कराती है। निःस्वार्थ सेवा द्वारा घृणा, द्वेष एवं पूर्वाग्रह पूर्ण रूप से नष्ट हो जायेंगे। दिन-प्रतिदिन के जीवन में वेदान्त के व्यावहारिक अभ्यास से समस्त प्रकार के द्वेष समाप्त हो सकते हैं। समस्त प्राणियों में एक ही आत्मा छिपा है। तब आप अन्य व्यक्तियों से द्वेष क्यों करते हैं? आप उन पर अप्रसन्न क्यों होते हैं? आप उनके साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार क्यों करते हैं? आप व्यक्तियों को विभाजित क्यों करते हैं? जीवन एवं चेतना के एकत्व का अनुभव करिए। सर्वत्र आत्मा की विद्यमानता का अनुभव करिए। आनन्दित होइए तथा सर्वत्र प्रेम एवं शान्ति का प्रसार करिए।

घृणा-द्वेष का नाश कैसे करें?

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी।।
(श्रीमद्भगवद्गीता १२-१३)

भगवद् साक्षात्कार प्राप्त एक भक्त के हृदय में किसी प्राणी के प्रति द्वेष भाव नहीं होता है। वह मैत्रीपूर्ण एवं करुणाशील होता है। वह अहंता एवं ममता रहित होता है। वह सुख-दुःख में सम रहता है तथा क्षमाशील होता है।

मैत्री, सौहार्द, करुणा एवं क्षमा के विकास तथा अहंता एवं ममता के नाश द्वारा द्वेष को समाप्त किया जा सकता है।

एक अहंकारी व्यक्ति छोटी-छोटी बातों से उद्विग्न हो जाता है। उसका हृदय गर्व एवं मिथ्याभिमान से भरा होता है, अतः थोड़े से अपमान अथवा कटु शब्दों अथवा आलोचना एवं निन्दा से वह अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठता है। अपने आहत गर्व के कारण वह दूसरों से द्वेष करता है। इसीलिए गर्व एवं अहंकार का नाश द्वेष को नष्ट करने में सहायक सिद्ध होगा।

द्वेष का जन्म अहंकार से होता है। अहंकार के समूल नाश से द्वेष स्वयमेव नष्ट हो जायेगा।

यदि आप किसी वस्तु के प्रति आसक्त हैं, तो आप उस व्यक्ति से द्वेष करेंगे जो आपसे वह वस्तु छीनने का प्रयास करता है। यदि आप क्षमाशील हैं, तो आप उस व्यक्ति को भी क्षमा कर देंगे जो आपको हानि पहुँचाने का प्रयास कर रहा है; आप किसी के प्रति भी द्वेष भाव नहीं रखेंगे।

करुणा, प्रेम एवं क्षमा जैसे दिव्य सद्गुणों के विकास से द्वेष क्षीण होता जायेगा। भगवद्-दर्शन अथवा भगवद्-साक्षात्कार अथवा परम तत्त्व का ज्ञान द्वेष का पूर्ण नाश कर देता है।

आप सभी द्वेषमुक्त हों तथा भगवद्-दर्शन एवं दैवी सम्पद् प्राप्त कर परम भागवत बनें।

धार्मिक पाखण्ड (Religious Hypocricy)

सांसारिक व्यक्तियों के समान साधुओं में भी अनेक फैशन होते हैं।

जिस प्रकार सांसारिक व्यक्ति पाखण्ड-प्रदर्शन करते हैं उसी प्रकार वे साधक, साधु एवं संन्यासी भी कपट-पाखण्ड करते हैं, जिन्होंने अपने निम्न स्वभाव को पूर्णतः परिशुद्ध नहीं किया है। जो वे वास्तव में नहीं हैं, उसे दिखाने का प्रयास करते हैं। यद्यपि वे योग अथवा आध्यात्मिकता के प्रारम्भिक ज्ञान से भी रहित हैं, वे बड़े महात्मा एवं सिद्ध-पुरुष होने का ढोंग करते हैं। वे अत्यन्त गम्भीर मुखमुद्रा धारण किये रहते हैं। यह एक अनिष्टकारी वृत्ति है। वे दूसरों के साथ छल करते हैं। वे अपने विषय में गर्वपूर्ण बातें करते हैं। वे जहाँ जाते हैं, वहाँ संकट उत्पन्न करते हैं। वे आदर-सम्मान, अच्छा भोजन एवं वस्त्र पाने हेतु तथा भोले-भाले व्यक्तियों को छलने हेतु पाखण्ड अपनाते हैं। धर्म को व्यवसाय बना देने से महान् अपराध अन्य कोई नहीं है। यह घोर पाप है। गृहस्थों को उनके पाखण्ड के लिए क्षमा किया जा सकता है। परन्तु आध्यात्मिक पथ पर चलने वाले साधकों एवं साधु, जिन्होंने भगवद्-साक्षात्कार हेतु अपना सर्वस्व त्याग दिया है, उन्हें क्षमा नहीं किया जा सकता है। धार्मिक पाखण्ड सांसारिक व्यक्तियों के पाखण्ड से अधिक अनिष्टकारक है। इसके नाश हेतु लम्बे एवं गम्भीर उपचार की आवश्यकता है। एक धार्मिक पाखण्डी भगवान् से बहुत दूर होता है। वह भगवद्-साक्षात्कार का स्वप्न भी नहीं देख सकता है। मस्तक पर बड़े-बड़े तिलक तथा गले में, भुजाओं एवं कानों में अनेकों तुलसी एवं रुद्राक्ष की मालाएँ धार्मिक पाखण्ड के कुछ बाह्य चिह्न हैं।

आलस्य (Idleness)

एक आलसी व्यक्ति स्वयं के लिए भारस्वरूप है। वह अपना जीवन व्यर्थ गँवाता है।

वह रक्ताल्पता तथा अन्य रोगों से ग्रस्त होता है। वह उद्योगशील नहीं होता है। उसमें दृढ़ संकल्प का अभाव होता है। उसके जीवन का कोई उद्देश्य नहीं होता है। उसका कोई दृढ़ निश्चय नहीं होता है।

उसका मन एवं विचार भ्रमित-अवस्था में होते हैं। वह उदास-दुःखपूर्ण जीवन व्यतीत करता है।

उसने स्वयं अपना जीवन नष्ट कर दिया है। वह लज्जा एवं पश्चात्तापपूर्वक अपना मस्तक झुकाये रखता है।

अशुद्ध एवं असंयमित आहार (Impure and Immoderate Food)

मन भोजन के सूक्ष्म अंश से निर्मित होता है। यदि भोजन अशुद्ध है, तो मन भी अशुद्ध हो जाता है। यह सन्तों एवं मनोवैज्ञानिकों का कथन है। भोजन मन के विकास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। साधकों को मांस, मछली, अण्डे, बासी एवं अहितकर भोजन, प्याज, लहसुन आदि का त्याग करना चाहिए क्योंकि ये काम एवं क्रोध को उद्दीप्त करते हैं। भोजन सादा, मृदु, हल्का एवं पौष्टिक होना चाहिए। मदिरा एवं नारकोटिक्स जैसे मादक पदार्थों का पूर्ण त्याग करना चाहिए। मिर्च, मसालेदार-व्यंजन, तीक्ष्ण, उष्ण, खट्टे पदार्थ, मिठाई आदि का त्याग करना चाहिए।

श्रीमद्भागवतगीता के अठारहवें अध्याय के श्लोक संख्या आठ, नौ एवं दस में आप पढ़ते हैं, "सात्विक मनुष्यों को वे आहार प्रिय हैं जो आयु, बुद्धि, बल, स्वास्थ्य तथा सुखवर्द्धक हैं एवं रसयुक्त, स्निग्ध तथा पोषक हैं। कड़वे, खट्टे, लवणयुक्त, अति उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, दाहकारक, दुःख, शोक एवं रोग उत्पन्न करने वाले पदार्थ राजसी व्यक्तियों को प्रिय होते हैं। जो आहार सत्त्व रहित, नीरस, दुर्गन्धियुक्त, बासी, जूठे तथा अपवित्र होते हैं, वे तामसिक मनुष्यों को प्रिय होते हैं।" साधकों को अपने उदर को अधिक भोजन से नहीं भरना चाहिए। असंयमित आहार ही नब्बे प्रतिशत रोगों का कारण है। कुमारावस्था से व्यक्तियों ने आवश्यकता से अधिक भोजन करने की आदत का विकास कर लिया है। हिन्दू माताएँ अपने बालकों को ठूस-ठूस कर खिलाती हैं। यह बालकों के प्रति प्रेम प्रदर्शित करने का उचित मार्ग नहीं है। आवश्यकता से अधिक भोजन निद्रा एवं तन्द्रा उत्पन्न करता है। यदि भूख नहीं है, तो आपको भोजन नहीं करना चाहिए। साधकों को रात्रि में अत्यन्त हल्का भोजन करना चाहिए। एक या दो केले के साथ एक कप दूध पर्याप्त है। अत्यधिक भोजन स्वप्नदोष का मुख्य कारण है। साधकों एवं संन्यासियों को उन्हीं गृहस्थों से भिक्षा ग्रहण करनी चाहिए जो ईमानदारीपूर्वक धनार्जन करते हैं।

अस्थिरता (Inconstancy)

अस्थिरता मन की चंचलता है। अस्थिर मन समय-समय पर परिवर्तित होता रहता है।

अस्थिरता स्वभाव अथवा स्नेह की परिवर्तनशीलता है। यह स्वभाव में एकरूपता के अभाव का गुण अथवा स्थिति है। एक अस्थिर व्यक्ति अनिश्चयी होता है। वह बदलता रहता है। वह ऐसे स्वभाव अथवा प्रकृति से युक्त होता है जिसके लिए परिवर्तन सहज अथवा वांछनीय है। वह एक अस्थिर लौ के समान मित्रता अथवा प्रेम में अस्थिर होता है। वह अपने विचारों एवं धारणाओं को परिवर्तित करता रहता है। वह अपने संकल्प में दृढ़ नहीं रहता है। वह अपने विचारों, शब्दों एवं कार्यों में अस्थिर होता है।

घड़ी अपना कार्य उचित प्रकार से करेगी, परन्तु एक अस्थिर व्यक्ति कभी नियमित एवं स्थिर नहीं रहता है। उसका मन रजस् अथवा राग के कारण सदैव अस्थिर, परिवर्तनशील एवं विचलित रहता है।

अस्थिरता आपको अपूर्ण बनाती है, त्रुटियों एवं पापों की ओर ले जाती है। एक अस्थिर व्यक्ति का मन शान्त नहीं रहता है। वह कभी चैन से नहीं रहता है। उसका जीवन विषम होता है। आज वह आपसे प्रेम करता है, कल वह आपसे घृणा करेगा। आज प्रातःकाल वह प्रसन्न है तथा हँसता है, सायंकाल में वह दुःखी है तथा रोता है।

संकल्प, दृढ़ता एवं स्थिरता के विकास द्वारा दुःख एवं दुर्भाग्य के कारण 'अस्थिरता' पर विजय प्राप्त करिए।

दृढ़ रहिए, स्थिर रहिए, दृढ़प्रतिज्ञ बनिए। आप अपने समस्त कार्यों में सफलता प्राप्त करेंगे। आप चिन्ता एवं निराशा से मुक्त होंगे।

अकर्मण्यता (Indolence)

अकर्मण्यता मन की तमोवृत्ति है।

अकर्मण्यता कार्य के प्रति अरुचि अथवा विश्राम के प्रति प्रेम के कारण कार्य में प्रवृत्त नहीं होना है। यह स्वभावगत आलस्य है।

एक अकर्मण्य व्यक्ति कार्य नहीं करना चाहता है। वह अनुद्योगी, मन्द एवं सुस्त होता है।

अकर्मण्यता उस जीवन को व्यर्थ गँवाना है जो एक सुखी एवं उपयोगी जीवन हो सकता था।

इसका जन्म तमस् अर्थात् तमोगुण से होता है। यह प्रगति, विकास, सफलता, शान्ति, भक्ति एवं ज्ञान की शत्रु है। अकर्मण्यता एवं मूर्खता बन्धु हैं। अकर्मण्यता एक प्रकार की आत्महत्या है। एक अकर्मण्य व्यक्ति की तुलना भैंस से की जा सकती है। वह इस धरा पर बोझ है। अकर्मण्यता सच्चरित्र एवं अच्छे मन का भी नाश कर देती है। जड़ता, निष्क्रियता, आलस्य एवं सुस्ती अकर्मण्यता के समानार्थी शब्द हैं।

अनिश्चय (Indecision)

अनिश्चय निश्चय अथवा संकल्प की कमी है।

अनिश्चय एक निश्चित उद्देश्य अथवा संकल्प का अभाव है। यह किसी कार्य के निर्धारण अथवा निर्णय लेने में असफलता है।

एक अनिश्चयी व्यक्ति किसी अन्तिम निर्णय अथवा निष्कर्ष पर पहुँचने में असमर्थ होता है।

एक अनिश्चयी व्यक्ति अस्थिर होता है। वह सदैव हिचकिचाता है। आपकी आधी चिन्ताएँ अनिश्चय की स्थिति से उत्पन्न होती हैं। किसी योजना का निर्धारण करिए, उसका तुरन्त क्रियान्वयन करिए। आगे बढ़िए।

एक अनिश्चयी व्यक्ति की दशा दयनीय है। वह सदैव दुःखी रहता है। वह अपने समस्त प्रयासों में असफल होता है। वह एक पंख अथवा रुई की भाँति है जिसे वायु का प्रत्येक झोंका इधर से उधर उड़ा देता है।

कुछ व्यक्ति महत्त्वपूर्ण विषयों में अन्तिम निर्णय लेने में असमर्थ होते हैं। उनमें स्वतन्त्र निर्णय की शक्ति का अभाव होता है। वे विषय को टालते रहते हैं। वे किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँचेंगे। अवसर हाथ से चला जायेगा। यह शीत ऋतु में मधु एकत्रित करने जैसा होगा। आपको किसी विषय पर कुछ समय तक गहन चिन्तन करना चाहिए तथा एक निश्चित निर्णय लेने में समर्थ होना चाहिए। आपको अपनी संकल्प शक्ति का प्रयोग करना चाहिए तथा निर्णय को तुरन्त क्रियान्वित कर देना चाहिए। केवल तभी आप सफल होंगे। बहुत अधिक चिन्तन-विचार से कार्य बिगड़ जाता है। महत्त्वपूर्ण विषयों में आप उस क्षेत्र के अनुभवी जनों तथा अपने हितचिन्तकों से परामर्श ले सकते हैं। इस विवेकपूर्ण उक्ति को स्मरण रखिए, "जटिल समस्या का समाधान निकालिए (Cut the Gordian knot)।"

तमस्-जड़ता (Inertia)

बहुत कम व्यक्ति पूर्णकालिक ध्यान हेतु उपयुक्त होते हैं। सदाशिव ब्रह्मेन्द्र एवं आचार्य शंकर जैसे महापुरुष ही अपना पूरा समय ध्यान में व्यतीत कर सकते हैं। निवृत्ति मार्ग अपनाने वाले अनेक साधु पूर्ण तामसिक हो चुके हैं। वे तमस् को सत्त्व मानते हैं। यह एक महान् त्रुटि है। यदि व्यक्ति अपने समय का लाभप्रद रूप से उपयोग करना जानता है, तो वह कर्मयोग के द्वारा सुन्दर रूप में अपना विकास कर सकता है। एक गृहस्थ को समय-समय पर साधु-संन्यासियों से परामर्श लेना चाहिए, उसे अपनी दिनचर्या का निर्धारण करना चाहिए तथा सांसारिक कार्य-व्यवहार करते हुए दृढ़तापूर्वक इस दिनचर्या का पालन करना चाहिए। रजसू को सत्त्व में परिवर्तित किया जा सकता है। गहन-तीव्र रजस् स्वतः ही सात्त्विक दिशा में ले जाता है। परन्तु तमस् को सहसा सत्त्व में परिवर्तित करना असम्भव है। तमस् को पहले रजस् में बदलना होगा। निवृत्ति मार्ग अपनाने वाले युवा साधु नियमित दिनचर्या का पालन नहीं करते हैं। वे बड़ों की बात नहीं सुनते हैं। वे गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करते हैं। वे प्रारम्भ से ही पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते हैं। वे स्वेच्छाचारी जीवन जीते हैं। उन पर नियन्त्रण करने वाला कोई नहीं है। वे अपने ढंग से जीवन जीते हैं। वे नहीं जानते हैं कि अपनी ऊर्जा पर नियन्त्रण कैसे किया जाये तथा स्वयं के लिए दैनिक कार्यक्रम किस प्रकार बनाया जाये।

वे एक स्थान से दूसरे स्थान निरुद्देश्य भटकते रहते हैं। वे छ: माह में तामसिक बन जाते हैं। वे एक आसन पर आधा घण्टा बैठने से ही कल्पना करने लगते हैं कि वे समाधि अवस्था में हैं। वे सोचते हैं कि उन्होंने साक्षात्कार प्राप्त कर लिया है। यदि निवृत्ति मार्ग पर चलने वाले साधक को ऐसा प्रतीत होता है कि वह प्रगति नहीं कर रहा है, ध्यान में आगे नहीं बढ़ रहा है, वह तामसिक स्थिति में जा रहा है, तो उसे तुरन्त कुछ वर्ष सेवा में लग जाना चाहिए तथा उत्साहपूर्वक कार्य करना चाहिए। उसे ध्यान के साथ कर्म का समन्वय करना चाहिए। यही बुद्धिमत्ता है। यही विवेक है। यही समझदारी है। इसके पश्चात् उसे एकान्तवास हेतु जाना चाहिए। साधक को साधना काल में अपने सहज ज्ञान का प्रयोग करना चाहिए। तामसिक स्थिति से बाहर निकलना अत्यधिक कठिन है। एक साधक को अत्यन्त सावधान रहना चाहिए। जब उसे तमस् अभिभूत करने लगे, तो उसे तुरन्त किसी कार्य में लग जाना चाहिए। वह खुले क्षेत्र में दौड़ सकता है, कुएँ से जल निकाल सकता है। उसे किसी भी विवेकपूर्ण साधन द्वारा तमस् को दूर करना चाहिए।

हीन भावना (Sense of Inferiority)

अधिकांश व्यक्ति यह चिन्ता करके व्यथित होते हैं कि वे अन्य व्यक्तियों से हीन हैं। श्रेष्ठता एवं हीनता का विचार पूर्णतः मानसिक सृष्टि है। एक हीन-निम्न श्रेणी का व्यक्ति प्रयत्न-संघर्ष करके तथा सद्गुणों का विकास करके श्रेष्ठ बन सकता है। इसी प्रकार एक श्रेष्ठ व्यक्ति यदि अपनी सम्पत्ति खो दे तथा कुमार्ग पर चलने लगे, तो वह निम्न श्रेणी का व्यक्ति बन सकता है। ऐसा कभी मत सोचिए कि आप किसी से श्रेष्ठ अथवा हीन हैं। यदि आप स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ मानते हैं, तो आप उनके साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करेंगे। श्रेष्ठता एवं हीनता का विचार अज्ञान से उत्पन्न होता है। समदृष्टि का विकास करिए। श्रीमद्भगवद्गीता के उपदेशों के अनुसार जीवन व्यतीत करिए। सुनिए, श्रीमद्भगवद्गीता क्या कहती है, "सन्त-मनीषी एक विनयी विद्वान्, एक गाय, हाथी, कुत्ते एवं चाण्डाल के प्रति समदृष्टि रखते हैं।" सन्त नामदेव एक कुत्ते के पीछे घी की कटोरी लिये दौड़े ताकि वे उसकी सूखी रोटी को नरम कर सकें। उन्होंने कुत्ते से कहा, "आप भगवान् विठ्ठल के स्वरूप हैं। इस सूखी रोटी को चबाने से आपके गले में घाव हो जायेगा। कृपया मुझे इस रोटी पर घी लगाने दीजिए।" सन्त एकनाथ गंगोत्री से गंगा-जल ले कर रामेश्वरम् में भगवान् शिव के अभिषेक हेतु जा रहे थे। परन्तु उन्होंने मार्ग में वह जल एक तृषार्त गधे को पिला दिया। जब आप सबमें एवं सर्वत्र एक आत्मा का दर्शन करते हैं, तो श्रेष्ठता अथवा हीनता कहाँ होगी? सुविख्यात निबन्धकार हैजलिट कहते हैं, "दूसरों को स्वयं से हीन मानने में आत्मप्रेम अप्रत्यक्ष रूप से निहित है, 'यह एक उन्नतकारी नहीं अपितु दुःखप्रद भावना है।" अपने मानसिक दृष्टिकोण को परिवर्तित करिए एवं विश्रान्ति पाइए।

असहिष्णुता (Intolerance)

इसके उपरान्त एक अन्य अवांछनीय दुर्गुण है- असहिष्णुता । व्यक्तियों में धार्मिक असहिष्णुता होती है। सब प्रकार की असहिष्णुता हो सकती है। असहिष्णुता तुच्छ मानसिकता है। यह छोटी-छोटी बातों पर अन्य व्यक्तियों से निरर्थक द्वेष रखना है। असहिष्णुता से जगत् में सब प्रकार की अशान्ति-कलह का जन्म होता है। असहिष्णुता अज्ञान के कारण होती है। सबमें एक आत्मा का दर्शन करने वाला असहिष्णु कैसे हो सकता है? सब तुच्छ भेदभाव मन की सृष्टि हैं। हृदय को विस्तारित करिए। सबको स्नेहपूर्वक स्वीकार करिए। सबसे प्रेम करिए। सबकी सेवा करिए। प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक वस्तु में भगवद्-दर्शन करिए। सर्वत्र उनकी विद्यमानता का अनुभव करिए। अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाइए। विचारों में उदारता लाइए। मनुष्य से मनुष्य को पृथक् करने वाले समस्त भेदों का नाश करिए। शाश्वत आत्मिक आनन्द का पान करिए। पूर्ण सहिष्णु बनिए। उन अबोध जीवों को क्षमा कर दीजिए जो जीवन-यात्रा में संघर्ष कर रहे हैं तथा त्रुटियाँ कर रहे हैं। उनकी त्रुटियों को क्षमा कर दीजिए तथा विस्मृत कर दीजिए। आप जीवन में सफल होंगे। आप शीघ्र ही भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे। इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है।

अदृढ़ता (Irresolution)

अदृढ़ता उद्देश्य, संकल्प अथवा निर्णय में दृढ़ता का अभाव है।

अदृढ़ता असफलता एवं दुःख का कारण है। यह एक महान् दुर्गुण है।

दृढ़ताहीन व्यक्ति में चारित्रिक दृढ़ता का अभाव होता है। वह सदैव अस्थिर, परिवर्तनशील एवं चंचल होता है। वह सन्देहशील होता है। उसमें मानसिक दृढ़ता नहीं है।

वह सदैव अनिर्णय की स्थिति में रहता है। उसका मन भय एवं आशा के बीच झूलता है अथवा शंका-सन्देह ग्रस्त होने के कारण अस्थिर रहता है। अनिश्चय (Indecision) से तात्पर्य बौद्धिक निर्णय का अभाव है, अदृढ़ता (Irresolution) संकल्प शक्ति अथवा इच्छा शक्ति की दुर्बलता है।

एक विचारशील व्यक्ति किसी जटिल परिस्थिति में शीघ्र निर्णय लेने में अक्षम हो सकता है, परन्तु एक बार निर्णय लेने पर वह तुरन्त उसे क्रियान्वित कर देगा। परन्तु एक दृढ़ताहीन व्यक्ति में कार्य करने का साहस-उत्साह नहीं होता है। अनिश्चय सामान्यतया एक अस्थायी स्थिति अथवा अवस्था है, परन्तु अदृढ़ता एक चारित्रिक लक्षण है।

मात्सर्य (Jealousy)

मात्सर्य एक अन्य रोग है जो मनुष्य का नाश करता है। यह तुच्छ-मानसिकता के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। कुछ शिक्षित व्यक्ति एवं संन्यासी भी इस भयंकर दुर्गुण से मुक्त नहीं हैं। इस दुर्गुण के कारण ही दो व्यक्तियों, सम्प्रदायों एवं राष्ट्रों के मध्य अशान्ति एवं कलह उत्पन्न होते हैं। एक मात्सर्ययुक्त व्यक्ति का हृदय अपने पड़ोसी को अधिक समृद्ध अवस्था में देखने पर सन्तप्त होता है। ऐसा ही सम्प्रदायों एवं राष्ट्रों के बीच होता है। जिस प्रकार क्रोध पर क्षमा एवं सेवा द्वारा तथा गर्व पर सरलता एवं स्पष्टवादिता के विकास द्वारा विजय प्राप्त की जा सकती है, उसी प्रकार मात्सर्य के विपरीत सद्गुण 'उदारता' के विकास द्वारा मात्सर्य को नष्ट किया जा सकता है।

मात्सर्य भी एक महान् बाधा है। सब त्याग कर हिमालय में गंगोत्री एवं उत्तरकाशी की गुहाओं में रहने वाले कौपीनधारी साधु भी इस दुर्गुण से मुक्त नहीं हैं। कुछ साधुओं का हृदय किसी अन्य साधु की समृद्ध स्थिति देख कर सन्तप्त होता है। जब उनके पड़ोसी साधु को जनसामान्य द्वारा आदर-सम्मान प्राप्त होता है, तो उनके हृदय में पीड़ा होती है। वे इस पड़ोसी की ख्याति को नष्ट करने का प्रयास करते हैं तथा उसके विनाश हेतु अनेक साधन अपनाते हैं। कितना दुःखद एवं दयनीय दृश्य ! यह विचार एवं कल्पना भी भयप्रद है। जब आपका हृदय सन्तप्त है, तो आप मन की शान्ति की कैसे आशा कर सकते हैं? कुछ उच्च शिक्षित व्यक्ति भी अत्यन्त निम्न एवं तुच्छ मानसिकता युक्त होते हैं। मात्सर्य शान्ति एवं ज्ञान का परम शत्रु है। यह माया का प्रबल अस्त्र है। साधकों को सदैव सजग रहना चाहिए। उन्हें नाम, यश एवं मात्सर्य का दास नहीं बनना चाहिए। यदि साधक में मात्सर्य भाव है, तो वह एक निम्न-क्षुद्र व्यक्ति है। वह भगवान् से अत्यन्त दूर है। व्यक्ति को दूसरों के सुखएवं हित से आनन्दित होना चाहिए। अन्यों को समृद्ध अवस्था में देख कर उसे मुदित-प्रसन्न होने के गुण का विकास करना चाहिए। उसको सबके प्रति आत्मभाव रखना चाहिए। मात्सर्य के अन्य प्रकार हैं-ईर्ष्या, असूया, डाह। इसके सभी प्रकारों का नाश किया जाना चाहिए। जैसे दूध उबालने की प्रक्रिया में दूध बार-बार उफन कर बाहर आता है, इसी प्रकार मात्सर्य भी बार-बार प्रकट होता है। इसका समूल नाश किया जाना चाहिए।

ईर्ष्या, मात्सर्य एवं असूया समानार्थी शब्द हैं, परन्तु उनमें सूक्ष्म भेद है। मात्सर्य राजसिक मन में उत्पन्न होने वाली एक विशिष्ट वृत्ति है जिसमें व्यक्ति अपने पड़ोसी अथवा अन्य व्यक्ति की समृद्धि अथवा सफलता अथवा उच्च सद्गुणों को दुर्भावपूर्ण दृष्टि से देखता है। मात्सर्य में क्रोध एवं द्वेष छिपे हुए रहते हैं। दुर्भावना मात्सर्य का ही दूसरा रूप है। वह व्यक्ति अपने से श्रेष्ठ स्थिति वाले व्यक्ति के प्रति द्वेष रखता है। वह अन्य व्यक्ति की सफलता देख कर दुःखी होता है। वह अनुचित साधनों, चुगलखोरी एवं मिथ्यापवाद फैलाने के द्वारा उसके पतन अथवा अवनति हेतु यथाशक्य प्रयास करता है। वह उसे आहत करना चाहता है। वह उसके विनाश का प्रयास करता है। वह उसके मित्रों में मतभेद-मनमुटाव उत्पन्न करता है। ये एक मात्सर्ययुक्त व्यक्ति के बाह्य लक्षण हैं।

एक ईर्ष्यालु व्यक्ति सोचता है कि उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो परन्तु अन्य सभी दुःख-कष्ट से पीड़ित हों। असूया भाव से भरा व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने समान सुख भोगते हुए देख उद्विग्न हो जाता है। मात्सर्य भाव से भरा व्यक्ति अपने से धनी-समृद्ध व्यक्ति को देखना भी सहन नहीं कर सकता है। यह ईर्ष्या, असूया एवं मात्सर्य में सूक्ष्म भेद है।

मात्सर्य समस्त बुराइयों का मूल है। यह मनुष्य के मन में गहरी जड़ें जमाये हुए है। माया इस वृत्ति के द्वारा विध्वंस करती है। विश्व में अशान्ति मात्सर्य के कारण ही है। माया इस एक वृत्ति द्वारा अपनी समस्त लीला संचालित करती है। क्रोध, घृणा एवं दुर्भावना मात्सर्य के साथ-साथ रहते हैं। ये इसके पुराने सहयोगी अथवा मित्र हैं। यदि मात्सर्य समाप्त हो जाता है, तो घृणा एवं क्रोध स्वयमेव नष्ट हो जाते हैं। अनेक हत्याएँ मात्सर्य के कारण की जाती हैं।

यदि व्यक्ति का मन ईर्ष्या-मात्सर्य से भरा है, तो वह लेश मात्र भी वास्तविक सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। राजा, सामन्त, जमींदार एवं उच्चपदासीन व्यक्ति आदि तब तक सुखी-प्रसन्न नहीं हो सकते हैं जब तक वे ईर्ष्या अथवा मात्सर्य के दास हैं। धन क्या कर एवं हित से आनन्दित होना चाहिए। अन्यों को समृद्ध अवस्था में देख कर उसे मुदित-प्रसन्न होने के गुण का विकास करना चाहिए। उसको सबके प्रति आत्मभाव रखना चाहिए। मात्सर्य के अन्य प्रकार हैं-ईर्ष्या, असूया, डाह। इसके सभी प्रकारों का नाश किया जाना चाहिए। जैसे दूध उबालने की प्रक्रिया में दूध बार-बार उफन कर बाहर आता है, इसी प्रकार मात्सर्य भी बार-बार प्रकट होता है। इसका समूल नाश किया जाना चाहिए।

ईर्ष्या, मात्सर्य एवं असूया समानार्थी शब्द हैं, परन्तु उनमें सूक्ष्म भेद है। मात्सर्य राजसिक मन में उत्पन्न होने वाली एक विशिष्ट वृत्ति है जिसमें व्यक्ति अपने पड़ोसी अथवा अन्य व्यक्ति की समृद्धि अथवा सफलता अथवा उच्च सद्गुणों को दुर्भावपूर्ण दृष्टि से देखता है। मात्सर्य में क्रोध एवं द्वेष छिपे हुए रहते हैं। दुर्भावना मात्सर्य का ही दूसरा रूप है। वह व्यक्ति अपने से श्रेष्ठ स्थिति वाले व्यक्ति के प्रति द्वेष रखता है। वह अन्य व्यक्ति की सफलता देख कर दुःखी होता है। वह अनुचित साधनों, चुगलखोरी एवं मिथ्यापवाद फैलाने के द्वारा उसके पतन अथवा अवनति हेतु यथाशक्य प्रयास करता है। वह उसे आहत करना चाहता है। वह उसके विनाश का प्रयास करता है। वह उसके मित्रों में मतभेद-मनमुटाव उत्पन्न करता है। ये एक मात्सर्ययुक्त व्यक्ति के बाह्य लक्षण हैं।

एक ईर्ष्यालु व्यक्ति सोचता है कि उसे किसी प्रकार का कष्ट न हो परन्तु अन्य सभी दुःख-कष्ट से पीड़ित हों। असूया भाव से भरा व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने समान सुख भोगते हुए देख उद्विग्न हो जाता है। मात्सर्य भाव से भरा व्यक्ति अपने से धनी-समृद्ध व्यक्ति को देखना भी सहन नहीं कर सकता है। यह ईर्ष्या, असूया एवं मात्सर्य में सूक्ष्म भेद है।

मात्सर्य समस्त बुराइयों का मूल है। यह मनुष्य के मन में गहरी जड़ें जमाये हुए है। माया इस वृत्ति के द्वारा विध्वंस करती है। विश्व में अशान्ति मात्सर्य के कारण ही है। माया इस एक वृत्ति द्वारा अपनी समस्त लीला संचालित करती है। क्रोध, घृणा एवं दुर्भावना मात्सर्य के साथ-साथ रहते हैं। ये इसके पुराने सहयोगी अथवा मित्र हैं। यदि मात्सर्य समाप्त हो जाता है, तो घृणा एवं क्रोध स्वयमेव नष्ट हो जाते हैं। अनेक हत्याएँ मात्सर्य के कारण की जाती हैं।

यदि व्यक्ति का मन ईर्ष्या-मात्सर्य से भरा है, तो वह लेश मात्र भी वास्तविक सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। राजा, सामन्त, जमींदार एवं उच्चपदासीन व्यक्ति आदि तब तक सुखी-प्रसन्न नहीं हो सकते हैं जब तक वे ईर्ष्या अथवा मात्सर्य के दास हैं। धन क्या कर सकता है? यह मन की अशान्ति में वृद्धि ही करता है। "मुकुट धारण करने वाला मस्तक अशान्त-विक्षुब्ध ही रहता है।"

इस दुर्गुण के नाश की छः विधियाँ हैं - १. राजयौगिक विधि २. वेदान्तिक विधि ३. भक्त की विधि ४. कर्मयोगी की विधि ५. विवेकी की विधि ६. थियोसॉफिस्ट की विधि

एक राजयोगी इसका नाश 'योगः चित्तवृत्ति निरोधः' सूत्र से करता है। वह आत्मनिरीक्षण, सतत सजगता एवं ध्यान द्वारा मात्सर्य के समस्त संकल्पों का नाश करता है। वह एक अन्य विधि 'प्रतिपक्ष भावना' को अपनाता है जिसमें मात्सर्य के विपरीत सद्गुण 'उदारता' का विकास किया जाता है। मात्सर्य तुच्छ-मानसिकता का परिणाम है। यदि उदार मानसिकता का विकास किया जाये, तो मात्सर्य स्वयमेव नष्ट हो जायेगा।

अतिभाषण (Jilly-jallying)

बहुत अधिक बोलना अतिभाषण है। यदि एक व्यक्ति अधिक बात करता है तो इसका अभिप्राय है कि वह जिह्वा के अतिसार रोग से पीड़ित है। शान्त-अल्पभाषी व्यक्ति इन वाचाल-बातूनी व्यक्तियों की संगति में एक क्षण भी नहीं बैठ सकता है। ये व्यक्ति प्रति सैकण्ड पाँच सौ शब्द बोलते हैं। इनकी जिह्वाओं में वैद्युतिक वार्तालाप-डायनमो लगा होता है। ये अशान्त-उद्विग्न होते हैं। यदि आप इन व्यक्तियों को एक दिन के लिए किसी एकान्त-कक्ष में बन्द कर दें, तो ये मर जायेंगे। अत्यधिक बात करने से ऊर्जा का बहुत अधिक क्षय होता है। बोलने में व्यर्थ गँवायी जाने वाली ऊर्जा का भगवद्-चिन्तन हेतु संरक्षण किया जाना चाहिए। वाक्-इन्द्रिय मन को अत्यधिक उद्विग्न-विभ्रान्त करती है। एक अधिक बोलने वाला व्यक्ति अल्प समय की शान्ति का स्वप्न भी नहीं देख सकता है। एक साधक को आवश्यकता पड़ने पर कुछ शब्द बोलने चाहिए तथा ये शब्द भी आध्यात्मिक विषयों से सम्बन्धित ही होने चाहिए। एक वाचाल अर्थात् अधिक बोलने वाला व्यक्ति आध्यात्मिक पथ हेतु अनुपयुक्त है। प्रतिदिन दो घण्टे विशेषतया भोजन के समय मौन रखिए। रविवार को पूरे २४ घण्टे मौन रहिए। मौन के समय अत्यधिक जप एवं ध्यान करिए। ध्यान के समय के मौन को मौन व्रत के समय में सम्मिलित नहीं कर सकते हैं। तब तो निद्रावस्था के समय को भी इसमें सम्मिलित किया जाना चाहिए। गृहस्थों को उस समय मौन व्रत का अभ्यास करना चाहिए जब बात करने के अवसर अधिक होते हैं अथवा जब अतिथियों-आगन्तुकों के आने का समय होता है। केवल तभी अधिक बोलने की आदत पर नियन्त्रण किया जा सकता है। कुछ स्त्रियाँ अत्यधिक वाचाल होती हैं। वे अपनी व्यर्थ की गपशप द्वारा घर में समस्याएँ-कठिनाइयाँ उत्पन्न करती हैं। आपको गिने-चुने शब्द बोलने चाहिए। अधिक बोलना राजसिक स्वभाव का लक्षण है। मीन व्रत के पालन से अत्यधिक शान्ति प्राप्त होती है। धीरे-धीरे अभ्यास द्वारा मीन की अवधि को पहले छः महीने तथा फिर दो वर्ष तक बढ़ाइए।

मनोराज्य (Building Castle in the Air)

मनोराज्य हवाई किले बनाना है। यह मन की चाल है। इस अद्भुत दृश्य को देखिए। एक साधक हिमालय की गुहा में ध्यान कर रहा है। गुहा में बैठे हुए वह योजना बना रहा है, "ध्यान समाप्त करने के पश्चात् मैं सेन फ्रांसिसकों तथा न्यूयार्क जाऊँगा और वहाँ व्याख्यान दूँगा। मुझे कोलम्बिया में एक आध्यात्मिक केन्द्र प्रारम्भ करना चाहिए। मुझे इस विश्व में कुछ नया करना चाहिए। मुझे ऐसा कुछ करना चाहिए जो अब तक किसी ने नहीं किया है।" यह महत्त्वाकांक्षा है। यह अहंकारपूर्ण कल्पना है। यह एक महान् बाधा, एक प्रबल विघ्न है। यह मन को एक क्षण भी विश्राम नहीं करने देगा। पुनः-पुनः किसी योजना अथवा कार्य का विचार मन में आयेगा। साधक सोचता होगा कि वह गहन ध्यान की अवस्था में है, परन्तु आत्म-निरीक्षण एवं आत्म-विश्लेषण द्वारा मन को देखने पर ज्ञात होगा कि वह मात्र हवाई किले बना रहा है। एक मनोराज्य समाप्त होगा तथा अगले ही क्षण दूसरा प्रारम्भ

हो जायेगा। यह मन की झील में पहले एक छोटी लहर अर्थात् संकल्प के रूप में प्रकट होगा, परन्तु पुनः पुनः चिन्तन से यह कुछ क्षणों में अत्यधिक शक्तिशाली रूप धारण कर लेगा। कल्पना में अत्यधिक शक्ति होती है।

माया कल्पना शक्ति के द्वारा अत्यधिक विध्वंस करती है। कल्पना मन को सुदृढ़ करती है। कल्पना सिद्धमकरध्वज के समान है। यह मृतप्राय मन को पुनर्जीवित एवं स्फूर्तिवान करती है। कल्पना शक्ति मन को एक क्षण भी शान्त नहीं रहने देगी। जिस प्रकार मक्खियों तथा टिड्डियों के झुण्ड एक निरन्तर प्रवाह में आते रहते हैं, उसी प्रकार मनोराज्य सतत बनते रहते हैं। विचार, विवेक, प्रार्थना, जप, ध्यान, सत्संग, उपवास, प्राणायाम एवं विचारशून्यता के अभ्यास से इस विघ्न का नाश होगा। प्राणायाम मन की गति पर नियन्त्रण करता है तथा उद्विग्न मन को शान्त करता है। एक युवा महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति एकान्त गुहा में रहने योग्य नहीं है। जिस साधक ने जगत् में कई वर्षों तक निःस्वार्थ सेवा की है तथा एकान्त कक्ष में अनेक वर्षों तक ध्यानाभ्यास किया है, केवल वही गुहा में रह सकता है। ऐसा व्यक्ति ही हिमालय प्रवास में एकान्त का आनन्द ले सकता है।

क्षुद्र मानसिकता (Mean-mindedness)

यह जगत् प्रत्येक प्रकार की क्षुद्र मानसिकता के व्यक्तियों से भरा है। अधिकांश व्यक्ति किसी न किसी प्रकार की क्षुद्र मानसिकता से युक्त हैं। यह तमोगुण के कारण होता है। एक क्षुद्रमना व्यक्ति का हृदय दूसरे को समृद्ध अवस्था में देख कर दुःख से सन्तप्त होता है। दूसरे व्यक्तियों की सफलता एवं उपलब्धियों अथवा उनके सद्‌गुणों के विषय में सुन कर उसका हृदय दग्ध होता है। वह व्यक्ति उनकी झूठी निन्दा करता है तथा उनके पतन का प्रयास करता है। वह उनके विरुद्ध चुगलखोरी करता है तथा मिथ्यापवाद फैलाता है। वह अत्यन्त ईर्ष्या एवं मात्सर्य भाव से भरा होता है। क्षुद्र मानसिकता ईर्ष्या का ही एक रूप है। व्यक्ति अत्यधिक प्रतिभाशाली हो सकता है; वह एक महान् कवि हो सकता है। उसकी पुस्तकें विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम में सम्मिलित हो सकती हैं, परन्तु वह नैतिक सिद्धान्तों से रहित एक क्षुद्रमना व्यक्ति हो सकता है। सम्पूर्ण समाज उसकी विद्वत्ता अथवा कवित्व-प्रतिभा की प्रशंसा करता होगा, परन्तु इसके साथ ही उसकी क्षुद्र मानसिकता के कारण उससे घृणा भी करता होगा। एक वास्तविक मनुष्य के रूप में वह कुछ नहीं है।

एक क्षुद्रमना व्यक्ति अपने भाई की सम्पत्ति हड़पने हेतु उसे विष देने में भी नहीं हिचकेगा। वह झूठे हस्ताक्षर करने, जानबूझकर झूठ बोलने, छल एवं व्यभिचार करने तथा अन्य व्यक्ति की सम्पत्ति लूटने में भी नहीं हिचकेगा। वह धन एकत्रित करने के लिए कोई भी क्षुद्र कार्य करने हेतु तत्पर रहता है। उसकी अन्तरात्मा निर्मल नहीं होती है। वह अत्यन्त स्वार्थी होता है। कृपणता और क्षुद्र मानसिकता साथ-साथ रहते हैं। वह एक पैसा खर्च करने में भी दुःखी होगा। वह दानशीलता-उदारता से अपरिचित होता है। समाज में वह एक महान् व्यक्ति माना जाता होगा, परन्तु वह रेलवे प्लेटफार्म पर लज्जाहीन हो एक कुली से दो पैसे के लिए झगड़ा करेगा। वह दैनिक विवरण में एक पैसे की हानि को देख कर दो पैसे के केरोसिन तैल का प्रयोग कर उस खोये पैसे को ढूँढ़ेगा। वह स्वयं फल-मिठाई खायेगा परन्तु अपने सेवक को यही खाते देख कर उसका हृदय पीड़ित होगा। वह अपने सेवक से चना-गुड़ खाने को कहेगा। वह स्वयं की तथा अन्य व्यक्तियों की चाय में भी भेद करेगा। वह श्रेष्ठ वस्तुएँ अपने उपयोग हेतु रखेगा तथा खराब दूषित वस्तुएँ अन्य व्यक्तियों को देगा। वह मरते हुए व्यक्ति को उसकी प्राणरक्षा हेतु रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं देगा। उसका हृदय पाषाण की भाँति कठोर होता है।

धनी व्यक्ति निर्धनों की अपेक्षा अधिक क्षुद्रमना होते हैं। एक क्षुद्र मानसिकता का व्यक्ति छोटी-छोटी बातों पर दूसरों से झगड़ा करता है। वह झगड़ालू प्रकृति का होता है। वह अभिमानी, अहंकारी एवं चिड़चिड़े स्वभाव का होता है। वह बहुत शंकालु होता है। वह सदैव उदास एवं निराश रहता है। क्षुद्रमना व्यक्तियों द्वारा संचित धन प्रायः उनके अतिव्ययी पुत्रों द्वारा लुटा दिया जाता है। इस प्रकार के धन का अधिकांश भाग चिकित्सकों

एवं वकीलों की फीस में व्यय होता है। वे जीवन का आनन्द नहीं उठाते हैं। वे अपने धन के मात्र संरक्षक रूप में रहते हैं।

इस भयंकर रोग का उपचार इसके विपरीत सद्‌गुण उदारचित्तता अथवा विशालहृदयता का विकास करना है। दानशील स्वभाव, वैश्विक प्रेम तथा सेवा भाव का विकास किया जाना चाहिए। सत्संग अत्यन्त लाभदायक है। उदारता के सद्‌गुण पर नियमित ध्यान आवश्यक है। रात्रि में एक एकान्त कक्ष में शान्त हो कर बैठिए। अपने नेत्रों को बन्द कर लीजिए। अन्तर्निरीक्षण द्वारा यह जानिए कि आज दिन में आपने क्षुद्र प्रकृति के कौनसे कार्य किए। उन्हें अपनी आध्यात्मिक दैनन्दिनी में लिखिए। मन रूपी झील में उठने वाली क्षुद्र वृत्तियों की तरंगों को देखिए तथा उन्हें वहीं समाप्त कर दीजिए।

मांस भक्षण (Meat-eating)

अच्छे स्वास्थ्य के लिए मांसाहार बिलकुल आवश्यक नहीं है। मांस भक्षण अर्थात् मांसाहार स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक है। यह अनेक प्रकार के रोगों यथा टेपवार्म, एल्बुमिनुरिया तथा किडनी के रोगों का कारण है। वास्तव में मनुष्य की आवश्यकता ही कितनी है? कुछ रोटियाँ, थोड़ी दाल उसके स्वास्थ्य, शक्ति एवं प्राणशक्ति के रक्षण के लिए पर्याप्त हैं। भोजन के लिए पशुओं की हत्या घोर पाप है। अज्ञानी जन अपनी अहंता-ममता का नाश करने के स्थान पर देवी को निर्दोष पशुओं की बलि चढ़ाते हैं। वस्तुतः वे स्वयं की जिह्वाओं अर्थात् स्वादेन्द्रिय को तृप्त करने हेतु ऐसा करते हैं। यह घोर अमानवीय कृत्य है। अहिंसा सर्वश्रेष्ठ सद्‌गुण है। "अहिंसा परमो धर्मः।" अहिंसा वह प्रथम सद्‌गुण है जिससे प्रत्येक साधक को सम्पन्न होना चाहिए। हमें प्राणीमात्र के जीवन का सम्मान करना चाहिए। भगवान् जीसस कहते हैं, "करुणाशील व्यक्ति धन्य हैं; क्योंकि उन्हें भगवद्‌करुणा प्राप्त होगी।" भगवान् जीसस एवं भगवान् महावीर ने उच्च स्वर में उद्‌घोषणा की थी, "प्रत्येक प्राणी को अपने समान समझें, किसी को हानि न पहुँचाएँ।" कर्म का सिद्धान्त अटल, कठोर एवं अपरिवर्तनीय है। जो दुःख-कष्ट आप किसी अन्य प्राणी को देते हैं, वह पुनः आपके पास लौट कर आयेगा तथा इसी प्रकार जो सुख-प्रसन्नता आप अन्यों को देते हैं, वह भी आपके पास लौट कर आपकी प्रसन्नता में वृद्धि करेगी।

लेडी मारग्रेट हॉस्पिटल के सीनियर फिजिशियन डॉ. जे. ऑल्डफील्ड लिखते हैं, "आज सबके हाथ में प्रमाण है जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वनस्पति जगत् में मनुष्य जीवन के पूर्णतम पोषण हेतु आवश्यक समस्त तत्त्व उपलब्ध हैं।" मांस अप्राकृतिक आहार है अतः व्यक्ति के शरीर में क्रियात्मक गड़बड़ियाँ उत्पन्न करता है। मांस केन्सर, क्षय, ज्वर, आंत्रकृमि आदि भयंकर रोगों के जीवाणुओं से संक्रमित होता है, अतः इसका भक्षण करने वाले व्यक्ति इन रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। इसमें आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं है कि मांसाहार उन रोगों का सर्वाधिक गम्भीर कारण है जिनसे सौ में से प्रायः निन्यानवे व्यक्तियों की मृत्यु होती है।

मांसाहार एवं मदिरापान एक-दूसरे से गहनता से सम्बन्धित हैं। मांसाहार का त्याग करने से मदिरापान की इच्छा भी स्वतः नष्ट हो जाती है। मांसाहार करने वालों के लिए परिवार नियोजन अत्यन्त कठिन होता है। मन पर नियन्त्रण उनके लिए असम्भव कार्य है। प्रकृति में देखिए-मांसभक्षी चीता कितना उग्र-आक्रामक होता है तथा तृणजीवी पशु गाय एवं हाथी कितने सौम्य तथा शान्त प्रकृति के होते हैं। मांस का मस्तिष्क के विभिन्न भागों पर गहन दुष्प्रभाव पड़ता है। आध्यात्मिक प्रगति हेतु प्रथम सोपान मांसाहार का त्याग है। यदि उदर मांसाहार से भरा है, तो दिव्य प्रकाश का अवतरण नहीं होगा। मांसाहार करने वाले राष्ट्रों में, केन्सर से मरने वाले रोगियों की संख्या अधिक है। शाकाहारी व्यक्ति वृद्धावस्थापर्यन्त सुस्वास्थ्य सम्पन्न होते हैं। अब पश्चिमी देशों के अस्पतालों में भी चिकित्सक रोगियों को शाकाहारी भोजन दे रहे हैं। इससे रोगी शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करते हैं।

ग्रीक महापुरुष पाइथोगोरस का भी उपदेश था, "किसी प्राणी को नहीं मारें, न ही हानि पहुँचायें।" उन्होंने मांसाहार की 'पापयुक्त भोजन' कह कर भर्त्सना की। सुनिए वे क्या कहते हैं, "हे मानव ! पापयुक्त भोजन से अपने शरीरों को अपवित्र मत करिए। प्रकृति ने हमें प्रचुर अनाज दिया है, वृक्ष की शाखाएँ फलों से झुकी हैं, अंगूर लताओं में लगे हैं। मधुर कन्द, मूल, सब्जियाँ हैं जिन्हें अग्नि में पकाकर स्वादिष्ट बनाया जा सकता है। आपको दूध, शहद, थाइम पुष्प की सुगन्ध लेने से कोई नहीं रोकता है। धरा शुद्ध भोजन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध कराती है, इस भोजन की प्राप्ति के लिए किसी प्राणी की हत्या अथवा रक्त बहाने की आवश्यकता नहीं है।"

यदि आप मांसाहार का त्याग करना चाहते हैं, तो आप कसाईगृह में एक भेड़ के मरने के दयनीय दृश्य को अपनी आँखों से देखिए। इससे आपके हृदय में करुणा एवं सहानुभूति का जन्म होगा। तब आप मांसाहार त्यागने का दृढ़ निश्चय कर पायेंगे। यदि आप इस प्रयास में असफल होते हैं, तो शाकाहारी समाज अथवा शाकाहारी होटल में रहने चले जायें जहाँ आपको मांस-मछली प्राप्त नहीं हो सकते हैं तथा जहाँ केवल शाकाहारी भोजन उपलब्ध है। सदैव मांसाहार के दुष्प्रभावों तथा शाकाहार के लाभों का चिन्तन करिए। यदि यह भी आपको मांसाहार त्याग करने हेतु पर्याप्त शक्ति नहीं देता है, तो किसी कसाई की वधशाला में जाइए तथा वहाँ स्वयं पशुओं की दुर्गन्धयुक्त एवं सड़ी-गली मांसपेशियों, आँतों, गुरदों एवं अन्य अंगों को देखिए। इससे आपमें निश्चयमेव वैराग्य तथा मांसाहार के प्रति गहन वितृष्णा उत्पन्न होंगे।

कृपणता (Miserliness)

व्यक्तियों के गहन निरीक्षण के उपरान्त मेरा अनुभव यही है कि अनेक व्यक्तियों में कृपणता गहराई तक जड़ें जमाये है। इसी कारण अत्यन्त गम्भीरता एवं सच्चाईपूर्वक सतत योगसाधना करते हुए भी वे आध्यात्मिक पथ पर प्रगति नहीं कर पाते हैं। एक कृपण भगवान् से बहुत दूर होता है। जो कृपणतापूर्ण एवं सहानुभूतिरहित कठोर हृदय रखते हुए आसन-प्राणायाम एवं थोड़े जप के अभ्यास द्वारा समाधि एवं भगवद्-दर्शन की आशा करता है, वह स्वयं के साथ ही छल कर रहा है, स्वयं को ही धोखा दे रहा है। वह वस्तुतः घोर पाखण्डी है।

कृपणता एक महान् अभिशाप है। यह शान्ति का शत्रु एवं स्वार्थ का मित्र है। कृपण व्यक्ति आध्यात्मिक पथ हेतु सर्वथा अनुपयुक्त हैं। उदारहृदयी व्यक्ति अत्यन्त दुर्लभ हैं। उदारहृदयता से व्यक्तियों ने शक्ति, प्रसिद्धि, शान्ति एवं प्रसन्नता अर्जित की है। कृपण व्यक्ति इनकी प्राप्ति का तथा जीवन में सफलता का स्वप्न भी नहीं देख सकते हैं। आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्तियों के लिए कृपण व्यक्तियों की संगति अत्यन्त अनिष्टकारी है। वे अपने कलुषित एवं संकुचित हृदयों के कारण सम्पूर्ण वातावरण को दूषित कर देते हैं।

आपको विशालहृदयी होना चाहिए। आपको निर्धनों में धन को पाषाण समझ कर वितरित करना चाहिए। केवल तभी आप अद्वैतभाव, समाधि एवं वैश्विक प्रेम का विकास कर सकते हैं। इन दिनों अधिकांश गृहस्थ पूर्ण स्वार्थी हैं। धन ही उनका प्राण है। आप उनके मुखों पर उदासी-कुरूपता पायेंगे। कृपण प्रकृति के व्यक्ति में अन्य सभी दुर्गुण यथा चिन्ता, लोभ, काम, ईर्ष्या, घृणा एवं निराशा आ जाते हैं तथा उसके हृदय को सन्तप्त करते हैं। कितनी दयनीय दशा है कि कुछ न्यायाधीश एवं जमींदार भी रेलवे प्लेटफार्म पर कुलियों के साथ कुछ पैसों के लिए झगड़ा करते हैं।

एक व्यक्ति अपने मस्तक पर तीन घण्टे खड़ा हो सकता है अर्थात् शीर्षासन कर सकता है। वह दस मिनट तक श्वास रोकने में समर्थ हो सकता है, परन्तु यदि वह उदारहृदयी नहीं है, तो ये उपलब्धियाँ व्यर्थ हैं। यहाँ एक हास्यास्पद स्थिति देखिए- मद्रासी जन अपना भोजन केले के पत्तों में लेते हैं। कुछ मद्रासी स्त्रियाँ अत्यधिक कृपण होती हैं। वे केले के पत्तों के गट्ठर को खोलती हैं तथा उसमें से सड़े हुए पत्तों को उस दिन के प्रयोग हेतु

निकालती हैं तथा अच्छे पत्तों को आने वाले कल के उपयोग हेतु रख लेती हैं। अगले दिन जब वे उस गट्ठर को पुनः खोलती हैं, तब तक वे अच्छे ताजे पत्ते भी सड़ चुके होते हैं। इस प्रकार प्रतिदिन वे सड़े पत्तों का प्रयोग ही कर पायेंगी। किसी भी दिन वे अच्छे पत्तों पर भोजन का आनन्द नहीं उठा सकते हैं। ऐसी उनकी कृपणता है। कुछ फलविक्रेता भी प्रतिदिन सड़े फल ही खायेंगे। वे ताजे फल कभी नहीं खायेंगे। वे अच्छे-ताजे फल ग्राहकों को बेचने के लिए रखते हैं। उन अच्छे फलों को बेचने के उपरान्त, वे सड़े फल ही खायेंगे। कुछ पानविक्रेता भी ऐसा करते हैं। कृपण व्यक्तियों को इहलोक एवं परलोक दोनों में सुख प्राप्त नहीं होता है। वे अपने धन के मात्र चौकीदार होते हैं। अधिकांश कृपण व्यक्ति नये वस्त्र नहीं पहनते हैं। वे पुराने फटे वस्त्रों को पहनते रहते हैं। जब वे नये वस्त्रों के लिए सन्दूक खोलते हैं, तब तक कीड़े इन नये वस्त्रों को अपना आहार बना चुके होते हैं। ऐसे कृपण व्यक्ति अपनी वस्तुओं में से कुछ दान नहीं करते हैं तथा उदारता के नाम पर वे दूसरों की सम्पत्ति से कुछ दान दे देंगे।

यदि एक कृपण व्यक्ति के पास ५०००० रुपये हैं, तो वह उनका उपभोग नहीं करेगा अपितु एक लाख रुपये की प्राप्ति की इच्छा करेगा। एक लाख का स्वामी दस-सौ लाख रुपये की इच्छा करेगा। यह देखना अत्यन्त भयप्रद होता है कि कुछ धनी-समृद्ध व्यक्ति इतने कृपण एवं कठोरहृदयी होते हैं कि वे अपने मित्रों के साथ भी अच्छी-स्वादिष्ट वस्तुओं को नहीं बाँटते हैं। वे अच्छे केक-मिठाई आदि अलमारी में ताला लगा कर रखते हैं तथा सबके सोने के उपरान्त अकेले खाते हैं। ऐसे व्यक्ति एक पैसा भी दान नहीं करेंगे। वे स्वयं अच्छा भोजन करेंगे, परन्तु तीन दिन से भूखे एक निर्धन व्यक्ति को जरा सा भी भोजन नहीं देंगे। ऐसे पाषाणहृदयी होते हैं ये। वे स्वयं गाय का शुद्ध दूध पीयेंगे तथा अपने अतिथियों को पानी मिला हुआ दूध देंगे। वे स्वयं ताजा-अच्छा भोजन करेंगे तथा अपने सेवकों को तीन दिन पुराना बचा हुआ भोजन देंगे। वे बचे हुए भोजन का भी तीन दिन तक प्रयोग करते रहेंगे तथा अन्त में दुःखी हृदय से उसे सेवकों को देंगे। वे खराब एवं सड़ी-गली वस्तुएँ भी देना नहीं चाहते हैं। आप ऐसे हृदयविदारक दृश्य इन व्यक्तियों के घरों में देखेंगे। अपनी स्वाभाविक कृपणता को छिपाने हेतु, वे मितव्ययिता की महत्ता के विषय में बात करेंगे। वे यह कभी स्वीकार नहीं करेंगे कि उनके कृपण स्वभाव के कारण ये ऐसे निम्न कार्य करते हैं अपितु वे यह सिद्ध करने का प्रयास करेंगे कि यह मितव्ययिता है।

कुछ अधिकारी सेवानिवृत्त होने के बाद गंगा, यमुना एवं नर्मदा के तटों पर निवास करने लगते हैं। वे थोड़ा जप-ध्यान तथा योग वासिष्ठ एवं उपनिषदों का अध्ययन कर स्वयं को जीवन्मुक्त समझने लगते हैं। उनके हृदयों में अभी भी अपनी सन्तानों के प्रति तीव्र मोह है। वे अपनी पेन्शन का धन अपने पुत्र-पौत्रों को भेजते हैं। वे कृपणता के साक्षात् स्वरूप हैं। वे भ्रमित-मोहित जीवात्माएँ हैं। एक कृपण व्यक्ति सहस्रों वर्षों में भी आत्म-साक्षात्कार का स्वप्न नहीं देख सकता है। भगवान् जीसस कहते हैं, "एक धनी व्यक्ति के भगवद्-साम्राज्य में प्रवेश की अपेक्षा एक ऊँट का सुई के छेद से निकल जाना सरल है।"

यदि व्यक्ति अपने इस कृपण स्वभाव को नष्ट कर देता है, तो उसकी साधना का एक बड़ा भाग समाप्त हो गया है। उसने कुछ ठोस उपलब्धि अर्जित कर ली है। दानशीलता द्वारा पापों का नाश हो सकता है। भगवान् जीसस कहते हैं, "दानशीलता असंख्यों पापों का शमन कर देती है।" श्रीमद्भगवद्गीता में भी कहा गया है, **"यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्**-यज्ञ, दान एवं तप पावनकारी साधनाएँ हैं।"

इस बुरे स्वभाव अर्थात् क्षुद्र मानसिकता को नष्ट करने का प्रभावशाली उपाय है-पीड़ित मानवता की सहायता हेतु सहज, प्रचुर एवं मुक्तहस्त दान। अतः इस उदारवृत्ति का विकास करिए। केवल तभी आप सम्राटों के सम्राट् बन सकते हैं। केवल अपनी पत्नी, सन्तान तथा अपने आश्रित जनों के विषय में मत सोचिए। जब भी आप निर्धनों-पीड़ितों के सम्पर्क में आयें, धन को पानी की तरह बहायें अर्थात् बाँटें। यदि आप दान करते हैं, तो सम्पूर्ण विश्व की सम्पत्ति आपकी है। धन आपके पास स्वयमेव आयेगा। यह प्रकृति का अपरिवर्तनीय, अटल एवं दृढ़ सिद्धान्त है। अतः दीजिए, दान करिए। सर्वत्र भगवद्-दर्शन करिए। सबके साथ अपनी वस्तुओं को बाँटिए। अन्य व्यक्तियों को अच्छी-श्रेष्ठ वस्तुएँ दी जानी चाहिए। अपनी स्वभावगत कृपणता का नाश करिए। आपका हृदय

विशाल होगा। आपका जीवन के प्रति नवीन, उदार एवं विस्तृत दृष्टिकोण बनेगा। तब आप अपने हृदयस्थ प्रभु की सहायता का अनुभव कर सकते हैं। आप दिव्य आनन्द, आध्यात्मिक आनन्द के अवर्णनीय रोमांच का अनुभव कर सकते हैं। इससे आपको अत्यधिक आन्तरिक शक्ति प्राप्त होगी। आप आध्यात्मिक पथ में दृढ़तापूर्वक संस्थित होंगे। आप एक आधुनिक बुद्ध बनेंगे।

नाम एवं यश (Name and Fame)

व्यक्ति अपनी पत्नी, पुत्र एवं सम्पत्ति का त्याग कर सकता है, परन्तु नाम एवं यश का त्याग अत्यन्त कठिन है। नाम एवं यश की स्थापना प्रतिष्ठा कहलाती है। यह भगवद्-साक्षात्कार के पथ में एक महान् बाधा है। यह अन्ततः पतन का कारण बनती है। यह साधक की आध्यात्मिक पथ पर प्रगति नहीं होने देती है। वह आदर-सम्मान का दास बन जाता है। जैसे ही साधक थोड़ी प्रगति करता है, पवित्रता प्राप्त करता है, अज्ञानी जन उसके पास एकत्रित होने लगते हैं तथा उसके प्रति अपनी श्रद्धा एवं सम्मान व्यक्त करते हैं। इससे साधक गर्व से फूल जाता है। वह सोचता है कि वह अब एक बड़ा महात्मा बन गया है। अन्ततः वह अपने प्रशंसकों का दास बन जाता है। वह शनैः शनैः होते अपने पतन को नहीं देख पाता है। जिस क्षण वह गृहस्थों से स्वतन्त्रतापूर्वक मिलना प्रारम्भ कर देता है, उसी क्षण वह आठ-दस वर्ष की साधना से प्राप्त फल को खो देता है। वह अब जनसामान्य को अधिक प्रभावित नहीं कर सकता है। उसके सान्निध्य में शान्ति-सान्त्वना नहीं प्राप्त होने पर उसके प्रशंसक भी उसे छोड़ जाते हैं।

कुछ व्यक्ति सोचते हैं कि साधु-महात्मा के पास सिद्धियाँ होती हैं, अतः वे उसकी कृपा से सन्तान, धन तथा रोगनिवारक औषधियाँ प्राप्त कर सकते हैं। वे एक साधु के पास सदैव विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु जाते हैं। साधक कुसंगति से अपना विवेक-वैराग्य खो देता है। अब उसके मन में विभिन्न इच्छाओं एवं आसक्ति का उदय होता है। इसलिए एक साधक को स्वयं को सबसे छिपाना चाहिए। किसी को यह ज्ञात नहीं होना चाहिए कि वह किस प्रकार की साधना कर रहा है। उसे कभी किसी सिद्धि का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। उसे अत्यन्त विनम्र होना चाहिए। अन्य व्यक्तियों द्वारा उसे एक साधारण व्यक्ति समझा जाना चाहिए। उसे गृहस्थों से महँगे उपहार स्वीकार नहीं करने चाहिए। वह उपहार देने वालों के कुविचारों से प्रभावित हो जायेगा। उसे स्वयं को किसी से भी श्रेष्ठ नहीं समझना चाहिए। उसे दूसरों के साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए। उसे सबके साथ सदैव सम्मानपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। तब उसे स्वयं सम्मान प्राप्त होगा। साधक को मान-सम्मान, नाम एवं यश को विष्ठा अथवा विष के समान समझना चाहिए। उसे अपमान-अवमानना को स्वर्णहार की भाँति धारण करना चाहिए। तभी वह अपने लक्ष्य तक सुरक्षित रूप से पहुँच पायेगा।

उपन्यास पढ़ना (Novel Reading)

उपन्यास पढ़ना एक अन्य बुरी आदत है। जिन व्यक्तियों को प्रेम एवं वासना पर आधारित उपन्यास पढ़ने की आदत है, वे उपन्यास पढ़े बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते हैं। वे अपने स्नायुओं को उत्तेजक भावनाओं से सदैव उदीप्त रखना चाहते हैं। उपन्यास पढ़ने से मन निम्न-कामुक विचारों से भर जाता है तथा इससे वासना भी जाग्रत होती है। यह शान्ति का परम शत्रु है। अनेक व्यक्तियों ने प्रति माह अल्प सदस्यता शुल्क के साथ पुस्तकालय आरम्भ किये हैं जिससे वे व्यक्तियों को उपन्यास उपलब्ध करा सकें। वे यह नहीं समझते हैं कि वे राष्ट्र को कितनी हानि पहुँचा रहे हैं। उन्हें अपने जीविकोपार्जन हेतु कोई अन्य साधन खोजना चाहिए। कामवासना को उत्तेजित करने वाले इन अर्थहीन उपन्यासों को उपलब्ध करवाकर वे युवाओं के मन-मस्तिष्क को कलुषित कर रहे हैं। इससे समाज का सम्पूर्ण वातावरण ही दूषित हो जाता है। यमलोक में कठोर दण्ड उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। समाचार पत्र पढ़ना भी एक बुरी आदत है। कुछ व्यक्ति भोजन करते समय भी समाचार पत्र पढ़ना नहीं छोड़ते

हैं। वे सदैव कुछ उत्तेजनापूर्ण समाचार पढ़ना चाहते हैं। बिना समाचार पत्र पढ़े वे स्वयं को ऊर्जा-स्फूर्ति विहीन अनुभव करते हैं। वे एकान्त एवं ध्यान के जीवन हेतु सर्वथा अनुपयुक्त हैं। उन्हें तीन दिन के लिए एकान्त में रखिए, वे जल से बाहर मछली के समान उद्विग्न-विचलित होने लगेंगे। समाचार पत्र पढ़ने से मन बहिर्मुखी बनता है, पुराने सांसारिक संस्कार जाग्रत हो जाते हैं तथा व्यक्ति भगवान् को भूल जाता है।

हठ (Obstinacy)

हठ तमस् से उत्पन्न मूर्खतापूर्ण आग्रह है। यह हठधर्मिता है, जिद है।

हठ किसी उद्देश्य, विचार अथवा कार्य को अपने ही तरीके से तथा प्रायः विवेकशून्य तरीके से करने का तीव्र आग्रह है।

यह किसी के द्वारा नियन्त्रित किये जाने में कठिनता अनुभव करने अथवा किसी की बात नहीं मानने का गुण है।

एक हठी व्यक्ति किसी अन्य के तर्क अथवा प्रार्थना को नहीं मानता है। उसके मन में दूसरों के विचारों एवं इच्छाओं के प्रति कोई सम्मान नहीं होता है।

एक हठी व्यक्ति अभद्र एवं जिद्दी होता है।

हठ एक अज्ञानी व्यक्ति का दुर्गुण है जो मिथ्याभिमानपूर्वक अपनी ही समझ-बुद्धि को सही मानकर अड़ा रहता है।

हठ मूर्ख एवं दुर्बल व्यक्ति की शक्ति है।

सत्य, कर्तव्य, सिद्धान्त तथा विधि पर आधारित दृढ़ता, एक योगी एवं सन्त का हठ है।

हठ निश्चयमेव एक महान् दुर्गुण है। यह महान् अनिष्ट का कारण होता है। जो हठ की प्रकृति को नहीं जानते हैं, वे कभी-कभी सत्य एवं कर्तव्य के प्रति दृढ़ निष्ठा को हठ समझ लेते हैं।

एक बालक (बालहठ), एक योगी (योगीहठ), एक स्त्री (स्त्रीहठ) तथा एक राजा (राजहठ) अपने-अपने हठ के लिए प्रसिद्ध हैं।

एक अभिमानी-दुराग्रही (Headstrong) व्यक्ति को उसके कार्य-मार्ग से रोका नहीं जा सकता है, जबकि एक हठी-जिद्दी (Obstinate) व्यक्ति को दूसरे के मार्ग पर चलाया नहीं जा सकता है।

एक अभिमानी दुराग्रही व्यक्ति कार्य करता है, परन्तु हठी व्यक्ति एक इंच भी हिलना अस्वीकृत कर सकता है। सर्वाधिक सौम्य व्यक्ति भी कभी किसी विषय पर हठी हो सकता है; परन्तु एक

हठी व्यक्ति आदतवशात् प्रायः अधिकांश समय हठ ही करता है। हम 'हठपूर्ण संकल्प' तथा 'हठपूर्ण प्रतिरोध' शब्दों का प्रयोग करते हैं।

हठ मन की आदत है। जिद एवं दुराग्रह हठ की प्रजातियाँ हैं। प्रथम अर्थात् जिद संकल्प का विकृत रूप है तथा द्वितीय अर्थात् दुराग्रह निर्णय का विकृत रूप है।

अपनी इच्छा के अधीन मत रहिए। अपने समस्त संकल्पों पर नहीं अपितु उचित संकल्पों पर ही दृढ़ रहिए।

आडम्बर (Ostentation)

आडम्बर ध्यान अथवा प्रशंसा आकर्षित करने हेतु प्रदर्शन की कला है। यह आत्म-प्रशंसा है।

आडम्बर मिथ्याभिमानिता से प्रेरित तथा प्रशंसा एवं चाटुकारिता प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया दिखावा अथवा प्रदर्शन है। यह उन वस्तुओं का प्रदर्शन है जिनके दिखाने से प्रशंसा की आशा है।

आडम्बर पाखण्ड का विशिष्ट संकेतक है। यह शैतान (असुर) का मुख्य पाप तथा असत्यों का जनक है।

जिस प्रकार धौंकनी में वायु फेंकी जाती है, परन्तु वह निष्प्राण होती है, उसी प्रकार आडम्बरयुक्त व्यक्तियों के शब्द निष्प्राण अर्थात् खोखले होते हैं क्योंकि वे कभी क्रियान्वित नहीं होते हैं।

आडम्बर शब्दों के बिना भी व्यक्त हो सकता है जैसे बड़े-बड़े बंगलों में धन को बहुमूल्य वस्त्रों, वस्तुओं तथा कीमती साज-सज्जा से प्रदर्शित किया जाता है। शब्दाडम्बर किसी कथन अथवा वाक्य की अपेक्षा उनके बोलने की शैली में प्रकट किया जाता है।

आत्मप्रशंसा (Boasting) आडम्बर से अधिक अशिष्ट एवं अभद्र होती है। अल्प सम्पत्ति का भी विशाल स्तर पर प्रदर्शन किया जा सकता है। आडम्बर में कुछ महत्त्वपूर्ण-विशेष दिखाने का संकेत होता है।

धूमधाम (Pomp) किसी व्यक्ति अथवा अवसर के अनुरूप किया गया धन एवं शक्ति का प्रदर्शन है जैसा कि विभिन्न उत्सवों, समारोहों अथवा शोभायात्राओं में किया जाता है। धूमधाम प्रदर्शन का उदात्त पक्ष है जबकि आडम्बर इसका अहंकार एवं गर्वपूर्ण पक्ष है।

अति विश्वास (Over-credulousness)

कुछ व्यक्ति अति विश्वासशील होते हैं। यह भी अच्छा नहीं है। वे दूसरों द्वारा सरलता से छले जाते हैं। आपको दूसरे व्यक्ति के स्वभाव, गुणों, पूर्वचरित तथा व्यवहार के विषय में जानना चाहिए। आपको अनेक अवसरों पर उसकी परीक्षा लेनी चाहिए। जब आप पूर्णतः सन्तुष्ट हो जायें, तभी आप उस व्यक्ति पर पूरा विश्वास कर सकते हैं। वह एक गूढ़ व्यक्ति हो सकता है। वह बाह्य रूप से मिथ्या प्रदर्शन कर सकता है तथा कुछ समय पश्चात्, सर्वथा विपरीत व्यवहार कर सकता है। आपको उसके साथ-साथ रहना होगा तथा सूक्ष्म निरीक्षण करना होगा, उसके विषय में, उसके साथ रह चुके अनेकों व्यक्तियों से सब कुछ जानना होगा। व्यक्ति अपना स्वभाव अधिक समय तक नहीं छिपा सकता है। उसका मुख विज्ञापन बोर्ड है जिस पर उसके विचार तथा उसके अन्तर्मन में घटित होने वाला सब कुछ अंकित हो जाता है। गहन परीक्षण के उपरान्त ही व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति पर पूर्ण विश्वास करना चाहिए।

तीव्र संवेग-राग-जुनून (Passion)

कोई भी तीव्र इच्छा राग है। राग एक ऐसी तीव्र अथवा उग्र भावना है जिसके द्वारा मन पूर्णतः अभिभूत हो जाता है। कोई भी गहन अथवा अमर्यादित भाव अथवा संवेग राग है यथा गर्व, ईर्ष्या, लोभ एवं प्रेम का तीव्र संवेग। विशेषतया विपरीतलिंगी के प्रति उत्कट स्नेह राग है, प्रणय सम्बन्धी भावना राग है। उग्र क्रोध का सहसा होना भी एक प्रकार का तीव्र संवेग है।

राग-जुनून ऐसा भाव है जिसमें बुद्धि पूर्णतः विचलित हो जाती है। तीव्र इच्छा का विषय भी जुनून कहलाता है। हम कहते हैं, "संगीत राम का जुनून है।"

तीव्र संवेग अथवा राग शान्ति, भक्ति एवं ज्ञान का शत्रु है। यदि आप इस पर विजय प्राप्त नहीं करते हैं, तो यह आपके सुख, शान्ति एवं स्वास्थ्य का नाश कर देगा।

इसके अधीन व्यक्ति एक निकृष्टतम दास है।

तीव्र संवेग अथवा राग एक आवेश की भाँति है। यह क्षणिक उत्तेजना है। उपभोग के पश्चात्, यह आपको दुर्बल करता है।

यह एक अनियन्त्रित अश्व की भाँति है। विवेक एवं वैराग्य द्वारा इस पर नियन्त्रण करिए तथा बुद्धिमान् एवं श्रेष्ठ व्यक्ति बनिए। स्वयं को सब प्रकार के तीव्र संवेगों अथवा रागों से मुक्त करिए, आप एक स्वतन्त्र व्यक्ति होंगे।

सर्वप्रथम अपने मूल तीव्र संवेग अथवा राग का नाश करिए। इसके पश्चात् अन्य सभी प्रकार के तीव्र संवेग अथवा राग सरलता से नष्ट किये जा सकते हैं।

एक राजा अथवा तानाशाह जनता पर शासन करता है परन्तु तीव्र संवेग अथवा राग राजा अथवा तानाशाह पर शासन करता है। एक सन्त अथवा एक योगी ही तीव्र संवेग अथवा राग का स्वामी है। केवल वही सदैव शान्त एवं आनन्दित रहता है।

आपका तीव्र संवेग अथवा राग आनन्द के असीम साम्राज्य का द्वार बन्द कर देता है। इसका नाश करिए तथा आनन्द के साम्राज्य में प्रवेश करिए। सांसारिक जीवन के प्रति आसक्ति सुदृढ़तम पाशविक राग है।

भगवद्-साक्षात्कार के प्रति तीव्र राग रखिए। इससे समस्त सांसारिक राग नष्ट हो जायेंगे।

राग जय-कामवासना पर विजय

व्यापक अर्थ में, तीव्र राग का अर्थ कोई भी तीव्र इच्छा है। देशभक्तों में देश सेवा का तीव्र राग होता है। उच्च श्रेणी के साधक में भगवद्-साक्षात्कार हेतु तीव्र राग होता है। कुछ व्यक्तियों में उपन्यास पढ़ने का राग होता है। कुछ में धार्मिक पुस्तकें पढ़ने का भी राग होता है। परन्तु सामान्य बोलचाल की भाषा में इसका अर्थ कामवासना अथवा कामुकता है। इसमें शारीरिक सुख-भोग की तीव्र इच्छा होती है। जब इस कार्य को बार-बार किया जाता है, तो इसकी इच्छा अधिक गहन एवं दृढ़ हो जाती है। मनुष्य में प्रजनन प्रवृत्ति अपनी प्रजाति के संरक्षण हेतु उसे मैथुन क्रिया हेतु प्रेरित करती है।

काम रजोगुण की अधिकता से उत्पन्न मानसिक वृत्ति है। यह अविद्या का परिणाम है। यह मन की नकारात्मक वृत्ति है। आत्मा नित्य शुद्ध है। आत्मा विमल, निर्मल एवं निर्विकार है। अविद्या शक्ति ने ही भगवान् की लीला के संचालन हेतु कामवासना का रूप धारण किया है। आप 'दुर्गासप्तशती' अथवा 'चण्डीपाठ' में पढ़ते हैं-

या देवी सर्वभूतेषु कामरूपेणसंस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।

मैं उन देवी को प्रणाम करता हूँ जो समस्त प्राणियों में काम के रूप में विराजमान हैं।

युवक-युवतियों में कामवासना बीज रूप में विद्यमान रहती है। यह उन्हें कष्ट नहीं देती है। जिस प्रकार बीज में वृक्ष सुप्तावस्था में रहता है, उसी प्रकार बालकों के मन में कामवासना बीजावस्था में रहती है। वृद्ध पुरुष-स्त्रियों में यह दमित अवस्था में रहती है। अब यह कुछ हानि नहीं पहुँचा सकती है। केवल युवा पुरुषों एवं महिलाओं में यह कष्टकारक होती है। वे इसके दास बन जाते हैं। वे असहाय हो जाते हैं।

राजसिक भोजन यथा मांस, मछली, अण्डे आदि, राजसिक वेशभूषा तथा जीवनशैली, इत्र का प्रयोग, उपन्यास पढ़ना, सिनेमा देखना, कुसंगति, मदिरा तथा अन्य मादक पदार्थों का उपयोग, तम्बाकू सेवन आदि कामवासना को उद्दीप्त करते हैं। तथाकथित शिक्षित व्यक्तियों के लिए भी यह समझना अत्यन्त कठिन है कि आत्मा में इन्द्रियातीत आनन्द है। इस आनन्द की प्राप्ति हेतु ऐन्द्रिक विषय-पदार्थों की आवश्यकता नहीं होती है। वे प्रतिदिन गहरी निद्रावस्था में आत्मिक आनन्द का अनुभव करते हैं। वे प्रतिदिन रात्रि में अपने आत्मा में ही विश्राम करते हैं। वे इसकी तीव्र इच्छा करते हैं। वे इसके बिना रह नहीं सकते हैं। वे इस आत्मिक आनन्द की प्राप्ति हेतु सुन्दर शय्या बनाते हैं; इस अवस्था में इन्द्रियाँ क्रियाशील नहीं होती हैं, मन विश्रान्त होता है तथा राग-द्वेष भी यहाँ तिरोहित हो जाते हैं। प्रतिदिन सुबह उठ कर व्यक्ति कहता है, "मैं रात्रि में गहरी निद्रा में सोया। मैंने गहरी निद्रा का सुख लिया। मैं कुछ नहीं जानता था। वहाँ कोई विक्षुब्धता - अशान्ति नहीं थी। मैं रात्रि आठ बजे सोया तथा सुबह सात बजे जगा।" परन्तु मनुष्य अपने इस अनुभव के विषय में सब कुछ भूल जाता है। यह माया अथवा अविद्या की ही शक्ति है। माया अत्यन्त रहस्यमय है। यह व्यक्ति को अन्धकार के कूप में गिरा देती है। व्यक्ति सुबह पुनः अपना विषयासक्त जीवन प्रारम्भ कर देता है। इसका कोई अन्त नहीं है।

कुछ अज्ञानी व्यक्ति कहते हैं, "कामवासना को नियन्त्रित करना उचित नहीं है। हमें प्रकृति के विरुद्ध नहीं जाना चाहिए। भगवान् ने सुन्दर युवतियों की सृष्टि क्यों की ? उनकी सृष्टि का कुछ प्रयोजन अवश्य होगा। हमें सुखोपभोग करना चाहिए तथा अधिकाधिक सन्तानों को जन्म देना चाहिए। हमें अपनी वंश-परम्परा को बनाये रखना चाहिए। यदि समस्त व्यक्ति संन्यासी बन कर वनों में चले गये, तो इस जगत् का क्या होगा ? यह समाप्त हो जायेगा। यदि हम कामवासना पर नियन्त्रण करेंगे तो हम रोगग्रस्त हो जायेंगे। हमारी अधिक सन्तान होनी चाहिए। घर में बहुत से बच्चे होने से सुख होता है। वैवाहिक जीवन का सुख शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। यही जीवन का लक्ष्य है। मैं वैराग्य, त्याग, संन्यास तथा निवृत्ति नहीं चाहता हूँ।" यह उनका अशिष्ट दर्शन है। ये विरोचन एवं चार्वाक के वंशज हैं। ये भोगवादी (Epicurean) सिद्धान्त के आजीवन अनुयायी बन चुके हैं। विषयभोग ही उनके जीवन का लक्ष्य है। इस सिद्धान्त के भी बहुत अनुयायी हैं, वे शैतान के मित्र हैं। उनका दर्शन अथवा सिद्धान्त कितना प्रशंसनीय है!

जब वे अपनी सम्पत्ति, पत्नी तथा सन्तान खो देते हैं, जब वे किसी असाध्य रोग से पीड़ित होते हैं, तब वे कहते हैं, "हे भगवान्! मुझे इस भयंकर रोग से मुक्त करें। मेरे पापों को क्षमा करें। मैं बहुत बड़ा पापी हूँ।"

कामवासना पर निश्चयमेव नियन्त्रण किया जाना चाहिए। इस पर नियन्त्रण करने से कोई रोग नहीं होता है। इसके विपरीत आपको अत्यधिक शक्ति, शान्ति एवं आनन्द प्राप्त होगा। कामवासना पर नियन्त्रण के कुछ प्रभावशाली उपाय हैं। व्यक्ति को प्रकृति के विरुद्ध जा कर, प्रकृति से परे आत्मा की प्राप्ति करनी चाहिए। जिस प्रकार एक मछली नदी में धारा के विरुद्ध तैरती है, उसी प्रकार आपको आसुरी शक्तियों की सांसारिक धाराओं के विरुद्ध चलना होगा। तभी आप आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर सकते हैं। कामवासना एक आसुरी शक्ति है; यदि आप अक्षय आत्मिक आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको कामवासना का निग्रह करना होगा। कामसुख वास्तव में सुख नहीं है। इसके साथ दुःख, संकट, भय एवं घृणा जुड़े हैं। यदि आप आत्म-विज्ञान अथवा योग-विज्ञान से परिचित हैं, तो आप सरलता से कामवासना पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं। भगवान् चाहते हैं कि आप आत्मा के आनन्द का उपभोग करें जिसकी प्राप्ति समस्त सांसारिक सुखों के त्याग द्वारा होती है। ये सुन्दर स्त्रियाँ एवं धन माया के उपकरण हैं जिनके द्वारा वह आपको मोहित-भ्रमित कर अपने जाल में आबद्ध करना चाहती है। यदि आप सदा के लिए निम्न विचारों एवं इच्छाओं से युक्त एक सांसारिक व्यक्ति बने रहना चाहते हैं, तो आप ऐसा कर सकते हैं। आप पूर्ण स्वतन्त्र हैं। आपको कोई नहीं रोकेगा। परन्तु आप शीघ्र ही जान लेंगे कि यह जगत् आपको वह तृप्ति नहीं दे सकता है जो आप चाहते हैं; क्योंकि यहाँ के सब वस्तु-पदार्थ देश, काल एवं कारण की सीमा में बँधे हैं। यह संसार मृत्यु, रोग, वृद्धावस्था, चिन्ताओं-परेशानियों, असफलता, निराशा, सर्दी-गर्मी, सर्प-दंश, बिच्छु-दंश, भूकम्प एवं दुर्घटनाओं का संसार है। आप यहाँ एक क्षण भी मानसिक विश्रान्ति नहीं पा सकते हैं। आपका मन कामवासना एवं अपवित्रता से भरा है, अतः आपकी बुद्धि भ्रमित एवं विकृत हो गयी है। आप जगत् की क्षणभंगुर-अस्थायी प्रकृति तथा आत्मा के शाश्वत आनन्द को समझने में असमर्थ हैं।

कामवासना पर नियन्त्रण किया जा सकता है। इसके प्रभावशाली उपाय हैं। इस पर नियन्त्रण के उपरान्त आप आत्मा के आनन्द को प्राप्त कर करेंगे। सभी मनुष्य संन्यासी नहीं बन सकते हैं। वे अनेक बन्धनों एवं आसक्तियों में बद्ध होते हैं। वे संसार का त्याग नहीं कर सकते हैं। वे अपनी पत्नी, सन्तान एवं सम्पत्ति से बँधे होते हैं। इसलिए यह सोचना कि सब संन्यासी बन जायेंगे, पूर्णतया अनुचित है। यह असम्भव है। क्या आपने विश्व के इतिहास में कहीं पढ़ा है कि यह जगत् रिक्त हो गया क्योंकि सभी पुरुषों ने संन्यास ग्रहण कर लिया ? यह आपके मूर्खतापूर्ण तर्कों एवं कामोपभोगवादी आसुरी दर्शन के समर्थन हेतु मन की एक गहरी चाल है। भविष्य में इस प्रकार की बातें मत करिए। इससे आपकी मूर्खता एवं कामुक स्वभाव का पता चलता है। इस जगत् की चिन्ता मत करिए, अपनी चिन्ता करिए। भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं। यदि समस्त व्यक्तियों यों के के वनगमन से यह जगत् पूर्ण रिक्त हो जाये, तो भगवान् अपने संकल्प मात्र से पलक झपकते ही करोड़ों मनुष्यों की सृष्टि कर लेंगे। यह आपके सोचने का विषय नहीं है। आप कामवासना पर नियन्त्रण के उपाय खोजिए।

विश्व की जनसंख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। धर्म का सर्वत्र ह्रास हो रहा है। विश्व के समस्त भागों में कामवासना का साम्राज्य है। व्यक्तियों के मन कामुक विचारों से भरे हैं। उनका संसार फैशन, होटल, रात्रिभोजन, नृत्य एवं सिनेमा का संसार हो गया है। उनका जीवन खाने, पीने एवं सन्तानोत्पत्ति तक सीमित है। व्यक्तियों की माँग के अनुसार भोजन-आपूर्ति कम हो गयी है। भयंकर अकाल तथा प्लेग की सम्भावना है। प्रकृति जनसंख्या एवं भोजन-आपूर्ति में सन्तुलन लाने के लिए अतिरिक्त जनसंख्या को नष्ट करती है। सन्तानोत्पत्ति पर नियन्त्रण के लिए कुछ प्रयास अपनाये जाते हैं परन्तु ये मूर्खतापूर्ण प्रयास हैं। इसमें अधिक ऊर्जा का क्षय होता है। ब्रह्मचर्य के अभ्यास से इस ऊर्जा को ओजस् में परिवर्तित किया जा सकता है। आज लगभग सम्पूर्ण जगत् कामोन्मत्त है। तथाकथित शिक्षित व्यक्ति भी इसके अपवाद नहीं हैं। अधिकांश जन भ्रमित-मोहित हुए विचरण कर रहे हैं। भगवान् उन्हें इस दलदल से निकालें तथा आध्यात्मिक दृष्टि प्रदान करें। आत्म-नियन्त्रण एवं ब्रह्मचर्य ही सन्तति-निग्रह के प्राकृतिक उपाय हैं।

बालविवाह समाज के लिए संकटकारक है। यह वस्तुतः एक बुराई है। बंगाल एवं मद्रास में अनेकों बाल-विधवाएँ हैं। आध्यात्मिक रूप से जाग्रत अनेक युवक मुझे करुण शब्दों में लिखते हैं, "पूज्य स्वामी जी, मेरा हृदय

उच्च आध्यात्मिक सत्यों के लिए उत्कण्ठित है। मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे माता-पिता के कहने से विवाह करना पड़ा। मुझे उन्हें प्रसन्न करना था। उन्होंने मुझे अनेक प्रकार की धमकियाँ दी थीं। मैं अब रोता हूँ? मैं क्या करूँ ?^ prime prime बालकों का आठ अथवा दस वर्ष में विवाह कर दिया जाता है, जबकि उन्हें जगत् का अथवा जीवन का कोई अनुभव नहीं है। अल्पायु बालिकाएँ बालकों को जन्म दे रही हैं। एक अठारहवर्षीय युवक के तीन बालक हो जाते हैं। कितनी भयप्रद दशा है? इसलिए जीवन दीर्घायु नहीं रहा है। सभी अल्पजीवी हैं। बार-बार सन्तानोत्पत्ति से स्त्री का स्वास्थ्य नष्ट होता है तथा वह अनेक रोगों से ग्रस्त होती है।

अल्प वेतन पाने वाले एक ३० वर्षीय लिपिक की छः सन्तानें हैं। वह कभी नहीं सोचता है, "मैं इतने बड़े परिवार का पालन कैसे करूँगा? मैं अपने पुत्र-पुत्रियों को शिक्षित कैसे करूँगा? मैं अपनी पुत्री का विवाह कैसे करूँगा ?^ prime prime उसमें लेशमात्र भी आत्म-नियन्त्रण नहीं है। वह कामवासना का दास है। वह अनेक सन्तानों को जन्म देकर संसार में भिक्षुकों की संख्या में वृद्धि करता है। पशुओं में भी आत्म-नियन्त्रण होता है। सिंह जीवन में अ अथवा वर्ष में एक बार ही सन्तानोत्पत्ति करता है। अपनी बुद्धि का मिथ्याभिमानी मनुष्य ही स्व स्वास्थ्य के समस्त नियमों को भंग करता है। उसे प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने का कठोर दण्ड भुगतना होगा।

आपने पश्चिम-जगत् के फैशन एवं वस्त्र आदि को अपनाया है। आपने अन्धानुकरण किया है। पश्चिम में व्यक्ति तब तक विवाह नहीं करते हैं जब तक वे अपने परिवार के उत्तरदायित्व का निर्वहन करने में सक्षम नहीं हो जाते हैं। उनमें अधिक आत्मसंयम है। वे पहले कुछ पद प्राप्त कर धनार्जन करते हैं तथा कुछ धन की बचत करने के उपरान्त ही वे विवाह के विषय में सोचते हैं। यदि उनके पास पर्याप्त धन नहीं है, तो बे जीवनपर्यन्त अविवाहित रहते हैं। वे जगत् में भिक्षुओं की वृद्धि नहीं करना चाहते हैं। जो व्यक्ति इस जगत् में मानव पीड़ा की गम्भीरता को समझ चुका है, वह एक भी सन्तान को जन्म नहीं देगा।

जब एक अल्पवेतन वाले व्यक्ति को एक विशाल परिवार की देखभाल करनी होती है, तो वह रिश्वत लेने को बाध्य होता है। वह अपने बुद्धि-विवेक को खो देता है तथा धन एकत्रित करने के लिए कोई भी निम्न-क्षुद्र कार्य करने को तैयार होता है। वह भगवान् को विस्मृत कर देता है। वह वासना द्वारा पराभूत किया जाता है। वह अपनी पत्नी का दास बन जाता है तथा उसकी माँगों को पूरा करने में असमर्थ होने पर उसके ताने-भर्त्सना चुपचाप सुनता है। उसे कर्मसिद्धान्त, संस्कारों तथा मन की क्रियाओं का ज्ञान नहीं है। रिश्वत लेने, छल-कपट करने तथा झूठ बोलने की बुरी आदतें अवचेतन मन में अंकित हो जाती हैं तथा आने वाले जन्मों में भी साथ रहती हैं। वह अपने अनुचित संस्कारों को साथ ले जाता है तथा अगले जन्म में झूठ एवं छल-कपट का जीवन प्रारम्भ करता है। क्या संस्कारों के अपरिवर्तनीय सिद्धान्त को जानने वाला व्यक्ति कभी अनुचित कार्य करेगा? एक व्यक्ति अपने अनुचित कार्यों से अपने मन को दूषित करता है तथा आने वाले जन्मों में भी चोर अथवा कपटी व्यक्ति बनता है। वह अपनी आसुरी प्रवृत्तियों, भावनाओं एवं विचारों को साथ ले जाता है। अतः व्यक्ति को अपने विचारों, भावनाओं एवं कार्यों के विषय में अत्यन्त सावधान रहना चाहिए। उसे सदैव अपने विचारों एवं कार्यों का निरीक्षण करना चाहिए। उसे दिव्य विचार एवं भावनाएँ रखनी चाहिए तथा सत्कार्य करने चाहिए। क्रिया एवं प्रतिक्रिया एक-दूसरे के समान एवं विपरीत होते हैं। व्यक्ति को यह सिद्धान्त स्मरण रखना चाहिए। तब वह कोई अनुचित कार्य नहीं करेगा।

सम्पूर्ण गीता में पाठकों के हृदयों को अनुगूँजित करती एक ही शिक्षा है कि जिस व्यक्ति ने अपने कामुक स्वभाव पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है, वह जगत् का सर्वाधिक सुखी व्यक्ति है। यदि आप इस विषय को अत्यधिक गम्भीरता से लेते हैं तथा स्वयं को सम्पूर्ण हृदय से, अनन्य भक्तिभाव एवं एकाग्रता से आध्यात्मिक साधना में संलग्न करते हैं तो आपके लिए इस घातक शत्रु 'कामवासना' पर नियन्त्रण पाना अत्यन्त सरल है। कुछ भी असम्भव नहीं है। आहार संयम अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। सात्त्विक भोजन जैसे दूध, फल, दाल एवं जौ आदि लीजिए। तीक्ष्ण आहार जैसे कड़ी, चटनी, मिर्ची आदि का त्याग करिए। सादा भोजन करिए। विचार करिए। 'ॐ'

का उच्चारण करिए। आत्मा का ध्यान करिए। "मैं कौन हूँ" - आत्मान्वेषण करिए। स्मरण रखिए कि आत्मा में वासना नहीं है। वासना केवल मन में है। पृथक् सोइए। प्रातःकाल चार बजे उठिए तथा अपनी रुचि, स्वभाव एवं क्षमता के अनुसार महामन्त्र अथवा **'ॐ नमः शिवाय'** अथवा **'ॐ नमो नारायणाय'** का जप करिए। भगवान् की सर्वशक्तिमत्ता, सर्वज्ञता एवं सर्वव्यापकता का ध्यान करिए। प्रतिदिन श्रीमद्भगवद्गीता के एक अध्याय का पाठ करिए। मृत्यु का संकट उपस्थित होने पर भी झूठ नहीं बोलने का निश्चय करिए। एकादशी अथवा जब भी आपको वासना उत्तेजित करे, उपवास रखिए। उपन्यास पढ़ने तथा सिनेमा देखने का त्याग करिए। अपने प्रत्येक क्षण का अधिकतम सदुपयोग करिए। प्राणायाम का भी अभ्यास करिए। मेरी पुस्तक 'प्राणायाम-विज्ञान' (Science of Pranayama) पढ़िए। स्त्रियों को वासनापूर्ण दृष्टि से मत देखिए। मार्ग में चलते हुए दृष्टि को अपने पैरों के अँगूठों पर रखिए तथा अपने इष्टदेवता का ध्यान करिए। चलते, खाते तथा ऑफिस में कार्य करते समय सदैव अपने गुरुमन्त्र का जप करते रहिए। प्रत्येक वस्तु में भगवद्-दर्शन का प्रयास करिए। प्रतिदिन आध्यात्मिक दैनन्दिनी भरिए तथा माह के अन्त में इसे मेरे निरीक्षणार्थ भेजिए। प्रतिदिन एक घण्टा अपने गुरुमन्त्र को एक पुस्तिका में लिखिए तथा पुस्तिका भरने के उपरान्त इसे मेरे पास भेजिए।

यदि आप उपरोक्त निर्देशों का अक्षरशः पालन करेंगे, केवल तभी आप कामवासना पर नियन्त्रण पाने में समर्थ होंगे। यदि आप असफल हो जायें, तो मुझ पर हँस सकते हैं। वह व्यक्ति धन्य है जिसने कामवासना पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है क्योंकि वह शीघ्र ही आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करेगा। ऐसे व्यक्ति की जय हो।

प्राणायाम के साथ शीर्षासन, सर्वांगासन एवं सिद्धासन का अभ्यास करिए। ये वासना-नियन्त्रण में अत्यधिक उपयोगी हैं। रात्रि में अधिक भोजन मत करिए। हल्का भोजन करिए। एक गिलास दूध अथवा कुछ फल पर्याप्त होंगे। अपने अन्तःकरण में "सादा जीवन एवं उच्च विचार" इस आदर्श वाक्य को स्वर्णिम अक्षरों में अंकित करिए।

आचार्य शंकर की चयनित कृतियों यथा भजगोविन्दम्, मणिरत्न माला अथवा प्रश्नोत्तरी, विवेक-चूड़ामणि आदि का अध्ययन करिए। भर्तृहरि के "वैराग्य शतक" को सावधानीपूर्वक पढ़िए। ये सब अत्यधिक प्रेरक एवं उन्नयनकारी पुस्तकें हैं। सदैव आत्म-विचार करिए। सत्संग करिए। कथा, संकीर्तन एवं दार्शनिक गोष्ठियों में भाग लीजिए। किसी से अधिक परिचय मत बढ़ाइए। अत्यधिक परिचय से घृणा का जन्म होता है। मित्रों की संख्या में वृद्धि मत करिए। स्त्रियों से मित्रता मत करिए। उनसे अधिक परिचय मत बढ़ाइए। उनसे अधिक परिचय अन्ततः आपके विनाश का कारण बनेगा। इस बात को मत भूलिए। मित्र आपके वास्तविक शत्रु हैं।

स्त्रियों को वासनापूर्ण दृष्टि से मत देखिए। उनके प्रति माता, बहिन अथवा देवी का भाव रखिए। आप अनेक बार असफल हो सकते हैं। पुनः-पुनः इस भाव को रखने का प्रयास करिए। जब-जब मन सुन्दर स्त्रियों के प्रति वासनापूर्ण विचारों के साथ भागता है, तब-तब मन के सम्मुख मांस, अस्थि, मल-मूत्र से बने स्त्री शरीर का चित्र लाइए। इससे मन में वैराग्य उत्पन्न होगा। आप एक स्त्री को अपवित्र दृष्टि से देखने का पाप पुनः नहीं करेंगे। निःसन्देह इसमें कुछ समय लगता है। स्त्रियाँ भी इस विधि को अपना सकती हैं तथा उपरोक्त वर्णनानुसार पुरुष शरीर का चित्र मन में ला सकती हैं। यदि मन स्त्रियों के प्रति वासनापूर्ण विचारों के साथ जाये, तो स्वयं को दण्डित करिए। रात्रि का भोजन त्याग दीजिए। बारह अतिरिक्त मालाओं का जप कीजिए। स्त्रियों से नहीं अपितु कामवासना से घृणा करिए। सदैव कौपीन धारण करिए।

नमक तथा इमली जैसे खट्टे पदार्थों का धीरे-धीरे त्याग कर दीजिए। नमक वासनाओं-भावनाओं को उत्तेजित करता है। नमक का त्याग मन तथा स्नायुओं को शीतलता प्रदान करता है। इससे ध्यान में सहायता प्राप्त होती है। प्रारम्भ में आपको थोड़ा कष्ट होगा। बाद में आप नमकरहित भोजन का आनन्द उठायेंगे। कम से कम छः माह नमकरहित भोजन करिए। इस प्रकार आप शीघ्र ही अपने वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार कर लेंगे।

आपसे सच्चे एवं गम्भीर प्रयत्न की अपेक्षा की जाती है। भगवान् श्री कृष्ण आपको आध्यात्मिकता के पथ पर चलने तथा जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु शक्ति एवं साहस प्रदान करें।

निराशावाद (Pessimism)

निराशावाद वह सिद्धान्त अथवा अवधारणा है जो विश्व को अच्छा मानने के स्थान पर बुरा मानता है। यह मन का वह स्वभाव है जो वस्तु-व्यक्तियों के अन्धकारमय अर्थात् नकारात्मक पक्ष को ही अधिक देखता है। यह जीवन के प्रति निराशावादी दृष्टिकोण है। यह आशावादिता का विपरीत शब्द है जो जीवन तथा वस्तुओं के उज्ज्वल एवं सकारात्मक पक्ष को देखता है।

निराशावाद जीवन के प्रति विषादपूर्ण अथवा हताशापूर्ण दृष्टिकोण रखने का स्वभाव है। यह असफलता अथवा दुर्भाग्य का पूर्वानुमान तथा प्रत्याशा करने की आदत है।

इस सिद्धान्त के अनुसार सम्पूर्ण विश्व तथा मानव जीवन अथवा इनकी कुछ स्थायी परिस्थितियाँ मूलभूत रूप से बुरी-अशुभ हैं; यह विश्व जितना बुरा हो सकता है, उतना बुरा है।

एक निराशावादी व्यक्ति वह है जो ऐसा विश्वास करता है कि सब कुछ अशुभ एवं बुरा ही होने जा रहा है। वस्तुओं के नकारात्मक पक्ष पर ही अपना सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित करने वाला व्यक्ति निराशावादी है।

निराशावाद महाविनाशक है। यह हताशा एवं मृत्यु है। धन-सम्पत्ति, स्वास्थ्य एवं प्रतिष्ठा खो जाये तो भी आप जीवन प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत कर सकते हैं यदि आपका स्वयं में विश्वास है तथा आप आशावादी हैं।

इतने विश्वस्त मत रहिए कि अशुभ-बुरा ही घटित होगा; ऐसा बहुत कम होता है। वेदान्तिक एवं बुद्धवादी विचारधारा के अनुसार जीवन भ्रामक एवं भारस्वरूप है।

ह्यूम का विचार है कि अच्छाई-बुराई अथवा शुभ-अशुभ इस प्रकार मिश्रित हैं कि विश्व के एक शुभ मौलिक कारण अथवा स्रोत की निश्चित रूप से उद्घोषणा नहीं की जा सकती है।

शोपेनहावर का मानना है कि इस विश्व के अस्तित्व हेतु आवश्यक स्थितियों के अनुसार यह विश्व उतना बुरा है, जितना हो सकता है।

यद्यपि वेदान्ती जगत् के मिथ्या होने की बात कहते हैं, परन्तु वे अत्यधिक आशावादी हैं। वे मनुष्यों में ब्रह्म में संस्थित शाश्वत एवं आनन्दपूर्ण जीवन के प्रति रुचि तथा जगत् के निरर्थक भौतिक जीवन के प्रति अरुचि उत्पन्न करने के लिए वैराग्य की बात कहते हैं। निराशावाद की विपरीत धारणा आशावाद है। यह सदैव व्यक्ति-वस्तु के उज्ज्वल पक्ष को देखना है। एक निराशावादी व्यक्ति सदैव उदास, हताश अकर्मण्य एवं आलसी होता है। वह प्रसन्नता-प्रफुल्लता से अपरिचित ही रहता है। वह दूसरों को भी प्रभावित करता है। निराशावाद एक संक्रामक रोग है। एक निराशावादी व्यक्ति जगत् में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है। आशावादी बनिए तथा सर्वव्यापक आत्मा में आनन्दित रहिए। जीवन की किसी भी परिस्थिति में अत्यधिक प्रसन्न एवं प्रफुल्लित रहने का प्रयास करिए। इसके लिए आपको अभ्यास करना होगा।

हठधर्मिता (Pig-headedness)

हठधर्मिता तामसिक हठ अथवा जिद है। यह तमोगुण से उत्पन्न प्रवृत्ति है। एक हठी व्यक्ति अपने ही मूर्खतापूर्ण विचारों को दृढ़तापूर्वक पकड़े रहता है। मैंने एक युवा साधक को निर्देश दिये, "जूते पहन कर तथा अपने दोनों हाथों में थालियाँ लेकर पहाड़ी पर मत चढ़ो, आप गिर जाओगे।" मैंने उसे एक यूरोपीय महिला का उदाहरण दिया जो बद्री की पहाड़ियों के समीप एक हिमालयन औषधि लेने के प्रयास में पर्वत शिखर से गिर पड़ी तथा तत्काल मृत्यु को प्राप्त हुई। उसे मैंने लखनऊ विश्वविद्यालय के भूविज्ञान के व्याख्याता का भी उदाहरण दिया जो लक्ष्मणझूला क्षेत्र में एक शिला के विषय में शोध करते समय पर्वत से गिर गये तथा मृत्यु को प्राप्त हुए। उस युवा साधक ने मेरे शब्दों को नहीं सुना। वह अत्यन्त हठी था। मेरे स्पष्ट निर्देशों के बावजूद, वह जूते पहन कर तथा दोनों हाथों में थालियाँ लेकर टिहरी की पहाड़ियों पर चढ़ा। यह हठधर्मिता का स्पष्ट उदाहरण है। इस प्रकार के साधक आध्यात्मिक पथ पर प्रगति नहीं कर सकते हैं। आपको मन की इस कुवृत्ति का नाश करना चाहिए। आपको किसी सन्त अथवा अन्य किसी स्रोत से सन्निर्देश प्राप्त करने हेतु सदैव उत्सुक रहना चाहिए। आपको सत्य को स्वीकार अथवा ग्रहण करने हेतु सदैव तत्पर रहना चाहिए चाहे उसका स्रोत कुछ भी हो।

अल्पचौर्य (Pilfering Habit)

स्तेय अथवा चोरी की आदत अत्यन्त बुरी है। यह अनुकूल परिस्थिति प्राप्त करने पर गम्भीर अपराध में विकसित हो सकती है। यदि साधक पूर्ण अस्तेय में स्थित नहीं है, तो वह आध्यात्मिक पथ पर लेश मात्र प्रगति की भी आशा नहीं कर सकता है। वह पाँच घण्टों तक श्वास रोक सकता है, मध्याह्न के सूर्य पर त्राटक का अभ्यास कर सकता है, वह तीन महीने तक स्वयं को भूमि के नीचे रख सकता है अथवा वह अनेक अद्भुत यौगिक करतब दिखा सकता है; परन्तु ये सब निरर्थक हैं यदि उसे चोरी करने की आदत है। उसे एक सप्ताह अथवा एक माह तक सम्मान प्राप्त होगा। जब वह चोरी करना प्रारम्भ कर देगा, तो जन सामान्य द्वारा तिरस्कृत ही होगा।

व्यक्तियों के बाह्य रूप से धोखा मत खाइए। इस अनोखी घटना को सुनिए। एक अत्यन्त विद्वान् पण्डित एक धनी कुलीन व्यक्ति का अतिथि था। उन पण्डित को समस्त वेद-उपनिषद् कण्ठस्थ थे तथा उन्होंने बहुत अधिक तपस्या भी की थी। वह अपने भोजन में संयम बरतते थे तथा अत्यन्त अल्प मात्रा में आहार लेते थे। वह अपना एक क्षण भी अनावश्यक रूप से व्यर्थ नहीं गँवाते थे। वह सदैव धार्मिक पुस्तकों के स्वाध्याय, पूजा, जप तथा ध्यान में संलग्न रहते थे। गृहस्वामी उनका बहुत सम्मान करते थे। इस विद्वान् पण्डित ने एक दिन घर की कुछ वस्तुएँ चुरा लीं। वे वस्तुएँ बिलकुल मूल्यवान् नहीं थीं। प्रारम्भ में पण्डित जी ने चोरी करना अस्वीकार किया। परन्तु बाद में उन्होंने स्वीकार किया तथा क्षमा-याचना भी की। क्या कोई एक तपस्वी-विद्वान् पण्डित को चोर मानेगा ? चोरी की सूक्ष्म वृत्ति उनके मन में छिपी हुई थी; उन्होंने आत्म-विश्लेषण तथा उचित साधना द्वारा इसका निराकरण नहीं किया था। उन्होंने केवल अपनी जिह्वा पर कुछ सीमा तक नियन्त्रण किया था तथा कुछ धर्मग्रन्थों को कण्ठस्थ किया था।

अविचारपूर्वक-पक्षपात अर्थात् पूर्वाग्रह (Prejudice)

न्यायपूर्ण एवं निष्पक्ष निर्णय लेने के लिए आवश्यक तथ्यों एवं कारणों के परीक्षण के बिना कोई निर्णय लेना अथवा धारणा बना लेना पूर्वाग्रह अथवा पूर्वधारणा है। यह किसी के पक्ष में अथवा उसके विरुद्ध अतर्कसंगत पूर्वधारणा है। यह पक्षपात है। इसके विनाशात्मक प्रभावों को सद्भावना द्वारा दूर किया जा सकता है।

पूर्वाग्रह सत्य का द्वार बन्द कर देता है तथा प्रायः विनाशात्मक त्रुटि की ओर ले जाता है।

पूर्वाग्रह एक कुहरा है जो आपकी दृष्टि को धुँधली कर देता है तथा अच्छे एवं शुभ वस्तु-पदार्थों को आवृत्त कर देता है।

पूर्वाग्रही व्यक्ति कभी किसी के लिए अच्छा नहीं बोलते हैं तथा जिनसे वे द्वेष करते हैं, उनके लिए कभी अच्छा सोचते भी नहीं हैं।

पूर्वाग्रह अज्ञान की सन्तान है। यह प्रगति के मार्ग में महान् बाधा है।

जब निर्णयशक्ति दुर्बल होती है, तब पूर्वाग्रह प्रबल होता है।

पूर्वाग्रह भावना, कल्पना एवं संगति पर आधारित होता है। यह सदैव प्रतिकूल होता है।

पूर्वाग्रह किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के प्रति अनुचित-अयुक्तिसंगत विद्वेष है। यह मन-मस्तिष्क को कठोर बना देता है। मस्तिष्क वस्तुओं को उनके वास्तविक रूप में देखने के लिए समुचित रूप से कार्य नहीं कर पाता है। व्यक्ति विचारों में मतभेद सहन नहीं कर सकते हैं। यह असहिष्णुता है। धार्मिक असहिष्णुता तथा पूर्वाग्रह भगवद्-साक्षात्कार के पथ की महान् बाधाएँ हैं। कुछ रूढ़िवादी संस्कृत पण्डित दृढ़तापूर्वक ऐसा मानते हैं कि केवल संस्कृत जानने वाले व्यक्ति ही भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे। वे सोचते हैं कि अँग्रेजी जानने वाले संन्यासी असभ्य हैं तथा उन्हें आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं हो सकता है। इन धर्मान्ध पण्डितों की मूर्खता को देखिए। ये तुच्छमना- संकीर्णहृदयी एवं कुटिल हैं। किसी भी धर्मग्रन्थ के प्रति पूर्वाग्रह होने से व्यक्ति उसमें दिये गये सत्यों को ग्रहण नहीं कर सकता है। एक मनुष्य कुरान, बाइबल, जेन्द अवेस्ता अथवा भगवान् बुद्ध की पुस्तकों का अध्ययन करके तथा उनकी शिक्षाओं का पालन कर साक्षात्कार प्राप्त कर सकता है।

साधकों को सब प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त होने का प्रयास करना चाहिए। तभी वे सर्वत्र सत्य का दर्शन कर सकते हैं। सत्य किसी वर्ग विशेष का एकाधिकार नहीं है। सत्य, राम, कृष्ण एवं जीसस सबके हैं। सम्प्रदायवादी तथा मतान्ध व्यक्ति स्वयं को एक छोटे से क्षेत्र तक सीमित कर लेते हैं। वे विशालहृदयी नहीं होते हैं। वे अपनी ईर्ष्यापूर्ण दृष्टि के कारण अन्य व्यक्तियों एवं सम्प्रदायों के गुणों को नहीं देख सकते हैं। वे सोचते हैं कि केवल उनकी धारणाएँ एवं सिद्धान्त अच्छे हैं। वे अन्य व्यक्तियों के साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करते हैं। वे मानते हैं कि केवल उनका सम्प्रदाय श्रेष्ठ है तथा केवल उनके आचार्य भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति हैं। वे सदैव अन्य व्यक्तियों से झगड़ा करते हैं। अपने गुरु की प्रशंसा करने तथा उनकी शिक्षाओं की अनुपालना करने में कोई हानि नहीं है, परन्तु व्यक्ति को अन्य सन्तों एवं धर्मगुरुओं की शिक्षाओं का भी उतना ही सम्मान करना चाहिए। केवल तभी वैश्विक प्रेम तथा वैश्विक भ्रातृत्व की भावनाओं का विकास होगा। इससे अन्ततः समस्त प्राणियों में भगवद्-दर्शन अथवा आत्म-दर्शन का मार्ग प्रशस्त होगा। पूर्वाग्रह, असहिष्णुता, मतान्धता तथा सम्प्रदायवादिता का पूर्णतया नाश किया जाना चाहिए। पूर्वाग्रह तथा असहिष्णुता द्वेष के ही रूप हैं।

नैतिक एवं आध्यात्मिक गर्व (Moral and Spiritual Pride)

जैसे ही किसी साधक को कुछ आध्यात्मिक अनुभव अथवा सिद्धि प्राप्त होते हैं, वह गर्व एवं अभिमान से भर जाता है। वह स्वयं को बहुत श्रेष्ठ मानने लगता है। वह स्वयं को अन्यों से पृथक् कर लेता है। वह अन्य व्यक्तियों

के साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार करता है। वह सबके साथ मिलजुल कर नहीं रह सकता है। यदि किसी अन्य में वह कुछ नैतिक गुण यथा सेवा अथवा आत्म-त्याग का भाव अथवा ब्रह्मचर्य पालन देखता है, तो वह कहता है, "मैं पिछले बारह वर्षों से अखण्ड ब्रह्मचारी हूँ। मेरे समान पवित्र कौन है? मैं चार वर्ष तक शाक-पत्ते एवं चने खा कर रहा। मैंने एक आश्रम में दस वर्ष तक सेवा की है। कोई मेरे समान सेवा नहीं कर सकता है।" जिस प्रकार सांसारिक व्यक्ति धन के गर्व से उन्मत्त होते हैं, उसी प्रकार कुछ साधु-संन्यासी अपने नैतिक गुणों पर गर्वित होते हैं। इस प्रकार का गर्व भी भगवद्-साक्षात्कार के पथ की एक गम्भीर बाधा है। जब तक व्यक्ति आत्म-प्रशंसा में लगा रहता है, तब तक वह वही क्षुद्र जीव ही है। वह दिव्यता प्राप्त नहीं कर सकता है।

विलम्बन-दीर्घसूत्रना (Procrastination)

विलम्बन अथवा दीर्घसूत्रता संकल्पहीनता या आलस्य के कारण किसी कार्य को भविष्य के लिए टाल देना है। यह विलम्बकारिता है। यह स्थगित करना अथवा देरी करना है।

दीर्घसूत्रता समय का चोर है अर्थात् समय को व्यर्थ गँवाना है। यह उपक्रम शक्ति अथवा पहल शक्ति की नाशक है। यह उन्नति-प्रगति के द्वार को बन्द कर देती है।

भविष्य वाला 'कल' कभी नहीं आयेगा। किसी भी कार्य को 'कल' के लिए छोड़ना अत्यधिक विलम्ब करना है। जो आने वाले कलों में सफलता एवं मोक्ष देखता है, वह आज असफल रहेगा तथा पतनोन्मुख होगा। आने वाला कल आज के समान ही होगा।

मूर्ख व्यक्ति कहता है, "मैं 'कल' जल्दी उठूँगा। मैं 'कल' प्रार्थना एवं ध्यान करूँगा। मैं अपने संकल्पों को 'कल' क्रियान्वित करूँगा।" परन्तु एक विवेकी व्यक्ति 'आज' जल्दी उठता है, 'आज' प्रार्थना एवं ध्यान करता है, अपने संकल्पों को 'आज' ही क्रियान्वित करता है तथा 'आज' ही शक्ति, शान्ति एवं सफलता प्राप्त करता है।

जो कार्य आप आज प्रातः काल कर सकते हैं, उसे सायंकाल तक के लिए स्थगित नहीं करिए। जो कार्य आप आज कर सकते हैं, उसे कल के लिए मत टालिए।

'कल' केवल मूर्खों के कलैण्डर में ही पाया जाता है।

आज ही बुद्धिमान्-विवेकी बनिए। कल तक के लिए देर मत करिए। कल का सूर्य कभी उदित नहीं हो सकता। 'बाद में कर लेंगे' (By and by)- यह हानिकारक है। आप 'बाद में कर लेंगे' (By and by) के मार्ग द्वारा 'कभी-नहीं' (Never) के घर पहुँच सकते हैं।

अतिव्यय (Prodigality)

अतिव्यय अधिक खर्च करना है। यह बिना आवश्यकता के धन व्यय करना है। एक अतिव्ययी व्यक्ति अपना धन व्यर्थ गँवाता है। वह अनावश्यक रूप से खर्च करता है।

वह अपना धन द्यूतक्रीड़ा, मदिरापान आदि व्यसनों में खर्च करता है तथा स्वयं अपने विनाश का कारण बनता है।

वह निर्धनता, कष्ट एवं अपमानपूर्ण जीवन जीने को विवश हो जाता है। वह अनेक दुर्गुणों से ग्रस्त हो जाता है।

वह प्रारम्भ में असंयमी एवं भोगविलासी होता है तथा अन्ततः भोजन प्राप्त करने में भी असमर्थ हो जाता है। वह जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाता है। वह एक दुःखमय जीवन व्यतीत करता है।

ऐसा कहा जाता है कि बीस वर्ष में अतिव्ययी व्यक्ति सत्तर वर्ष का होने पर कृपण बन जाता है।

धन को समाज सेवा के कार्यों में व्यय करिए। अत्यधिक उदार बनिए, परन्तु अतिव्ययी नहीं बनिए। धन को व्यर्थ मत गँवाइए।

प्रतिशोध (Revenge)

प्रतिशोध लेने से अभिप्राय आघात अथवा हानि के बदले अत्यन्त दुर्भावना एवं द्वेषपूर्ण रूप से दण्डित करना अथवा आघात पहुँचाना है। यह बदला लेने की तीव्र इच्छा है।

यदि कोई आपको आघात पहुँचाता है, तो उसकी उपेक्षा करिए, उसे क्षमा कर दीजिए। तब विषय यहीं समाप्त हो जाता है। आपको मन की शान्ति प्राप्त होगी।

प्रतिशोध एक सामान्य संवेग है। प्रेम का धर्म इसकी कड़ी भर्त्सना-निन्दा करता है। प्रतिशोध के समान अन्य कोई भावना मनुष्य का इतना पतन नहीं करती है।

प्रतिशोध लेना वीरता नहीं है। अपमान-आघात को सहन करना वस्तुतः वीरता, शक्ति एवं विजय का प्रतीक है।

प्रतिशोध लौटकर पुनः आपके पास आता है तथा आपके हृदय को गहरी चोट पहुँचाता है। प्रतिशोध आत्म-उत्पीड़क है। अतः प्रतिशोध मत लीजिए। भूल जाइए तथा क्षमा कर दीजिए।

प्रतिशोध का भाव आसुरी भाव है।

यदि कोई व्यक्ति अपने द्वेषपूर्ण स्वभाव के कारण आपको क्षति पहुँचाता है, यह एक काँटे की भाँति है जो चुभता है। इस पर ध्यान मत दीजिए। सदय बनिए। उससे प्रेम करिए। वह दुर्बल एवं अज्ञानी है। वह नहीं जानता है कि वह क्या कर रहा है।

प्रतिशोध की भावना व्यक्ति को अधिक क्रूर एवं निर्दयी बनाती है। कुछ स्त्रियों को प्रतिशोध प्रिय होता है।

प्रतिशोध आपके रक्त में उष्णता उत्पन्न करता है तथा अनेक रोगों का कारण बनता है। यह आपके हृदय को सन्तप्त कर शान्ति भंग करता है। अतः प्रतिशोध मत लीजिए।

प्रतिकार (Retaliation) एवं प्रतिशोध (Revenge) व्यक्तिगत तथा प्रायः अत्यन्त दुःखप्रद होते हैं। प्रतिकार आंशिक अथवा अधूरा हो सकता है। प्रतिशोध से तात्पर्य पूर्ण तथा अत्यधिक उग्र बदला होता है।

प्रतिहिंसा अथवा प्रत्यपकार (Vengeance) जिसे पहले न्याय की रोषपूर्ण रक्षा करना माना जाता था, अब अत्यधिक उग्र प्रतिशोध का प्रतीक है।

प्रतिशोध व्यक्तिगत आघात के बदले व्यक्तिगत आघात पहुँचाना है; प्रतिहिंसा अथवा प्रत्यपकार जिनके प्रति की जाये, वह उनके लिए दण्डस्वरूप है। प्रतिदान (Requital) प्राप्त किये हुए के समान लौटाना है, यह अच्छा अथवा बुरा दोनों हो सकता है।

प्रत्यपकार एवं दण्ड न्यायोचितता का भाव प्रकट करते हैं। प्रत्यपकार, चाहे वह देवता अथवा मानव द्वारा हो, अधिक व्यक्तिगत होता है; दण्ड न्यायसंगत विधि अथवा कानून के भंग करने पर दिया जाता है।

दया, करुणा, क्षमा, अनुग्रह, माफी एवं समझौता प्रतिशोध के विपरीतार्थी शब्द हैं।

धृष्टता (Rudeness)

धृष्टता अभद्रता, कठोरता एवं अशिष्टता है। धृष्टता असभ्य स्वभाव है। यह पाशविक स्वभाव है। यह उग्र एवं बर्बर स्वभाव है। यह अज्ञान से उत्पन्न होती है। यह तमोगुण की सन्तान है।

यह संस्कृति, अच्छे पालन-पोषण, अच्छे संस्कारों एवं अच्छी शिक्षा के अभाव के कारण स्वभाव में आती है।

व्यक्ति कोई भी हो तथा कहाँ भी हो, वह सदैव गलत ही कहा जायेगा यदि वह धृष्ट है।

धृष्टता वाणी अथवा व्यवहार की अभद्रता-अशिष्टता में परिलक्षित होती है।

एक धृष्ट व्यक्ति अपमानजनक रूप से स्पष्टवादी अथवा असभ्य होता है। वह अविनीत होता है। वह उद्दण्ड, ढीठ एवं उद्धत होता है।

हम कहते हैं, "श्रीमान् क एक धृष्ट व्यक्ति हैं। वह अभद्र-अशिष्ट भाषा का प्रयोग करते हैं।"

धृष्टता कोमलता, सुसंस्कृतता एवं शिष्टता के अभाव से परिलक्षित होती है, क्योंकि उस व्यक्ति का सभ्य-विनीत व्यवहार से परिचय नहीं हुआ है अथवा उसे ऐसे व्यवहार का प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है।

एक धृष्ट व्यक्ति असभ्य होता है। उसमें सुसंस्कृतता अथवा सौजन्यता नहीं होती है। वह गँवारु-असभ्य होता है। उसमें सुरुचि, शुद्धता एवं चारुता का अभाव होता है। धृष्टता हिंसा, कठोरता एवं क्रूरता द्वारा प्रदर्शित होती है।

विनम्रता, विनीतता, शिष्टता, सुसंस्कार, चारुता, शिष्ट स्वभाव, सौम्यता, कोमलता एवं मधुरता का विकास करिए। धृष्टता स्वयमेव समाप्त हो जायेगी।

सौम्य बनिए। मृदु बनिए। कोमल बनिए। विनीत एवं शिष्ट बनिए। आप अनेक मित्रों को प्राप्त करेंगे। आप सबके प्रिय बनेंगे। आपको आदर-सम्मान प्राप्त होगा।

अहंता अथवा स्वाग्रह (Self-assertion)

स्वाग्रही स्वभाव आध्यात्मिक पथ की एक महान् बाधा है। यह रजस् से उत्पन्न एक दुर्गुण है। मिथ्याभिमान एवं दम्भ इसके साथी हैं। जो साधक इस स्वभाव का दास है, वह स्वयं को एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति प्रदर्शित करना चाहता है। वह स्वयं को अनेक सिद्धियों से युक्त एक महान् योगी के रूप में प्रस्तुत करता है। वह कहता है, "मैंने योगमार्ग पर अत्यधिक उन्नति कर ली है। मैं अनेक लोगों को प्रभावित कर सकता हूँ। योग के क्षेत्र में मेरे समान कोई नहीं है। मेरे पास अनेक सिद्धियाँ हैं।" वह अन्य व्यक्तियों से आदर-सम्मान प्राप्ति की अपेक्षा करता है। वह तुरन्त क्षुब्ध-क्रुद्ध हो जाता है यदि वे उसे प्रणाम नहीं करते हैं, उसका सम्मान नहीं करते हैं। वह अपना पद-प्रतिष्ठा बनाये रखना चाहता है। ऐसा साधक अपने गुरु के निर्देशों पर ध्यान नहीं देता है। वह अपने मार्ग पर चलता है। वह गुरु के प्रति आज्ञाकारी होने का दिखावा करता है, परन्तु प्रत्येक पग पर उसका अहंकार सिर उठाता है। वह गुरु की अवज्ञा करता है तथा अनुशासन भंग करता है। वह संस्था में अव्यवस्था, मतभेद एवं विद्रोह उत्पन्न करता है। वह स्वयं का दल बनाता है। वह महात्माओं, योगियों, संन्यासियों एवं भक्तों की निन्दा करता है। उसकी शास्त्रों तथा सन्तों के वचनों में श्रद्धा नहीं होती है। वह अपने गुरु का भी अपमान करता है। वह अपना पद बनाये रखने अथवा अपने दुष्कृत्यों को छिपाने हेतु झूठ भी बोलता है। एक झूठ को छिपाने हेतु वह अनेक झूठ बोलता है। वह तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर बोलता है।

आत्माभिमान (Self-conceit)

आत्माभिमान स्वयं के विषय में, स्वयं के गुणों, योग्यताओं एवं उपलब्धियों के विषय में अत्यधिक उच्च अवधारणा है। यह मिथ्याभिमानिता है।

एक मूर्ख व्यक्ति सोचता है कि वह सब कुछ जानता है। वह कुछ नहीं सीखेगा।
आत्माभिमानी व्यक्ति अपनी त्रुटियों, दोषों एवं दुर्बलताओं को खोजने में असमर्थ होता है। उसकी बुद्धि भ्रमित-कुंठित होती है। उसकी बुद्धि मलिन एवं उन्मत्तता की अवस्था में होती है। अभिमान मदिरा, अफीम तथा अन्य मादक पदार्थों से अधिक उन्मत्तकारी होता है।

आत्माभिमानी व्यक्ति सदैव अपने विषय में बात करेगा।

आत्माभिमान तथा दम्भ जुड़वाँ भाई हैं। वे एक ही भावना के दो भिन्न प्रकार हैं।

आत्माभिमानी व्यक्ति सदैव दूसरों से प्रशंसा प्राप्त करने के प्रयास में लगा रहता है।

आप जितना अधिक स्वयं के विषय में बात करते हैं, उतना अधिक झूठ बोलने की सम्भावना है।

आत्माभिमान अहंकार एवं मिथ्याभिमान की जिह्वा है अर्थात् उनके प्रकटीकरण का माध्यम है। आत्माभिमानी व्यक्ति सबको उबाता-थकाता है।

यदि आप चाहते हैं कि अन्य व्यक्ति आपके विषय में अच्छा बोलें, प्रशंसा करें, तो आप स्वयं के विषय में कभी अच्छा नहीं बोलिए।

स्वयं पर गर्व करने वाला व्यक्ति अपने विषय में इतना अधिक बोलता है कि वह अन्य व्यक्तियों को बोलने का समय नहीं देता है। आप ऐसे व्यक्ति से न्याय की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं।

ऐसा व्यक्ति प्रशंसा का दास होता है। वह उस प्रत्येक व्यक्ति का दास होता है जो उसकी चाटुकारिता करते हैं। वह प्रत्येक द्वारा मूर्ख बनाया जाता है। आत्माभिमान सर्वाधिक हास्यास्पद एवं घृणास्पद दुर्गुण है।

इस निकृष्ट दुर्गुण का विनम्रता एवं विनय द्वारा नाश करिए तथा शान्ति प्राप्त करिए।

आत्म-प्रतिपादन (Self-justification)

यह एक साधक के लिए अत्यन्त अनिष्टकारक आदत है। यह एक पुरानी आदत है। स्वाग्रह, आत्म-तुष्टि, हठधर्मिता, पाखण्ड तथा झूठ बोलना आत्म-प्रतिपादन के ही परिजन हैं। जिस साधक में यह आदत है वह कभी स्वयं को सुधार नहीं सकता है क्योंकि वह कभी अपनी त्रुटि-दोष को स्वीकार नहीं करेगा। वह विभिन्न विधियों द्वारा स्वयं को उचित सिद्ध करने हेतु सदैव यथाशक्य प्रयास करेगा। वह अपने मिथ्या कथनों को सत्य प्रमाणित करने हेतु अनेकों झूठ बोलने में नहीं हिचकिचायेगा। वह एक झूठ को छिपाने हेतु दूसरा झूठ बोलेगा तथा इस प्रकार अनन्त झूठ बोलेगा। एक साधक को तुरन्त अपनी त्रुटियों, दोषों एवं दुर्बलताओं को सदैव स्वीकार करना चाहिए। केवल तभी, वह स्वयं को शीघ्र सुधार सकता है।

स्वार्थपरता (Selfishness)

स्वार्थपरता स्वार्थी होने का गुण अथवा अवस्था है।

एक स्वार्थी व्यक्ति पूर्णतया अथवा मुख्यतया अपने विषय में सोचता है। वह अन्यों के विषय में नहीं सोचता है। वह इस विचार के साथ कार्य करता है कि उसे किस कार्य से अधिकतम सुख मिलेगा।

जो व्यक्ति स्वयं के प्रति आसक्त है, वह स्वयं का शत्रु है। वह शत्रुओं से ही घिरा है। जो व्यक्ति स्वयं का त्याग करता है, वह स्वयं अपना उद्धारक-रक्षक है। वह सदैव मित्रों से घिरा रहता है।

हे मानव! परमाणु बम से अधिक भयावह मानव की स्वार्थपरता है। अतः उससे अधिक भयभीत होइए।

स्वार्थपरता विश्व की समस्त समस्याओं का कारण है। यह समस्त बुराइयों की जड़ है। यह प्रसन्नता के लिए अभिशाप है। यह घृणास्पद दुर्गुण है। यह आध्यात्मिकता को नष्ट करती है। यह शान्ति की घोर शत्रु है।

स्वार्थपरता प्रयास को मात्र अपने उद्देश्यों की पूर्ति के संकीर्ण क्षेत्र तक सीमित कर देती है, समस्त कोमल भावनाओं को नष्ट करती है तथा अन्ततः व्यक्ति के कल्याण ही नहीं अपितु उसके स्वयं के सुख के लिए भी घातक सिद्ध होती है।

स्वार्थपरता संसार की समस्त समस्याओं एवं युद्धों का आधार है। यह समस्त राष्ट्रीय एवं नैतिक बुराइयों की जड़ तथा स्रोत है। यह स्वयं संसार की मुख्यतम बुराई है।

सुख की नाशक स्वार्थपरता को वैश्विक प्रेम, स्वार्थहीनता तथा निःस्वार्थता के अभ्यास द्वारा समाप्त करिए। स्वार्थपरता आपके आध्यात्मिक स्वभाव को नष्ट करती है।

एक स्वार्थी व्यक्ति मात्र स्वयं को लाभान्वित करने हेतु जीता है।

स्वार्थपरता समस्त पापों का मूल है।

स्वार्थपरता कुष्ठरोग है। स्वार्थपरता कैन्सर है।

स्वार्थपरता घर की संकीर्ण दीवारों के भीतर उदारता है। एक स्वार्थी व्यक्ति अपनी पत्नी एवं सन्तानों को सुख-सुविधापूर्ण जीवन देता है।

विषय भोग एक स्वार्थी व्यक्ति का मुख्य उद्देश्य है। स्वार्थपरता इन्द्रियों के माध्यम से कार्य करती है। अतः एक स्वार्थी व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को पूर्ण स्वतन्त्रता देता है।

स्वार्थपरता अन्य व्यक्तियों के विषय में विचार किये बिना स्वयं के सुख एवं लाभ के विषय में अत्यधिक चिन्तित रहने का स्वभाव अथवा आचरण है; यह युक्ति-संगत स्व-सम्मान अथवा स्व-प्रेम से भिन्न है।

एक स्वार्थी व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की इच्छाओं, अधिकारों एवं सुविधाओं की उपेक्षा करते हुए स्वयं की इच्छाओं-उद्देश्यों की पूर्ति में संलग्न रहता है।

स्व-प्रेम स्वयं के सुख एवं कल्याण के विषय में उचित विचार करना है जो अन्य व्यक्तियों के प्रति न्याय, उदारता एवं कल्याण भाव के पूर्णतया अनुरूप होता है। स्व-प्रेम उच्च स्तर के प्रयासों तथा स्व-सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

स्वार्थपरता युद्ध का कारण है। स्वार्थपरता, लोभ एवं कामवासना साथ-साथ रहते हैं।

नैतिकता के स्वार्थपूर्ण सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति बिना किसी स्वार्थपूर्ण उद्देश्य के कार्य करने में अक्षम है।

निःस्वार्थता, उदारता एवं उदारहृदयता द्वारा स्वार्थपरता को नष्ट करिए तथा एक निःस्वार्थ कर्मयोगी बनिए।

अलं बुद्धि अर्थात् अपनी योग्यता-सामर्थ्य को पर्याप्त मान लेना

(Self-sufficiency)

अलं बुद्धि मन रूपी झील की एक अन्य कुवृत्ति है। यह भी रजस् एवं तमस् के मिश्रण से उत्पन्न होती है। यह आध्यात्मिक पथ में एक बाधास्वरूप है। इस दुर्गुण से युक्त साधक मूर्खतापूर्वक सोचता है कि वह सब जानता है। वह अपने अल्प ज्ञान एवं उपलब्धियों से पूर्ण सन्तुष्ट रहता है। वह अपनी साधना को विराम दे देता है। वह अधिक ज्ञान प्राप्त करने का कभी प्रयत्न नहीं करता है। वह 'भूमा' के सर्वोच्च ज्ञान की प्राप्ति हेतु कभी प्रयास नहीं करता है। वह नहीं जानता है कि उसके अल्प ज्ञान के परे ज्ञान का विशाल भण्डार है। वह उस कूपमण्डूक की भाँति है जिसे सागर का ज्ञान नहीं है तथा जो सोचता है कि उसका कूप ही जल का एकमात्र असीम क्षेत्र है।

एक अलं बुद्धि सम्पन्न व्यक्ति मूर्खतापूर्वक सोचता है, "मैं सब कुछ जानता हूँ। मेरे लिए अन्य कुछ जानने को शेष नहीं है।" माया उसके मन पर गहरा आवरण डाल देती है। ऐसे व्यक्ति का मन भ्रमित, बोध अस्पष्ट तथा बुद्धि विकृत होती है।

अलं बुद्धि माया का एक प्रबल अस्त्र है जिसके द्वारा वह व्यक्तियों को भ्रमित करती है तथा एक साधक की साधना को विराम लगा देती है। वह उसे आगे बढ़ने तथा आवरण के परे देखने नहीं देती है, क्योंकि अलं बुद्धि के कारण साधक मिथ्या सन्तुष्टि से पूर्ण होता है।

एक अलं बुद्धि युक्त वैज्ञानिक, जिसे इलेक्ट्रान तथा भौतिक जगत् के सिद्धान्तों का ज्ञान है, सोचता है कि इससे परे कुछ नहीं है। एक नैतिकतावादी कुछ नैतिक गुणों का विकास करने के पश्चात् सोचता है कि इससे परे कुछ नहीं है। अलं बुद्धियुक्त योग-साधक जिसे अनाहत नाद तथा प्रकाश का कुछ अनुभव हो गया है, वह सोचता है कि इससे आगे कुछ नहीं है। श्रीमद्भगवद्गीता एवं उपनिषद् कण्ठस्थ करके कुछ संन्यासी सोचते हैं कि इसके परे कुछ नहीं है। इस प्रकार का योगी अथवा वेदान्ती निम्न स्तर की समाधि का अनुभव प्राप्त करने के उपरान्त सोचता है कि इसके आगे कुछ नहीं है। ये सब अन्धकार में भटक रहे हैं। वे नहीं जानते हैं कि पूर्णता क्या है?

माया प्रत्येक कदम पर साधक की परीक्षा लेती है; वह एक गिरगिट अथवा असुर की भाँति विभिन्न वर्ण एवं वेश धारण कर साधक के समक्ष प्रकट होती है। उसकी उपस्थिति को पहचान पाना अत्यन्त कठिन होता है। परन्तु जिसे जगन्माता का अनुग्रह प्राप्त हो गया है, उसे प्रगति करने में किसी कठिनाई का अनुभव नहीं करना पड़ेगा। वे स्वयं उसे अपने हाथों में उठाकर अपने स्वामी भगवान् शिव के पास ले जाकर उनसे परिचय करवाती हैं तथा उसे अविचल निर्विकल्प समाधि में प्रतिष्ठित करती हैं।

एक साधक को सदैव इस प्रकार सोचना चाहिए, "मैं जो जानता हूँ, वह अत्यन्त अल्प है। यह अंजलिभर ज्ञान है। जो मुझे अभी जानना शेष है, वह ज्ञान सागरवत् विशाल है।" केवल तभी उसमें आगे अथवा अधिक जानने की तीव्र उत्कण्ठा जाग्रत होगी।

विक्षेप (Shilly-shallying)

विक्षेप मन का इधर-उधर भटकना है। यह मन की पुरानी आदत है। समस्त साधक इस समस्या के विषय में शिकायत करते हैं। मन किसी एक विषय पर लम्बे समय तक नहीं टिकता है। यह एक बन्दर की भाँति इधर-उधर उछलता-कूदता है। यह सदैव अशान्त-उद्विग्न रहता है। ऐसा रजस् की शक्ति के कारण होता है। जब भी श्री जयदयाल गोयन्दका जी मुझसे भेंट करने आते थे, वे सदैव दो प्रश्न पूछा करते थे, "स्वामी जी, निद्रा पर नियन्त्रण का क्या उपाय है ? मन के विक्षेप को कैसे दूर करें? मुझे सरल एवं प्रभावकारी विधि बताइए।" मेरा उत्तर होता था, "रात्रि में हल्का आहार लें। शीर्षासन एवं प्राणायाम करें। इससे निद्रा पर विजय प्राप्त की जा सकती है। त्राटक, उपासना एवं प्राणायाम द्वारा विक्षेप दूर होगा।" संयुक्त अथवा समन्वित विधि अपनाना श्रेष्ठ है। यह अधिक प्रभावकारी होगी। महर्षि पतञ्जलि विक्षेप के मूल कारण 'रजस्' के नाश तथा एकाग्रता प्राप्ति हेतु प्राणायाम के अभ्यास का निर्देश देते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्री कृष्ण विक्षेप दूर करने हेतु एक साधना बताते हैं, "कल्पना से उद्भूत समस्त इच्छाओं को पूर्ण रूप से त्याग कर तथा मन के द्वारा सब ओर से इन्द्रिय-समूह को वशीभूत करके, धीरे-धीरे दृढ़ संकल्प के साथ बुद्धि को नियन्त्रित करके मन को आत्मा में स्थित कर अन्य कोई चिन्तन मत करिए। जिस-जिस निमित्त से यह चंचल-अस्थिर मन इधर-उधर भटकता है, उसे वहाँ से हटाकर आत्मा में स्थित करिए।"

(अध्याय **६-२४, २५**, २६) विक्षेप के नाश हेतु त्राटक एक प्रभावशाली उपाय है। भगवान् श्री कृष्ण के चित्र अथवा दीवार में एक काले बिन्दु पर आधा घण्टे तक त्राटक का अभ्यास करिए। पहले दो मिनट तक करिए तथा धीरे-धीरे अवधि बढ़ाते जाइए। अश्रु आने पर नेत्र बन्द कर लीजिए। पलकों को बिना झपकाये वस्तु पर एकटक दृष्टि लगाये रखिए। नेत्रों पर दबाव मत डालिए।

कुछ साधक २ अथवा ३ घण्टे तक त्राटक कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में पूर्ण विवरण हेतु मेरी पुस्तक 'कुण्डलिनी योग' का अध्ययन करिए।

लज्जा-संकोच (Shyness)

लज्जा जीवन में सफलता के पथ पर एक महान् बाधा है। यह भय अथवा कायरता का एक प्रकार है। लगभग अधिकांश व्यक्तियों में यह दुर्बलता होती है। अनुचित पथ पर चलने अथवा अनुचित कार्य करने के कारण लज्जा आती है। एक लज्जाशील व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के समक्ष अपने विचारों को खुल कर अभिव्यक्त नहीं कर सकता है। वह अन्य व्यक्तियों के नेत्रों में सीधे नहीं देख सकता है। वह भूमि पर देखते हुए बात करेगा। वह किसी अपरिचित से साहसपूर्वक बात नहीं कर सकता है। इस प्रकार का व्यक्ति ऑफिस अथवा व्यवसाय में समुचित रूप में कार्य नहीं कर सकता है। शील (Modesty) लज्जा नहीं है। शील मर्यादा अथवा पवित्रता है। यह चरित्र के संस्करण तथा विनम्रता से प्राप्त होती है।

जो लज्जाशील हैं, उन्हें अन्य व्यक्तियों के साथ साहसपूर्वक वार्तालाप करने का प्रयास करना चाहिए। उन्हें अन्य व्यक्ति के नेत्रों में देखते हुए बात करनी चाहिए। लज्जा एक महान् दुर्बलता है। साहस के विकास द्वारा इसका शीघ्र निराकरण होना चाहिए।

अभद्र शब्द एवं अपशब्द (Slang Terms and Abuses)

अधिकांश व्यक्तियों को वार्तालाप के मध्य क्षण-क्षण में अभद्र शब्द एवं अपशब्द बोलने की बुरी आदत होती है। जब वे उत्तेजित तथा क्रोधित होते हैं, तो वे अपशब्दों की बौछार करते हैं। शिष्ट एवं सुसंस्कृत व्यक्ति कभी ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं करते हैं।

कुछ व्यक्ति अन्य देशों में जाने पर पहले उस देश की भाषा में बोले जाने वाले अपशब्दों को सीखने का प्रयास करते हैं। मानव स्वभाव की विचित्रता देखिए। वे भगवान् के नामों को सीखने का प्रयास नहीं करते हैं। कुछ घोड़ागाड़ी एवं बैलगाड़ी चालक घोड़े अथवा बैल को चाबुक लगाते हुए अपशब्दों का प्रयोग करते हैं।

सड़क पर खेलते बालकों को देखिए। वे लड़ाई-झगड़ा करते हैं तथा अभद्र शब्दों का प्रयोग करते हैं। माता-पिता को बालकों को ऐसे शब्दों का प्रयोग करने से रोकना चाहिए। उन्हें स्वयं अपशब्द नहीं बोलने चाहिए। वे अपनी सन्तान के गुरु हैं। बालक उनका ही अनुकरण करते हैं। बालकों में अनुकरण की महान् शक्ति होती है। वार्तालाप करते समय सदैव इन शब्दों के प्रयोग का अभ्यास करिए, 'हरे राम, हरे कृष्ण, हे प्रभु।" क्षण-क्षण में इन शब्दों का उच्चारण करिए। बालकों को भी सिखाइए। यह एक प्रकार से भगवन्नाम का जप हो जायेगा। अपने मन को प्रशिक्षित करिए। अन्य व्यक्तियों को भी अपशब्दों के प्रयोग से रोकिए। बालकों को प्रशिक्षित करना माता-पिता का महत्वपूर्ण कर्तव्य है। उनके कोमल मनों में किसी प्रकार की अच्छी आदत का विकास करने से यह दृढतापूर्वक स्थापित होती है।

दिवाशयन (Sleeping in Daytime)

दिन में सोना एक अन्य बुरी आदत है। यह व्यक्ति को अल्पायु बनाती है। इससे समय भी नष्ट होता है। इससे आलस्य एवं सुस्ती आती है। इसके कारण अपच, जठरशोथ तथा अन्य अनेक रोग हो जाते हैं। यदि आप शीघ्र विकास करना चाहते हैं, तो आपको इस आदत का पूर्णतया त्याग करना चाहिए। प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करिए। समय भाग रहा है, समय अल्प है, मृत्यु प्रतीक्षा कर रही है। प्रत्येक बुरी आदत से मुक्त मनुष्य कितना प्रसन्न होता है। वह जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है तथा स्वयं को योग साधना में गम्भीरतापूर्वक संलग्न कर सकता है।

धूम्रपान की आदत (Smoking Habit)

धूम्रपान करने वाला व्यक्ति कर्मयोग के लिए अनुपयुक्त है। वह अकर्मण्य-आलसी हो जाता है जब उसे सिगरेट नहीं मिलती है। जिस धन का अन्य व्यक्तियों की सेवा में सदुपयोग किया जा सकता है, उसे वह व्यर्थ गँवाता है। एक कर्मयोगी को धूम्रपान की बुरी आदत से पूर्णतः मुक्त होना चाहिए।

धूम्रपान एक बुरी आदत है। धूम्रपान करने वाले अपने समर्थन में दर्शन एवं चिकित्सकीय अवधारणा को प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं, "धूम्रपान से प्रातःकाल पेट पूर्णतः साफ हो जाता है। यह फेफड़ों, मस्तिष्क एवं हृदय के लिए अत्यन्त आनन्दकर है। धूम्रपान के पश्चात् मैं अच्छा ध्यान कर पाता हूँ। फिर मैं इसे क्यों छोड़ू?" कितना गहन दर्शन है उनका ! वे अपनी बुरी आदत के समर्थन में अनेक उत्तम तर्क देते हैं। वे इससे मुक्त होने में असमर्थ हैं। इनमें से कुछ व्यक्ति पाँच मिनट में सिगरेट का पूरा पैकेट समाप्त कर सकते हैं। इस आदत का प्रारम्भ युवावस्था के आरम्भ काल में होता है। एक बहुत कम आयु का युवक उत्सुकता के कारण धूम्रपान करता है। वह अपने बड़े भाई की जेब से एक सिगरेट निकालता है तथा प्रथम बार धूम्रपान करने का प्रयास करता है। इससे उसकी स्नायुओं में अल्प संवेदना होती है, अतः वह प्रतिदिन एक सिगरेट चुराने लगता है। कुछ समय के पश्चात् वह ऐसी स्थिति में पहुँचता है कि कुछ सिगरेट उसके लिए पर्यान नहीं होती हैं। वह अब सिगरेट का पैकेट खरीदने के लिए धन चुराना प्रारम्भ कर देता है। उसके पिता, भाई, बहिन आदि सभी धूम्रपान करते हैं। इस सम्बन्ध में वे इसके गुरु हैं। कितनी भयावह स्थिति है !

माता-पिता ही अपने पुत्र-पुत्रियों के कुमार्गगामी होने के लिए पूर्णतया उत्तरदायी हैं। कोई भी मादक पदार्थ लेना शीघ्र ही बुरी आदत का रूप ले लेता है तथा व्यक्ति का इस आदत को छोड़ पाना कठिन हो जाता है। माया इन बुरी आदतों द्वारा अपना विध्वंसात्मक कार्य करती है। यह उसके कार्यों का रहस्य है। आपको धूम्रपान से लेश मात्र भी लाभ नहीं होगा। कृपया इस अनुचित एवं मूर्खतापूर्ण आदत को छोड़िए। इससे धन का अपव्यय होता है तथा हृदय रोग, मन्दद्दष्टि एवं नेत्रों के अनेक घातक रोग होते हैं। निकोटिन शरीर को विषाक्त करता है। इससे नपुंसकता तथा अनेक स्नायु रोग भी हो जाते हैं।

धूम्रपान तथा इसके परिणामस्वरूप होने वाली निकोटिन-विषाक्तता से निकट द्दष्टि दोष, हृदय का अति स्पन्दन, हृदय का असामान्य रूप से कार्य करना एवं अन्य हृदय रोग, नजला-जुकाम, गले के रोग, श्वास नली में सूजन, शरीर में कंपकंपी तथा मांसपेशियों की दुर्बलता आदि होते हैं। दीर्घावधि तक धूम्रपान करने से निकोटिन शरीर में एकत्रित होता जाता है तथा शरीर के विभिन्न अंगों एवं कार्यों पर हानिकारक प्रभाव डालता है।

किसी भी बुरी आदत में सुधार अत्यन्त सरल है। एक एडवोकेट पन्द्रह वर्ष तक अत्यधिक धूम्रपान करते रहे। उन्होंने एक दिन दृढ़ एवं शक्तिशाली संकल्प द्वारा इसको पूर्णतः त्याग दिया। पहले यह दृढ़तापूर्वक स्वीकार करिए कि आपमें बुरी आदत है तथा फिर दृढ़तापूर्वक विचार करिए कि आपको तुरन्त इस आदत को त्यागना चाहिए। आत्म-निग्रह तथा संयम के लाभों के विषय में सोचिए। तब आपने सफलता प्राप्त कर ही ली है। दृढ़तापूर्वक संकल्प करिए, "मैं इसी क्षण इस अवांछनीय आदत को त्याग दूँगा।" आप सफलता प्राप्त करेंगे। किसी बुरी आदत को तुरन्त त्याग देना श्रेष्ठ है। धीरे-धीरे आदत छोड़ने के प्रयास के परिणाम अधिक सकारात्मक नहीं होते हैं। इसकी पुनरावृत्ति से सावधान रहिए। थोड़ा सा अवसर अथवा प्रलोभन मिलने पर दृढ़संकल्पपूर्वक इससे मुख मोड़िए। कार्य में मन को पूर्णतः व्यस्त रखिए। सदैव व्यस्त रहिए। मन में ऐसी दृढ़ आकांक्षा रखिए, "मुझे एक महान् व्यक्ति बनना है।" ये सभी आदतें अदृश्य हो जायेंगी। दृढ़तापूर्वक इच्छा करिए, "मुझे एक आध्यात्मिक व्यक्ति बनना चाहिए।" सभी बुरी आदतें भाग जायेंगी। बुरी आदतों के निराकरण हेतु अपने अवचेतन मन का उपयोग करिए। यह आपका घनिष्ठ मित्र है जिसके साथ आपको सदैव मित्रता रखनी चाहिए। यह सब ठीक कर देगा। नयी एवं अच्छी आदतों का विकास करिए। अपनी संकल्प शक्ति का भी विकास करिए। कुसंगति का त्याग करिए। विद्वान् साधु-महात्माओं की संगति करिए। उनके दृढ़ सकारात्मक स्पन्दन आपकी बुरी आदतों को पूर्णतः दूर कर देंगे। प्रार्थना, जप तथा ध्यान भी इस बुरी आदत के नाश में सहायक होंगे। इस जगत् में कुछ भी असम्भव नहीं है। जहाँ चाह, वहाँ राह।

शंका-सन्देह (Suspicion)

शंका बिना प्रमाण अथवा दुर्बल प्रमाण के आधार पर कुछ कल्पना करना है। यह अविश्वास है।

बिना प्रमाण अथवा अल्प प्रमाण के साथ यह मान लेना कि कुछ बुरा है अथवा बुरा होने वाला है, शंका कहलाता है। यह सन्देह है।

शंका मन को दूषित करती है। यह मित्रों में भेद उत्पन्न करती है। यह मित्रों को खोती है। यह हृदय का नहीं, मस्तिष्क का दोष है।

शंका-सन्देह क्षुद्र मानसिकता का लक्षण है। एक उदारमना व्यक्ति किसी पर सन्देह नहीं करता है।

शंका व्यवसाय को बाधित करती है, राजाओं को अत्याचार तथा अनिश्चयता की ओर तथा पतियों को ईर्ष्या-द्वेष की ओर प्रेरित करती है।

शंका से मुक्ति व्यक्ति की प्रसन्नता में वृद्धि करती है। शंका प्रसन्नता की शत्रु है। अज्ञान शंका की जननी है। ज्ञान प्राप्त करिए। शंका अदृश्य हो जायेगी। शंका-सन्देह सच्ची मित्रता के लिए विषतुल्य है। एवं विश्वास चले जायेंगे।

यदि आपके मन में सन्देह प्रवेश करता है, तो प्रेम विचारों में शंका-सन्देह पक्षियों में चमगादड़ की भाँति है। वे सदैव रात्रि में उड़ान भरते हैं अर्थात् शंका-सन्देह अज्ञानान्धकार के परिणाम होते हैं।

शंका सद्‌गुण की शत्रु है। एक शंकालु-सन्देहशील व्यक्ति शीघ्र ही भ्रष्ट हो जायेगा। एक भ्रष्ट-दुराचारी व्यक्ति स्वभावतः शंकालु होता है।

अत्यधिक शंकालु-सन्देहशील स्वभाव बहुत बुरा है। यह अतिविश्वासशीलता के विपरीत है। मन सदैव अतियों में भ्रमण करता है। कुछ पति-पत्नी सदैव एक-दूसरे पर सन्देह करते हैं। इससे घर में सदैव संघर्ष-कलह रहता है। एक दुकान का मालिक सदैव नौकरों पर सन्देह करता है। इस प्रकार व्यवसाय कैसे चल पायेगा ? विश्व विश्वास पर चलता है। भारत में कॉफी, चाय, रबर आदि अनेक व्यवसायों के कुछ साझेदार अमेरिका एवं इंग्लैण्ड में रहते हैं, परन्तु उनका व्यवसाय सुचारु रूप में चलता है। व्यवसाय विश्वास पर चलता है। यदि व्यक्ति अत्यधिक सन्देहशील हैं, तो सदैव कलह-संघर्ष होते रहेंगे। मध्यम मार्ग अपनाकर व्यक्ति को जाँचिए। अतियों में नहीं जाइए। अतिविश्वासशील मत होइए। अति सन्देहशील-शंकालु भी मत बनिए। स्वर्णिम मध्यम मार्ग अपनाइए।

पिशुनता (Tale-bearing)

पिशुनता किसी के बारे में दुर्भावनापूर्वक बात करना अथवा चुगलखोरी करना है। यह मिथ्यापवाद फैलाना है।

एक चुगलखोर व्यक्ति किसी को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से मिथ्या एवं अनिष्टकर कहानियों का प्रचार करता है। वह अन्य व्यक्तियों के विषयों में हस्तक्षेप करता है, उन्हें कलंकित करने का प्रयास करता है।

आप इस प्रकार का कार्य नहीं करिए। जहाँ ऐसे व्यक्ति नहीं होते हैं, वहाँ सब झगड़े समाप्त हो जाते हैं।

पिशुनता-चुगलखोरी घृणास्पद है। एक चुगलखोर व्यक्ति सबके द्वारा तिरस्कृत होता है।

आप अन्य व्यक्तियों के विषयों में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप क्यों करते हैं? पिशुनता का त्याग करिए। अपने विषय में चिन्ता करिए। आप समय बचा सकते हैं। प्रार्थना, जप, कीर्तन, ध्यान तथा धार्मिक पुस्तकों के स्वाध्याय में अपने समय का सदुपयोग करिए। आपको शाश्वत शान्ति प्राप्त होगी।

कातरता-भीरुता (Timidity)

यह एक प्रकार की क्षुद्रता है। यह दुर्बलहृदयता है। यह भय का एक प्रकार है। यह लज्जा के समान है। एक कातर-भीरु व्यक्ति का हृदय दुर्बल होता है। वह सार्वजनिक कार्यों तथा किसी प्रकार के साहसिक कार्य हेतु अनुपयुक्त है। वह कूपमण्डूक है अर्थात् कुएँ में रहने वाले मेंढक के समान है। वह अपने उच्चाधिकारियों से साहसपूर्वक बात नहीं कर सकता है। वह एक संसाधनपूर्ण व्यक्ति नहीं बन सकता है। वह ग्राहकों से साहसपूर्वक बात नहीं कर सकता है। तब वह समृद्धि की आशा कैसे कर सकता है? वह अपना जीवन, पत्नी, सन्तान तथा सम्पत्ति खोने से भयभीत होता है। वह लोकोपवाद से भयभीत होता है। एक भीरु व्यक्ति स्त्री के समान होता है। साहस के विकास द्वारा इसे समाप्त किया जाना चाहिए। यह एक अभिशाप है। यह व्यक्ति को दुर्बल बनाती है, उसके विकास को रोकती है, सफलता में बाधक होती है।

विश्वासघात (Treachery)

विश्वासघात छल है।

एक विश्वासघाती देशद्रोही होता है।

विश्वासघात के समान अन्य कोई ऐसा चाकू नहीं है जो इतनी तीक्ष्णता से काटता है तथा जिसकी धार इतनी विषाक्त होती है। निष्ठा, भक्ति एवं विश्वास को भंग करना विश्वासघात है। कपट-छलपूर्ण आचरण विश्वासघात है।

एक विश्वासघाती व्यक्ति अविश्वसनीय होता है। वह आकर्षक एवं भ्रामक प्रभाव उत्पन्न करता है। वह बाह्य रूप से सज्जन प्रतीत होता है, परन्तु उसका चरित्र अथवा स्वभाव दुष्ट होता है। वह अपने घनिष्ठ मित्र के साथ छल करता है।

वह मुस्कराता एवं हँसता है, परन्तु अन्त में आघात पहुँचाता है। आप एक कपटी व्यक्ति पर विश्वास नहीं कर सकते हैं। वह आपकी सम्पत्ति लूटने तथा आपको मारने के अवसर की प्रतीक्षा कर रहा है। वह धोखेबाज होता है।

'विश्वासघाती' (Treacherous) शब्द व्यक्ति के व्यक्तिगत सम्बन्धों के विषय में प्रयुक्त होता है, 'राजद्रोही' (Traitorous) शब्द व्यक्ति के अपने राष्ट्र अथवा देश के सम्बन्ध में प्रयुक्त होता है। हम कहते हैं, "वह एक विश्वासघाती मित्र तथा एक देशद्रोही नागरिक है।"

व्यक्ति अपने शत्रु एवं मित्र के साथ छल कर सकता है। वह अपनी शक्ति-अनुसार राष्ट्र सेवा में योगदान न दे कर राजद्रोही हो सकता है।

अपने राष्ट्र के शत्रु का साथ देने वाला सैनिक राष्ट्रद्रोही कहलाता है। शासक के वध का प्रयास अथवा सत्ता परिवर्तन के उद्देश्य से कार्य करने वाला भी राजद्रोह का अपराधी होता है।

ईमानदारी, विश्वसनीयता एवं विश्वस्तता के अभ्यास द्वारा विश्वासघात की प्रवृत्ति का नाश करिए।

मिथ्याभिमानिता (Vanity)

मिथ्याभिमानिता वृथा अभिमान अथवा दम्भ है। यह झूठा दिखावा अथवा प्रदर्शन है।

मिथ्याभिमानिता तुच्छ गर्व की भावना है। यह अनुचित आत्म-गर्व है। यह अहंकार है। यह रिक्तता अथवा खोखलापन है।

मिथ्याभिमानिता अपनी क्षमताओं-उपलब्धियों को अधिक मानते हुए गर्वित होने की अवस्था अथवा गुण है। एक मिथ्याभिमानी सदैव अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने तथा प्रशंसा एवं वाहवाही पाने के लिए उत्सुक होता है।

मिथ्याभिमानिता गर्व की वह प्रजाति है जो कुछ क्षेत्रों में स्वयं को अत्यधिक श्रेष्ठ मानती है तथा प्रत्येक अवसर पर अपनी प्रतिभा अथवा कुछ श्रेष्ठता प्रदर्शित कर सबसे प्रशंसा पाने को उत्कण्ठित होती है।

मिथ्याभिमानिता व्यक्ति को तिरस्कार एवं उपहास का पात्र बनाती है तथा उसके चरित्र का नाश करती है। ऐसा व्यक्ति जहाँ जाता है, उपहास का पात्र बनता है। मिथ्याभिमानिता सर्वाधिक हास्यास्पद एवं घृणास्पद दुर्गुणों दम्भ एवं मिथ्याभाषण का आधार है।

एक मिथ्याभिमानी स्वयं के विषय में बात करके अत्यधिक आनन्दित होता है; परन्तु वह यह नहीं जानता है कि अन्य व्यक्ति उसे सुनना नहीं चाहते हैं।

एक मिथ्याभिमानी व्यक्ति अहंकारी होता है। वह गर्वोन्मत्त होता है। वह बड़ों के विवेकपूर्ण परामर्श को नहीं सुनता है। वह दूसरों के विचारों एवं धारणाओं के विषय में नहीं सोचता है।

वह अन्यों के साथ अशिष्टतापूर्वक व्यवहार करता है। वह अपने अधीनस्थ व्यक्तियों के साथ तिरस्कारपूर्ण अभद्र व्यवहार करता है। वह तड़क-भड़क वाली पोशाक पहन कर मार्ग पर चलता है तथा सबका ध्यान आकर्षित करना चाहता है।

उसे पूरे दिन स्वयं के विषय में बात करने तथा सुनने से अत्यधिक प्रसन्नता मिलती है। वह गपशप कर अपना समय व्यर्थ गँवाता है।

मिथ्याभिमानिता जननी है। दम्भ उसकी प्रिय पुत्री है। गर्व एवं मिथ्याभिमान एक ही भावना के दो रूप हैं। एक गर्वित व्यक्ति के पास तो गर्व करने योग्य कुछ होता है, परन्तु मिथ्याभिमानी पूर्णतः रिक्त होता है।

एक व्यक्ति योग के विषय में कुछ नहीं जानता है। वह कुछ आसन जानता होगा, परन्तु वह स्वयं को निर्विकल्प समाधि में प्रतिष्ठित योगी के रूप में प्रदर्शित करेगा। यह मिथ्याभिमानिता का एक प्रकार है।

एक व्यक्ति वेदान्त के विषय में कुछ अधिक नहीं जानता है। उसने विचारसागर तथा पंचदशी का थोड़ा अध्ययन किया है; वह एक साक्षात्कार प्राप्त सन्त होने का दिखावा करता है। यह मिथ्याभिमानिता का एक अन्य प्रकार है।

एक मूर्ख, एक कुली एवं एक लकड़हारा भी अपने प्रशंसक चाहता है। मिथ्याभिमानिता प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में गहरी जड़ें जमाये हुए है।

मिथ्याभिमानिता (Vanity) दूसरों की धारणा से जुड़ी होती है जबकि गर्व (Pride)

स्वयं की अपने विषय में धारणा से पूर्णतः सन्तुष्ट रहता है।

प्रत्येक प्राणी के हृदय में वृथा अभिमान होता है। एक कौआ, एक सूअर अथवा एक कुरूप व्यक्ति भी स्वयं को सुन्दर मानते हैं।

यह जगत् मिथ्याभिमानिता का मेला है। यह वृथाभिमान एवं मूर्खता का जगत् है।

एक विद्वान् पण्डित, जो सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञाता है तथा बिना किसी आध्यात्मिक अनुभव के अपने ज्ञान पर अभिमान करता है, वस्तुत: दया का पात्र है। वह मोर की भाँति है। उसे पाण्डित्य-प्रदर्शन एवं वाद-विवाद प्रिय हैं। वह स्वयं को वाक्युद्ध तथा बौद्धिक व्यायाम में संलग्न रखता है। वह भगवान् श्री शंकराचार्य के भजगोविन्दम् गीत में 'डुकृञ करणे' रटने वाला पात्र है। पाण्डित्यपूर्ण शब्द व्यक्ति को पवित्र नहीं बना सकते हैं।

यदि आपने गीता, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्र कण्ठस्थ किये हैं, परन्तु आपको भगवद्-अनुग्रह एवं आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त नहीं हैं तो इस विद्वत्ता का क्या लाभ है? आप उस गर्दभ की भाँति हैं, जो अपनी पीठ पर

चन्दन की लकड़ी का भार ढो रहा है। क्या आपने महर्षि भारद्वाज तथा देवर्षि नारद की कथाएँ नहीं सुनी हैं कि किस प्रकार वे धार्मिक पुस्तकों को गाड़ी में भरकर उन्हें क्रमशः इन्द्र तथा सनत्कुमार के पास ले गये थे।

आपका ज्ञान अत्यल्प है। जो आप नहीं जानते हैं, वह सागरवत् विशाल है। अल्प ज्ञान व्यक्ति को गर्वोन्मत्त-दम्भी बनाता है।

स्वयं के तथा स्वयं के ज्ञान के विषय में अधिक मत सोचिए। यह शुद्ध आत्माभिमान है।

मिथ्याभिमानिता गर्व का आधिक्य है।

कुछ साधक सांसारिक व्यक्तियों से अधिक वृथा-अभिमानी होते हैं। वे अपने नैतिक गुणों, कुछ सिद्धियों, अपनी आध्यात्मिकता एवं समाधि अवस्था पर गर्वित होते हैं।

नैतिक एवं आध्यात्मिक गर्व धन एवं शक्ति के गर्व से अधिक अनिष्टकारक है। इनका निराकरण भी अधिक कठिन है। साधकों को सदैव सजग-सावधान रहना चाहिए। overline 3 - 5 सदा विनम्रता एवं सेवा के भाव को बनाये रखना चाहिए।

अत्यधिक वाद-विवाद करना (Villy-vallying)

कुछ व्यक्ति जिनकी बुद्धि शक्ति अधिक विकसित है, उन्हें अनावश्यक वाद-विवाद करने की आदत हो जाती है। उनकी बुद्धि तार्किक होती है। वे एक क्षण भी शान्त नहीं बैठ सकते हैं। वे उग्र वाद-विवाद हेतु अवसर उत्पन्न करेंगे। अत्यधिक वाद-विवाद का अन्त द्वेष एवं शत्रुता में होता है। इन निरर्थक विवादों में अत्यधिक ऊर्जा का क्षय होता है। बुद्धि तभी सहायक सिद्ध होती है जब इसका आत्मिक विचार की दिशा में उपयोग किया जाये, परन्तु यदि इसका उपयोग अनावश्यक विवाद करने हेतु किया जाता है, तो यह एक बाधा बन जाती है। बुद्धि साधक को अन्तःप्रज्ञा के द्वार तक ले जाती है। यह इसके आगे नहीं ले जा सकती है। बुद्धि एवं तर्क भगवान् के अस्तित्व का अनुमान करने तथा आत्म-साक्षात्कार हेतु उपयुक्त साधन खोजने में सहायता करते हैं। अन्तःप्रज्ञा बुद्धि से अतीत है परन्तु बुद्धि का विरोध नहीं करती है। अन्तः प्रज्ञा परम सत्य का प्रत्यक्ष बोध है। यहाँ बुद्धि का कार्य नहीं है। बुद्धि भौतिक जगत् के कार्यों से सम्बन्धित है। जहाँ पर 'क्यों' एवं 'कहाँ से' प्रश्न है, वहीं बुद्धि उपयोगी है। पारलौकिक-अतीन्द्रिय विषय बुद्धि की पहुँच से परे हैं, वहाँ बुद्धि का कोई उपयोग नहीं है।

बुद्धि चिन्तन-मनन करने में अत्यधिक सहायता करती है। परन्तु जिनमें बुद्धि शक्ति विकसित होती है, वे संशयवादी बन जाते हैं। उनकी बुद्धि विकृत भी हो जाती है। वे वेदों तथा सन्त-महात्माओं के उपदेशों में श्रद्धा खो देते हैं। वे कहते हैं, "हम बुद्धिवादी हैं। जो हमारी बुद्धि एवं तर्क के अनुसार उचित नहीं है, हम उस पर विश्वास नहीं करते हैं। हम

उपनिषदों में विश्वास नहीं करते हैं। बुद्धि के क्षेत्र के बाहर की वस्तुओं को हम अस्वीकार करते हैं। हम भगवान् एवं सद्गुरुओं में विश्वास नहीं करते हैं।" ये तथाकथित बुद्धिवादी नास्तिकों का ही एक प्रकार है। उन्हें विश्वास दिलाना अत्यन्त कठिन है। उनकी बुद्धि मलिन एवं विकृत होती है। उनके चित्त में भगवद्-विषयक विचार प्रवेश नहीं कर सकते हैं। वे किसी प्रकार की आध्यात्मिक साधना भी नहीं करेंगे। वे कहते हैं, "हमें अपने उपनिषदों के ब्रह्मन् अथवा भक्तों के भगवान् के दर्शन कराइए।" सन्देहशील स्वभाव के व्यक्ति नष्ट हो जायेंगे। बुद्धि एक सीमित उपकरण है। यह जीवन की अनेक रहस्यात्मक समस्याओं का स्पष्टीकरण नहीं दे सकती है। जो व्यक्ति इस तथाकथित बुद्धिवाद एवं सन्देहवाद से मुक्त हैं, वे ही भगवद्-साक्षात्कार के पथ पर चल सकते हैं।

चिन्ता (Worry)

चिन्ता स्वयं को समस्या, उलझन, व्यग्रता आदि से उत्पीड़ित करना है, यथा व्यवसाय की चिन्ता, राजनीति की चिन्ता, जीवन की अन्य चिन्ताएँ।

जो कभी घटित नहीं होगा, उस सम्बन्ध में चिन्तित एवं परेशान मत होइए। स्वयं को सदैव व्यस्त रखिए। कुछ न कुछ उपयोगी कार्य में संलग्न रहिए। यह चिन्ता निवारण हेतु अचूक औषधि है।

चिन्ता से कभी किसी ने कुछ लाभ प्राप्त नहीं किया है। फिर, चिन्ता क्यों? आज की समस्याएँ नहीं अपितु आने वाले कल की समस्याएँ आपको तनावग्रस्त करती हैं। जब आने वाले कल के बोझ को आज के बोझ में सम्मिलित कर दिया जाता है, तो मनुष्य के लिए उसे वहन करना अशक्य हो जाता है।

भूतकालिक घटनाओं के लिए चिन्तित मत होइए। उन्हें भूल जाइए।

जिन घटनाओं के होने की सम्भावना नहीं है, उनके विषय में चिन्तित मत होइए। आज के लिए आज की समस्याएँ पर्याप्त हैं।

चिन्ता समस्याओं-परेशानियों के कारण उत्पन्न मन की व्यग्रता है। यह उद्विग्नता, विक्षुब्धता अथवा परेशानी की अवस्था है। यह विक्षेपकारी अथवा विक्षुब्धकारी व्याकुलता है।

चिन्ता मनुष्य का नाश करती है। यह जीवन के सुखों का नाश करती है। यह वह रोग अथवा कैन्सर है जो धीरे-धीरे मनुष्य को क्षीण-दुर्बल करता जाता है।

सन्तुलित एवं शान्त मन के साथ कठिन परिश्रम किसी व्यक्ति को कभी नष्ट नहीं करेगा। यह शारीरिक कार्यप्रणाली को सुदृढ़ कर दीर्घायु प्रदान करता है। परन्तु चिन्ता व्यक्ति का नाश करती है, उसे अल्पायु बनाती है।

स्वयं को सदैव व्यस्त रखना चिन्ता के उपचार हेतु पेन्सिलीन इंजेक्शन अथवा अचूक औषधि है। सदैव कुछ उपयोगी कार्य करते करिए।

कार्य को श्रेष्ठ रूप में करिए तथा शेष भगवान् पर छोड़ दीजिए। चिन्तित मत होइए। अब आप वास्तव में धन्य हैं, आशीर्वादित हैं।

सद्गुणों के विकास द्वारा दुर्गुणों का नाश करिए (Destroy Evil Vrittis by developing virtues)

१. काम-वासना	ब्रह्मचर्य, मुमुक्षुत्व
२. क्रोध	प्रेम, क्षमा, दया, मैत्री, शान्ति, धृति, अहिंसा
३. मद	नम्रता अथवा विनय

४. लोभ	ईमानदारी, निःस्वार्थता, उदारता, सन्तोष
५. ईर्ष्या	उदारता, उदारहृदयता, मुदिता
६. मोह	विवेक
७. दम्भ	सरलता
८. दर्प	विनय, शील-संकोच
९. पैशुनम् (कुटिलता)	आर्जव, स्पष्टवादिता
१०. पारुष्यम् (कठोरता)	मृदुता
११. राग	वैराग्य
१२. अश्रद्धा	श्रद्धा
१३. चंचलत्व	दृढ़निश्चय, दृढ़ अध्यवसाय

नष्ट किये जाने वाले दुर्गुणों की सूची (List of Vices to be destroyed)

मुख्य दुर्गुण

(इसकी एक प्रति को अपने घर के किसी मुख्य स्थान पर लगायें)

महत्त्वाकांक्षा	क्रोध
दर्प	आसक्ति
लोभी प्रकृति	प्रतिशोधपूर्ण स्वभाव
पिशुनता (चुगलखोरी)	निन्दा-आलोचना
गर्व	क्रूरतापूर्ण कार्य करना
कुटिल मानसिकता	छलपूर्ण स्वभाव

क्रूरता	विषाद
इच्छा	कपटपूर्ण आचरण
मूढता	आवश्यकता से अधिक तथा बार-बार खाना
अहंकार	कुविचार एवं बुरी आदतें
ईर्ष्या	कठोर वचन
नास्तिकता	पाखण्ड
घृणा	आलस्य
मात्सर्य	उपद्रवकारिता
कामवासना	कृपणता
निर्दयी स्वभाव	अभिमान
हठधर्मिता	स्वार्थ
मिथ्यापवाद फैलाना	असत्य बोलना
झूठी कहानी गढ़ना	अपवित्र दृष्टि

गौण दुर्गुण

विवाद करने का स्वभाव	मन की व्यग्रता
अवमानना करना	आत्मप्रशंसा
निरर्थक चिन्तन	हवाई किले बनाना
कायरता	दूसरों का अपमान करना
मोह	निराशा
कूटनीति	मद्यपान की आदत
संवेग	शत्रुता
परदोष दर्शन	झगड़ालू स्वभाव

द्यूतक्रीड़ा	उदास मुखाकृति
लोभ	उद्दण्डता
छल	छोटों के साथ दुर्व्यवहार
अभद्रता	अनुचित कार्य
अकर्मण्यता	अन्याय
हस्तक्षेप करने का स्वभाव	चिड़चिड़ापन
चींटियों एवं अन्य छोटे जीवों को मारना	छिद्रान्वेषण
मानसिक दुर्बलता	दुर्भावना
दूसरों का उपहास करना	दुर्व्यवहार
उपन्यास पढ़ना	लापरवाही
मानसिक अस्पष्टता	दम्भी प्रकृति
पाण्डित्य प्रदर्शन	क्लेश देना
क्षुद्रता	अल्पचौर्य
योजनाएँ बनाना	दीर्घसूत्रता
विरोध करने का स्वभाव	कलहपूर्ण स्वभाव
अविवेक	अशान्ति
प्रतिकार	प्रतिकार की प्रकृति
दुष्टता	अशिष्टता
आत्माभिमान	दूसरों के समक्ष अपनी क्षमता एवं शक्ति का प्रदर्शन
निन्दा करना	सुस्त स्वभाव
दिन में सोना	मन्दता
धूम्रपान करना	दूसरों की आलोचना करना
दुराग्रही प्रकृति	मधुर वचन एवं विषपूर्ण हृदय

वाचालता	अपशब्दों-अभद्र शब्दों का प्रयोग
अनावश्यक तर्क करना	वृथा भ्रमण का स्वभाव
अस्थिर मन	चिन्ता करने की आदत
मिथ्याभिमानिता	कुसंगति में समय गँवाना
समय व्यर्थ गँवाना	